मौसम विज्ञान

मौसम विज्ञान

(Mausam Vigyan)

लेखक
रमेशचन्द्र बनर्जी
दयाशंकर उपाध्याय



राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर

प्रथम सस्करण 1973
द्वितीय सस्करण 1986
तृतीय सस्करण 1991

मूल्य 51 00 रुपये

मानव ससाधन विकास मत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रथ निर्माण योजना के अ तगत, राजस्थान हिन्दी ग्रथ अकादमी जयपुर द्वारा प्रकाशित।

प्रकाशक
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
ए–26/2, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर
जयपुर–302 004

मुद्रक
झूलेलाल प्रिन्टर्स
जयपुर

प्रकाशकीय-भूमिका

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी अपनी स्थापना के 21 वर्ष पूरे करके 15 जुलाई, 1990 को 22वें वर्ष मे प्रवेश कर चुकी है। इस अवधि में विश्व साहित्य के विभिन्न विषयो के उत्कृष्ट ग्रन्थो के हिन्दी अनुवाद तथा विश्वविद्यालय के शैक्षणिक स्तर के मौलिक ग्रन्थो को हिन्दी मे प्रकाशित कर अकादमी ने हिन्दी जगत् के शिक्षको, छात्रो एव अन्य पाठको की सेवा करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है और इस प्रकार विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी मे शिक्षण के मार्ग को सुगम बनाया है।

अकादमी की नीति हिन्दी मे ऐसे ग्रन्थो का प्रकाशन करने की रही है जो विश्वविद्यालय के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमो के अनुकूल हो। विश्वविद्यालय स्तर के ऐसे उत्कृष्ट मानक ग्रन्थ जो उपयोगी होते हुए भी पुस्तक प्रकाशन की व्यावसायिकता की दौड मे अपना समुचित स्थान नही पा सकते हो, और ऐसे ग्रन्थ भी जो अग्रेजी की प्रतियोगिता के सामने टिक नही पाते हो, अकादमी प्रकाशित करती है। इस प्रकार अकादमी ज्ञान विज्ञान के हर विषय मे उन दुर्लभ मानक ग्रन्थो को प्रकाशित करती रही है और करेगी जिनको पा कर हिन्दी के पाठक लाभान्वित ही नहीं गौरवान्वित भी हो सकें। हमे यह कहते हुए हर्ष होता है कि अकादमी ने 350 से भी अधिक ऐसे दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का प्रकाशन किया है जिनमे से एकाधिक केन्द्र, राज्यो के बोर्डों एव अन्य सस्थाओ द्वारा पुरस्कृत किए गये हैं तथा अनेक विभिन्न विश्वविद्यालयो द्वारा अनुशसित।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी को अपने स्थापना काल से ही भारत सरकार के शिक्षा मत्रालय से प्रेरणा और सहयोग प्राप्त होता रहा है तथा राजस्थान सरकार ने इसके पल्लवन मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, अत अकादमी अपने लक्ष्यो की प्राप्ति मे दोनो सरकारो की भूमिका के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है।

हमें 'मौसम विज्ञान' पुस्तक का तृतीय सस्करण प्रकाशित करते हुए प्रसन्नता है। पुस्तक हिन्दी मे बहुत समय से अनुभव किये जा रहे अभाव की पूर्ति करती है। इसमे मौसम से सम्बन्धित वैज्ञानिक जानकारी साधिकार दी गई है। हम विश्वास है कि पुस्तक विश्वविद्यालयो के छात्रो, अध्यापको के अतिरिक्त सामान्य पाठको के लिए भी रुचिकर सिद्ध होगी।

भैरो सिंह शेखावत	**डॉ राघव प्रकाश**
मुख्य मन्त्री, राजस्थान सरकार एव	सहायक निदेशक
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी	राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर	जयपुर

Foreword

Meteorology as a Science has made rapid strides in India during recent years In earlier years it was often fashionable to consider this profession as a collection of soothsayers, or eccentrics, who spent a lifetime making wrong prophesies A series of natural calamities, droughts, floods and tropical cyclones-have now changed this outlook It is indeed encouraging to find evidence of a trend in the other direc tion, namely, an increasing awareness of the importance of earth sciences

It is not often realised that a good part of the strain imposed on our economy could be averted, if proper steps were taken in advance against the adverse forces of nature In this context the economic value of a meteorological forecast is substantial It has been estimated that the damage caused by a tropical storm hitting the Indian costline could be as hundred crores of rupees If we could save even a tenth of this figure by timely warnings, the cost benefit ratio would more than justify the existence of a national meteorological service There are many examples of this nature where meteorology can, and should make important contributions to the national economy The management of water resources is another example How does rainfall affect the water level of a river ? Can we predict the next day's rainfall in quantitative terms, so that the engineers know whether to open or not the flood gates ? Questions of this nature are becoming increasingly important these days, and they all emphasize the need for a more determined and meaningful study of the earth sciences

This book, which is in Hindi, introduces us to this fascinating subject and fulfils a long felt need It covers a fairly extensive range of the subject, with more emphasis on the weather of India As it is in Hindi, the Indian reader should experience little or no defficulty in

following it The authors have undertaken a commendable task in preparing this introductory text I wish this book success, and I hope it provides an useful introduction to a subject which has much scope for further development

Sept 1973
New Delhi—

Dr P. K Das
M Sc (Lon) D Phil DIC
Dy Director General of Observatories
(Planning)
India Meteorological Department

तृतीय संस्करण की भूमिका

आज भी मौसम विज्ञान सम्पूर्ण जानकारी के अभाव मे अनुशासित विज्ञान का रूप नही ले पाया है। कुछ गिने-चुने विश्वविद्यालयो मे ही इस नवोदित विषय का अध्ययन-अध्यापन किया जाने लगा है। पुस्तक के द्वितीय संस्करण के प्रकाशन के चार वर्षों बाद ही तीसरे संस्करण की आवश्यकता महसूस की गई। इन वर्षो में मौसम विज्ञान विकास की बडी मजिलें पार कर चुका है और नवीनतम विश्लेषण-तकनीकी प्रयुक्त की जा रही है। तृतीय संस्करण मे इनको ध्यान मे रखते हुये अब और कई सशोधन व परिवर्द्धन किए गए है।

—लेखक

प्राक्कथन

(प्रथम संस्करण)

मौसम की घटनायें अनादि काल से ही पृथ्वी तथा उस पर रहने वाले जीवधारियों को प्रभावित करती रही हैं। ये घटनायें वायुमण्डल में उपस्थित जलवाष्प तथा वायुराशियों की गति के कारण उत्पन्न होती हैं। मानव सभ्यता के आदि काल में लोग वर्षा, सूखा आदि को दैवी घटनायें समझते थे और अनुकूल मौसम के लिये प्रार्थना तथा अनुष्ठानों में आस्था रखते थे। यह दशा एक शताब्दी पूर्व तक भी संसार के हर क्षेत्र में व्याप्त थी। किन्तु अब वायुमण्डल के बारे में अनेक वैज्ञानिक तथ्यों की खोज के पश्चात् मौसम की घटनाओं की यथार्थ व्याख्या बहुत कुछ स्पष्ट हो गयी है।

वायुमंडलीय घटनाएँ अनुप्रयुक्त विज्ञान और गणित के लिए सम्भवतः सबसे बड़ी चुनौती हैं। क्योंकि न तो ये घटनाएँ किसी प्रयोगशाला में उत्पन्न की जा सकती हैं और न ही इनकी तीव्र परिवर्तिताएँ (Variabilities) किसी गणितीय माडल द्वारा सूत्रबद्ध की जा सकती हैं। राडार, मौसम उपग्रह आदि अनेक सशक्त यन्त्रों के अविर्भाव से पिछले कुछ वर्षों में वायुमण्डल की विशेष प्रयोगशाला में ही मौसम का अधिक यथार्थ अध्ययन सम्भव हो सका है।

मौसम विज्ञान अब एक व्यवस्थित विज्ञान के रूप में तेजी से अग्रसर हो रहा है। इसका स्वरूप पिछले चार-पांच दशकों में अब तक कई शाखाओं में विकसित हुआ है। इन शाखाओं में गतिक (Dynamic) मौसम विज्ञान भौतिक (Physical) मौसम विज्ञान, समकालीन (Synoptic) मौसम विज्ञान, राडार तथा उपग्रह मौसम विज्ञान, जलवायु विज्ञान (Climatology) आदि प्रमुख हैं। विषुवत् रेखीय क्षेत्र अधिक तथा ध्रुवीय क्षेत्र कम सौर ऊष्मा प्राप्त करते हैं। सन्तुलन स्थापित करने के लिये वायुराशियों द्वारा निम्न से उच्च अक्षांशों की ओर ऊष्मा का अभिवहन (Advection) होता है। अतः वायुमण्डल एक ताप इंजन की भांति कार्य करता है। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से ऊष्मागतिकी के नियम वायुमण्डलीय विज्ञान में लागू हो जाते हैं जिसके आधार पर भौतिक मौसम विज्ञान विकसित हुआ। सूर्य की ऊष्मा और पृथ्वी का घूर्णन मिलकर वायुप्रवाह जनित करते हैं। इस प्रवाह की विशेषताओं के अध्ययन के लिए गतिक मौसम विज्ञान का विकास हुआ।

वायुराशियों की गति सही पूर्वानुमान प्रस्तुत करने तथा जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में प्रगति की असीम सम्भावनायें अभी भी वैज्ञानिकों के समक्ष उपस्थित हैं जिसके लिए यथार्थ विज्ञानों में नए अनुसंधानों की आवश्यकता है। यह पुस्तक मौसम विज्ञान की ... के रूप में समझी जा सकती है जिसमें मौसम विज्ञान की तीन प्रमुख शाखाओं—

सामान्य मौसम विज्ञान, समकालीन मौसम विज्ञान तथा जलवायु विज्ञान—की प्रारम्भिक रूपरेखा प्रस्तुत की गई हैं। प्रथम छः अध्यायों में प्रमुख वायुमण्डलीय तत्त्वों जैसे—वायु-दाब, तापमान, आर्द्रता, वर्षा तथा वायु प्रवाह आदि की व्याख्या की गई है। जहाँ तक सम्भव हो सका है, विशिष्ट गणितीय समीकरणों का समावेश नहीं किया गया है। अध्याय 7 में आधुनिक वेधशालाओं में मौसम प्रेक्षण के लिए प्रयुक्त मुख्य यन्त्रों का परिचय दिया गया है।

अध्याय 8 और 9 में मौसम प्रणालियों के उद्भव तथा गति के भौतिक व समकालीन कारणों पर प्रकाश डाला गया है। अध्याय 10 में मौसम पूर्वानुमान की विभिन्न तकनीकों की, जो व्यावहारिक रूप से प्रचलित हैं, विवेचना की गई है। इलेक्ट्रोनिक कम्प्यूटरों के आविर्भाव से संख्यात्मक विधि से मौसम की प्रागुक्ति (Prediction) के लिये नयी विधियाँ अधिक यथार्थता के साथ तैयार करना इस समय मौसम-वैज्ञानिकों के सामने एक प्रमुख समस्या है। संख्यात्मक विधि की भूमिका तथा एक सरलतम उदाहरण अध्याय 10 में दिया गया है।

अन्तिम चार अध्याय जलवायु विज्ञान पर हैं। भारतीय जलवायु का विस्तृत विवरण अध्याय 14 में दिया गया है।

हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तकें लिखने में कुछ अतिरिक्त कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। विदेशी भाषाओं में स्वाभाविक रूप से विकसित हुए तकनीकी शब्दों का ज्यों का त्यों रूपान्तरण, कहीं-कहीं खटकता सा प्रतीत होता है। नये शब्दों के निर्माण की स्वतन्त्रता से भी विभिन्न पुस्तकों में पारिभाषिक शब्दों में असमानता उत्पन्न होने की आशंका रहती है। स्थायी आयोग द्वारा स्वीकृत वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावलियों में सीमाबद्ध रहने का प्रयास करते हुए भी लेखकों को कुछ स्थानों पर नये शब्द अपनाने पड़े हैं। भाषा की सरलता, पाठ्य क्रमों के प्रस्तुतीकरण तथा शैली की ग्राह्यता में सदा सुधार की गुंजाइश निकाली जा सकती है। अतः लेखकों के इस प्रथम प्रयास में त्रुटियाँ रह जाना स्वाभाविक है। इस संदर्भ में पाठकों से सुझावों की अपेक्षा की जाती है, जिसके लिए लेखक आभारी होंगे।

जिन विश्वविद्यालयों में मौसम विज्ञान या जलवायु विज्ञान स्वतन्त्र विषय के रूप में, अथवा भू भौतिकी (Geophysics) या भूगोल की विशेष शाखा के रूप में पाठ्य क्रम के अन्तर्गत सम्मिलित किए गये हैं, यह पाठ्य या निर्देश (Reference) पुस्तक के रूप में उपयोगी हो सकती है।

लेखक वेधशालाओं के उपमहानिदेशक डॉ० पी० के० दास के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापन करते हैं, जिनकी प्रेरणा के फलस्वरूप ही इस पुस्तक का प्रस्तुतीकरण सम्भव हो सका।

अनेक उपयोगी सुझावों तथा प्रूफ आदि में सहायता के लिए लेखक श्री धीरेन्द्र कुमार मिश्र के आभारी हैं। चित्र तैयार करने के लिए श्री तरसेम सिंह तथा पाण्डुलिपि के संशोधन आदि में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए सब श्री सुनीलकृष्ण राय तथा रामाज्ञा तिवारी धन्यवाद के पात्र हैं।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी ने प्रस्तुत पुस्तक तैयार कराने में गहरी दिलचस्पी दिखाई तथा सुविधायें उपलब्ध कीं, जिसके लिए लेखक विशेष रूप से आभार व्यक्त करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

स्थान-स्थान पर मानचित्र एवं आँकड़ों के प्रस्तुतीकरण में भारत मौसम विभाग के प्रकाशनों का जो सहयोग मिला है, उसके लिए लेखक विभाग के ऋणी हैं।

सितम्बर, 1973
मौसम केन्द्र, जयपुर
(राजस्थान)

रमेशचन्द्र बनर्जी
दयाशंकर उपाध्याय

विषय-सूची

i

1

पर्यावरण
(THE ENVIRONMENT)

1 10 हमारा पर्यावरण

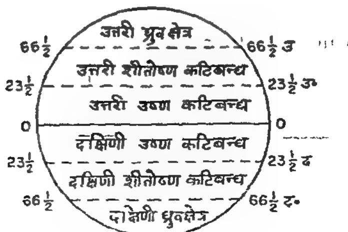
जल, थल, और वायुमण्डल मिलकर हमारा पर्यावरण बनाते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध का 61% और दक्षिणी गोलार्द्ध का 81% तथा सम्पूर्ण पृथ्वी का 71% भाग जल से ढका है। शेष भाग थल है, जो 20 से 50 अंश उत्तरी अक्षांश तक हिमालय, आल्प्स, राकी आदि पर्वतो के कारण काफी ऊँचा है। 60 से 90 अंश दक्षिणी अक्षांश तक फैला एन्टार्कटिक प्रदेश भी ऊँचाई पर स्थित भू भाग है।

पृथ्वी की कुल जलराशि का आयतन लगभग $1\ 4 \times 10^9$ घन किमी है जिसका 98% भाग सागरो मे है। शेष 2% का अधिकाश भाग ध्रुव प्रदेशो मे बर्फ के रूप मे जमा है। हमारे दिन प्रतिदिन काम मे आने वाले मीठे पानी का भाग सिर्फ 0 27% के लगभग है।

सूर्य के वार्षिक स्थानान्तरण तथा उसके फलस्वरूप उत्पन्न जलवायु के आधार पर भूमण्डल तीन भागो मे बाँटा जा सकता है—

(1) ऊष्ण कटिबन्ध (Tropics)

सूर्य की वार्षिक गति कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}°$ उ) से मकर रेखा के ($23\frac{1}{2}°$ द) अक्षांश वृत्ता के बीच सीमित है। इन अक्षांशा के बाद कहीं भी सूर्य की किरणें वर्ष के किसी भाग



चित्र 1 1

मे लम्बवत् नही पडतीं । फलस्वरूप $23\frac{1}{2}°$ उ से $23\frac{1}{2}°$ द का क्षेत्र अधिक तापमान तथा वर्षा प्राप्त करता है ।

विषुवत् रेखा और कर्क रेखा के बीच का क्षेत्र उत्तरी उष्ण कटिबन्ध तथा विषुवत् रेखा से मकर रेखा तक का भाग दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध कहलाता है ।

(2) मध्य अक्षांश या शीतोष्ण कटिबन्ध (Middle latitude or Temperate Zone)

$23\frac{1}{2}°$ उ $- 66\frac{1}{2}°$ उ तथा $23\frac{1}{2}°$ द $- 66\frac{1}{2}°$ द के भू भाग क्रमश उत्तरी और दक्षिणी मध्य अक्षांश कहलाते हैं । $66\frac{1}{2}°$ अक्षांश तक ही सूर्य की किरणें प्रतिदिन पहुँच पाती हैं । इसके परे 24 घण्टे से अधिक अवधि के दिन और रात पाए जाते हैं ।

(3) ध्रुव क्षेत्र या उच्च अक्षांश (Polar region or High latitude)

उत्तरी ध्रुव क्षेत्र—($66\frac{1}{2}°$ उ $- 90°$ उ)

दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र—($66\frac{1}{2}°$ द $- 90°$ द)

1 11 अक्षांशो के प्रति जल थल का आवटन और महाद्वीपो की समुद्र तल से औसत ऊँचाई सारिणी (1 1) मे दी गई है ।

सारिणी (1 1)

गोलार्द्ध	प्रतिशत जलीय भाग		समुद्र तल से औसत ऊँचाई (मीटर)	
अक्षांश	उ	द	उ	द
0–10	77 2	76 4	158	154
10–20	73 6	70 0	146	121
20–30	62 4	76 9	366	156
30–40	57 2	88 8	496	106
40–50	47 5	97 0	382	5
50–60	42 8	99 2	296	5

60–70	29 4	89 6	202	388
70–80	71 3	24 6	220	1420
80–90	93 4	0	137	2272
0–90	60 6	80 9	284	216

1 12 पृथ्वी के चारो ओर फँसी हुई हवा की तह, जिसम हम सास लेते हैं, वायुमण्डल कहलाती है। वायुमण्डल मे कुल हवा की मात्रा लगभग 6×10^{15} टन है। जैसे-जैसे हम ऊपर जाते हैं हवा विरल (rare) होती जाती है। वायुमण्डल की अधिकतम ऊँचाई लगभग 1000 किमी है, किन्तु हवा का 75% भाग 16 किमी और 50% लगभग 6 किमी ऊँचाई तक ही सीमित है।

एक अनुमान के अनुसार, हवा के दो अणुओ के बीच की औसत दूरी (mean free path), विभिन्न ऊँचाइयो पर इस प्रकार है—

समुद्रतल पर = 0 000,00083 सेमी

40 किमी की ऊँचाई पर = 0 0125 सेमी

60 किमी की ऊँचाई पर = 2 5 सेमी

और 200 किमी की ऊँचाई पर = 24 मीटर

वायुमण्डल की अतिम पर्तो मे प्रतिवर्ग किमी हवा के दो से भी कम अणु मिलते हैं।

6000 किमी से अधिक त्रिज्या वाली पृथ्वी पर इस पतले वायुमण्डल की स्थिति वैसी ही है, जैसी हमारे शरीर पर त्वचा की।

श्वसन क्रिया के अतिरिक्त, वायुमण्डल पृथ्वी के ताप को सन्तुलित रखता है तथा अन्तरिक्ष से आने वाले उल्का पिंडो और हानिकारक किरणो से हमारी रक्षा करता है।

1 20 पृथ्वी के कुछ तथ्य

(1) पृथ्वी ध्रुवो पर कुछ चपटी है। इसकी ध्रुवीय त्रिज्या 6357 तथा विषुवत् रेखा त्रिज्या 6378 किमी है। पृथ्वी की औसत त्रिज्या = 6371 किमी।

(2) पृथ्वी की मात्रा = $5\ 980 \times 10^{27}$ ग्राम

पृथ्वी का औसत घनत्व = 5 520 ग्राम/घन सेमी

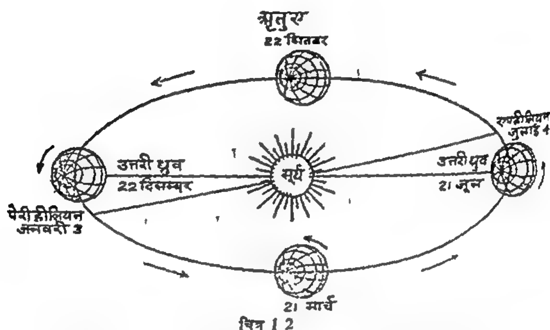
(3) पृथ्वी सूय के चारो ओर दीघ वृत्ताकार (elliptical) परिधि मे, लगभग $365\frac{1}{4}$ दिन म एक पूरा चक्कर लगाती है। सूय इस परिधि की एक नाभि (focus) पर स्थित होता है। पृथ्वी सर्दियो में (उत्तरी गोलार्द्ध की) सूय के निकट और गर्मियो मे दूर होती है। सूय और पृथ्वी की निम्नतम दूरी 1 जनवरी को होती है, जिसे रविनीच (परीहीलियन) दूरी कहते हैं। 1 जुलाई को यह दूरी अधिकतम होती है। इसे रविउच्च (एपहीलियन) दूरी कहते हैं।

रविनीच दूरी PS = 1 47 × 10⁸ किमी = 913,60,000 मील

रविउच्च दूरी AS = 1 52 × 10⁸ किमी = 944,70,000 मील

औसत दूरी = 1 497 × 10⁸ किमी = 93000000 मील

1 जनवरी और 1 जुलाई की अवस्थाएँ क्रमश दक्षिणायण और उत्तरायण भी कहलाती हैं।



चित्र 1 2

(4) रविनीच के दिन सूर्य रविउच्च की अपेक्षा 31,10,000 मील पृथ्वी के निकट रहता है। यदि ऐसा न होता तो, उत्तरी गोलार्द्ध में सर्दियाँ और तेज पडती। यह सोचा जा सकता है कि दक्षिणी गोलार्द्ध की गर्मियों का तापमान करीब 4°C अधिक रहता, पर जल का भाग अपेक्षाकृत ज्यादा होने के कारण दक्षिण में गर्मियों का तापमान उत्तर से लगभग 5°C कम रह जाता है। तुलना के लिए सारिणी (1 2) में कुछ औसत तापमान दिए जा रहे हैं।

सारिणी (1 2)

औसत तापमान (सेण्टीग्रेड)

गोलार्द्ध	जनवरी	जुलाई	वार्षिक
उत्तरी	8 1	22 4	15 2
दक्षिणी	17 1	9 7	13 3

(5) रविनीच से थोडा पहले, 22 दिसम्बर को सूर्य की किरणें $23\frac{1}{2}°$ द अक्षांश पर लम्बवत् पडती हैं। इसे (शीत) अयनान्त (Winter Solstice) या मकर सक्रान्ति कहते हैं। इसी प्रकार 21 जून ग्रीष्म अयनान्त (Summer Solstice) या कर्क सक्रान्ति कहलाता है। इस दिन सूर्य का अधिकतम दिक्पात (Declination) $23\frac{1}{2}°$ ऊपर होता है। 21 मार्च और 23 सितम्बर को सूर्य भूमध्य रेखा पर सीधा चमकता है, जब दिन और रात बराबर होते हैं। ये स्थितियां क्रमश बसन्त विषुव (Spring equinox) तथा शरद विषुव कहलाती हैं। इन्हें क्रमश महा (Vernal) और जल (Autumn) विषुव के नाम से भी जाना जाता है। महा विषुव के दिन सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध से उत्तरी गोलार्द्ध मे जाते समय विषुवत् रेखा पार करता है। इसी दिन से उत्तरी गोलार्द्ध मे बसंत ऋतु का प्रारम्भ होता है। जल विषुव के दिन सूर्य विषुवत् रेखा को पार कर दक्षिणी गोलार्द्ध में प्रवेश करता है। उत्तरी गोलार्द्ध मे इस दिन से शरद ऋतु प्रारम्भ होती है।

(6) पृथ्वी का अक्ष भूमध्य रेखीय तल से 66 6° का कोण बनाता है। यह अक्ष शकु की जनन रेखा (Generating line) की भांति अपना दिक् विन्यास (Orientation) बदलता रहता है। यह दिक विन्यास 25800 वर्षों मे एक चक्कर पूरा करता है।

(7) किसी स्थिर नक्षत्र के सन्दर्भ म सूर्य के चमकने का औसत समय एक नाक्षत्र दिन (Siderial day) कहलाता है, जो 23 घण्टे, 56 मिनट और 4 सैकण्ड के बराबर होता है।

(8) पृथ्वी का कोणिक वेग = $\frac{2\pi}{\text{नाक्षत्र दिन}}$

$= 7\ 293 \times 10^{-5}$ रेडियन/सेकण्ड

(9) पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण स्थिराक $(G) = 6\ 688 \times 10^{-8}$ सेमी ^{3}/ग्राम सेकण्ड^2।

1 30 वायुमण्डल के अवयव (Constituents of atmosphere)

हम मुख्यत नाइट्रोजन और आक्सीजन का मिश्रण हैं। आर्गन और कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैसें भी गण्य मात्रा में विद्यमान रहती हैं, जो स्थान स्थान पर बदलती रहती हैं। वायुमण्डल मे इन गैसो का परिमाण इस प्रकार है

अवयव	आयतन के अनुसार (%)	भार के अनुसार (%)
1 नाइट्रोजन	78 09	75 50
2 आक्सीजन (इसमे 20 से 50 किमी ऊँचाई तक पायी जाने वाली ओजोन भी शामिल है)	20 95	23 10

3 धार्गन	0 93	1 30
4 कार्बन डाई ऑक्साइड	0 03	0 05

हाइड्रोजन तथा अन्य अक्रिय गैसें—हीलियम, नियन, क्रिप्टान और जेनान भी वायुमण्डल मे पायी जाती हैं, पर इनकी मात्रा नगण्य है। 150 किमी से ऊपर के वायु मण्डल मे हाइड्रोजन और हीलियम की ही प्रचुरता रहती है।

औद्योगिकरण के विकास के साथ साथ विशेषत बडे नगरो की हवा मे प्रदूषक तत्व (कार्बन मोनो ऑक्साइड, गन्धक के ऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, मीथेन तथा कार्बन, सीसे और धूल के कण आदि) भी अब विचारणीय मात्रा मे पाये जाने लगे हैं।

इनके अतिरिक्त आयतन के अनुसार, पूरे वायुमण्डल के लगभग 4% के बराबर जलवाष्प हमेशा वायुमण्डल मे स्थित रहती है, जो स्थान और समय के अनुसार अत्यधिक परिवर्तनशील रहती है।

1 40 वायुमण्डल की सरचना (Structure of Atmosphere)

लगभग 100 किमी की ऊँचाई तक सभी गैसें, ऊपर दिये गये अनुपात मे मिश्रित रहती है, अर्थात् उनका मिश्रण सम (होमोजिनियस) होता है। वायुमण्डल के इस भाग को **सममण्डल** (होमोस्फीयर) कहते है, इसके ऊपर गैसें घनत्व के अनुसार स्थिति ग्रहण कर लेती हैं, अर्थात् भारी गैसें नीचे और हल्की गैसें ऊपर होती जाती हैं। यह भाग **विषम मण्डल** (हिटरोस्फीयर) कहलाता है। मोटे तौर पर वायुमण्डल को सम और विषम मण्डलो मे विभक्त करना ठीक है, परन्तु सममण्डल मे गठन (Composition) समान होते हुए भी भौतिक गुणो की विभिन्नता के कारण, वायु मण्डल कई तहो मे बाँटा जा सकता है। इन तहो का सक्षिप्त विवरण 1 50 म दिया गया है।

1 41 ह्रास दर (Lapse rate)

वायुमण्डल की निचली तहो मे तापमान ऊँचाई के साथ घटता जाता है क्योंकि हवा को गर्म करने वाली ताप किरणो का स्रोत, पृथ्वी की सतह है, न कि अतरिक्ष से आता हुआ सूर्य का विकिरण।

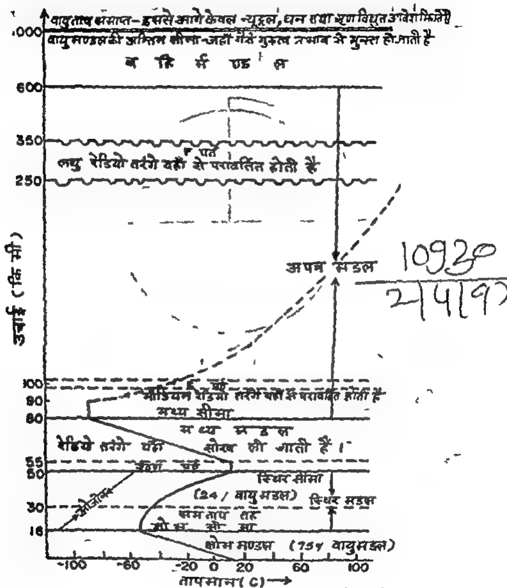
ऊँचाई के साथ तापमान घटने की दर को ह्रास दर कहते हैं। सामान्यत ह्रास दर का मान 6 5°C प्रति किमी लिया जाता है।

यदि किसी भाग मे तापमान ऊँचाई के साथ बढता है, तो ह्रास दर वहाँ ऋणात्मक होगी। अत ह्रास दर

$$\gamma = -\frac{dT}{dZ}$$

जहाँ dZ ऊँचाई का अतर, ऊपरी और निचली सतह के तापमान का अन्तर

1 50 चित्र 1 3 मे तापमान का उर्ध्वाधर बटन (Vertical distribution) दिखाया गया है, जिसके अनुसार वायुमण्डल के निम्नलिखित भाग किए गए हैं —

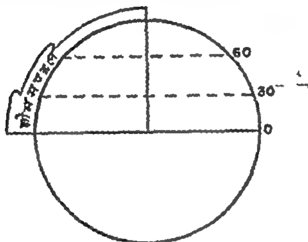


चित्र 1 3

(1) क्षोभ मण्डल (Troposphere)

वायुमण्डल की सबसे निचली तह क्षोभ मण्डल कहलाती है, जिसमे तापमान सामान्य ह्रास दर से ऊँचाई के साथ घटता जाता है। क्षोभ मण्डल की छत को क्षोभ सीमा (Tropo pause) कहते हैं। इसकी ऊँचाई भूमध्य रेखा पर सबसे ज्यादा, लगभग 16 किमी होती है। क्षोभ सीमा की ऊँचाई अक्षाश के साथ-साथ घटती जाती है तथा मध्य अक्षाशो में 12 और ध्रुव क्षेत्रो में 8 किमी के आस पास आ जाती है।

क्षोभ सीमा की ऊँचाई का घटाव हर जगह अविरत नहीं होता। उष्ण कटिबन्ध और मध्य अक्षांशों के संगम पर उष्ण कटिबन्धीय क्षोभ मण्डल मुड़कर नीचे आता है (चित्र 1 4) और मध्य क्षोभ मण्डल के रूप में आगे बढ़ता है। इसी कारण संगम क्षेत्र के आस-पास प्रायः दो क्षोभ सीमाएँ T_1 और T_2 मिलती हैं। इसी प्रकार, मध्य और उच्च अक्षांशों के संगम पर भी दुहरी क्षोभ सीमा पायी जाती है।



चित्र 1 4

वायुमण्डल की लगभग 75% मात्रा क्षोभ मण्डल में सीमित है। मौसम की घटनाएं सामान्यतः इसी तह में ही उत्पन्न होती हैं। वास्तव में क्षोभ तल से उठने वाली संवाहनिक वायुधाराएँ (Convective air currents) क्षोभ सीमा पार नहीं कर पातीं, जिससे पृथ्वी की नमी क्षोभ मण्डल से बाहर नहीं जा पाती। नमी ही मौसम घटनाओं का मूल कारण है।

क्षोभ सीमा का तापमान सबसे कम भूमध्य रेखा पर होता है, क्योंकि यहाँ उसकी ऊँचाई सर्वाधिक है। इसका औसत तापमान मध्य अक्षांशों पर लगभग – 55°C होता है।

अक्षांशों के अतिरिक्त, क्षोभ सीमा की ऊँचाई ऋतुओं के अनुसार भी बदलती है। गर्मियों में यह सीमा अधिक ऊपर एवं सर्दियों में नीचे आ जाती है।

(2) स्थिर मण्डल (Stratosphere)

क्षोभ सीमा के ऊपर तापमान, करीब 30 किमी की ऊँचाई तक या तो अपरिवर्तित रहता है या बहुत धीरे धीरे बढ़ता जाता है। यह भाग समताप तह (Isothermal Layer) कहलाती है। इसके बाद तापमान तेजी से बढ़ता है। इस वृद्धि की सीमा 50 किमी है जिसे स्थिर सीमा (Strato-pause) कहते हैं। क्षोभ सीमा और स्थिर सीमा के बीच का वायुमण्डल, स्थिर मण्डल के नाम से जाना जाता है। कुल हवा का 24% भाग इस मण्डल में विद्यमान है और शेष 1% इसके ऊपर।

यह नाम सम्भवत इसलिए दिया गया कि संवाहनिक धाराओं तथा नमी के अभाव मे यह भाग मौसम रहित और स्थिर (stable) तहों स बना होता है। वायु प्रवाह विभिन्न तहों मे क्षैतिज होता है।

समताप तह उच्च अक्षांशो मे ही अधिक विकसित होती है। निम्न अक्षांशो मे तापमान क्षोभ सीमा के बाद ही ऊँचाई के साथ बढने लगता है। यह अतिरिक्त वृद्धि उस अन्तर को लगभग पूरा कर लेती है, जो उच्च और निम्न अक्षांशो की क्षोभ सीमा के तापमानो मे होता है। इसी कारण, सभी अक्षांशो पर स्थिर सीमा के तापमान मे अद्भुत समता पाई जाती है। यह तापमान समुद्रतल के तापमान के लगभग बराबर होता है।

स्थिर मण्डल मे तापमान वृद्धि का कारण ओजोन गैसें हैं। कुल वायुमण्डलीय ओजोन मुख्यत 15 से 45 किमी ऊँचाई के बीच सीमित है, जिसकी अधिकतम सान्द्रता 22 किमी के आस-पास पाई जाती है। ओजोन में सूर्य से आती पराबैंगनी (ultra violet) किरणों को सोखने की अत्यधिक क्षमता है। यही शोषित ताप किरणें स्थिर मण्डल में उच्च तापमान बनाए रखने मे सहायक होती है।

1 51 वायुमण्डलीय ओजोन

ओजोन (O_3) गैस, आक्सीजन (O_2) का ही त्रि परमाणुविक (triatomic) रूप है, जो वायुमण्डल में पराबैंगनी किरणो द्वारा ऑक्सीजन अणुओ के प्रकाशिक नियोजन (photo dissociation) से निर्मित होता है। इस क्रिया मे O_2 का अणु, नवजात (nascent) ऑक्सीजन (O) के दो परमाणुओ मे टूट जाता है और प्रत्येक परमाणु O_2, से संयोग कर O_3 बना लेता है। यह प्रक्रिया श्रृंखला रूप म निरन्तर होती रहती है।

वायुमण्डल की कुल ओजोन यदि समुद्रतल की सतह पर उतार दी जाए, तो ओजोन पर्त की ऊँचाई 3 मिलीमीटर होगी। इससे वायुमण्डलीय ओजोन की मात्रा का अनुमान लगाया जा सकता है। 15 से 45 किमी ऊँचाई के भाग को, जिसमे ओजोन अधिकता से पाई जाती है, कुछ विद्वान् ओजोन मण्डल (Ozonosphere) कहते हैं। इसी भाग को रासायनिक प्रक्रियाओ के कारण रसायन मण्डल (Chemosphere) भी कहा जाता है।

उत्तरी गोलार्द्ध मे किए गए प्रयोगो से प्राप्त निष्कर्ष के अनुसार, ओजोन की मात्रा भूमध्य रेखा से अक्षांश के साथ बढती जाती है और 60° उ पर अधिकतम होने के बाद ध्रुव की ओर फिर घटने लगती है। ओजोन की मात्रा ऋतुओ के अनुसार भी परिवर्तनशील है। हर अक्षांश पर यह मात्रा बसन्त ऋतु के प्रारम्भ मे अधिकतम और पतझड के अंतिम दिनो (अक्टूबर) मे निम्नतम होती है।

इसके अलावा ओजोन मे दैनिक चलन (Diurnal Variation) भी नोट किया गया है। ऐसा अनुमान है कि यह परिवर्तन पृथ्वी तल पर नित्य प्रति होने वाली मौसम घटनाओं मे सम्बन्धित है। लेकिन यह सम्बन्ध अभी तक स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं किया जा सका है।

1 52 स्थिर सीमा के ऊपर लगभग 5 किमी तक, तापमान स्थिर रहता है और फिर घटने लगता है। स्पष्ट है कि 50 से 55 किमी पर्त का तापमान ऊपर-नीचे की तहो की अपेक्षा ज्यादा रहता है। इस पर्त को वायुमण्डल की उष्ण पर्त (Warm Layer) कहते हैं।

(3) मध्य मण्डल (Mesosphere)

उष्ण पर्त के उपर 80 किमी की ऊँचाई तक, तापमान निरन्तर घटता जाता है। यह भाग मध्य मण्डल और इसकी छत मध्य सीमा (meso pause) कहलाती है। मध्य सीमा का तापमान – 80°से – 90°C तक होने का अनुमान है। मध्य मण्डल की पर्तों मे यह गुण है कि सूर्य किरणो की प्रक्रिया से वे रेडियो तरगो को मोख लेती हैं। इसी कारण, दिन मे रात की अपेक्षा कम आवृत्तियों(frequencies)पर रेडियो प्रसारण सभव हो पाता है।

मध्य सीमा के आस-पास गर्मियो मे कभी कभी कुछ चमकीले बादल आ जाते हैं। इन्हे निशादीप्त (noctilucent) मेघ कहते हैं। वास्तव मे उल्का पिडो के टूटने से यहा धूल काफी मात्रा मे केन्द्रित हो जाती है और धूल कणो के चारो ओर बर्फ के रव जमकर बादल बन जाते हैं।

(4) आयन-मण्डल (Ionosphere)

मध्य सीमा के ऊपर 500 से 600 किमी ऊँचाई तक, सारा वायुमण्डल पराबगनी किरणों की प्रक्रिया से आयनीकृत होता रहता है, जिससे इस भाग मे पर्याप्त स्वतन्त्र इलैक्ट्रान पैदा होते रहते हैं। इस भाग को **आयन मण्डल** कहते हैं। या तो आयनीकरण की परिस्थितिया और अधिक ऊँचाई पर पायी जाती हैं परन्तु 600 किमी के ऊपर, वायुमण्डल इतना विरल हो जाता है कि स्वतन्त्र इलैक्ट्रान का पाया जाना सीमित हो जाता है। अत 600 किमी आयन मण्डल की सीमा मानी जा सकती है।

आयन मण्डल में दो मुख्य पर्ते हैं, जहाँ इलैक्ट्रान की सान्द्रता सर्वाधिक होती है। पहली पर्त E–पर्त है जो 100 किमी के आस पास स्थित है। दूसरी पर्त F–पर्त कहलाती है, यह 250 से 350 किमी तक विद्यमान रहती है। F–पर्त दिन मे अक्सर F_1 और F_2 नामक दो पर्तों मे टूट जाती है।

E–पर्त सूर्य की रोशनी मे ही अधिक विकसित होती है और मीडियम रेडियो तरगों को परावर्तित कर देती है। लघु तरगें (short wave) F–पर्त से परावर्तित होती है।

आयन मण्डल मे तापमान ऊँचाई के साथ बढता जाता है। ये अक्षांश और समय के साथ परिवर्तनशील हैं। E–पर्त का तापमान 170°C से 230°C तक हो सकता है।

रग बिरंगे प्रकाश, जो बहुधा उच्च अक्षाशो मे दिखाई देता है, आयन मण्डल मे ही उत्पन्न होता है। ये प्रकाश पुज ध्रुवीय प्रकाश या सुमेरु ज्योति (aurora) कहलाते हैं। ध्रुवो पर, जहाँ 6 महीने की रात होती है, गुलाबी और बगनी प्रकाश अधिक चमकता है।

सभवत पराबैंगनी किरणो द्वारा आवेशित कणो के वायु अणुओ से घर्षण के कारण ही यह विद्युत प्रकाश पैदा होता है। कभी-कभी यह प्रकाश 1000 से 1100 किमी की ऊँचाई पर भी देखा गया है जिससे इतनी ऊँचाई पर वायु कणो के पाये जाने का आभास मिलता है।

(5) बहिर्मण्डल (Exosphere)

आयन मण्डल से कुछ वायु कण जो आयनीकृत होने से बच जाते हैं विसरित होकर आयन मण्डल से ऊपर आ जाते हैं। ये कण 600 से 1000 किमी की ऊँचाई तक पाये जाते हैं। इनके अलावा इस भाग मे आयनीकृत आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन तथा हीलियम के

कण भी पाये जाते हैं । हीलियम यहाँ नाइट्रोजन अणुओं पर कास्मिक किरणों की प्रक्रिया से बनती है । गुरुत्वाकर्षण की क्षीणता के कारण ये कण अक्सर शून्य में खोते रहते हैं । एक स्तर ऐसा होता है, जिस तक कण गुरुत्व शक्ति से बंधे रहते हैं । यहाँ कणों का जमाव अपेक्षाकृत ज्यादा होता है और यही हमारे वायुमण्डल की सीमा है ।

इस सीमा से ऊपर वायुतत्त्व समाप्त हो जाता है और कणों का चुम्बकीय तत्त्व (धन, ऋण या उदासीन आवेश) ही बाकी रहता है । करीब 2000 किमी की ऊँचाई तक न्यूट्रान (उदासीन आवेश) तथा उसके बाद प्रोटान (धन आवेश) और इलेक्ट्रान (ऋण आवेश) ही पाये जाते हैं । इसे चुम्बक मण्डल (magneto sphere) कहा जा सकता है । चुम्बक मण्डल का दूसरा सिरा सम्भवत अन्तग्रहीय (inter planetary) प्रभाव मण्डल में जाकर मिलता है ।

1 60 वायुमण्डलीय प्रदूषण एव पर्यावरण सतुलन

वायुमण्डल मे ऐसी कई गसें हैं जो मानव व वनस्पति के लिये घातक हैं । इनमे कई प्राकृतिक रूप स पाई जाती हैं तो कई मिश्रण उत्पाद हैं । वनस्पति व महासागर ईंधन दहन से उत्पन्न कार्बन डाई आक्साइड को सोखकर इसे प्राण-वायु में परिवर्तित कर देते हैं । ज्वालामुखी उद्गार, धूलिकणों का बड़ा भाग वायुमण्डल की निचली परत म प्रवेश कर प्राणवायु को अशुद्ध कर देता है । घने बसे नगरों में कल-कारखानों की चिमनियों से उठता धुआ, राखकण, मोटरो, रेलगाडियो व अन्य यान्त्रिक वाहनो से उच्छसृरित रासायनिक गैसें-कार्बन डाइ आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, नाइट्रोजन आक्साइड, मीथेन वायु का विषैली बना देते हैं । समताप मण्डल की ऊपरी ओजोन की परत जो सौर विकिरण से उत्पन्न पराबैंगनी किरणों को सोखकर हमारे रक्षा कवच का काम करती है, इससे दुष्प्रभावित होती है ।

औद्योगिक व घरेलू उपयोग में आने वाले द्रव ईंधन पेट्रोल, डीजल व ठोस ईंधन खनिज कोयला के दहन म उत्पन्न गैसें, खुले गटर, नाबदान, खानो से उडते धूलकण, समुद्री लहरों के क्षार से लवणकण तथा रेडियाधर्मी धूल वायु प्रदूषण के प्रमुख कारक हैं ।

एक लीटर पेट्रोल व डीजल जलने पर 9 6 तथा 16 4 कि ग्रा गैस छोडते हैं । रासायनिक तौर पर प्रदूषण का अनुपात निम्न है ।

सारिणी 1 3

	प्रदूषक	पेट्रोल %	डीजल %
1	कार्बन मोनो आक्साइड	4–8	अत्यल्प
2	कार्बन डाइ ऑक्साइड	20–25	25–28
3	सल्फर डाइ आक्साइड	0–1	0–2
4	नाइट्रोजन	60–70	60–70
5	नाइट्रोजन ऑक्साइड	2–5	1–2
6	सीसे तथा कार्बन के कण	अत्यल्प	अत्यल्प

इन गैसो म कार्बन मोनो आक्साइड अधिक घातक है। कार्बन डाइ आक्साइड [illegible] म वायु के समान होने स हवा म घुल जाती है। कार्बन डाई आक्साइड गैस की सरचना म [illegible] आक्सीजन की खपत होती है। फलत प्रतिवर्ष कार्बनडाई आक्साइड की मात्रा 0 7 ppm बढ रही है। आक्सीजन घटने के साथ इससे पृथ्वी के ताप म वृद्धि हो रही है जो पर्यावरण सतुलन के लिये उचित नही है। ताप वृद्धि से किसी दिन पृथ्वी मानव व वनस्पति रहित रेगिस्तान का रूप ले लेगी।

समताप वायुमण्डल पर उडान भरने वाले वायुयान एक घण्टे म 66 टन ईधन दहन करते हैं जिनसे 72 टन कार्बन डाइ आक्साइड व 81 टन वाष्प निस्सारित होता है। आने वाले युग म सीमपार विमानो म प्रयुक्त ईधन समताप मण्डल को दुष्प्रभावित किये बिना नही रहेंगे।

जिन पर्वतीय घाटियो म विस्फोटो व यान्त्रिक साधनों से खनन होता है वहाँ धूलिकरण वायु मे छितरा जाते हैं और धूलमिश्रित वायु पुन घाटी म smog के रूप म उतर कर जन-जीवन व वनस्पति को हानि पहुँचाती है।

पर्यावरण सतुलन तथा वायु प्रदूषण रोकने के लिय वर्तमान मे कई प्रयत्न किये जा रहे हैं। घने बसे शहरो के निकट वनस्थलियो का विकास और वायु प्रदूषण मात्रा मापी यन्त्र लगाकर रोकथाम की जाने लगी है। कल-कारखानो की चिमनियो म शोधक यन्त्र लगाकर वायु प्रदूषण से बचाव की प्रक्रिया पर ध्यान दिया जाने लगा है।

2

दाब और ऊँचाई

(PRESSURE AND HEIGHT)

2 10 मौसम के मुख्य तत्व (Principal Weather elements)

पृथ्वी की सतह और उस पर स्थित वायुमण्डल एक विशाल प्रयोगशाला है, जिसमे हम मौसम का अध्ययन करना पडता है । इस प्रयोगशाला मे निरन्तर घटित होने वाली मौसम की घटनाएँ, अपनी विशालता और अनियमितता के कारण हमारी नियन्त्रण क्षमता से बाहर होती हैं । अत उनकी प्रकृति (nature) की सही जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है । फिर भी दबाव, गति, वाष्पीकरण और सघनन (Condensation), विकिरण और शीतलन आदि मे लगने वाले भौतिकी (Physics) के नियमो के आधार पर, मौसम की दुरूह प्रणालियो की व्याख्या की जा सकती है । इन नियमो की रोशनी मे मौसम विज्ञान के मुख्य तत्वो का परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक है । ये तत्व निम्नलिखित हैं—

(1) दाब (pressure) और ऊँचाई (height) ।
(2) तापमान (temperature) और घनत्व (density) ।
(3) विकिरण (radiation) ।
(4) आर्द्रता (humidity), मेघाच्छन्नता (cloudiness) और वर्षा (Precipitaion) ।
(5) वायु गति ।

2 20 वायु दाब (Atmospheric-pressure)

पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के कारण ही, वायुमण्डल पृथ्वी पर टिका है। अत वायुमण्डल पृथ्वी की सतह पर भार डालता है । किसी बिन्दु के चारो ओर इकाई क्षेत्रफल पर खडे वायु-स्तम्भ का कुल भार उस बिन्दु का वायुदाब कहलाता है ।

यदि बिन्दु कुछ ऊँचाई पर लिया जाए, तो उसके ऊपर खडे वायु-स्तम्भ की ऊँचाई कम होगी अत उस बिन्दु पर वायु दाब पृथ्वी तल के वायु दाब से कम होगा । जैसे जैसे हम ऊँचे चढते जाएँगे, वायुदाब कम होता जाएगा । इससे यह स्पष्ट है कि 'वायु दाब ऊँचाई के साथ घटती है ।' इस बात का पता सबसे पहले पास्कल (Pascal) नामक वैज्ञानिक ने सन् 1943 मे स्वय पहाडियो पर चढकर लगाया था । चूँकि ऊपर हवा अत्यधिक विरल होने लगती है, अत वायुदाब ऊँचाई के साथ घातांकीय नियमो से घटता है । यदि पृथ्वी तल पर वायुदाब P हो तो 6 कि मी पर दाब $\frac{P}{2}$, 50 किमी की ऊँचाई पर $\frac{P}{1000}$ और 100 कि मी की ऊँचाई पर $\frac{P}{10,00,000}$ के लगभग होगा ।

2 21 इकाई (Unit)

वायुदाब की मीट्रिक इकाई डाइन प्रति वर्ग स मी है, परन्तु बैरोमीटर मे यह पारद स्तम्भ की उस ऊँचाई (से मी) के रूप मे व्यक्त की जाती है, जो वायुदाब के सतुलन पर बैरोमीटर नली म खडा होता है । समुद्र तल पर बगेमीटर का औसत पाठक 76 से मी होता है ।

अत समुद्र तल पर औसत वायुदाब = $76 \times 13\ 6 \times 981$ = 1013 250 डाइन/से मी ^{2}

वायुदाब की बडी इकाई 10^6 डाइन से मी ^{2} के बराबर है । यह परिमाण समुद्र तल पर औसत वायुदाब के क्रम (order) का है । भौतिकी मे यह इकाई वायु मण्डल (atmosphere) और मौसम विज्ञान मे बार (bar) कहलाती है ।

अत 1 वायुमण्डल = 1 बार = 10^6 डाइन/से मी ^{2}

मौसम विज्ञान की सर्वाधिक प्रचलित इकाई मिलीबार है, जो एक 'बार' क हजारवें भाग के बराबर है । इस प्रकार

1 बार = 1000 मिलीबार

और 1 मिलीबार = 1000 डाइन/से मी ^{2}

अत औसत समुद्रतलीय वायुदाब = 1013 25 मिलीबार

2 22 वायुदाब का माप (Measurement of atmospheric pressure)

वायुदाब मापी दो प्रकार के होते हैं

(1) पारद वायुदाब मापी (Mercury Barometer)

फोर्टिन और क्यू प्रकार (Kew pattern) के बैरोमीटर इस श्रेणी के हैं । दोनो ही, एक मीटर लम्बे शीशे की नली मे पारा भरने के सिद्धान्त पर बने है । फोर्टिन के निचले भाग मे चमडे की एक थैली (cistern) होती है, जिसम स्थिर पारे तल को, पाठाक लेने से पहले एक सूचक (pointer) से स्पर्श करना पडता है क्योकि पैमाने का शून्य, सूचक की नोक से ही आरम्भ होता है । क्यू प्रकार मे पाठाक की सुविधा के लिए थैली सिस्टन व्यवस्था को हटा दिया गया है । इस अन्तर का क्यू वायुदाब मापी के पमाने का अकीकृत (Calibrate) करते समय सामजस्य (adjustment) कर लेते है । क्यू पमाने का प्रत्येक खाना फोर्टिन पैमाने के खाने से थोडा सकुचित होता है । सकुचन गुणक (K) का निम्न लिखित मान साधारण गणना से ज्ञात किया जा सकता है

$$K = \frac{A}{A+a}$$

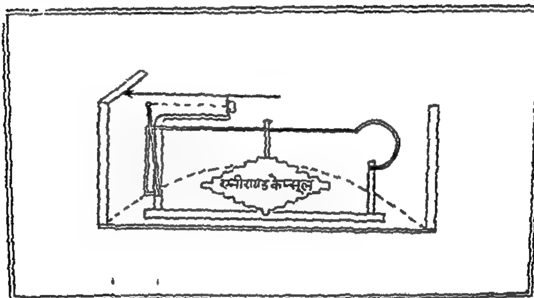
जहाँ A, और a क्रमश सिस्टन तथा पारद नली के अनुप्रस्थ काट के क्षेत्रफल हैं ।

अत क्यू वायुदाब मापी का एक खाना = K फोर्टिन का एक खाना ।

(2) निर्द्रव दाबमापी (एनीरायड बैरोमीटर)

धनारीदार (Corrugated) धातु स बनी डिस्क के आकार के कुछ बक्सो की

एक कतार होती है। प्रत्येक बक्स के अन्दर से हवा निकाल दी जाती है। दाब बढ़ने से इन बक्सों में संकुचन होता है तथा दाब घटने से ये फूल जाते हैं। बक्सों की मोटाई में यह परिवर्तन बहुत थोड़ा होता है, जिसे लीवर प्रणाली से आवर्धित कर लिया जाता है। दाब के परिवर्तन से एक निर्देशक (प्वाइंटर) गतिशील हो उठता है, जो एक गोलाकार पैमाने पर घूमकर दाब का माप बतलाता है।



चित्र 2.1

बैरोग्राफ—बैरोग्राफ वह यन्त्र है, जो किसी स्थान पर दाब का मान स्वयमेव, हर क्षण अंकित करता जाता है। यह मूल रूप से निद्रव दाबमापी ही होता है, जिसकी लीवर प्रणाली से एक पेन आर्म सम्बन्धित कर दिया जाता है और इस पेन आर्म का एक बेलनाकार क्लाक ड्रम से लिपटे चार्ट पर टिका दिया जाता है। क्लाक ड्रम अपने कक्ष पर घूमता रहता है और 24 घण्ट में एक चक्कर पूरा करता है, इस प्रकार, वह स्वयं ही घड़ी भाँति समय-सूचक बन जाता है अतः पेन आर्म की कलम, ड्रम पर लिपटे चार्टपर 24घण्टे लगातार दाब का मान अंकित करती जाती है। यह चार्ट बैरोग्राम (Barogram) कहलाता है।

2.23 मैदानी मौसम वेधशालाओं में अधिकतर क्यू-वायुदाब मापी का प्रयोग होता है, किन्तु पहाड़ी स्थानों में सिस्टर्न व्यवस्था के कारण फोर्टिन बैरोमीटर ही उपयोगी है क्योंकि दाब कम होने पर नली से अतिरिक्त पारा सिस्टन में आ सकता है। फोर्टिन, क्यू प्रकार के मुकाबले ज्यादा सही भी होता है, क्योंकि पारद नली और सिस्टन की हर बिन्दु पर समता (यूनिफार्मिटी) की गारण्टी न होने के कारण, A और a का बिल्कुल सही मान ज्ञात करना असम्भव है। अतः संकुचन गुणक का त्रुटिपूर्ण रहना स्वाभाविक है।

2.24 वायुदाब मापी के पाठांक में निम्नलिखित संशोधन करने के बाद किसी स्थान का सही वायुदाब निकलता है।

(1) निदेशाक समायोजन (Index-Correction)

पैमाने का शून्य सही न होने से, पैमाने के खाने त्रुटिपूर्ण होने से अथवा नली म पारे के ऊपर का शून्य स्थान अशुद्ध होने से, पाठाक गलत हो सक्ता है। मान लीजिए यह त्रुटि δ के बराबर है। तब यदि दावमापी का पाठाक P और वास्तविक वायुदाब p हो तो

$$P = p + \frac{2T}{r} + \delta,$$

जहा $\frac{2T}{r}$ पारद तल पर लगने वाला जलीय तनाव (Surface tension) का बल है। T पारे का जलीय तनाव और r नली की त्रिज्या है। व्यजक $\frac{2T}{r} + \delta$ निदेशाक त्रुटि कहलाती है। और,

निदेशाक समायोजन = निदेशाक त्रुटि।



चित्र (22)

सामान्यत किसी वायुदाब मापी की निदेशाक त्रुटि उसके और एक मानक (स्टैन्डर्ड) वायुदाब मापी के पाठाका की तुलना करके ज्ञात की जाती है। मानक के पाठाक से जितना अन्तर होगा, वही दावमापी की निदेशाक त्रुटि होगी। किसी वायुदाब-मापी को इस्तेमाल मे लाने से पूर्व उनकी निदेशाक त्रुटि ज्ञात कर लेनी आवश्यक है।

2 तापमान (Temperature) और गुरुत्व (Gravity) समायोजन

तापमान बदलने के साथ, वायुदाब मापी के पैमाने तथा पारे मे प्रसार या सकुचन हो सकता है, जिसका परिमाण भिन्न तापमाना पर अलग अलग होगा।

इसी प्रकार, स्थान के साथ गुरुत्व शक्ति बदलते रहने के कारण, विभिन्न स्थानो के वायुदाब मापियो के पाठाको मे एक तुलनात्मक त्रुटि पायी जाती है।

इसलिये सवत्र पाठाको म एकरूपता स्थापित करने के लिए विश्व मौसम सघ ने सन् 1957 मे नया दावमापी सम्मति (Convention) घोषित किया। इसके अनुसार, पैमाने और पारे, दोनो के लिए मानक तापमान 0°C और मानक गुरुत्व 980 665 से मी/सैकन्ड² मान लिया गया है। गुरुत्व का यह परिमाण लगभग 45 अश अक्षाश पर मिलता है।

किसी भी तापमान और गुरुत्व पर लिए गये पाठाक को, मानक तापमान और मानक गुरुत्व पर समायोजित करना पडता है। इन्हे क्रमश तापमान और गुरुत्व समायोजन कहते हैं।

मान लीजिए, किसी स्थान पर पारद स्तम्भ की ऊँचाई h गुरुत्व g और उस तापमान पर पारे का घनत्व d है। यदि पारे की वास्तविक ऊँचाई H हो तो

$$hdg = H\, d_o g_n,$$

जहा d_o, 0°C पर पारे का घनत्व तथा g_n, मानक गुरुत्व है।

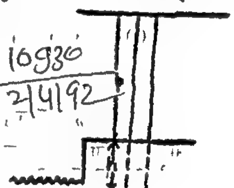
$$\text{अत}\quad H = \frac{hdg}{d_o g_n}$$

स्पष्ट है कि 45° अक्षाश से नीचे के स्थानो पर गुरुत्व समायोजन ऋणात्मक होगा।

(3) उपर्युक्त समायोजन लागू करने के बाद हमें स्टेशन स्तर पर सही दाब मिलता है। किन्तु यह स्तर विभिन्न वेधशालाओ मे अलग-अलग होता है। अत दाब प्रेक्षणो को सर्वत्र तुलनात्मक बनाने के लिए, उन्हे माध्य समुद्र तल (मीन सी लेविल) पर अवतरित (रिड्यूस) कराया जाता है। माध्य समुद्र तल एक काल्पनिक तल है, जहा वायुदाब 1013 25 मिलीबार माना जाता है। इसके लिए स्टेशन स्तर दाब मे, उस काल्पनिक वायु स्तम्भ का दाब जोडना पडता है जो माध्य समुद्र तल से स्टेशन तक खडा है। चित्र (2 3) के अनुसार यदि स्टेशन स्तर पर दाब p हो तो माध्य समुद्र तल पर अवतरित दाब

$$p' = p + p_1,$$

जहाँ p_1 माध्य समुद्र तल से स्टेशन स्तर की वायुस्तम्भ का दाब है।



चित्र (2 3)

2 30 दाब और ऊँचाई (तुगता)

दाब, ऊँचाई के साथ कम होता जाता है। किसी निश्चित ऊँचाई पर दाब की यह कमी, भूमितल से उस ऊँचाई तक इकाई क्षेत्रफल पर खडे वायु-स्तम्भ के भार के बराबर होगी। यह भार हवा के घनत्व अथवा तापमान पर निर्भर करता है।

हवा, चूँकि ऊपर विरल होती जाती है, अत विभिन्न दाब स्तरो पर मिलीबार दाबान्तर के लिए वायु-स्तम्भ की ऊँचाइयाँ अलग-अलग होती है। एक मोटे अनुमान के अनुसार एक मिलीबार दाबान्तर के समकक्ष ऊँचाई

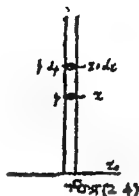
1000 मिलीबार पर 8 5 मीटर,

500 मिलीबार पर 15 0 मीटर और

100 मिलीबार पर 63 0 मीटर होगी।

2 31 दाब और ऊँचाई मे सम्बन्ध—लाप्लास सूत्र

भूमितल से Z ऊँचाई पर मान लीजिए वायुदाब p है।



चित्र (2 4)

इस सतह पर dZ ऊँचाई की एक पतली तह पर विचार कीजिए, जिसके ऊपरी तल पर दाब $p-dp$ है ।

$-dp$ = तह dZ में स्थित वायु का भार

$= g\varrho dZ$ (i)

जहा ϱ, तह में स्थित हवा का घनत्व है ।

सार्वलौकिक (यूनीवर्सल) गैस नियम के अनुसार $p\alpha = RT$, (ii)

जहां T निरपेक्ष तापमान, R सार्वलौकिक गैस स्थिरांक और ϱ वायु का विशिष्ट आयतन (आयतन प्रति इकाई मात्रा है) ।

$$\alpha = \frac{\text{आयतन}}{\text{मात्रा}} = \frac{1}{\varrho} \quad \text{(iii)}$$

$$\text{(ii) और (iii) से } \varrho = \frac{p}{RT} \quad \text{(iv)}$$

ϱ का मान (i) में रखने से

$$\frac{dp}{p} = -\frac{g}{RT}\, dZ \quad \text{(v)}$$

यदि g का ऊँचाई के प्रति परिवर्तन छोड़ दिया जाए और T के स्थान पर z_o और z के बीच का औसत तापमान $\bar{T}$ रख दिया जाए, तो

$\frac{g}{R\bar{T}}$ अचर (Constant) हो जाएगा । तब,

$$\int_{p_o}^{p} \frac{dp}{p} = -\frac{g}{R\bar{T}} \int_{z_o}^{z} dZ$$

या $l_n \frac{p}{p_o} = -\frac{g}{RT'}(z - z_o)$, जहाँ p_o, z_o स्तर पर वायुदाब है,

मध्य समुद्र तल पर $z_o = 0$

अत मध्य समुद्र तल से दाब तल p की ऊँचाई,

$$Z = \frac{RT'}{g} l_n \frac{p_o}{p} = \frac{2\ 3026\ RT'}{g} \log \frac{p_o}{p}$$

$$\text{या } Z = KT' \log \frac{p_o}{p} \quad \text{(vi)}$$

यह लाप्लास सूत्र कहलाता है ।

2.32 T' का मान केल्विन इकाई मे दिया जाना चाहिए। यदि Z की इकाई मीटर हो, तो $K = 67.4$ और यदि Z फीट मे ली जाए, तो $K = 221.1$

धारा 2.31 के समीकरण (v) से

$$dZ = -\frac{RT}{gp}\,dp$$

यदि $dp = 1$ मिलीबार हो, तो R और g का मान उपर्युक्त समीकरण मे रखने से

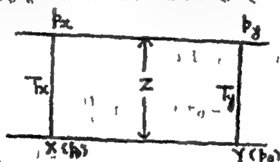
$$dZ = 28.3\frac{T}{p} \text{ मीटर होगा।}$$

इस प्रकार, p दाब स्तर पर एक मिलीबार दावान्तर के समकक्ष ऊँचाई $= 28.3\frac{T}{p}$ मीटर,

जहाँ, T, केल्विन इकाई मे तापमान और p, मिलीबार मे दाब है।

2.33 जिस स्थान पर वायु पर्त का औसत तापमान अधिक होता है, वहा पर्त के ऊपरी तल पर सामान्यत उच्च दाब बन जाता है।

मान लीजिए, भूमितल पर X और Y दो स्थान हैं, जहाँ वायुदाब समान (p_o) है।



चित्र 2.5

दोनो स्थानो पर Z ऊँचाई की वायु पत का औसत तापमान T_x और T_y इस प्रकार है

$$T_x > T_y \qquad \text{(i)}$$

लाप्लास सूत्र के अनुसार,

$$Z = KT_x \log\frac{p_o}{p_x} = KT_y \log\frac{p_o}{p_y} \qquad \text{(ii)}$$

जहाँ p_x और p_y क्रमश स्थान X और Y पर पर्त के ऊपरी तलो के दाब है।

(i) और (ii) से $\log\frac{p_o}{p_x} < \log\frac{p_o}{p_y}$

$$\text{या } \frac{p_o}{p_x} < \frac{p_o}{p_y} \qquad \text{या } p_x > p_y \qquad \text{(iii)}$$

2.34 उपयुक्त व्यञ्जक से स्पष्ट है कि यदि किसी स्थान की वायुपत के ऊपरी सतह का दाब अधिक हो, तो उस पर्त का औसत तापमान भी अधिक होगा।

2 35 उदाहरण

प्रश्न—यदि स्टेशन A पर दाब और तापमान का आंकड़ा निम्नांकित हो, तो 700 मिलीबार स्तर की ऊँचाई ज्ञात कीजिए।

दाब (मिलीबार)	तापमान (°C)
1014 (माध्य समुद्र तल)	16
1000	14
900	10
800	8
700	5

हल—इस प्रश्न मे चार वायु-तह (1014–1000, 1000–900, 900–800 और 800–700 मिलीबार) दिए गए हैं। इन तहो की अलग अलग मोटाई (thickness) ज्ञात करके जोड देने से 700 मिलीबार की सही ऊँचाई ज्ञात हो जाएगी।

पहले तह (1014–1000) का औसत तापमान $T' = \frac{16+14}{2} = 15°C$

$= 288°K$

इस तह की मोटाई, $Z_1 = KT' \log \frac{p_o}{p}$

$= 67\ 4 \times 288 \log \frac{1014}{1000} = 116\ 5$ मीटर

दूसरे तह (1000–900) का औसत तापमान $= \frac{14+10}{2} = 12$ C

$= 285°K$

इस तह की मोटाई, $Z_2 = 67\ 4 \times 285 \times \log \frac{1000}{900}$

$= 879\ 6$ मीटर

इसी प्रकार, $Z_3 = 67\ 4 \times 282 \log \frac{900}{800}$

$= 971\ 2$ मीटर

और $Z_4 = 67\ 4 \times 279\ 5 \times \log \frac{800}{700}$

$= 1092\ 6$ मीटर।

अत 700 मिलीबार स्तर की अभीष्ट ऊँचाई

$Z = Z_1 + Z_2 + Z_3 + Z_4$

$= 2959\ 9$ मीटर

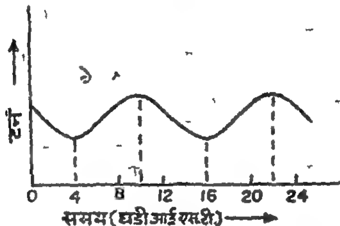
2.40 एक स्थान पर दाब का चलन (Variation of pressure at a place)

किसी स्थान पर दाब में निम्नांकित प्रकार के चलन होते हैं —

1. दैनिक चलन (Diurnal Variation)।
2. मौसमी चलन (Seasonal Variation)।
3. अनियमित दाब चलन, जैसे—

गतिशील दाब प्रणालियों के प्रभाव से उत्पन्न चलन।

(1) दैनिक चलन



चित्र (2.6)

दाब का दैनिक चलन एक नियमित दोलन (Oscillation) है, जो 24 घण्टे में दो बार निम्नतम, और दो बार उच्चतम, प्रदर्शित करता है।

स्थानीय समय के अनुसार, सुबह 4 बजे और शाम के 4 बजे दाब निम्नतम और सुबह 10 बजे तथा रात के 10 बजे उच्चतम होता है।

दाब उच्चतम और दाब निम्नतम का अंतर, अर्थात् दाब चलन का परिसर (रन्ज) भूमध्य रेखा पर सबसे अधिक होता है और फिर अक्षांशो के साथ लगातार घटता जाता है। ध्रुवीय अक्षांशो पर दैनिक चलन नगण्य हो जाता है।

दैनिक दाब चलन के औसत परिसर के आंकड़े इस प्रकार हैं—

भूमध्य रेखा पर = 5.08 मिलीबार

मध्य अक्षांशो में = 1.38 मिलीबार

ध्रुवीय क्षेत्रों में = अत्यल्प

इस अर्द्ध दैनिक विचलन का कारण ताप जनित (thermal) है। 24 घण्टो मे तापमान एक बार निम्नतम और एक बार उच्चतम होता है। इनमे से प्रत्येक, वायुमण्डल मे एक दोलन उत्पन्न करता है, जिसका प्राकृतिक दोलन समय 12 घण्टे का है। फलस्वरूप, हर 12 घण्टे मे किसी स्टेशन के वायुमण्डल मे एक बार सकुचन (compression) और एक बार प्रसार (expansion) होता है। सकुचन के समय दाब उच्चतम और प्रसार के समय निम्नतम हो जाता है। इस तरह हर 6 घण्टे के बाद सकुचन और प्रसार की लहरें क्रमश आती रहती हैं।

(2) मौसमी चलन

ऋतुओं के अनुसार किसी स्थान पर दाब का परिवर्तन, मुख्य रूप से वहाँ की भौगोलिक अवस्था पर निर्भर करता है, क्योंकि सूर्य की ऊष्मा विभिन्न सतहों को अलग अलग मात्रा में गर्म करती है। स्थलीय भाग, गर्मियों में शीघ्र सूर्य की ऊष्मा ग्रहण करके जल की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाता है। सर्दियों में शीघ्र ऊष्मा खो देने के कारण स्थल भाग, जल की अपेक्षा अधिक ठंडा रहता है। इसके कारण निम्नांकित हैं—

1 सूर्य की किरणें जमीन में कुछ सेण्टीमीटर से ज्यादा प्रवेश नहीं कर पाती, जबकि जल में ये लगभग 10 मीटर की गहराई तक घुसती हैं।

2 मिट्टी की विशिष्ट ऊष्मा जल की अपेक्षा बहुत कम है।

3 जल में संवाहनिक धाराएँ (convective current) उत्पन्न हो जाती हैं जो ऊष्मा को दूर दूर तक फैला देती हैं। भूमि पर ताप का स्थानान्तरण सिर्फ संचालन विधि से ही होता है और मिट्टी की संचालकता बहुत कम है।

उपर्युक्त कारणों से गर्मी के दिनों में स्थल का भाग निम्न दाब का क्षेत्र बन जाता है, जबकि जल का भाग अपेक्षाकृत उच्च दाब का क्षेत्र रहता है। सर्दियों में जल का भाग अधिक गर्म होने से निम्न दाब क्षेत्र बनता है और स्थल का भाग ठंडा होने के कारण उच्च दाब क्षेत्र। यह कारण दैनिक स्तर पर भी प्रभाव डालता है, जिसके कारण दिन में स्थल क्षेत्र का दाब जल की अपेक्षा कम और रात में ज्यादा होता है।

2 50 तुंगता मापी (Altimeter)

दाब और ऊँचाई के अन्त सम्बन्धों के आधार पर दाबमापी के पैमाने को इस प्रकार अंकित किया जा सकता है कि उससे दाब के स्थान पर सीधे ऊँचाई का मान पढ़ लिया जाए। यह यन्त्र 'दाब तुंगता मापी' कहलाता है। इसके अलावा, रेडियो ऊँचाई मापी भी होते हैं, जो मौसम परिस्थितियों पर आधारित न होकर स्वतन्त्र रूप से ऊँचाई नापते हैं। अत इनका वर्णन यहाँ नहीं किया जा रहा है।

2 51 हम देख चुके हैं कि दाब और ऊँचाई का सम्बन्ध सर्वथा अचल (invariant) नहीं है। यह सम्बन्ध भूमितल के दाब और विचाराधीन पर्त के तापमान पर आश्रित है, जो समय और स्थान के अनुसार परिवर्तनशील हैं। अत इन दो तत्वों की किसी सुनिश्चित दशा में ही तुंगता मापी सही ऊँचाई का माप दे सकता है। जहाँ पर दाब और तापमान, इन सुनिश्चित दशाओं से भिन्न हों, वहाँ इस अन्तर के लिए पूर्व निर्धारित त्रुटि संशोधन द्वारा सही ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है।

इस आधार पर बने दो प्रकार के दाब तुंगता मापी हैं।

(1) समताप तुंगता मापी (आइसोथर्मल आल्टीमीटर)

इसका आधार यह परिकल्पना (Hypothesis) है कि वायुमण्डल हर ऊँचाई पर $10°$ का समान तापमान रखता है।

इस प्रकार $T' = 283°K$

अत किन्हीं दो दाब तलों p_o और p के बीच की ऊँचाई Z_1 जो समताप ऊँचाई-मापी द्वारा प्रदर्शित होगी, निम्नांकित सूत्र द्वारा बताई जा सकती है—

$$Z_1 = K \times 283 \log \frac{p_o}{p} \qquad (i)$$

अब यदि वास्तविक ऊँचाई Z_r हो तो—

10930
2/4/92

$$Z_r = KT' \log \frac{p_o}{p} \qquad (ii)$$

$$\frac{Z_r}{Z_i} = \frac{T'}{283} = \frac{283+t}{283} = 1 + \frac{t}{283}$$

जहा t, मानक तापमान $10°$ से वास्तविक तापमान का विचलन है। अत

$$Z_r = Z_i + \frac{t}{283} Z_i$$

या $$Z_r = Z_i + \frac{t}{300} Z_i \quad \text{(लगभग)} \qquad (iii)$$

इस गणना द्वारा प्रदर्शित (indicated) ऊँचाई से, वास्तविक ऊँचाई ज्ञात कर सकते हैं। यह एयरी (Airy) का नियम कहलाता है।

उदाहरण – एक उडते हुए वायुयान का तुगतामापी 200 मीटर की ऊँचाई प्रदर्शित कर रहा है। यदि वहाँ बाहरी हवा का तापमान 14°C और ह्रास दर 8°C प्रति किलोमीटर मान ली जाए, तो जहाज की वास्तविक ऊँचाई ज्ञात करो।

तल से 2000 मीटर ऊँचे पत का औसत तापमान
(अर्थात् 1000 मीटर ऊँचाई का तापमान)
$T' = 14 + 8 \times 1 = 22°C$
$t = 22 - 10 = 12°C$

अत सही ऊँचाई $Z_r = 2000 + \frac{12}{300} \times 2000 = 2080$ मीटर

2 52 समताप वायुमण्डल का परिकल्पना और समताप तुगता मापी, वास्तविकता से ज्यादा दूर होने के कारण अब प्रचलन म नही है।

(2) आई सी ए एन तुगता मापी

अन्तर्राष्ट्रीय वायु यातायात आयोग (International Commission of International Air Navigation) ने एक मानक वायुमण्डल निर्धारित किया, जिसे आई सी ए एन वायुमण्डल कहते हैं। इस निर्धारण को बाद में I C A O (International Civil Aviation Organisation) ने पुनर्गठित किया, जिसके आधार पर आई सी ए एन तुगता मापी बनाया गया है। यह निर्धारण मध्य अक्षांशो के लिए है, इसके अनुसार

1 वायुमण्डल का रासायनिक गठन सर्वत्र समान है और हवा सूखी है।

2 गुरुत्वजनित त्वरण 'g' का मान समुद्रतल पर = 980 62 से मी /सेकण्ड²

3 औसत समुद्रतल का दाव = 1013 25 मिलीवार ।

4 औसत समुद्रतल पर हवा का घनत्व = 1225 ग्राम/मीटर³

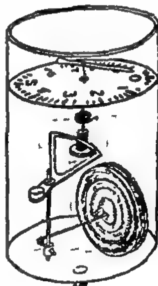
5 औसत समुद्रतल पर हवा का तापमान = 15°C

6 औसत समुद्रतल से Z किमी ऊँचाई पर तापमान = (15–6 5 Z)°C

(अर्थात् ह्रास दर = 6 5°C/किमी) । यह नियम सिर्फ 11 किमी ऊँचाई तक चलता है जहाँ तापमान – 56 5°C हो जाता है । इसके ऊपर यही तापमान स्थिर माना जाता है ।

2 53 आई सी ए एन तुंगता मापी के पैमाने, I C A N वायुमण्डल की परिकल्पना के आधार पर अंकित किए जाते हैं ।

इसमें एक उप पैमाना (Sub scale) है, जिस पर मिलीवार अंकित होता है । जब तुंगतामापी शून्य ऊँचाई दर्शित करता है तो उप पैमाना यंत्र के स्तर पर वायुदाव बढता है । उप पैमाने को किसी भी दाबस्तर पर स्थित किया जा सकता है । किसी हवाई जहाज के उड़ान भरते समय उप-पैमाने को इस प्रकार स्थित किया जाता है कि तुंगता मापी उस समय की सही ऊँचाई प्रदर्शित कर सके । वायुयान के स्थान और समय के प्रति बदलने के कारण, यह ऊँचाई दूसरी हवाई पट्टी पर उतरते समय गलत हो सकती है । अतः उतरने के पहले उप-पैमाने को इस हवाई पट्टी के वायुदाव के अनुसार फिर से सेट करना पडता है । यदि यान के मार्ग में दाब घटता जाता है, तो ऊंचाईमापी का पैमाना वास्तविक से अधिक ऊँचाई बढेगा और यदि दाब बढता जाता है तो वास्तविक ऊँचाई से कम । 1 मिलीवार दाबान्तर पर लगभग 8 मीटर ऊंचाई की त्रुटि पायी जाती है ।



केप्सूल अल्टीमीटर (तुंगतामापी)

चित्र (27)

तुंगता मापी के मुख्य पैमाने में साधारणतः तीन सुईयाँ होती हैं । पैमाने के दो अंकों के बीच 5 छोटे खाने होते हैं और हर खाना 20 फुट के बराबर होता है । सबसे लम्बी सुई फीट के सैकडे/दहाई और इकाई में पढती है । मझली और छोटी सुईयाँ क्रमशः हजार और दस हजार फीट की इकाईयों में पढती है ।

2 54 एयरी के नियम से स्पष्ट है कि वायुदाव परिवर्तन के अलावा तापमान बदलने से भी तुंगता मापी के पाठांकों में संशोधन की आवश्यकता आ जाएगी । यदि वास्तविक ऊँचाई Z_r और प्रदर्शित ऊँचाई Z_i हो तो

$$Z_r = Z_i \left(1 + \frac{\Delta T}{288} \right)$$

जहाँ ΔT भूमितल तापमान का $15°C$ से विचलन है। यदि विचलन धनात्मक है, तो वास्तविक ऊँचाई, प्रदर्शित ऊँचाई से ज्यादा होगी। अत, संशोधन जोड़ना होगा। विपरीत दशा में संशोधन घटाना चाहिए।

2 60 समकालीन मौसम चार्ट (Synoptic Weather Charts)

मानचित्र पर, जब एक निश्चित समय पर लिये गए विभिन्न स्टेशनों के वायुदाब साथ-साथ अंकित करते हैं, तो तुलनात्मक दृष्टिकोण से उनके स्तर (साधारणत मध्य समुद्रतल) पर अवतरित किए जाने का कारण स्वत स्पष्ट हो जाता है। वायुदाब के अतिरिक्त अन्य मौसम तत्व, जैसे—तापमान, आर्द्रता, बादल, तत्कालीन मौसम विवरण आदि सांकेतिक रूप (Symbolic form) में मानचित्र पर अंकित किए जाते हैं। यह मानचित्र समकालीन मौसम चार्ट कहलाता है, जो पूरे मानचित्र पर एक निश्चित समय की मौसम अवस्थाओं का पूरे क्षेत्र पर एक साथ निरूपण करता है।

विश्व मौसम संघ (World Meteorological Organisation) द्वारा नियत किया गया 00, 06, 12 तथा 18 जी एम टी (ग्रीनविच मीन टाइम) का समय सारे संसार के लिए मुख्य समकालीन घड़ी (Main Synoptic hour) मानी जाती है। इन घड़ियों में लिए गए प्रेक्षणों के आधार पर संसार के हर मौसम केंद्र में समकालीन मौसम चार्ट तैयार किए जाते हैं। भारतीय मानक समय (I S T) के अनुसार, मुख्य समकालीन घड़ियों का तुल्यांक समय क्रमश 5½, 11½, 17½, और 23½ बजे पड़ता है।

इसके अलावा, 03, 09, 15 और 21 जी एम टी भी समकालीन घड़ी कहलाती है। अपनी आवश्यकता के अनुसार मौसम केंद्र इन घड़ियों में भी समकालीन चार्ट तैयार कर सकते हैं।

2 या 4 मिलीबार के अंतर पर खींचे गए समान वायुदाब की रेखाओं द्वारा, मौसम चार्ट का विश्लेषण (analysis) करते हैं। इन रेखाओं को समदाब रेखाएँ (Isobars) कहते हैं। इन रेखाओं से मानचित्र पर दाब बंटन एक नजर में स्पष्ट हो जाता है।

2 61 दाब प्रणालियाँ (Pressure Systems)

समकालीन मौसम मानचित्र पर ये समदाब रेखाएँ विभिन्न आकृतियाँ ग्रहण किया करती हैं। प्रत्येक आकृति एक विशेष मौसम तथा वायु-प्रवाह की दशा व्यक्त करती है। चूँकि समदाब रेखाएँ प्रचलित (Prevailing) वायु-प्रवाह की दिशा में ही खींची जाती हैं, अत किसी स्थान पर वायु दिशा, उस स्थान के समदाब रेखा पर स्पर्श रेखा द्वारा जानी जा सकती है। कुछ प्रमुख प्रकार की दाब प्रणालियों का संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है

(1) सीधी समदाब रेखाएँ (Straight isobars)

सरल रेखा के समानान्तर समदाब रेखाएँ किसी मौसम विशेष की परिचायक न होकर सरल वायु प्रवाह व्यक्त करती हैं। यदि ये रेखाएँ एक-दूसरे के निकट हैं, तो वायुगति तीव्र होगी और यदि समदाब रेखाओं के बीच की दूरी अधिक है, तो उस क्षेत्र में वायुगति हल्की होगी। अध्याय 6 में इस बात को विस्तार से समझाया गया है।

(2) निम्नदाब (Low pressure)

एक अपेक्षाकृत कम दाब का क्षेत्र, जो लगभग वृत्ताकार समदाब रेखाओं द्वारा घिरा होता है, निम्न दाब कहलाता है। (चित्र 2 8)। इस वृत्ताकार परिधि के केन्द्र पर दाब निम्नतम होता है। जैसाकि चित्र मे दिखाया गया है, वायु प्रवाह वृत्ताकार पथ पर घड़ी की सुइयों से विपरीत दिशा मे होता है। निम्न दाब जब अधिक गम्भीर (deep) और कई समदाब रेखाओं से घिरा होता है, तो अवदाब (डिप्रेशन) कहलाता है।

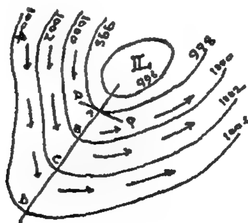


चित्र (2.8)

बादल, वर्षा, वज्रपात, झंझा, तूफान, हिमपात आदि की घटनाएं निम्नदाब से ही सम्बन्धित हैं। निम्नदाब जितना ही गम्भीर होगा, मौसम और वायु प्रवाह उतना ही तीव्र होगा। निम्नतम दाब का सबसे गम्भीर रूप, उष्ण कटिबंधीय चक्रवात (ट्रापिकल साइक्लोन) है, जो सैकड़ों किलोमीटर व्यास का क्षेत्र घेरता है तथा समुद्र और तटीय प्रदेशों मे भीषण मौसम उत्पन्न करता है।

(3) निम्नदाब की द्रोणिका (Trough of low pressure)

निम्नदाब क्षेत्र के बाहर की उभरती (elongated) समदाब रेखाएँ प्राय 'V' की आकृति का क्षेत्र बनाती हैं, (चित्र 2 9)। बिन्दुओं A B, C और D पर जहाँ रेखाओं में



चित्र (2.9)

अचानक मोड़ पैदा होता है, दाब अपने दोनों तरफ (जैसे P और Q) की अपेक्षा कम रहता है। यह उभरा क्षेत्र निम्नदाब की द्रोणिका कहलाती है और निम्नतम दाब बिन्दुओं A, B C और D को मिलाने वाली रेखा द्रोणिका अक्ष (Axis of trough) कहलाती है।

(4) उच्चदाब या प्रतिचक्रवात (एन्टीसाइक्लोन)

एक अपेक्षाकृत उच्चदाब का क्षेत्र जो वृत्ताकार समदाब रेखाओ से घिरा होता है, उच्चदाब या प्रतिचक्रवात कहलाता है, (चित्र 2 10)। इसमे वृत्ताकार पथ पर हवाएँ घडी की सुइयो की दिशा मे चलती रहती हैं। दाब, केन्द्र पर उच्चतम होता हैं।

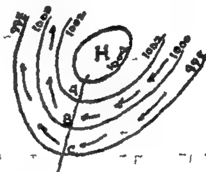


चित्र (2 10)

प्रतिचक्रवात साफ मौसम का प्रतीक होता है। इसम हवाएँ भी अपेक्षाकृत धीमी चलती हैं और समदाब रेखाओ के बीच की दूरी निम्नदाब की तुलना मे प्राय अधिक होती है।

(5) दाब कटक (Ridge)

निम्नदाब की द्रोणिका की भाँति उच्चदाब से बाहर को उभरती आकृति दाब कटक कहलाती है। दाब कटक म बिन्दु A, B, C और D—L पर वायु प्रवाह का मोड द्रोणिका की भाति तीखा (Sharp) न होकर प्राय गोलाकार (Rounded) हाता है। मोड बिन्दुओ A, B और C को मिलाने वाली रेखा दाब कटक की अक्ष कहलाती है।

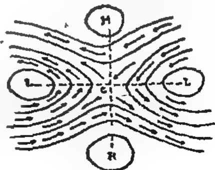


चित्र (2 11)

(6) कॉल (Col)

दो उच्च और दो निम्नदाबो से घिरा क्षेत्र (C) कॉल कहलाता है (चित्र 2 12)। इस क्षेत्र मे दाब लगभग समान रहता है। वायु-प्रवाह धीमा और मौसम प्राय अनिश्चित सा रहता है। द्रोणिका और कटक के अक्षो का कटान बिन्दु कॉल का केन्द्र कहलाता है।

2 62 समकालीन मौसम चार्टों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि दाब प्रणालियाँ स्थान-स्थान पर स्वत उत्पन्न होती है, एक स्थान से दूसरे स्थान तक गतिशील रहती हैं प्रभावित क्षेत्रो मे अपनी विशेषता के अनुसार मौसम पैदा करती हैं, अपनी तीव्रता तथा रूप, समय और स्थान के साथ बदलती रहती हैं और क्रमश स्वय समाप्त हो जाती है। दाब प्रणालियो की गति और तीव्रता का अनुमान लगाना ही मौसम पूर्वानुमान की कुंजी है।



चित्र 2.12

3

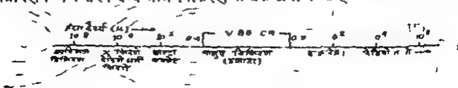
वायुमण्डलीय ऊष्मा, संतुलन और तापमान

(ATMOSPHERIC HEAT, BALANCE AND TEMPERATURE)

3.10 पृथ्वी और वायुमण्डल की ऊर्जाओं का मूलस्रोत सौर विकिरण ही है। जब हम कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस या अन्य ईंधन जलाते हैं, तो वास्तव में हम सूर्य द्वारा एकत्र ऊर्जा का ही उपयोग करते हैं जो जीव तथा वनस्पति पदार्थों पर सौर किरणों की सैकड़ों साल की प्रक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। पृथ्वी को सूर्य द्वारा जितनी ऊष्मा प्राप्त होती है, उसकी तुलना में अन्य नक्षत्र तथा आकाशीय पिंडो द्वारा प्राप्त विकिरण तथा पृथ्वी के आंतरिक तहों से आती ऊष्मा का मूल्य नगण्य है।

आकार में पृथ्वी से लाखों गुना बड़ा सूर्य, धधकती गैसों का एक गोला है, जिसका अनुमानित तापमान लगभग 6000° से० है। इसके द्वारा विसर्जित ऊष्मा का अधिकांश भाग अंतरिक्ष में खो जाता है और बहुत ही अल्प भाग पृथ्वी के वायुमण्डल तक आ पाता है। यही ऊष्मा मौसम प्रक्रियाओं के लिये ईंधन का काम करती है। सौर विकिरण पृथ्वी पर कुछ तो सूर्य से सीधे आती है, जिसे विकिरण कहते हैं तथा कुछ अंतरिक्ष द्वारा परावर्तित होकर पहुँचती है, जिसे अन्तरिक्ष विकिरण कहते हैं।

3.11 सूर्य द्वारा ऊष्मा तथा प्रकाश का विकिरण विद्युत चुम्बकीय तरंगों के रूप में होता है, जो 186000 मील/सैकण्ड की गति से सीधी रेखा में चलती हैं। प्रकृति में समान होते हुए भी विकिरण अलग अलग तरंग दैर्ध्यों (wave length) के कारण कई प्रकार के होते हैं। किसी विकिरण की ऊर्जा, उसकी तरंग दैर्ध्य पर ही निर्भर करती है। साधारणतः कम तरंग दैर्ध्य वाले विकिरण अधिक ऊर्जा रखते हैं। तरंग दैर्ध्यों के अनुसार,



चित्र (3.1)

विभिन्न प्रकार के विकिरणों का आवटन एक सरल रेखा चित्र द्वारा चित्र (3.1) के अनुसार दिखाया जा सकता है—विद्युत चुम्बकीय तरंगों के तरंग दैर्ध्य की सामान्य इकाई μ (म्यू) ली जाती है $1\mu = 10^{-6}$ मी।

0 3 μ से कम तरग दैध्य के सौर विकिरण पृथ्वी तक साधारणत नही पहुँच पाते । पराबैगनी किरणें, आयन मण्डल तथा स्थिर मण्डल मे आयनीकरण प्रक्रिया के लिये प्रयुक्त हो जाती हैं तथा अतिलघु तरगें व कॉस्मिक किरणें ऊपर से ही अन्यत्र वितरित हो जाती हैं ।

इस प्रकार सौर विकिरणो द्वारा हमे प्रकाश तथा ताप किरणें प्राप्त होती हैं । प्रकाश किरणें, जो 0 4 से 0 7 μ तक की तरग दैध्य रखती हैं और आँखो से दिखाई पडती हैं कुल विकिरण का लगभग 45% भाग है । शेष भाग ताप विकिरण का है, जो मुख्यत (लगभग 46%) पराकासनी किरणें तथा अल्पत (लगभग 9%) पराबैंगनी किरणो (0 3 स 0 4 μ) के रूप मे पृथ्वी तल पर पहुँचता है । सूय द्वारा प्राप्त सभी विकिरणो को साधारणत एक नाम 'इन्सोलेशन' द्वारा सम्बोधित किया जाता है ।

वायुमण्डल मे प्रविष्ट होने वाले कुल विकिरण का लगभग एक चौथाई भाग पृथ्वी ग्रहण कर पाती है । यह विकिरण उष्मा मे परिवर्तित हो जाती है, जिसके कारण पृथ्वी तल मे स्वत विकिरण उत्पन्न करने की क्षमता आ जाती है । कम तापमान के कारण, इस विकिरण मे सौर विकिरणों की अपेक्षा, अधिक तरग दैध्य होती है । पृथ्वी का विकिरण, भू विकिरण या दीर्घ तरग विकिरण कहलाता है ।

3 12 विकिरण के नियम

विकिरण के सम्बन्ध मे प्रतिपादित भौतिकी के अनेक सिद्धान्तो मे से दो सामान्य नियम इस प्रकार हैं—

(1) स्टीफन का नियम

किसी वस्तु की प्रति इकाई विकिरण की तीव्रता की दर (E), उसके निरपेक्ष तापमान (T) के चतुर्थ घातांक के समानुपाती होती है ।

अर्थात्
$$E = \sigma T^4,$$

जहाँ σ स्टीफन का स्थिरांक कहलाता है । इसका मान निम्नांकित है—

$\sigma = 82 \times 10^{-12}$ कैलोरी से मी$^{-2}$ मिनट$^{-1}$ अ श$^{-4}$

$= 5 7 \times 10^{-5}$ अर्ग से मी$^{-2}$ सकण्ड$^{-1}$ अ श$^{-4}$

(2) वीन का नियम

किसी वस्तु के तीव्रतम विकिरण की तरंग दैध्य (λ_m), उसके निरपेक्ष तापमान (T) का व्युत्क्रमानुपाती होता है ।

अत
$$\lambda_m = \frac{\alpha}{T}$$

जहाँ α वीन का स्थिरांक कहलाता है ।

यदि λ_m माइक्रॉन तथा T 'अ श केल्विन' मे व्यक्त किया जाये, तो
$$\alpha = 2940$$

वीन के नियम से स्पष्ट है कि ठण्डी वस्तुएँ, अपेक्षाकृत दीर्घ-तरंगो का विकि
करेंगी । उदाहरण देखिए—

सूर्य के लिए $T = 6000°K$ (लगभग)

$$\lambda_m = \frac{2940}{6000} = 0.49\mu$$

λ_m का यह मान वर्ण पट के Y (पीला) और G (हरा) विकिरण के बी
पड़ता है ।

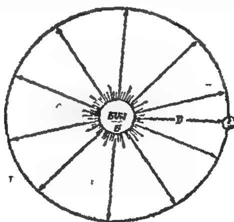
पृथ्वी के लिये— $T = 288°K$ (लगभग)

$$\lambda_m = \frac{2940}{288} = 10.21\mu$$

इस प्रकार, भू विकिरण की तरंग दैर्घ्य, सौर विकिरण से लगभग 20 गुना है ।

3.20 वायुमण्डल के शिखर पर सौर विकिरण

पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाले सौर विकिरण की मात्रा, वायुमण्डल द्वा
अवशोषित हो जाने के कारण, उस मात्रा से कम होती है, जो वायुमण्डल के शिखर प
पड़ती है । शिखर पर एक वर्ग स.मी. का क्षेत्र इस प्रकार लीजिये कि उसका तल किरण
के लम्बवत् पड़े । इस क्षेत्र को प्रति मिनट जितनी कैलोरी सौर ऊष्मा प्राप्त होती है, उ



चित्र (3.2)

सौर स्थिरांक (सोलर कान्सटेंट) कहते हैं । अनुमानित तापमान और क्षेत्रफल के अनुसार,
सूर्य प्रति मिनट 55.44×10^{26} कैलोरी ऊष्मा अन्तरिक्ष में विकिरण करता है ।
पृथ्वी और सूर्य की औसत दूरी D(= 9.3×10^{7} मील या 1.50×10^{13} से.मी.) के
बराबर अर्द्ध व्यास का एक वृत्त सूर्य का केन्द्र मानकर खींचिये । यदि सूर्य की ऊष्मा इस वृत्त
की परिधि पर समान रूप से पड़ती, मान ली जाये तो वायुमण्डल के इकाई शिखर पर

प्रति मिनट लम्बवत् माने वाली ऊष्मा की मात्रा—

$$S = \frac{55\ 44 \times 19^{26}}{4\pi(1\ 5 \times 10^{23})^2}$$

$$= 1\ 94 \text{ कैलोरी से मी}^{-2} \text{ मिनट}^{-1}$$

नोट—प्रत्याधुनिक गणनाओ के आधार पर, सौर स्थिरांक का मान लगभग 2 कैलोरी से मी $^{-2}$ मिनट $^{-1}$ निश्चित किया गया है।

3 21 यदि पृथ्वी का अर्द्धव्यास $R(=6\ 37 \times 10^8$ से मी) हो, तो πR^2S सौर विकिरण वायुमण्डल का शिखर ग्रहण कर पाता है। यहाँ वायुमण्डल की ऊँचाई (= 10 कि मी लगभग) अपेक्षाकृत नगण्य होने से छोड दी गई है।

इस सूत्र के अनुसार, प्रतिदिन 3 67 $\times 10^{21}$ कैलोरी सौर ऊष्मा वायुमण्डल के शिखर पर पडती है। यह सूय द्वारा विसर्जित कुल ऊष्मा का कोई 20 लाखवाँ भाग है।

यदि यह मान लिया जाए कि वायुमण्डल पर पडने वाली समस्त ऊष्मा शिखर तल पर समान रूप से वितरित होती है, तो इकाई क्षेत्र को मिलने वाली ऊष्मा,

$$Q = \frac{\pi R^2 S}{4\pi R^2}$$

$$= \frac{S}{4} = 0\ 5 \text{ कैलोरी/मिनट}$$

$$= 263 \text{ किलो कैलोरी/वष}$$

3 22 पृथ्वी पर पडने वाली सौर विकिरण की मात्रा, दृढ रूप से स्थिर नही रहती। पृथ्वी और सूय के बीच की दूरियो म परिवतन होने के कारण S का मान किंचित् मात्रा म परिवतनशील है। शीत अयनान्त (22 दिसम्बर) के बाद, जब पृथ्वी की सूय से दूरी निम्नतम होती है, S का मान सर्वाधिक (2 01 कैलोरी सेमी $^{-2}$ मिनट $^{-2}$) होता है। ग्रीष्म अयनान्त (21 जून) के बाद, जब पृथ्वी सूय से अधिकतम दूरी पर होती है, निम्नतम मान 1 88 कैलोरी से मी $^{-2}$ मिनट $^{-1}$ होता है।

3 23 वायुमण्डल के शिखर के किसी स्थान पर पहुँचने वाली सौर ऊष्मा की वास्तविक मात्रा, स्थान के अक्षाश, वष के समय तथा दिन की वास्तविक लम्बाई पर निभर करती है। इसकी गणना निम्नांकित सूत्र द्वारा की जा सकती है—

$$Q = \frac{1440}{\pi} S \left(\frac{d}{d}\right)^2 \left[(H - \tan H) \sin \phi \sin \delta\right] \text{ कैलोरी सेमी}^{-2} \text{ दिन}^{-1}$$

इस सूत्र मे,

S = सौर स्थिरांक
$\overline{d}$ = पृथ्वी की सूर्य से औसत दूरी
d = पृथ्वी की सूर्य से तात्कालिक दूरी
H = दोपहर से सूर्योदय या सूर्यास्त के बीच का घड़ी कोण (आवर कोण)
ϕ = स्थान का अक्षांश
δ = किसी दिन के लिए सूर्य का दिक्पात कोण।

इसका मान एफीमेरीज़ के आँकड़ो से ज्ञात किया जा सकता है।

H का मान ϕ तथा δ के पदो मे निम्नांकित त्रिकोणमितीय सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है—

$$\cos H = -\tan\phi \tan\delta$$

उपर्युक्त सूत्रो द्वारा विभिन्न अक्षांशो पर 20 मार्च, 21 जून, 22 सितम्बर तथा 21 दिसम्बर के लिए शिखर पर आपतित सौर विकिरण की गणना (डेविस इलिमेंटरी मेटेरीलोजी) की गई है। यदि 20 मार्च को विषुवत् रेखा पर आपतित विकिरण को इकाई मान लिया जाय, तो ये आंकड़े इस प्रकार होगे—

तालिका 3–1

दिन/अक्षांश	0	20 उ	40 उ	60 उ	90 उ
20 मार्च	1 000	0 940	0 766	0 500	0 000
21 जून	0 882	1 044	1.107	1 093	1 201
22 सितम्बर	0 987	0 927	0 956	0 494	0 000
21 दिसम्बर	0 941	0 676	0 307	0 056	0 000

3 30 वायुमण्डल का प्रभाव

जितना सौर विकिरण वायुमण्डल के शिखर पर पड़ता है, वह सबका सब वायुमण्डल को पार कर पृथ्वी की सतह तक नही पहुँच पाता। इसका एक भाग बादलों, धूल के कणों तथा वायु अणुओं से टकराकर, अन्तरिक्ष को वापस परावर्तित या प्रकीर्ण (scattered) हो जाता है। यह भाग कुल आपाती किरण का लगभग 32% है। धरती से टकराकर भी, सौर विकिरण का लगभग 2% उसी रूप में परावर्तित होकर लौट जाता है। ये परावर्तित विकिरण पृथ्वी या वायुमण्डल को कोई ऊष्मा प्रदान नही करते।

परावर्तित तथा कुल आपाती विकिरणों का अनुपात धवलता या एल्बिडो कहलाता है। एल्बिडो विभिन्न प्रकार के सतहों के लिए अलग अलग होते हैं। उदाहरण के लिए बादलों का एल्बिडो सामान्य भूमि के एल्बिडो से 10 गुना से भी अधिक होता है। सारी पृथ्वी तथा वायुमण्डल का सम्मिलित एल्बिडो लगभग 34% लिया जा सकता है। एल्ड्रिच (1919) की गणना के अनुसार इस एल्बिडो का मान 43% है, किन्तु यह संख्या स्थिर नहीं है।

मेघाच्छन्नता, और ऋतुओं के अनुसार, वनस्पति व तुषार क्षेत्रों के परिवर्तन के साथ अलविदो के मान में भारी परिवर्तन हुआ करता है। कुछ विभिन्न सतहों के औसत अलविदो इस प्रकार हैं

सतह — अलविदो (%)

(i) घासरहित मैदान—7–20
(ii) रेगिस्तान —24–28
(iii) घासयुक्त मैदान —14–37
(iv) हरे-भरे वन —3–10
(v) तुषार या हिम —46–86
(vi) नगर —14–18%
(vii) शान्त जल-सतह—50% जब किरणें 15° के कोण पर गिरती हैं।
—23% जब आपाती किरणों का कोण 60° से अधिक हो।

विभिन्न प्रकार के बादलों से पूर्ण तथा आच्छन्न दशा के लिए अलविदो का मान इस प्रकार है

मेघ प्रकार	अलविदो (%)
स्ट्रैटो कुमुलास	56–81
आल्टोस्ट्रैटस	39–56
घना स्ट्रैटस	78
सिरोस्ट्रैटस	44–50

3 31 परावर्तन और प्रकीर्णन के अतिरिक्त आपाती विकिरण का एक भाग (लगभग 19%) वायुमण्डलीय हवा, मुख्यत ओजोन, कार्बन-डाई ऑक्साइड तथा जलवाष्प द्वारा शोषित कर लिया जाता है। शोषित विकिरण खो नहीं जाता, बल्कि वायुमण्डल को ऊष्मा प्रदान कर, उसका तापमान बढाने में सहायक होता है।

3 40 पृथ्वी का ऊष्मा-सन्तुलन

कुल आपाती सौर विकिरण का कुछ भाग वायुमण्डल तथा पृथ्वी द्वारा परावर्तित व प्रकीर्ण हो जाता है तथा कुछ भाग वायुमण्डल द्वारा अवशोषित होता है। शेष भाग पृथ्वी तल द्वारा शोषित होता है। यदि पृथ्वी तल को इतनी ऊष्मा की प्राप्ति बिना खर्च निरन्तर होती रहती, तो उसका तापमान लगभग 400°C प्रतिवर्ष बढता, जिससे सारी पृथ्वी तुरन्त जलकर भस्म हो गई होती, किन्तु ऐसा नहीं है। इतनी ऊष्मा शोषित करने के बाद पृथ्वी में, स्वत विकिरण करने की क्षमता आ जाती है। भू विकिरण, सौर विकिरण की अपेक्षा दीर्घ तरंगों के रूप में होता है।

वायुमण्डल की ऊष्मा का मुख्य स्रोत भू विकिरण होता है, जिसका अधिकाश भाग वायुमण्डल द्वारा आत्मसात् कर लिया जाता है, जबकि सौर विकिरण का एक अल्प भाग ही वायुमण्डल शोषित कर पाता है। यही कारण है कि वायुमण्डल का तापमान ऊचाई के साथ साधारणत घटता जाता है।

औसत रूप से पृथ्वी का ऊष्मा बजट निम्नांकित आँकड़ों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है

मान लीजिए वायुमण्डल के शिखर पर कुल आपाती विकिरण = 100 इकाई

(1) बादलों द्वारा परावर्तन = 23 इकाई

(2) पृथ्वी तल से परावर्तन = 7 इकाई

(सीधा और प्रसरित या डिफ्यूज्ड)

(3) वायु मण्डल द्वारा प्रसारित परावर्तन तथा

प्रकीर्णन = 9 6 इकाई

वापस अन्तरिक्ष को कुल परावर्तन व प्रकीर्णन = 36 इकाई

(1) वायुमण्डल द्वारा शोषण = 17 इकाई

(2) बादलों तथा वायुमण्डल से प्रसारित और प्रकीर्ण विकिरण का पृथ्वी द्वारा अवशोषण = 16 इकाई

(3) सीधे विकिरण का पृथ्वी द्वारा अवशोषण = 31 इकाई

वायुमण्डल और पृथ्वी का तापमान

बढ़ाने वाली कुल सौर विकिरण = 64 इकाई

3 41 पृथ्वी द्वारा शोषित प्रकीर्ण विकिरण का स्पष्टीकरण

सौर विकिरण, जो बादलों तथा वायु कणों से प्रकीर्ण या प्रसरित हो जाता है, पूरा का पूरा अन्तरिक्ष को वापस नहीं जाता। उसका एक बड़ा भाग पृथ्वी पर भी आता है और शोषित कर लिया जाता है। जैसाकि उपर्युक्त आँकड़ा से स्पष्ट है इसे सीधे विकिरण की अपेक्षा नगण्य नहीं किया जा सकता। विशेषकर, जब सूर्य निम्न ऊँचाइयों पर चमकता है, तो यह प्रसरित आकाशीय विकिरण (diffused sky radiation), सीधे विकिरण की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। मेघाच्छन्न आकाश के दिनों में भी प्रसरित विकिरण, सीधे विकिरण से अधिक शक्तिशाली बन जाता है।

3 42 पृथ्वी तल के दीर्घ तरंग विकिरण में अतिरिक्त बादलों की तह तथा वायु मण्डल के कण भी अन्तरिक्ष को ऊष्मा का विकिरण करते हैं। कुल आपतित तथा बहिर्गामी विकिरण एक अवधि के अन्दर ठीक-ठीक एक-दूसरे को सतुलित कर देते हैं। इसी सन्तुलन के कारण, पृथ्वी बहुत गर्म या बहुत ठण्डी होने से बची रहती है।

पृथ्वी तल पर वास्तव में निम्न अक्षांशों में और ऊष्मा का आधिक्य तथा उच्च अक्षांशों में कमी रहती है। इसका कारण यह है कि निम्न अक्षांशों में प्राप्ति की मात्रा ह्रास से अधिक होती है, जबकि उच्च अक्षांशों (38 अंश से परे) में प्राप्ति ह्रास से कम हो जाती हैं। कुल वार्षिक सौर विकिरण, विषुवत् रेखा पर अधिकतम पड़ता है जो अक्षांशों के साथ घटता जाता है। उष्ण कटिबन्ध में यह ह्रास नगण्य होता है, लेकिन उच्च अक्षांशों में विकिरण का ह्रास तेजी से बढ़ता है और ध्रुवों को विषुवत् रेखीय सौर विकिरण का लगभग चौथाई भाग ही मिल पाता है।

बाहर जाने वाली भू विकिरण का अक्षांशीय चलन अपेक्षाकृत कम रहता है। चित्र (3 1) से स्पष्ट है कि लगभग 38 अंश अक्षांश से नीचे भू विकिरण की मात्रा

सौर विकिरण से कम होती है। अतः इन क्षेत्रो मे ऊष्मा का लाभ होता है। इससे उच्च अक्षाशो म सौर विकिरण का वक्र, भू विकिरण रेखा से नीचे आ जाता है और इनमे वार्षिक ऊष्मा की लगभग उतनी ही हानि होती है जितनी कि निम्न अक्षाशो मे लाभ। इस दशा म, निम्न अक्षाशो को गम और उच्च अक्षाशो को क्रमश गम और ठण्डा होते जाना चाहिए। किन्तु क्षैतिज वायु प्रवाह तथा महासागरीय धाराओ द्वारा अतिरिक्त ऊष्मा को उच्च अक्षाशो मे स्थानान्तरित किए जाने के कारण, पृथ्वी तल पर ऊष्मा का वार्षिक सन्तुलन स्थापित हो जाता है। क्षैतिज ऊष्मा का स्थानान्तरण दो रूपो मे होता है

1 गुप्त ऊष्मा

जलवाष्प म निहित गुप्त ऊष्मा उसके प्रवाह के साथ स्थानान्तरित होती रहती है। जल वाष्प के सघनित होने पर यह ऊष्मा प्रगट हो जाती है।

2 सवेद ऊष्मा

ऊष्ण वायु राशियो का प्रवाह।

ऊष्मा स्थानान्तरण की तीव्रता अक्षाशो तथा समय के अनुसार परिवतनशील रहती है। दोनों गोलार्द्धो मे ही 35 से 45° अक्षाशो के बीच के क्षेत्र मे सबसे अधिक ऊष्मा-स्थानान्तरण होता है।

ऊष्मा प्रवाह की तीव्रता, मेरिडियानल ताप प्रवणता की समानुपाती है, अतः शीत गोलार्द्धो मे वायु प्रवाह अधिक शक्तिशाली होता है।

3 43 ऊष्मा सन्तुलन

पृथ्वी और वायुमण्डल का ऊष्मा सन्तुलन सक्षिप्त रूप से चित्र (3 3) द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। ये आकडे बुदिको व अन्य द्वारा तयार किये गए हैं। सरलता के लिए, मान लिया जाए कि कुल अपतित सौर विकिरण 100 इकाई है। भू-विकिरण को यदि 15°C तापमान पर कृष्णिका (black body) विकिरण के बराबर मान लिया जाए, तो यह 98 इकाइयो के तुल्य होता है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नही कि पृथ्वी तल, प्राप्त ऊष्मा से कम विकिरण करता है। चित्र मे दिए गये आकडे पूर्ण सन्तुलन स्थापित करते हैं।

100 इकाई = 0 5 कैलोरी सेमी $^{-2}$ मिनट$^{-1}$

= 263 किलो-कैलोरी-सेमी$^{-2}$ वर्ष$^{-1}$

भू- विकिरण की 98 इकाइयो मे से 91, वायुमण्डल द्वारा शोषित कर ली जाती है तथा शेष 7 इकाई उन तरग दैर्ध्यों के रूप मे वायुमण्डल मे खो जाती है, जिनका शोषण नही होता। 78 इकाई क्षोभ मण्डल से पुन विकिरण के रूप मे पृथ्वी को लौट आती है तथा 57 इकाई अन्तरिक्ष मे चली जाती है। पृथ्वी से निकली ऊष्मा की 22 इकाई वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा के रूप म तथा 5 इकाई सवेद ऊष्मा के रूप मे वायुमण्डल को प्राप्त होती है।

बाहरी वायुमडल

सौर विकिरण का बजट

भू विकिरण का बजट

स्थिर मण्डल

ओजोन द्वारा अवशोषण

मेघो द्वारा परावर्तन

विसरित प्रकीर्णन

पृथ्वी तल

सीधा विकिरण पृथ्वी तल द्वारा अवशोषित

64

98

चित्र 33

इस प्रकार, 100 इकाई आपतित लघु तरग विकिरण, 36 इकाई लघु तथा 64 इकाई दीघ तरगो के रूप मे अन्तरिक्ष का वापस चली जाती है। बजट-सन्तुलन के आकडे इस प्रकार दिए जा सकते हैं—

क्षोभ मण्डल

प्राप्ति (इकाई)	ह्रास (इकाई)
लघु तरगो से—15	अन्तरिक्ष को—57
दीघ तरगो से—91	पृथ्वी तल को
स्थिर मण्डल से—2	वापसी विकिरण—78
सवहन से—22	
सचालन से—5	
योग 135	योग 135

पृथ्वी तल

प्राप्ति (इकाई)	ह्रास (इकाई)
लघु तरगो से—47	वायुमण्डल को दीघ तरगो मे—98
दीघ तरगो से—78	वायुमण्डल को सवहन से—22
	वायुमण्डल का सचालन से—5
योग 125	योग 125

3 50 सौर विकिरण का चलन

पृथ्वी तल के किसी स्थान पर, किसी दिन आपतित कुल विकिरण, (1) सौर स्थिराक (2) मेघाच्छन्नता व वायु प्रदूषण (3) जमीन का ढाल (4) सूर्योदय से सूर्यास्त के बीच की अवधि, पर निभर करता है।

जैसाकि ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है, सौर स्थिराक का मान सूर्य से निकली ऊष्मा और पृथ्वी व सूय के बीच की दूरी पर निभर करता है तथा इसमे स्थान और समय के साथ बहुत ही थोडा चलन होता है, अत प्रायोगिक रूप से महत्त्वपूण नही है।

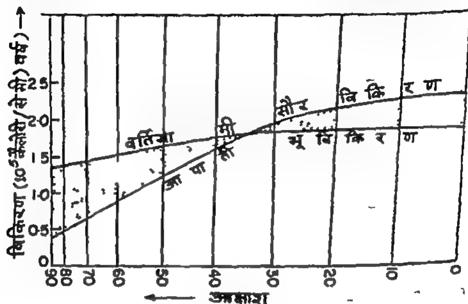
बादल तथा धूल, वाष्प आदि प्रदूषक तत्त्वों की उपस्थिति मे पृथ्वी पर सीधी आने वाली किरणो की मात्रा बहुत कम हो जाती है क्योकि ये तत्त्व स्वत किरणो के शोषण, परावत्तन,तथा प्रकीणन की क्षमता रखते हैं। उच्च अक्षाशों मे सूय की कोणिक ऊँचाई कम होने से, किरणो को तियक रूप से वायुमण्डल मे अपेक्षाकृत अधिक दूरी तय करनी पडती है। अत बादल तथा प्रदूषक तत्त्वो द्वारा सीधे विकिरण ह्रास उच्च अक्षाशो मे अधिक होता है। सर्दियो मे सूर्य की ऊँचाई और कम होने के कारण यह प्रभाव और महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

स्थानीय दोपहर को, जब सूर्य का उन्नताश अधिकतम होता है, सबसे अधिक विकिरण प्राप्त होता है। उन्नताश सुबह और शाम के समय कम होने लगता है। उसी अनुपात म दोपहर के पहले और बाद मे विकिरण की मात्रा भी घटती जाती है। सूय का स्थानीय उन्नताश ऋतुओं के साथ भी परिवर्तित होता है।

सौर विकिरण पृथ्वी तल पर किस कोण से पडते हैं, यह सूय के उन्नत कोण के अलावा धरातल के आरूप पर भी निभर करता है। उत्तरी गोलार्द्ध मे वह भूमि तल,

जिसका ढाल दक्षिण की ओर है, अधिक सीधा विकिरण प्राप्त करता है, जबकि उत्तर की ओर ढालू भूमि छाया में पड़ जाने से सीधे विकिरण से प्राय वंचित रह जाती है।

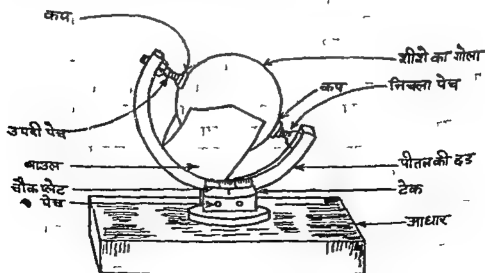
किसी स्थान का प्राप्त विकिरण, सौर प्रकाश की अवधि के समानुपाती होगी, यह स्पष्ट है। यह अवधि अक्षांशों तथा ऋतुओं के साथ परिवर्तनशील है। विषुवत् रेखा पर



चित्र 3 4

दिन और रात की अवधि सदैव समान (12 घण्टे) होती है। ध्रुवीय क्षेत्रों की गर्मियों में 24 घण्टे सूर्य का प्रकाश रहता है, जबकि सर्दियों में सूर्य दिखाई ही नहीं देता।

3 52 सौर प्रकाश और विकिरण की माप



चित्र 3 5

स्थानीय सौर-प्रकाश (सूर्योदय से सूर्यास्त) की अवधि मापने का सबसे प्रसिद्ध यन्त्र कैम्पबेल-स्टोक रिकार्डर कहलाता है। एक अंकित अर्द्ध-वृत्ताकार कार्ड बोर्ड पर, शीशे के गोले द्वारा सूर्य की किरणों को केन्द्रित करते हैं। सूर्य के स्थानान्तरण के साथ, कार्ड पर जलने की एक रेखा खिचती जाती है। जलन रेखा की लम्बाई सौर-प्रकाश की अवधि के समानुपाती होगी।

मेघाच्छन्नता की अवधि भी जलन रेखाओं के बीच बीच मे खण्डित भाग के आधार पर ज्ञात की जा सकती है।

सौर विकिरण मापने वाला यन्त्र पाइर हीलियोमीटर कहलाता है, जो विद्युत ऊष्मा (thermo electric) के सिद्धान्त पर कार्य करता है। इसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत पुस्तक के विषय क्षेत्र से बाहर है।

3 60 तापमान

किसी स्थान पर भूमि तल और उससे संलग्न वायुमण्डल का तापमान आगत सौर विकिरण व बहिर्गत भू-विकिरण के अन्तर, क्षैतिज वायु प्रवाह तथा सतह की प्रकृति पर निर्भर करता है।

स्थानीय दोपहर को, जब सूर्य का उन्नतांश सर्वाधिक होता है, आगत विकिरणों की तीव्रता उच्चतम होती है। उन्नतांश मे अक्षांशीय तथा मौसमी परिवर्तन भी होते हैं, जैसे ग्रीष्म गोलार्द्ध मे उन्नतांश सर्दियो की अपेक्षा अधिक होता है। उन्नतांश ऊष्ण कटिबन्धो मे शेष भागों की अपेक्षा अधिक होता है, क्योंकि सूर्य का वार्षिक स्थानान्तरण कर्क ($23\frac{1}{2}°$ उ) से मकर ($23\frac{1}{2}°$ द) रेखा के बीच मे ही होता है। अक्षांशों इन के बीच प्रत्येक स्थान पर सूर्य दो बार सीधा चमककर वार्षिक सौर विकिरण का दोहरा उच्चतम स्थापित करता है। उच्च अक्षांशो मे उन्नतांश घटता जाता है। तापमान चलन मुख्यत उन्नतांशों के ही समानुपाती होता है। अत अक्षांशो के साथ घटता जाता है।

बहिर्गामी विकिरण पृथ्वी के तापमान के समानुपाती होने के कारण, यद्यपि दिन मे ही अधिक होता है किन्तु इसका शीतलन प्रभाव रात्रि मे ही प्रभावशाली हो पाता है, जब सौर विकिरण अनुपस्थित रहता है। बहिर्गत दीर्घ तरंग विकिरण का अधिकांश भाग बादलो व वायुकणों द्वारा शोषित होकर पृथ्वी की ओर पुन विकिरण द्वारा लौट आता है। यह विकिरण निम्न वायु तहो का तापमान बढाने मे सहायक होता है। यही कारण है मेघाच्छन्न रात्रि, साफ आसमान वाली रात्रि से अधिक गर्म होती है। ठंडे प्रदेशो मे वनस्पतियो को आवश्यक ऊष्मा प्रदान करने के लिए चारों ओर से शीशे की दीवारो द्वारा ढक देते है जिसे ग्रीन हाउस कहते है। ये दीवारें लघु तरंगीय सौर विकिरणों को अन्दर जाने देती हैं, पर बहिर्गत दीर्घ तरंगीय ऊष्मा को बाहर जाने से रोक देती हैं। इस प्रकार वनस्पतियो के विकास के लिए आवश्यक ऊष्मा उपलब्ध हो जाती है। आकाश मे छाए बादल ग्रीन हाउस जैसा प्रभाव ही प्रस्तुत करते हैं।

इसमे प्राप्त ऊष्मा बराबर होने पर भी, विशिष्ट ताप की विभिन्नता के कारण सतहों के तापमान मे वृद्धि अलग अलग पायी जाती है। जल का विशिष्ट ताप सर्वाधिक होने के कारण तापमान वृद्धि सबसे कम होती है।

रात्रि को ऊष्मा-ह्रास के समय जल का तापमान ह्रास भी इसी कारण सबसे कम होता है। विशिष्ट ताप के अतिरिक्त, जल का तापमान कम घटने और कम बढ़ने का मुख्य कारण यह भी है कि जल मे किरणें अधिक गहराई तक लगभग 10 मीटर प्रवेश करती हैं, जिससे ऊष्मा का वितरण अधिक जल राशि मे होना पड़ता है।

3 70 वायु तापमान का माप

मौसम वेधशालाओ मे तापमान प्रेक्षणो के लिए भूमि तल से लगभग 4 फुट ऊपर की हवा का तापमान मानक रूप से मान लिया गया है। इसके लिए लकडी के एक बक्स मे, जिसे "स्टीवेन्सन स्क्रीन" कहते हैं, 4 तापमापी (थर्मामीटर) रखे जाते हैं। बक्स लकडी के चार पैरो पर लगभग 4 फुट ऊँचाई पर स्थित किया जाता है। इस बक्स मे इस प्रकार मुडी हुई खिडकियाँ कटी होती हैं कि थर्मामीटर बाहरी वायु के सम्पर्क मे तो रहते हैं, लेकिन सूर्य की किरणें अन्दर नही जा पाती हैं। बक्स खोलने पर भी सूर्य की किरणें तापमापियो पर न पडे, इसके लिए उत्तरी गोलार्द्ध की सभी वेधशालाओ मे स्क्रीन का मुँह ठीक उत्तर की ओर रखते हैं तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे दक्षिण की ओर। स्टीवेन्सन स्क्रीन और इसमे रखे गए ताप-मापियो का विशेष विवरण अध्याय 7 मे दिया गया है।

3 71 चारो तापमापियो का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है

(1) उच्चतम तापमापी

यह एक पारद-तापमापी होता है, जो दिन का उच्चतम तापमान बतलाता है। इसकी बनावट बहुत कुछ डॉक्टरी तापमापी से मिलती है। बल्ब के पास नली अन्दर से इस प्रकार सकरी कर दी जाती है कि तापमान घटने पर सकरे भाग के बाद वाला पारा नीचे नही आ पाता, जबकि तापमान बढने पर वह आगे बढने के लिए स्वतन्त्र होता है। इस प्रकार यह दिन का उच्चतम तापमान बताता है।

उच्चतम तापमापी स्क्रीन मे क्षैतिज अवस्था मे इस प्रकार रखा जाता है कि इसका बल्ब दूसरे सिरे से लगभग 3 मिलीमीटर नीचे रहे। इससे पारद स्तम्भ के, गुरुत्व के कारण बढ जाने की सम्भावना नही रह जाती।

(2) निम्नतम तापमापी

यह निम्नतम तापमान मापन के काम मे आता है और इसमे पारे की जगह साधारणत अल्कोहल का प्रयोग किया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि अल्कोहल का हिमांक पारे से बहुत कम है, अत यह उन स्थानो पर भी प्रयोग मे लाया जा सकता है, जहा तापमान हिमाक से बहुत नीचे पाया जाता है।

यह तापमापी पूर्णत क्षतिज अवस्था मे रखा जाता है। अल्कोहल के भाग मे काले शीशे का एक सूचक छोड दिया जाता है। तापमान घटने पर अल्कोहल का सिरा जलीय तनाव (surface tension) के कारण, सूचक को बल्ब की ओर खीच लाता है, किन्तु तापमान बढने पर अल्कोहल सूचक और नली के बीच से आगे गुजर जाता है और सूचक मे कोई गति नही हो पाती। इस प्रकार, सूचक निम्नतम तापमान ही रिकार्ड कर पाता है।

(3) शुष्क बल्ब तापमापी

यह सामान्यत सेन्टीग्रेड पैमाने वाला साधारण पारद तापमापी होता है, जिस

स्टीवेन्सन स्क्रीन में ऊर्ध्वाधर रखते हैं। यह स्क्रीन के स्तर की वायु का तात्कालिक तापमान पढ़ता है।

(4) नम-बल्ब तापमापी

वायुमण्डल में जल का वाष्पीकरण करने से वायु का तापमान घटता है क्योंकि वाष्पीकरण के लिए ऊष्मा वायुमण्डल द्वारा ही ग्रहण की जाती है। वायुमण्डल में जल को वाष्पीकृत करने में जितना निम्नतम तापमान प्राप्त किया जा सकता है, उसे नम-बल्ब तापमान कहते हैं। यह तापमान इस बात पर निर्भर करता है कि वायुमण्डल की वर्तमान आर्द्रता कितनी है। अतः नम-बल्ब तापमान, आर्द्रता के एक माप के रूप में व्यक्त किया जा सकता है।

नम बल्ब तापमान इस तापमापी द्वारा मापा जाता है। नम-बल्ब तापमापी शुष्क बल्ब की ही तरह होता है, किन्तु इसके बल्ब पर एक पतले मस्लिन (एक तरह का कपड़ा) की पत लपेट देते हैं। मस्लिन को चार सूती मोटे धागों में बांध देते हैं, और धागों के दूसरे सिरे आसवित (डिस्टिल्ड) जल के बरतन में डुबो देते हैं। इसमें धागों के सहारे जल चढ़कर मस्लिन में लिपटे बल्ब को नम रखता है। वाष्पीकरण होने पर इस मस्लिन और बल्ब का तापमान गिरता है, क्योंकि भीगे हुए मस्लिन से वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा निकाल ली जाती है। इस प्रकार यह तापमापी नम बल्ब तापमान रिकार्ड करता है।

3 72 वायु तापमान के लगातार और स्वयं मापन के लिए थर्मोग्राफ नामक यन्त्र उपयोग में *लाया जाता है जिसका विवरण अध्याय 7 में दिया गया है।*

3 73 घास निम्नतम तापमापी

यह तापमापी भूतल के बहुत निकट (कुछ सेन्टीमीटर) का निम्नतम तापमान मापता है। कृषि विज्ञान के लिए यह तापमान बहुत महत्त्वपूर्ण है। बादल रहित रात्रि में भू-तल का तापमान विकिरण द्वारा बहुत गिर जाता है। भू-तल के आसपास का निम्नतम तापमान, स्क्रीन स्तर के निम्नतम से साधारणतः लगभग 4–5°C कम पाया जाता है।

यह निम्नतम तापमापी की भांति साधारण अल्कोहल तापमापी ही होता है और खुले आसमान में Y के आकार की लकड़ी की खूंटियों पर इस प्रकार रखा जाता है कि इसका बल्ब छोटी गई घास के ऊपरी सतह को छूता रहे। सर्दियों में जब फसलों को पाला मारने की आशंका उत्पन्न हो जाए, तो इस तापमान का प्रेक्षण रखना विशेष महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

3 74 इकाई

मौसम वैज्ञानिक कार्यों के लिए भारत में सण्टीग्रेड पैमाने को मानक रूप में स्वीकार कर लिया गया है। इस इकाई को इस पैमाने के आविष्कारक के नाम पर, सेल्सियस के नाम से भी जाना जाता है बल्कि अब 'सेण्टीग्रेड' के स्थान पर भारत मौसम विभाग 'सेल्सियस' के प्रयोग को ही अधिक प्रोत्साहन देता है।

फारेनहाइट पैमाना भी कुछ देशों में तापमान मापन के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिसमें हिमांक 32°F तथा क्वथनांक 212°F होता है। सेल्सियस (C) और फारेनहाइट (F) का आपसी सम्बन्ध निम्नलिखित समीकरण द्वारा बताया जा सकता है।

$$\frac{C}{5} = \frac{F-32}{9}$$

3 75 निरपेक्ष इकाई

किसी वस्तु से ऊष्मा निकाल लेने से उसकी आन्तरिक शक्ति कम हो जाती है, जिससे तापमान घट जाता है। लेकिन ऊष्मा निकालने की भी एक सीमा होगी। सैद्धान्तिक रूप से ज्ञात किया गया है–273 के तापमान पर सभी वस्तुओं की आन्तरिक शक्ति शून्य हो जाती है और दशा में उसमें किंचित मात्र भी निकाल, लेना सम्भव नहीं। इस स्थिति को निरपेक्ष शून्य कहते हैं। निरपेक्ष शून्य से कम तापमान नहीं पाया जा सकता।

निरपेक्ष शून्य को मूल बिन्दु मानकर, तापमान के लिए जो सेल्सियस पैमाना तैयार किया जा सकता है, उसे निरपेक्ष पैमाना या सम्बन्धित वैज्ञानिक के नाम पर केल्विन पैमाना या (K) कहते हैं। स्पष्ट है कि $0°K = -273°C$

अतः $K = 273 + C$

3 76 दैनिक तापमान—निम्नतम

भूमितल के आसपास का तापमान सूर्योदय के ठीक पहले निम्नतम होता है। इसका कारण यह है कि रात्रि में दीर्घ तरंग विकिरण के रूप में ऊष्मा खोते रहने से, भूमितल का तापमान सूर्योदय तक निरंतर घटता रहता है। सूर्योदय होते ही सौर विकिरण की प्राप्ति के कारण, भू-तल के तापमान में बढ़ने की प्रवृत्ति आ जाती है।

चूँकि हवा ऊष्मा का बहुत ही क्षीण संचालक है, अतः भू-तल से केवल कुछ सेण्टीमीटर ऊँची वायु की तह ही भूमितल की ऊष्मा संचालित कर पाती है, यह ऊष्मा भी विकिरण द्वारा खो जाती है। इस प्रकार घास निम्नतम तापमान सूर्योदय के ठीक पहले स्थापित हो जाता है।

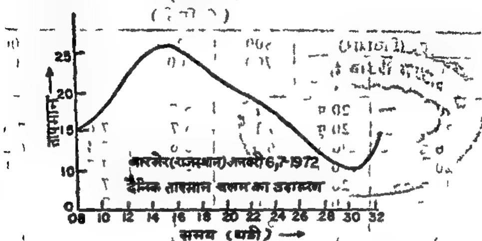
3 77 लेकिन स्टीवेन्सन स्क्रीन स्तर का तापमान सूर्योदय के कुछ मिनट बाद निम्नतम हो पाता है। इसका कारण यह है कि क्षीण संचालक होने के कारण, इस स्तर की हवा का तापमान सूर्योदय के समय निचली वायु तहों की अपेक्षा अधिक होता है। सूर्योदय होने पर समानान्तर किरणें, वायु की स्थिरता भंग कर देती हैं। वायु तहों में बुल-बुले उत्पन्न होकर हलचल उत्पन्न कर देते हैं, जिससे भूमितल से लेकर कुछ ऊँचाई तक की वायु पर्तें एक-दूसरे से घुल मिल जाती है। इस प्रक्रिया से कुछ ऊँचाई तक की वायुपर्तों का तापमान सम हो जाता है। स्पष्ट है कि नीचे की अधिक ठण्डी वायु के मिश्रण के कारण, स्क्रीन स्तर की वायु का तापमान कुछ गिर जाता है। इस प्रकार, सूर्योदय के कुछ मिनट बाद तक स्क्रीन का तापमान गिरता रहता है

3 78 दैनिक तापमान—उच्चतम

किसी स्थान के स्थानीय दोपहर को सूर्य का उन्नतांश अधिकतम होता है और इसी समय, उस स्थान पर सर्वाधिक सौर विकिरण प्राप्त होता है। लेकिन उच्चतम तापमान दोपहर के दो-तीन घण्टे बाद स्थापित होता है। इसका कारण निम्नांकित है।

यद्यपि दोपहर के बाद सूर्य द्वारा प्राप्त ऊष्मा की मात्रा घटनी आरम्भ हो जाती है तथापि यह मात्रा बहिर्गत भू-विकिरण की मात्रा से जब तक अधिक रहती है पृथ्वी तल

को कुछ न कुछ ऊष्मा लाभ होता रहता है, जिससे तापमान बढते रहना स्वाभाविक है। तापमान उच्चतम उस समय हो सकता है, जब आगत सौर विकिरण और बहिगत भू-विकिरण एक दूसरे के ठीक ठीक बराबर हो जाए। यह सन्तुलन दोपहर के दो-तीन घण्टे बाद ही स्थापित हो पाता है। इसके बाद भू विकिरण, सौर विकिरण पर भारी पडने लगता है तथा तापमान घटना प्रारम्भ हो जाता है। चित्र (3 6) देखिए।





चित्र (3 6)

3 79 दैनिक तापमान चलन

दैनिक निम्नतम और उच्चतम तापमानों के समय के आधार पर, तापमान के दैनिक चलन की रूपरेखा स्पष्ट हो जाती है। यह समय समसित नहीं है, अर्थात् निम्नतम से उच्चतम तक पहुँचने का समय सूर्योदय से दोपहर के बाद तक (7–8 घण्टे) का है जबकि शेष समय (16–17 घण्टे) तापमान घटता रहता है।

दैनिक उच्चतम और निम्नतम का अन्तर, दैनिक तापमान परिसर (रेंज) कहलाता है। किसी स्थान पर दैनिक तापमान परिसर का मान मेघाच्छन्नता, वायुमण्डल की स्थिरता, तथा पृथ्वी तल की प्रकृति पर मुख्य रूप से निर्भर करता है। इन तत्त्वों का विशेष विवरण अध्याय 13 में किया गया है।

3 80 क्षोभमण्डल मे ह्रास दर

जैसाकि पहले कहा जा चुका है वायुमण्डल मुख्य रूप से पृथ्वी के दीर्घ तरंग विकिरण द्वारा ऊष्मा ग्रहण करता है, न कि लघु तरंग सौर विकिरण से। अत तापमान क्षोभमण्डल में ऊँचाई के साथ घटता जाता है।

ह्रास दर क्षोभमण्डल मे विभिन्न अक्षांशो तथा ऋतुओ मे 5 से 6°C प्रति कि मी के बीच पायी जाती है, जो क्षोभमण्डल के पास कुछ अधिक तीव्र हो जाती है। विभिन्न ऊँचाइयो और अक्षांशो पर उत्तरी गोलार्द्ध के ह्रास दर के अक्ष वार्षिक औसत तालिका (3 4) मे दिए गए हैं।

तालिका (3 4)

ह्रास दर (°C/कि मी)

ऊचाई (मिलीबार)		800–700	700–500	500–300	300 200
स्थिति अक्षांश	देशान्तर				
0 उ	20 पू	6 1	5 7	7 3	7 3
20 उ	20 पू	7 1	5 7	7 6	7 6
20 उ	90 पू	6 5	5 6	7 4	6 2
20 उ	170 पू	3 0	5 7	7 7	7 1
45 उ	20 पू	4 4	5 8	7 5	2 3
45 उ	90 पू	5 0	6 1	7 6	2 6
50 उ	170 पू	5 7	5 7	5 8	0 7
70 उ	20 पू	6 0	5 9	6 6	1 4
70 उ	90 पू	3 0	4 7	6 2	1 5
70 उ	170 पू	3 2	4 9	5 0	0 7

3 8 1 अत्यधिक ऊँचाइयो पर तापमान की धारणा

कोई गैस बहुत अधिक सख्या मे अणुओ से मिलकर बनी होती है। ये अणु तीव्र गति से चलते रहते हैं। गैस को यदि ऊष्मा प्रदान की जाए, तो अणुओ की गति और तीव्र हो जाती है। यदि गैस से कुछ ऊष्मा निकाल ली जाए, तो अणुओ की गति कम हो जाती है।

यदि गैसीय अणुओ का औसत वेग v हो, तो उसका तापमान (T), v^2 के समानुपाती होता है।

हवा मे रखे गए तापमापी के बल्ब पर वायु अणुओ के सघटन से ऊष्मा उत्पन्न होती है, जिसकी मात्रा अणुओ की गति पर निर्भर करती है। इस तरह बल्ब तापमान ग्रहण करने और मापने में समर्थ हो पाता है। किन्तु अत्यधिक वायु ऊँचाइयो पर (100 कि मी से ऊपर) वायुकण बहुत ही विरल हो जाते है, जिससे अणुओ के बीच की दूरी (मीन फ्री पाथ) बहुत बढ जाती है। समुद्र तल पर यह दूरी 10^{-5} से मी के क्रम की होती है, जबकि 50 कि मी पर 10^{-2} से मी, 100 कि मी पर 1 से मी तथा 400 कि मी पर 10^4 से मी के क्रम की हो जाती है।

अत 100 कि मी से अधिक ऊँचाई पर यदि साधारण तापमापी रखा जाए, तो अणुओ के बल्ब से सघटन की सम्भावना बहुत कम रह जाएगी। अत तापमापी वास्तविक वायु का तापमान ग्रहण नही कर सकेगा। इस दशा म तापमापी का बल्ब इतना बडा बनाया जाना चाहिए कि कुछ समय म अणुओ की औसत सख्या सघटित हो जाए ताकि निश्चित समय के बाद बल्ब आसपास की हवा का तापमान औसत रूप स प्राप्त कर सके।

अत स्पष्ट है कि इन ऊँचाइयो पर तापमापियो द्वारा तापमान ज्ञात करना प्रायोगिक नही है। यहाँ तापमान की केवल 'गतिज ऊर्जा धारणा' का महत्त्व शेष रह जाता है। 100 कि मी से अधिक ऊँचाइयो पर तापमान ज्ञात करने की कुछ सैद्धान्तिक विधियाँ इस प्रकार हैं

1 अरोरा वायु दीप्ति का स्पेक्ट्रोस्कोपिक प्रेक्षण।
2 अयनमण्डलीय तत्त्वो पर तापमान की निर्भरता।
3 वायुमण्डलीय अवयवो मे विकिरण सन्तुलन के सिद्धान्त।

3 82 मौसम और हमारा शरीर

मनुष्य का स्वास्थ्य, शारीरिक शक्ति और आराम पर मौसम एव जलवायु का जितना प्रभाव पडता है, उतना वातावरण के अन्य तत्त्वो का नही। यहाँ तक कि शरीर की बनावट तथा रूप रग भी जलवायु की विभिन्नता के अनुसार, अलग-अलग पाये जाते हैं। मौसम का परिवतन हमारी शारीरिक प्रक्रियाओ तथा मानसिक अवस्थाओ को भी प्रभावित करता है, जिसके कारण भोजन, रहन-सहन तथा वस्त्रो मे तदनुसार परिवतन स्वाभाविक है। कुछ बीमारियाँ भी मौसमी परिवर्तन के कारण ही उत्पन्न होती हैं।

विभिन्न मौसमी दशाओ का असर हर मनुष्य पर समान नही होता। यह उसके विगत जलवायु के अनुभव, उम्र, शारीरिक अवस्था, खान पान तथा रहन-सहन पर निभर करता है। प्रभाव के दृष्टिकोण से तापमान, धूप और आद्र ता सर्वाधिक महत्त्वपूण तत्त्व हैं।

3 83 शारीरिक ऊष्मा का सतुलन

शारीरिक ऊष्मा ह्रास के स्रोत निम्नांकित हैं

1 त्वचा पृष्ठ द्वारा वाष्पीकरण,
2 श्वसन तन्त्रो द्वारा वाष्पीकरण,
3 शरीर के सम्पक मे आने वाली हवा द्वारा ऊष्मा का सवहनिक ह्रास,
4 विकिरण द्वारा शारीरिक ऊष्मा का ह्रास,
5 शरीर के सम्पक मे आने वाली वस्तुओ का सचालन द्वारा ऊष्मा ह्रास,
6 फेफडो मे ली गई ठण्डी हवा।

इन ह्रासो के सन्तुलन के लिए शरीर मेटाबोलिक प्रक्रियाओ द्वारा ऊष्मा को प्राप्त करता है जो भोजन तत्त्वो के पचने से निकलती है। इसके अतिरिक्त सौर तथा भू विकिरणो के अवशोषण से भी शरीर को ऊष्मा मिलती है। प्राप्ति तथा ह्रास मे सामजस्य स्वत कुछ इस प्रकार निर्धारित हो जाता है कि शरीर अपना सामान्य तापमान (लगभग 98°F) कायम करने मे समथ रहता है। काली चमडी श्वेत चमडी की अपेक्षा डेढ गुनी अधिक ऊष्मा शोषित करती है। यही कारण है कि धूप मे रहने पर काले लोग, श्वेत लोगो की अपेक्षा त्वचा तापमान में अधिक वृद्धि दर्शाते है। सवेद तापमान, अर्थात् जो तापमान हमारा शरीर अनुभव करता है, वह थर्मामीटर द्वारा नापे गये, वायु तापमान मे भिन्न होता है। सवेद तापमान इस बात पर निभर करता है कि शरीर से कितनी ऊष्मा सचालन, सवहन या विकिरण द्वारा हटाई जा रही है, तथा त्वचा की सतह और श्वसन से कितना वाष्पीकरण हो रहा है। दूसरे शब्दो मे, वायुगति तथा वायुमण्डलीय आद्र ता पर सवेद तापमान निभर करता है। इन तत्त्वो के समान होने पर भी सवेद तापमान हर व्यक्ति मे अलग-अलग पाया जाता है।

गर्मियों में जब आर्द्रता कम होती है, तो शरीर शीतलता अनुभव करता है क्योंकि वाष्पीकरण ज्यादा होने से संवेद तापमान कम हो जाता है और जब आर्द्रता अधिक हो जाती है, तो और अधिक गर्मी लगने लगती है जिसे हम ऊमस कहते हैं।

लेकिन सर्दियों में अधिक आर्द्रता संवेद तापमान को और घटा देती है क्योंकि इन दिनों शरीर से ऊष्मा का हटाव मुख्य रूप से संचालन और संवहन द्वारा होता है, न कि वाष्पीकरण से। अधिक आर्द्रता वायुगति से मिलकर संचालन की दर बढ़ा देती है, जिससे शरीर ज्यादा ठण्डक महसूस करने लगता है। इस ताप ह्रास को गर्म कपड़ों द्वारा रोक दिया जाता है।

वायुवेग बढ़ने से हर मौसम में संवेद ताप घटता है। किन्तु जब वायु का तापमान शरीर के तापमान से बढ़ जाय, तो वायु वेग शरीर को और गर्म करेगा अर्थात् संवेद ताप बढ़ जाएगा।

व्यक्तिगत कारणों के समावेश के कारण, संवेद तापमान को किसी यन्त्र द्वारा नापना लगभग असम्भव है।

3.84 आरामदायक वायुमण्डल

सामान्य तापमान पर 30 से 70% तक की आर्द्रता साधारणतः आरामदेह होती है। शान्त वायुमण्डल में तापमान और आर्द्रता के संयुक्त प्रभाव पर शारीरिक आराम निर्भर करता है। 20% पर लगभग 85% या इससे अधिक की सापेक्ष आर्द्रता ऊमस पैदा कर देगी। 25°C पर 60% तथा 30°C पर 44% की आर्द्रता ऊमस उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त है। किन्तु यदि वायुगति तेज होगी, तो अधिक तापमान या आर्द्रता भी त्वचा से वाष्पीकरण की दर बढ़ाकर ठण्डक पैदा कर सकती है, जिससे हम आराम का अनुभव करते हैं। एक अनुमान के अनुसार, वायुमण्डल की सबसे आरामदेह स्थिति तब होती है, जब तापमान 15 से 25°C के बीच तथा सापेक्ष आर्द्रता 40 से 70% के बीच हो।

हमारे शरीर का तापमान वर्ष भर लगभग स्थिर रहता है। विभिन्न ऋतुओं में 1°C से भी कम तापमान परिवर्तन रिकार्ड किया जाता है। जब त्वचा का तापमान अधिक होता है, तो पसीना आता है जिसके वाष्पीकरण से त्वचा ठण्डक प्राप्त करती है और तापमान को बढ़ने से रोकता है। इसके अलावा परिश्रम, भावुकता तथा भय आदि से भी खून का प्रवाह बढ़ जाता है, जिससे पसीना छूटने लगता है। भावुकता और भय से निकले पसीने शरीर पर हानिकारक असर डालते हैं क्योंकि इनसे शरीर के किसी भाग से आवश्यक ऊष्मा का ह्रास हो जाता है।

3.85 वस्त्र और मौसम

कपड़ा क्यों पहनते हैं? इसके जवाब के कई पहलू हैं। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से कपड़ा सजावट, फैशन, रीति रिवाज, प्रतिष्ठा आदि के लिए पहना जाता है। आघात और चोट से बचने के लिए भी कपड़े पहने जाते हैं। जलवायु के दृष्टिकोण से धूप, वर्षा तथा अधिक व कम तापमान से सुरक्षा के लिए कपड़े पहनने आवश्यक हैं। अधिकतर कपड़ा के प्रकार और डिजाइन का चुनाव जलवायु पर निर्भर करता है।

कपड़े और शरीर के बीच फँसी हवा, बाहरी वायु की शीतलता के लिए अवरोधक का काम करती है और शरीर को ठण्ड से बचाती है। इस काम के लिए हाथ से बुने ढीले ऊनी

कपड़े ज्यादा उपयुक्त होते हैं। वायु प्रवाह इन फँसी हुई वायु-पर्तों को अस्थिर करके उनकी अवरोधकता कम कर देते हैं। कुछ सर्द देशों में विद्युत प्रवाह युक्त गर्म सूट के प्रयोग किए गए हैं। लेकिन ये सूट उन लोगों के लिए कारगर नहीं हो सकेंगे, जो इन्हें पहनकर काम-काज में लगेंगे।

गर्मियों में हल्के रंग के कपड़े उपयुक्त होंगे, जो सूर्य की सीधी किरणें भी रोक सकते हैं और शरीर की ऊष्मा के सुलभ स्थानान्तरण के लिए माध्यम भी बन सकते हैं। गर्मियों में कोट, टाई वगैरह पहनना जलवायु के दृष्टिकोण से उपयुक्त नहीं है।

बरसात के दिनों में रबर तेलयुक्त धागों के वाटर प्रूफ कपड़ों में यह नुकसान है कि वे शरीर की आर्द्रता बाहर नहीं जाने देते, जिससे ऊमस महसूस होती है।

3.86 मौसम और स्वास्थ्य

मौसम का परिवर्तन स्वास्थ्य पर भी असर डालता है। तापमान की अधिकता से ताप तरंगें और लू उत्पन्न होती हैं, जो मृत्यु का कारण भी बन सकती हैं। अधिक गर्म मौसम में शीतल जल से स्नान करना दवा का काम करता है जो शरीर का तापमान कम रखता है। गर्मियों में शरीर की मेटाबोलिक प्रक्रियाएँ स्वाभाविक रूप से सुस्त हो जाती हैं, जिससे पेट की खराबी, अपच आदि का खतरा हो सकता है। इन ऋतुओं में, गरिष्ठ भोजन विशेष हानिकारक है।

सर्दियों में शीत तरंगें तथा कम तापमान अनेक बीमारियों, जैसे—आर्थराइटिस, चिलब्लेंस, जोड़ों में दर्द, जुकाम आदि का कारण बन सकती हैं।

वायुदाब और आर्द्रता में ज्यादा परिवर्तन से, मांस पेशियों में दर्द तथा सांस की तकलीफें हो सकती हैं। हवा ज्यादा खुश्क होने से होंठों तथा शरीर के अन्य स्थानों में चमड़ी फटने लगती है। एलर्जिक तत्व भी आर्द्रता के परिवर्तन से प्रभावकारी हो जाते हैं।

भोजन की मात्रा और स्तर भी जलवायु, विशेषकर तापमान, द्वारा प्रभावित होती है। सर्दी के दिनों में चर्बी तथा कार्बोहाइड्रेट से युक्त अधिक भोजन की आवश्यकता होती है, जो ठण्डक में शरीर के ताप को सन्तुलित रख सके। विटामिन, खनिज तथा ऊष्मा की कमी से न्यूट्रिशन की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। गर्मियों में अधिक जल, लवण तथा कुछ विटामिन, जैसे–बी, इन बीमारियों से शरीर को सुरक्षित रख सकते हैं।

सौर विकिरण का एक भाग, जिसे इन्फ्रारेड कहा जाता है, हमारा शरीर ग्रहण करता है। इससे शरीर में ऊष्मा उत्पन्न होती है। अतः यह स्वाभाविक है कि हम सर्दियों में खुली धूप तथा गर्मियों में छाँव में बैठें। रेगिस्तान अथवा बर्फीली पहाड़ियों द्वारा परावर्तित होकर आती चमकती धूप में अल्ट्रावायलेट किरणें पाई जाती हैं, जो आँखों में चकाचौंध करके सरदर्द पैदा कर सकती है। इनके तीव्र प्रभाव से कभी-कभी लोग अन्धे भी हो जाते हैं। अल्ट्रावायलेट किरणों में डी-विटामिन पाई जाती है। किन्तु यह अधिकतर चमड़ी को जला देने की क्षमता रखती है। यह बात नोट कर लेनी चाहिए कि गोरे लोगों पर ये किरणें काले लोगों की अपेक्षा जल्दी असर डालती है। सफाई, पोषण–(न्यूट्रिशन), शारीरिक क्रियाएँ तथा अन्य कारणों के अलावा बीमारियाँ उत्पन्न होने और फैलने का एक प्रमुख कारण जलवायु भी है। जलवायु हमारे स्वास्थ्य पर दो प्रकार से असर डालता

है, —(i) विभिन्न रोगाणुओं का प्रजनन और वृद्धि निर्धारित मौसमी दशाओं में ही सम्भव हो पाती है। तथा (ii)—मौसम और जलवायु शरीर की बीमारियों के प्रति प्रतिरोधक शक्ति को कम या अधिक करने की क्षमता रखते हैं।

उष्ण कटिबन्धीय देश उच्च तापमान और नम जलवायु के कारण अनेक रोगाणुओं के पनपने के लिए उपयुक्त हैं, जो उच्च अक्षांशों में नहीं मिलते। लेकिन सर्दियों में टांसिल और गले की खराबियाँ, निमोनिया, इन्फ्लुएन्जा और बसन्त ऋतु में स्कारलेट बुखार उच्च अक्षांशों में अधिक प्रचलित हैं। अधिक ऊँचाइयों वाले क्षेत्रों में वायुदाब की कमी अनेक श्वास की बीमारियाँ उत्पन्न कर सकती है।

स्वस्थ्य जलवायु में ताजी हवा, धूप तथा उपयुक्त तापमान और नमी, शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाती हैं। तपेदिक, रिकेट तथा चर्म रोगों के लिए ताजी हवा और धूप दवा का काम करती हैं।

लेकिन एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने पर जलवायु का अचानक परिवर्तन, दुर्बल लोगों के लिए शारीरिक और मानसिक—दोनों तरह से हानिकारक है। विशेष तौर पर रोगी का स्थानान्तरण क्रमिक जलवायु अन्तर वाले कई स्थानों से होकर इस प्रकार करना चाहिए कि व्यक्ति को जलवायु सहन करने में कोई शारीरिक या मानसिक दबाव न पड़े।

3.8.7 आर्द्र बल्ब तापमान और आरामदायक वायुमण्डल

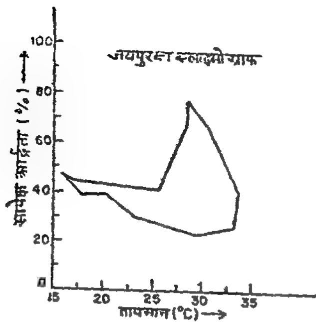
चूँकि वायुमण्डलीय आर्द्रता और तापमान का संयोग शारीरिक गतिविधियों पर प्रभाव डालता है, अतः आर्द्र बल्ब तापमान, जो इन दोनों तत्त्वों का संयुक्त माप है, की मात्रा आरामदायक वायुमण्डल की सीमा निर्धारित करने के लिए एक तत्त्व के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। 25°C के लगभग आर्द्र बल्ब तापमान कष्टदायक उमस वातावरण प्रस्तुत कर सकता है जबकि सामान्य वायु तापमान 35°C तक भी सुविधाजनक रह सकता है। ग्रिफिथ टेलर (1916) के अनुसार आर्द्र बल्ब तापमान की अधिकतम सीमा 21°C है, जिसमें वायुमण्डलीय घुटन के बिना शारीरिक श्रम किया जा सकता है।

3.8.8 क्लाइमोग्राफ

किसी स्थान पर वर्ष भर में आरामदेह मौसम की अवधि ज्ञात करने के लिए, जो रेखाचित्र तैयार किया जाता है उसे क्लाइमोग्राफ कहते हैं। इसमें X–अक्ष पर सापेक्ष आर्द्रता (%) तथा Y–अक्ष पर तापमान (°C) के पैमाने अंकित कर दिए जाते हैं। इस पर दिए गये स्थान की औसत मासिक सापेक्ष आर्द्रता तथा औसत मासिक तापमान (या आर्द्र बल्ब तापमान) हर महीने के लिए अंकित करते हैं। अंकित बिन्दुओं को मिलाने से एक बन्द घेरे वाला रेखाचित्र तैयार हो जाता है।

उदाहरण के लिए, जयपुर का क्लाइमोग्राफ चित्र (3.7) में दिया गया है। इसमें वर्ष भर में (1) 16 अक्टूबर से 5 नवम्बर तक 21 दिन का समय तथा (2) 21 नवम्बर से 29 नवम्बर तक 9 दिन का समय मौसम के दृष्टिकोण से आरामदेह है।

तापमान (°C) →



चित्र (3 5)

4

आर्द्रता और वायुमण्डलीय स्थिरता

(HUMIDITY AND ATMOSPHERIC STABILITY)

4 10 वायुमण्डल म जल वाष्प की मात्रा स्थान और समय क साथ बदलती रहती ह, जबकि अन्य गैसो का अनुपात सवत्र समान होता ह । इसी वाष्प की मात्रा पर बादल और वर्षा का होना निभर करता है । इसके अलावा वाष्प की मात्रा पृथ्वी के विकिरण स तुलन, वायुमण्डल की स्थिरता और मौसम की आरामदायक्ता पर भी प्रभाव डालती है।

वायुमण्डलीय आर्द्र ता के स्रोत सूय की ऊष्मा कारण सागरो, नदियो, ग्लेशियरो, नम धरातल, वायुमण्डल म जल की बू दो तथा पेड पौधो से होने वाला वाष्पीकरण तथा वाष्पोत्सजन है ।

किसी निश्चित तापमान और दाब पर वाष्प की एक अधिकतम मात्रा होती है, जो हवा मे समा सकती है । इस दशा मे हवा सतृप्त (Saturated) कहलाती है ।

सूखी हवा और वाष्प वायुमण्डल की दोनो गसें, अलग अलग गसीय नियमो का पालन करती है । अत वायुमण्डल का कुल दाब (p), सूखी हवा के आशिक दाब तथा वाष्प क आशिक दाब के योग मे बरावर होगा ।

4 11 आर्द्रता राशियाँ (Humidity Quantities)

वायुमण्डलीय वाष्प की मात्रा नापने के लिए कई राशियाँ नीचे दी गई हैं, इन्ह आर्द्र ता राशियाँ कहते हैं । हवा मे सतृप्त होने पर ये राशियाँ, सतृप्त आर्द्र ता राशियाँ (Saturated humidity quantities) कहलाती हैं ।

(i) वाष्प दाब (e) (Vapour pressure)

वायुमडल म उपस्थित कुल वाष्प क कारण किसी स्थान पर जितना आशिक दाब पडता है, वह वाष्प दाब (e) कहलाता है । हवा के सतृप्त होन की दशा म वाष्प दाब सबस अधिक होगा, जिसे सतृप्त वाष्प दाब (e_s) कहत हैं । जब तक e का मान e_s स कम रहगा, हवा असतृप्त समझी जाएगी ।

(ii) निरपेक्ष आर्द्र ता (a) (Absolute Humidity) या वाष्प घनत्व (Vapour density)

हवा के इकाई आयतन मे वाष्प की जितनी मात्रा होती है उस निरपेक्ष आर्द्र ता (a) कहत है । यदि V आयतन की नम हवा म वाष्प की मात्रा M हो ता

$$a = \frac{M}{V}$$

इसकी सामान्य इकाई, ग्राम/घनमीटर लिया जाता है।

(iii) विशिष्ट आर्द्रता (q) (Specific humidity)

नम हवा में स्थित वाष्प की मात्रा और कुल नम हवा की मात्रा का अनुपात विशिष्ट आर्द्रता कहलाती है। यदि 1 कि ग्रा नम हवा में 12 ग्राम जल वाष्प हो तो $q = 12$ ग्राम/कि ग्रा या 0 012 ग्राम/ग्राम।

यदि 1 कि ग्रा संतृप्त हवा म 40 ग्राम वाष्प हो तो संतृप्त/विशिष्ट आर्द्रता $(q_s) = 40$ ग्राम/कि ग्रा।

(iv) आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) (Humidity mixing ratio)

प्राकृतिक हवा की मात्रा (M) = वाष्प की मात्रा (Mv) + सलग्न सूखी हवा की मात्रा (Md)। वाष्प की मात्रा और सलग्न सूखी हवा की मात्रा के अनुपात को आर्द्रता मिश्रण अनुपात कहते हैं।

$$m = \frac{Mv}{Md}$$

यदि 1 कि ग्रा नम हवा में 12 ग्राम जल वाष्प हो तो

$$m = \frac{12}{988} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

यदि 1 कि ग्रा संतृप्त हवा मे 40 ग्रा वाष्प हो, तो संतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात

$$m_s = \frac{40}{960} = \frac{1}{24} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

(v) सापेक्ष आर्द्रता (r) (Relative Humidity)

हवा म उपस्थित वाष्प की मात्रा (w) और उसे संतृप्त करने के लिए आवश्यक कुल वाष्प की मात्रा (w_s) का अनुपात सापेक्ष आर्द्रता कहलाती है। इसे सामान्यत प्रतिशत म व्यक्त करते है। इसे निम्नांकित रूपों मे व्यक्त किया जा सकता है—

$$r = \frac{w}{w_s} \times 100$$

$$= \frac{e}{e_s} \times 100$$

$$= \frac{m}{m_s} \times 100$$

4 12 q और m में सम्बन्ध

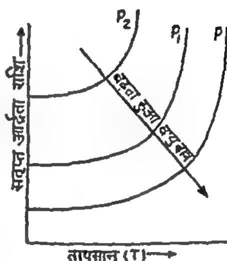
$$q = \frac{\text{वाष्प की मात्रा}}{\text{नम हवा की मात्रा}} = \frac{Mv}{M}$$

$$= \frac{M_v}{M_v + M_d}$$

$$= \frac{M_v/M_d}{1 + M_v/M_d}$$

$$= \frac{m}{1+m}$$

4 13 संतृप्त आर्द्रता राशियों का मान तापमान के साथ बढ़ता है। एक निश्चित दाब (p) पर तापमान (T), और किसी संतृप्त आर्द्रता राशि (S H Q) के बीच खींचे गये ग्राफ चित्र (4 1) की तरह होंगे, जिसमें ग्राफ का उत्तरोत्तर भाग तापमान अक्ष की ओर घिसता होता है। स्पष्ट है कि अधिक तापमानों पर S H Q का अन्तर कम तापमानों पर S H Q के अन्तर से कम होगा। अन्य दाबों (p_1, p_2 आदि) के लिए यह रेखा समानान्तर रूप से स्थानान्तरित हो जाती है। कम दाब पर रेखा की वक्रता (Curvature) अधिक पायी जाती है।



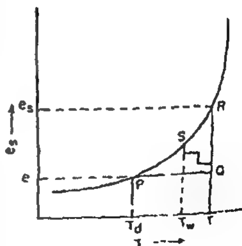
चित्र (4 1)

4 14 राशि ($e_s - e$) संतृप्तता हानि (Saturation deficit) कहलाती है। (चित्र 4 2) में दिए गये ($T - e_s$) ग्राफ देखिए

तापमान T पर, e_s = TR और e = TQ (मान लीजिए)

अतः संतृप्तता हानि = QR

यदि स्थिर तापमान T पर ($e_s - e$) वाष्प की मात्रा सामान्य हवा में मिला दी जाए, तो वायु संतृप्त हो जायेगी। तापमान यदि घटाया जाए, तो एक तापमान (T_d) आएगा जब वाष्प दाब (e) पर ही हवा संतृप्त हो जाएगी। यह तापमान ओसांक कहलाता है।



चित्र (4 2)

$$\text{अतः } r = \frac{\text{ओसांक बिन्दु पर संतृप्त वाष्प दाब}}{\text{वायु तापमान पर संतृप्त वाष्प दाब}}$$

4 15 किन्तु वास्तविक वायुमण्डल मे सतृप्तता की स्थिति लाने के लिए, तापमान और वाष्प दोनो का हाथ रहता है। अर्थात् तापमान भी घटता है और वाष्प भी जुटती रहती है। इस प्रकार हवा T और *Td* के बीच किसी तापमान Tw पर सतृप्त हो जाती है। Tw ही आर्द्र बल्ब तापमान कहलाता है। दूसरे शब्दो मे तापमान स्थिर किए बिना, (प्राकृतिक दशा मे) वाष्पीकरण करने से हवा जिस तापमान पर सतृप्त हो जाय, वह आर्द्र-बल्ब तापमान कहलाता है।

4 20 वाष्पीकरण (Evaporation)

किसी जलाशय की सतह से वाष्पीकरण की मात्रा, जलाशय के तापमान, वायुमण्डल की शुष्कता तथा वायुगति पर निर्भर करती है। जलाशय से सलग्न वायु पर्त जब तक असतृप्त रहेगी, वाष्पीकरण होता है। दूसरे शब्दो मे, जब तक हवा का वाष्प दाब (e), सतृप्त वाष्प दाब (e_s) से कम हो, तब तक वाष्पीकरण निरन्तर होता रहेगा तथा वाष्पीकरण मात्रा ($e_s - e$) के समानुपाती होगी। यह मात्रा वायुगति बढने पर भी बढ जाती है। एक ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि समुद्र के खारे पानी की अपेक्षा मीठे पानी से वाष्पीकरण अधिक होता है।

वनस्पतियो द्वारा होने वाला वाष्पोत्सजन (transpiration), वायुगति, पत्तियो की बनावट, तापमान तथा मिट्टी मे निहित जल की मात्रा पर निर्भर करता है। इसके अलावा सूर्य की किरणें भी वाष्पोत्सजन की मात्रा पर प्रभाव डालती है, जिनकी उपस्थिति मे वाष्पोत्सजन की दर बढ जाती है।

वनस्पतियो या घास आदि से ढकी जमीन से नगी जमीन की अपेक्षा अधिक वाष्प वायुमण्डल मे मिलती है। यह वाष्प घने जगलो मे दिन के तापमान में साधारणत सशोधन करने की क्षमता रखती है। वनस्पतियो से वाष्पोत्सजन लगातार होता रहता है, जबकि नगी जमीन के बिल्कुल सूखी हो जाने पर वाष्पीकरण बन्द हो जाता है। पृथ्वी के भू-भाग पर गिरने वाली कुल वर्षा का औसतन प्रति वर्ष 99 हजार घन कि मी है, जिसमे लगभग 62000 घन कि मी वाष्पीकृत हो जाता है और शेष 37000 घन कि मी अपवाह (run off) द्वारा सागरो मे मिल जाता है। यद्यपि वायमण्डल की नमी वाष्पीकरण और वाष्पोत्सजन—दो विभिन्न विधियो से प्राप्त होती है, परन्तु दोनो की प्रकृति समान होने के कारण, उन्हे एक पद वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन (इवपोट्रान्स पाइरेशन) द्वारा व्यक्त किया जाना अधिक सुविधाजनक है।

4 21 तालिका (4 1) मे दोनो गोलार्द्धों के लिए विभिन्न अक्षाशो पर औसत वाष्पीकरण की मात्रा दी गई है। या दक्षिण गोलार्द्ध मे वाष्पीकरण की मात्रा उत्तरी गोलार्द्ध से कुछ अधिक है पर उस अनुपात मे नही, जिसमे दक्षिण गोलार्द्ध का जलीय भाग अधिक है। इसका कारण दक्षिणी गोलार्द्ध का कम तापमान और अधिक मेघाच्छन्नता (Cloudiness) है, जो वाष्पीकरण मे रुकावट डालते है। अधिक बादल, अधिक नमी और बहुत हल्की वायुगति के कारण दोनो गोलार्द्धों के विषुवत् रेखीय क्षेत्र (0–10 अक्षाश) के महासागरो मे अधिक तापमान होने पर भी (10–20) अक्षाश के महासागरो से कम वाष्पीकरण होता है।

तालिका 4 1

औसत वार्षिक वाष्पीकरण (मिलीमीटर)

अक्षांश	उत्तरी गोलार्द्ध	दक्षिणी गोलार्द्ध
0–10	1235	1304
10–20	1389	1541
20–30	1246	1416
30–40	1002	1256
40–50	641	895
50–60	469	520
60–70	333	174
70–80	145	45
80–90	42	0
0–90	944	1064

महासागरो से प्रतिवर्ष 334000 घन कि मी जल का वाष्पीकरण होता है, जिसमे 297000 घन कि मी सीधी वर्षा द्वारा वापस आ जाता है ।

4 22 वाष्पीकरण की मात्रा ज्ञात करना

वायुमण्डल मे वाष्पीकरण की गणना करने के लिए अनेक विधिया प्रयोग म लाई जाती रही हैं । सन् 1876–78 मे मोन (Mohn) ने वाष्पीकरण की मात्रा ज्ञात करने के लिए पहली बार पैन वाष्पमापी का इस्तेमाल किया । तब से जलीय तल के तापमान, हवा की शुष्कता और वायुवेग पर आधारित कई सूत्र इस गणना के लिए तयार किए गए हैं ।

रोवर (1931) ने वाष्पीकरण की मात्रा (E) के लिए निम्नांकित सूत्र दिया—

$$E = (0\ 44 + 0\ 11\ w)\ (e_s - e_d),$$

जहाँ w वायुगति पर आधारित एक गुणक है, तथा e_s और e_d क्रमश जल की सतह और हवा मे वाष्पदाब ह ।

4 23 वायुमण्डल मे विकिरण ऊर्जा के संतुलन पर आधारित, E की गणना के लिए सैद्धान्तिक (theoretical) समीकरण तैयार किया गया है। इस प्रकार, सूर्य द्वारा प्राप्त कुल विकिरण ऊर्जा (Q) तीन भागों में बाटी जा सकती है

(i) दीर्घ तरंग (long wave) के रूप मे पृथ्वी द्वारा वापसी विकिरण (H_l)

(ii) संचालन (conduction) द्वारा वायुमण्डल मे ऊर्जा का ह्रास (H_c)

(iii) वाष्पीकरण के लिए प्रयुक्त ताप (H_e)

$$H = H_l + H_c + H_e \qquad (i)$$

यहाँ यह मान लिया गया है कि ताप-जनन या ह्रास के अन्य स्रोत, जैसे—रासायनिक क्रियाएं पृथ्वी का आन्तरिक संचालन, घर्षण आदि नगण्य है। उपर्युक्त सभी राशियाँ कैलोरी प्रति वर्ग से मी प्रति मिनट की इकाई मे व्यक्त की गई हैं।

यदि $\frac{H_c}{H_e} = \beta$, तो

$$H_e = \frac{H - H_l}{1 + \beta} \qquad (ii)$$

अब, यदि वाष्पीकरण का गुप्त ताप L और प्रति वर्ग से मी वाष्पीकरण की दर E हो तो,

$$H_e = LE \qquad (iii)$$

समीकरण (ii) और (iii) से

$$E = \frac{H - H_l}{L(1 + \beta)} \qquad (iv)$$

स्थिरांक β को बावेन अनुपात (Bowen's ratio) कहते हैं।

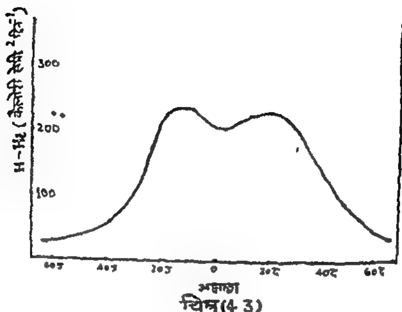
4 24 $H - H_l$ की गणना आसान है और किसी स्थान के लिए विकिरण के आँकड़ो द्वारा सीधे तौर पर किया जा सकता है। डब्ल्यू, स्मित ने विभिन्न अक्षांशो के लिए इसकी गणना की है जो चित्र (4 3) म दिखाया गया है।

यदि ऊष्मा संचालन और जल वाष्प प्रसरण का आवर्त गुणांक (eddy coefficient) समान हो और μ के बराबर हो, तो

$$H_c = -C_p\mu\frac{dT}{dz},$$

$$\text{तथा } H_e = -L\mu\,\frac{622}{p}\;\frac{de}{dz}$$

जहाँ L, तापमान T पर वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा है।



चित्र (4 3)

यदि $C_p = 24$ और $L = 585$ कैलोरी तथा $p = 1000$ मिलीबार हो तो,

$$\beta = 0\ 66\ \frac{T_0 - T_h}{e_0 - e_h}$$

जहा T_0 तथा e_0 समुद्र तल पर क्रमश तापमान और वाष्प दाब हैं तथा T_h और e_h h ऊँचाई पर हवा के तापमान व वाष्पदाब है ।

4 25 β का मान अक्षाशो के साथ बदलता रहता है । विभिन्न अक्षाशो पर β का औसत मान तालिका (4 2) मे दिया गया है ।

तालिका 4 2

अक्षाश	0	10	20	30	40	50	60	70
β	0–10	0 10	0 10	0 13	0 18	02 5	0 37	0 53

4 26 किसी स्थान की जलवायु सम्ब धी आँकडो की सहायता से भी वाष्पीकरण का अनुमान लगाया जा सकता है । कुल अपवाह (run off) व जल भण्डारो (बाध, तालाब आदि) मे जल की मात्रा म हुई कमी को यदि कुल अवक्षेपण स घटा दिया जाए, तो शेष भाग, जमीन, वनस्पति तथा स्वत त्र जल सतह के वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन द्वारा हुए जल ह्रास (water loss) की मात्रा होगी । इस विधि के पूर्ण और सही आकडो का मिलाना आवश्यक है ।

4 27 वाष्पमापी (Evaporimeter)

स्वतन्त्र जल-सतह स वाष्पीकरण को सीधी माप लेन के लिए अधिकतर दो प्रकार के वाष्पमापी प्रयोग म लाए जाते हैं ।

(i) खुली टंकी वाष्पमापी

4 फुट व्यास और 10 इन्च ऊँचाई की एक बेलनाकार नाद होती है, जिसके तलवे जमीन में 4% अन्दर टिम्बर के ढाँचे पर जड देते हैं। नाद में लगे निदेशक (प्वाइन्ट) तथा पैमाने की सहायता से किसी भी अवधि के लिए जल-स्तर का ह्रास (वाष्पीकरण) पढ़ा जा सकता है।

(ii) पिच वाष्पमापी (*Piche evaporimeter*)

यह एक अंकित परखनली होती है, जिसमें पानी भर कर उसके खुले सिरे को एक झरझरी प्लेट से बन्द कर देते हैं। फिर नली को उल्टा करके लटका देते हैं। पोरस प्लेट से पानी रिस-रिस कर वाष्पीकृत होता रहता है, जिसकी मात्रा परखनली में अंकित पैमाने से पढ़ सकते हैं।

वाष्पीकरण का चलन

(i) उष्ण कटिबन्ध में वाष्पीकरण का दैनिक चलन दो उच्चतम और दो निम्नतम प्रदर्शित करते हैं। उच्चतम प्रात के अंतिम तथा रात्रि के प्रथम प्रहर में होता है और निम्नतम सूर्यास्त और दोपहर के ठीक बाद होता है। यहाँ दैनिक परिसर का औसत मान 5 मिमी के लगभग होता है।

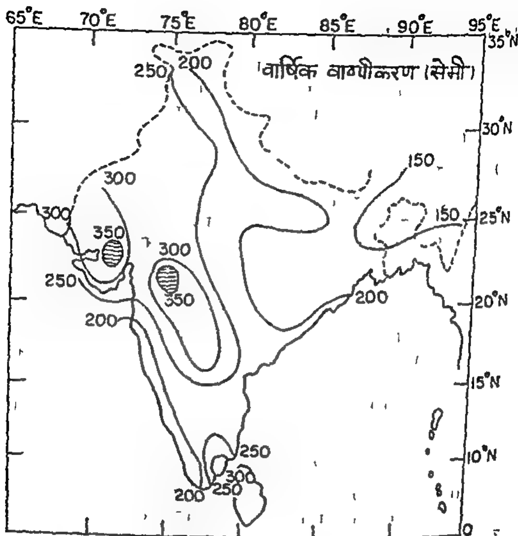
मध्य अक्षांशों में रात्रि और प्रात के प्रथम प्रहरों में क्रमशः उच्चतम और निम्नतम के लिए केवल एक ही आवृत्ति पायी जाती है।

(ii) वाष्पीकरण का मौसमी विचलन स्थान की स्थिति और जलवायु की दशाओं पर निर्भर करता है। भारत में वाष्पीकरण अधिकतर पतझड़ और सर्दियों के आरम्भिक महीनों में तथा निम्नतम मानसून महीनों में होता है। वाष्पीकरण का दूसरा अधिकतम मार्च तथा निम्नतम फरवरी के महीने में पाया जाता है।

4.28 भारत में वाष्पीकरण

भारत में लगभग 80 वेधशालाओं में रिकार्ड किए गए 5 से 10 वर्ष तक (1960-70) के वाष्पीकरण आंकड़ों के आधार पर तैयार किया गया विश्लेषण चित्र (4.4) में प्रदर्शित किया गया है। वार्षिक वाष्पीकरण की सबसे कम मात्रा (150 से मी से कम) असम और सलग्न हिमालय की घाटियों में पाई गई है। सर्वाधिक वाष्पीकरण के दो क्षेत्र हैं, जहाँ प्रतिवर्ष 350 से मी से अधिक वाष्प बनती है। पहला क्षेत्र उत्तरी गुजरात और सलग्न सौराष्ट्र क्षेत्र तथा दूसरा जलगाँव और आस पास के भू भाग हैं।

दैनिक वाष्पीकरण की सर्वाधिक मात्रा (1.6 से मी) मई के महीने में महाराष्ट्र, दक्षिणी पश्चिमी मध्यप्रदेश और राजस्थान में नोट की गई है, जबकि सबसे कम दैनिक वाष्पीकरण (2 मि मी से कम) हिमालय की जड़ों में जनवरी के महीने में देखा जाता है।



वार्षिक वाष्पीकरण (सेमी)

सर्वाधिक वाष्पीकरण के क्षेत्र (7350 से मी)

चित्र (4 4)

4 30 नम हवा के लिए गैस-समीकरण (Equation of state for moist air)

किसी गैस के दाब p और तापमान T (केल्विन इकाई म) पर यदि उसका विशिष्ट आयतन (आयतम प्रति इकाई मात्रा) α हो तो,

$$p\alpha = RT \quad (1)$$

जहाँ R वायु के लिए विशेष गैस स्थिरांक है।

हम जानते हैं कि सामान्य दाब $p_o = 76 \times 13\ 5951 \times 980\ 665$ डाइन/से मी^{2} और तापमान $T_o = 273°K$ पर गैस के ग्राम अणुभार (n ग्राम) का आयतन 22400 घन से मी होता है।

$$\alpha_0 = \frac{22400}{w}$$

$$R = \frac{p_o \alpha_o}{T_o} = \frac{76 \times 13.5951 \times 980.650 \times 22400}{273 \times w}$$

$$= \frac{R^*}{w}$$

जहाँ R* सम्पूर्ण (Universal) गैस स्थिरांक कहलाता है।
अत गैस समीकरण

$$p\alpha = \frac{R^*}{w} T, \qquad (ii)$$

या $$p = \frac{\rho RT}{m} \text{ जहां } \rho = \frac{1}{\alpha}$$

के रूप में लिया जा सकता है, जहाँ w गैस का ग्राम में व्यक्त किया गया अणु भार है।

4.31 सूखी हवा के लिए गैस समीकरण,

$$p - e = \frac{\rho d}{w_d} R^* T$$

जहां ρd सूखी हवा का घनत्व है और $w_d = 28.96$ ग्राम

$$\rho d = \frac{(p-e) w_d}{R^* T} \qquad (i)$$

इसी प्रकार, जल वाष्प का घनत्व $\rho v = \frac{e w_v}{R^* T}$, जहाँ $w_v = 18$ ग्राम।

अब आर्द्रता मिश्रण अनुपात $m = \frac{Mv}{Md} = \frac{\rho v}{\rho d}$

$$= \frac{e}{p-e} \cdot \frac{w_v}{w_d}$$

$$= 622 \frac{e}{p-e}$$

$$\approx 622 \frac{e}{p} \text{ (लगभग)}$$

इसी प्रकार सतप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात $m_s = 622 \frac{e_s}{p}$

4 32 नम हवा के लिए गैस समीकरण

$pa = \frac{R^*}{\overline{w}} T$ के रूप मे लिखते हैं ।

जहाँ $\overline{w} = \frac{dM + Mv}{Md/w_d + Mv/w_v}$

$$= \frac{w_d(Md + Mv)}{Md} \Bigg| \left[1 + \frac{Mv}{w_v} \Bigg| \frac{Md}{w_d} \right]$$

$$= \frac{w_d\ (1+m)}{1+m/\ 622}$$

$$pa = \frac{R^*T}{w_d} \left[\frac{1+1\ 61m}{1+m} \right]$$

या $pa = RT(1 + 61m)$,

जहाँ $R = \frac{R^*}{w_d}$ = सूखी हवा के लिए विशेष गैस स्थिरांक है ।

यदि $T(1 + 61m) = Tv$

तो गैस समीकरण $pa = RTv$

Tv, हवा का आभासी (virtual) तापमान कहलाता है । यह वह तापमान है, जिस पर सूखी हवा का वही घनत्व होगा, जो नम हवा का, T तापमान पर है, यदि दाब दोना दशाओं मे स्थिर रखा जाए ।

4 40 नम हवा का घनत्व (Density of moist air)

नम हवा का घनत्व $\rho_h = \rho_d + \rho_v$

या $\rho_h = \frac{p-e}{\frac{R^*}{28\ 96}T} + \frac{e}{\frac{R^*}{18}T}$ जहाँ वायुमण्डल का कुल दाब p और बाष्प दाब e है ।

$$\rho_h = \frac{p-e}{RdT} + \frac{18/28\ 96e}{RdT} \quad \text{जहाँ } Rd = \frac{R^*}{28\ 96}$$

$$= \frac{p - 3/8e}{RdT}$$

$$= \frac{348\ 4}{T} \left(p - \frac{3}{8} e \right) \text{ ग्राम/मीटर}^3$$

यदि दाब, मिलीबार और तापमान केल्विन इकाई मे व्यक्त किया जाय ।

4 41 सूत्र (1) से स्पष्ट है कि हवा का घनत्व निम्नांकित अवस्थाओं में घटता है–

(1) वायुदाब p घटने पर अर्थात् ऊँचाई बढ़ने पर।

(11) वाष्पदाब e बढ़ने पर अर्थात् आर्द्रता बढ़ने पर।

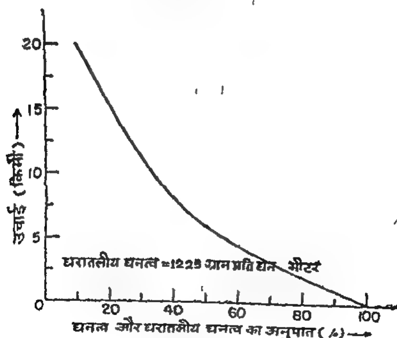
(111) तापमान बढ़ने पर।

यह देखा जा सकता है कि वायुमण्डल की सबसे निचली पर्तों में 1 प्रतिशत घनत्व कम करने के लिए, या तो लगभग 10 मिलीबार दाब कम किया जाए (या 27 मीटर ऊँचाई बढ़ाई जाए) अथवा 3°C तापमान बढ़ाया जाए।

यह भी स्पष्ट है किसी निश्चित दाब पर गर्म हवा हल्की और ठण्डी हवा अपेक्षाकृत भारी होगी।

4 42 घनत्व का चलन (Variation of density)

ग्लोब पर माध्य समुद्र तल स्तर पर घनत्व का चलन, दाब और तापमान के चार्टों द्वारा समझा जा सकता है। यह घनत्व भू मध्य रेखा के पास सबसे कम, लगभग 1200 ग्राम/मीटर^3 होता है, जो ध्रुवों की ओर अक्षांश के साथ बढ़ता जाता है। सर्दियों में साइबेरिया में घनत्व समुद्रतल पर 1550 ग्राम/मीटर^3 तक पाया जाता है, जिसका कारण कम तापमान और उच्च दाब का संयुक्त प्रभाव है। गर्मियों में उच्च तापमान और कम दाब के कारण उत्तरी अफ्रीका और दक्षिणी पश्चिमी एशिया के रेगिस्तानों में 1150 ग्राम/मीटर^3 से भी कम घनत्व आ जाता है।



चित्र (4 5)

ऊँचाई बढ़ने से दाब और तापमान दोनों घटते हैं परन्तु दाब का परिवर्तन, तापमान परिवर्तन पर हावी रहता है जिसके फलस्वरूप सर्वत्र ऊँचाई के साथ घनत्व घटता जाता है।

घनत्व का घटाव हर ऊँचाई पर समान नहीं होता है। आई सी ए एन वायुमण्डल के लिए पृथ्वी तल का घनत्व = 1225 ग्राम/मीटर^3 है, ऊँचाई के साथ घनत्व परिवर्तन का ग्राफ चित्र (4 5) मे दिखाया गया है।

4 50 जल को वाष्पीकृत करने के लिए कुछ ऊष्मा देनी पड़ती है। एक ग्राम उबलते जल को वाष्पीकृत करने मे लगभग 536 कैलोरी ऊष्मा लगती है। यह ऊष्मा वाष्प मे मिल जाती है और उसमे छिपी रहती है। सघनित होते समय वाष्प से यह ऊष्मा निकल जाती है, इसे वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा कहते हैं। वायुमण्डल मे हर तापमान पर वाष्पीकरण होता रहता है। अत वाष्प में स्थित गुप्त ताप की मात्रा कुछ हद तक उस तापमान पर निर्भर करती है, जिस पर वाष्पीकरण हो रहा है।

4 51 रुद्धोष्म प्रक्रिया (Adiabatic Process)

पृथ्वी तल की हवा के तापमान मे स्थान स्थान पर भिन्नता होती है। यदि हवा की कोई राशि (पार्सल) आसपास की अपेक्षा अधिक गर्म हो, तो वह हल्की होगी और इस लिए ऊपर उठेगी। ऊपर कम दाब होने के कारण वायुराशि फैलती जाएगी। यदि वायु राशि का उतार-चढाव तेजी से हो, तो उसकी और आसपास की ऊष्मा का स्थानान्तरण नही हो पाएगा। इस दशा में वायुराशि के फलाव के लिए आवश्यक शक्ति उसमे निहित ऊष्मा द्वारा ही खर्च की जाएगी, जिसके कारण वायुराशि का तापमान घट जाएगा। ठीक इसी प्रकार बिना आसपास से ऊष्मा ग्रहण किए नीचे उतरती वायुराशि सकुचित होगी, जिससे उसका तापमान बढ़ जाएगा।

इस प्रकार फैलाव या सकुचन के कारण वायु राशि के क्रमश ठण्डे या गर्म होने की प्रक्रिया को रुद्धोष्म प्रक्रिया कहते हैं। इस प्रक्रिया मे तापमान परिवर्तन केवल गतिक कारणो से वायुराशि की आन्तरिक ऊष्मा मे कमी या वृद्धि होने का परिणाम है। किसी बाहरी तत्व, जैसे—मिश्रण, विकिरण, सचालन आदि से ऊष्मा का कोई लेन देन नही होता है।

4 52 शुष्क और सतृप्त रुद्धोष्म प्रक्रम (Dry and Saturated Adiabatic Processes)

जब कोई शुष्क या असतृप्त वायुराशि ऊपर उठती है, तो उसके तापमान मे लगभग 9 8/किमी कमी आ जाती है। अवतरित होते समय वायु का तापमान इसी दर से बढता है। इस दर को शुष्क रुद्धोष्म ह्रास दर (Dry Adiabatic Lapse rate) या (D A L R) कहते है।

सतृप्त वायुराशि के ऊपर उठने पर फलाव से जो शीतलन होता है, उसके फलस्वरूप वाष्प का सघनन होने लगता है। सघनन होने पर वाष्प की गुप्त ऊष्मा बाहर निकल आती है, जो वायु राशि के शीतलन की दर को कम कर देती है। अत उठती हुई सतृप्त वायु राशि की शीतलन दर, जिसे सतृप्त रुद्धोष्म ह्रास दर (S A L R) या (Saturated Adiabatic Lapse rate) कहते हैं D A L R से कम होती है। साकेतिक रूप से D A L R और S A L R को क्रमश γ_d और γ_s द्वारा सूचित किया जाता है।

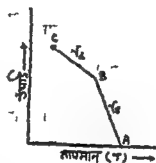
γ_s का मान स्थिर नही होता, बल्कि सघनित हुए वाष्प की मात्रा पर निर्भर करता है। सतृप्त वायुराशि यदि ठण्डी है, तो उसमे अपेक्षाकृत कम वाष्प की मात्रा सघनित होगी।

अत उसके द्वारा स्वतन्त्र की गई ऊष्मा कम होगी। इसलिए इस अवस्था में γ_d और γ_s का अन्तर कम होगा।

मध्य अक्षांशो के लिए γ_s का मान γ_d के लगभग आधे के बराबर आता है।

अत $\gamma_s = 5°C$/किमी (लगभग)

4 53 γ_s का मान ऊँचाई के साथ बढता जाता है क्योंकि वायु राशि मे निहित वाष्प की मात्रा लगातार सघनन के कारण कम होती जाती है। एक निश्चित ऊचाई के बाद वायु असतप्त हो जाएगी और तब $\gamma_s = \gamma_d$। अत सतप्त वायु पहले सतृप्त रुद्धोष्म पथ (AB) पर और फिर बिन्दु B पर असतृप्त हो जाने के बाद शुष्क रुद्धोष्म पथ (BC) पर चलने लगती है। यह कहा जा सकता है कि बिन्दु B के बाद सतृप्त रुद्धोष्म दर शुष्क रुद्धोष्म के उपगामी (asymptotic) हो जाती है अर्थात दोनो पथ समानान्तर हो जाते हैं।



चित्र (4.6)

4 54 उठती हुई सतृप्त वायु राशि से कुछ वाष्प के सघनन के बाद भी वायुराशि सतृप्त रहती है, अत सतृप्त दर पर चलती रहती है। अब इस वायुराशि के अवतलन पर विचार कीजिए। यदि सघनित जल को वायुराशि से अलग नही किया गया है, तो अवतलन मे तापमान बढने से यह जल वाष्पीकृत होकर वायुराशि को सतृप्त रखेगा। अत सतृप्त वायुराशि उसी पथ पर लौट सकती है, जिस पर चढाई गई थी, अर्थात् यह प्रक्रिया परिवर्तनीय रहेगी।

परन्तु यह विचार सिर्फ कल्पना मात्र है। वास्तविक वायुमण्डल से सघनित जल वायुराशि से अलग हो जाता है। इस दशा मे यदि वायुराशि को अवतलित कराया जाय तो वह गर्म होने के साथ तुरन्त असतृप्त हो उठती है और फिर सतृप्त दर के बजाय शुष्क दर (9 8°C/किमी) पर नीचे उतरेगी। इस प्रकार, वायुमण्डल मे सतृप्त वायुराशि की रुद्धोष्म प्रक्रिया उत्क्रमणीय (reversible) नही है। अत यह प्रक्रिया दृढता से रुद्धोष्म भी नही कही जा सकती है। इसे छद्म रुद्धोष्म प्रक्रिया (Pseudo Adiabatic Process) कहा जाता है।

4 55 गैस के समताप (Iosthermal) और रुद्धोष्म (Adiabatic) समीकरणो के अनुसार क्रमश

$$\frac{pa}{T} = R \qquad (i)$$

और $pa^{\gamma} =$ स्थिरांक, (ii)

जहा γ स्थिर दाब और स्थिर आयतन पर सूखी हवा की विशिष्ट ऊष्मा का अनुपात है।

$$\text{अर्थात्} \quad \gamma = \frac{Cp}{Cv} = 1\ 403$$

(ii) में (i) के घातांक का भाग देने से

$$\frac{T^{\gamma}}{p^{\gamma-1}} = \text{स्थिरांक}$$

$$\text{या } \frac{T}{p^{28\ 8}} = \text{स्थिरांक} \qquad \text{(iii)}$$

यदि प्रारम्भिक स्तर p_o पर तापमान T_o हो और रुद्धोष्म परिवर्तन (जिसमें सचालन, मिश्रण, विकिरण आदि को सुविधा न देकर, परिवर्तन केवल गतिक कारणों से हो) से किसी दाब स्तर p पर तापमान T हो जाता हो, तो समीकरण (iii) से

$$\frac{T}{T_o} = \left(\frac{p}{p_o}\right)^{28\ 8} \qquad (iv)$$

इस समीकरण को रुद्धोष्म प्रक्रिया के लिए प्वायसन (Poission) का समीकरण कहते हैं।

4 56 तुलना में समानता के लिए एक मानक दाब स्तर (साधारणत 1000 मिलीबार) चुन लिया जाता है। किसी वायुराशि को रुद्धोष्म विधि द्वारा 1000 मिलीबार स्तर तक लाने पर उसका तापमान जितना हो जाएगा वह वायुराशि का विभव तापमान (Potential Temperature) कहलाएगा। परिभाषा से ही यह स्पष्ट है कि रुद्धोष्म परिवर्तनों के दौरान विभव तापमान स्थिर (Constant) होता है।

यदि विभव तापमान को θ द्वारा सूचित करें, तो

$$\theta = T\left(\frac{1000}{p}\right)^{28\ 8}$$

जहाँ T और p, वायुराशि के क्रमश प्रारम्भिक तापमान और दाब हैं।

$$\log\theta = \log T - 0\ 288\ \log p + 0\ 864$$

$$\text{या } \theta = \text{Antilog}\ [\log T - 0\ 288\ \log p + 0\ 864] \qquad \text{(v)}$$

4 57. उदाहरण—उस वायुराशि का विभव तापमान ज्ञात कीजिए जिसका 500 मिलीबार पर तापमान 0°C है।

समीकरण (v) से

$\theta = \text{Antilog}\ [\log 273 - 0\ 288\ \log 500 + 0\ 864]$

$= 333\ 4°$ Kelvin $= 60\ 4°C$

4 60 वायुमण्डल की स्थिरता और अस्थिरता (Stability and Instability of atmosphere)

स्थिरता वायुमण्डल की वह दशा (Condition) है, जिसमें वायु की उर्ध्वाधर गति (Vertical Motion) या तो बिल्कुल नहीं होती या कुछ ऊँचाई पर अवरुद्ध हो जाती है। अस्थिरता वायुमण्डल की वह अवस्था है, जिसमे भूमि तल से काफी ऊँचाई तक वायु

राशियों की गति सुगमता से होती रहती है।

स्पष्ट है कि अस्थिर वायुमण्डल में ही नमी को काफी ऊँचाई तक उठने की सुविधा मिलती है, जो सघनित होकर बादल और वर्षा का कारण बन सकती है। स्थिर वायुमण्डल मे नमी के अपेक्षित ऊँचाई तक नही पहुँच पाने के कारण, सघनन की सम्भावनाएँ बहुत कम हो जाती हैं। इस प्रकार, अस्थिरता नम मौसम और बादल की तथा स्थिरता शुष्क मौसम और साफ आसमान की प्रतीक है।

4 61 स्थिरता और अस्थिरता की धारणा

मान लीजिए कि किसी वायुराशि को अपनी मूल स्थिति से ऊर्ध्वाधर दिशा (ऊपर या नीचे) में थोड़ा स्थानान्तरित (δz) किया जाता है। यदि वायुराशि अपनी मूल स्थिति में वापस आती है, तो वह स्थिर कहलाएगी, यदि वायुराशि स्थानान्तरण की दिशा मे और आगे विचलित हो जाए, तो वह अस्थिर कहलाएगी, यदि वायुराशि स्थानान्तरित स्थिति मे ही रुक जाए, अर्थात् न वापस आए और न आगे बढ़े तो वह उदासीन (Neutral) कहलाएगी।

अत स्थिरता किसी भी स्थानान्तरण का विरोध करती है, जबकि अस्थिरता उसे और बढ़ावा देती है और उदासीनता उसके प्रति अक्रिय रहती है।

दूसरे शब्दो में,

यदि स्थानान्तरण δz, से वायुराशि में a त्वरण (acceleration) उत्पन्न हो, तो

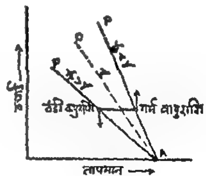
स्थिरता की दशा मे, यदि δz धनात्मक (ऊपर की ओर) है, तो a उसके विपरीत, अर्थात् ऋणात्मक (नीचे की ओर) होगा और यदि δz ऋणात्मक है, तो a धनात्मक होगा। दोनो दशाओं मे,

$a\,\delta z$ = ऋणात्मक (i)

अस्थिरता की दशा मे δz और a की दिशा एक ही होगी। या तो दोनो ऊपर की ओर (धनात्मक) होगे या फिर दोनो नीचे की ओर (ऋणात्मक)।

अत $a\,\delta z$ = धनात्मक (ii)

उदासीनता की दशा मे, जिसमे वायुराशि स्थानान्तरित स्थिति मे ही रुक जाती है —



चित्र (4.7)

$$a = 0,$$

अत $$a\,\delta z = 0$$ (iii)

4 62 मान लीजिए वायुमण्डल की ह्रास दर (γ) चित्र (4 7) मे AO द्वारा प्रदर्शित की गई है। उठाये गये वायुराशि का ह्रास दर (γ_p), (γ) से अधिक य. कम हो सकता है। ये स्थितियाँ क्रमश AP और AP′ द्वारा दिखाई गई है।

पहले स्थिति AP′ पर विचार करें ।

इस स्थिति में, $\gamma < \gamma_p$

अत उठाई गई वायुराशि का तापमान, किसी भी ऊँचाई पर, वहा के पर्यावरण के तापमान से कम होगा । वायुराशि आसपास की अपेक्षा ठण्डी होने के कारण भारी होगी और इसलिए नीचे वापस आ जाएगी । इस स्थिति म वायुराशि स्थायी हुई ।

अब स्थिति AP′ पर विचार करें ।

यहा $\gamma > \gamma_p$

अत किसी भी ऊँचाई पर वायुराशि का तापमान आसपास की अपेक्षा अधिक होगा । गर्म होने के कारण वायुराशि हल्की होगी और स्वत उठती चली जाएगी । इस प्रकार यह वायुराशि अस्थायी हुई ।

4 63 अत यदि पर्यावरण का वास्तविक ह्रास दर (γ) और उठती हुई वायु का ह्रास दर γ_p हो तो वायुमण्डल

स्थायी होगा, यदि $\gamma < \gamma_p$

अस्थायी होगा, यदि $\gamma > \gamma_p$

और उदासीन होगा, यदि $\gamma = \gamma_p$

4 64 यदि हवा असतृप्त है, तो $\gamma_p = \gamma_d = 9\ 8°C$/किमी (साधारणत)

अत असतृप्त हवा के स्थायी होने के लिए $\gamma < \gamma_d$, यह प्रतिबन्ध वास्तविक वायुमण्डल मे ($\gamma = 6\ 5°C$/किमी) बहुधा लागू रहता है । अत असतृप्त वायु साधारणत स्थायी होती है ।

असतृप्त वायु अस्थायी तब होगी, जब पर्यावरणीय ह्रास दर $\gamma > \gamma_d$T, यह एक असाधारण स्थिति है और वही लागू हो सकती है जहाँ, या तो γ इतना अधिक हो जाए या फिर γ_d इतना कम । उदाहरणार्थ, गर्मियो मे अक्सर दोपहर के बाद, सूर्य की ऊष्मा म निचली तहो म γ का मान अत्यधिक हो उठता है और सूखी हवा भी अस्थायी हो जाती है ।

यदि हवा असतृप्त है तो $\gamma_p = \gamma_s = 5°C$/किमी (साधारणत)

सतृप्त वायुमण्डल स्थायी तब होगा, जब $\gamma < \gamma_s$ । यह स्थिति भी असामान्य है और विशेष परिस्थितियो मे ही सम्भव है । अत्यधिक सर्दियो मे जबकि वायुमण्डल का निचली तहो मे व्युत्क्रमण (inversion) होता है अर्थात् γ का मान ऋणात्मक होता है यह स्थिति लागू हो जाती है । यही कारण है कि इन दिनो मे सतृप्त होने पर भी वाष्प के कण कुहरे के रूप मे भूतल पर छाये रहत हैं ।

सतृप्त वायुमण्डल सामान्य रूप से अस्थायी हो जाता है, क्योंकि इस दशा म साधारणत $\gamma > \gamma_s$ का प्रतिबन्ध लागू रहता है ।

उपर्युक्त विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है कि वायुमण्डल पूर्ण रूप से स्थायी होगा, यदि $\gamma < \gamma_s$

(इस स्थिति मे स्वत $\gamma < \gamma_d$ क्योंकि $\gamma_s < \gamma_d$)

यह स्थिति निरपेक्ष स्थायित्व (Absolute stability) कहलाती है ।

इसी प्रकार, चाहे वाष्प की मात्रा कुछ भी हो, वायुमण्डल पूर्ण रूप से अस्थायी होगा, यदि $\gamma > \gamma_d$

(स्वत $\gamma > \gamma_s$ क्योंकि $\gamma_d > \gamma_s$)

इस अवस्था को निरपेक्ष अस्थायित्व (Absolute instability) कहते हैं।

परन्तु वास्तविक वायुमण्डल न तो पूर्ण रूप से अस्थायी होता है, और न स्थायी।

साधारणत $\gamma = 6\ 5°C$/किमी

अत $\gamma_s < \gamma < \gamma_d$

यह अवस्था प्रतिबन्धी अस्थायित्व (Conditional instability) कहलाती है।

वास्तविक वायुमण्डल इसी अवस्था में होता है।

वाष्प की मात्रा से पूर्ण या लगभग संतृप्त होने पर हवा अस्थायी हो जाती है और सूखी या कम मात्र होने पर स्थायी।



चित्र (4 8)

4 65 अस्थायी होने पर वायुमण्डल में *ऊर्ध्व धाराएँ* (*Vertical currents*) उत्पन्न हो जाती हैं, जो भूतल की नमी को ऊपर ले जाती हैं।

4 70 वायुमण्डल की ऊष्मागतिकी (Thermodynamics of atmosphere)

निम्न अक्षांशों में ऊष्मा की नेट प्राप्ति, तथा उच्च अक्षांशों में नेट ह्रास होती है। इस ताप प्रवणता के कारण वायु प्रवाहित होती है, जो ऊष्मा को निम्न अक्षांशों से उच्च अक्षांशों की ओर ले जाती है। इस प्रकार, वायुमण्डल एक ताप इंजन की भाँति कार्य करता है जिसमें ऊष्मा का स्रोत निम्न अक्षांश, सिंक उच्च अक्षांश तथा कार्यकारी पदार्थ वायुराशि हैं। इस प्रवाह में ऊष्मा का कुछ भाग यान्त्रिकी ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। अतएव वायुमण्डल में ऊष्मागतिविज्ञान का प्रवेश आवश्यक है।

4 71 ऊष्मा-गतिकी का प्रथम नियम

यदि इकाई मात्रा की वायुराशि को, जिसका आयतन a है, dQ ऊष्मा प्रदान की जाए तो (1) कुछ ऊष्मा वायुराशि का तापमान बढ़ाने के काम आएगी। यदि तापमान में वृद्धि dT है, तो इसके लिए आवश्यक ऊष्मा की मात्रा $= C_v dT$ जहाँ C_v स्थिर आयतन पर वायु की विशिष्ट ऊष्मा है।

(2) शेष ऊष्मा, वायु के प्रसार में प्रयुक्त होगी। यदि प्रसार da हो, तो p दाब पर इसके लिए आवश्यक ऊष्मा की मात्रा $= pda$

इस प्रकार $dQ = C_v dT + pda$ (i)

यह समीकरण ऊष्मागतिकी का प्रथम नियम कहलाता है।

4 72 रुद्धोष्म परिवर्तन की दशा में $dQ = O$

अतः $-C_v dT = pda$

अर्थात् हवा फैलने पर ठण्डी होगी तथा संकुचित होने पर गर्म।

4 73 गैस समीकरण $pa = RT$ से,

$$pda + \alpha\, dp = RdT \quad \text{(ii)}$$

समीकरण (2) से pda का मान (i) में रखने से

$$dQ = (C_v + R)dT - adp$$

या $$dQ = C_p dT - adp, \quad \text{(iii)}$$

जहाँ C_p स्थिर दाब पर गैस की विशिष्ट ऊष्मा है। रुद्धोष्म स्थिति में

$$C_p dT = adp$$

या $$C_p dT = -ag\rho dz$$

या $$C_p dT = -gdz$$

या $$-\frac{dT}{dz} = \frac{g}{C_p}$$

या $$\gamma_d = \frac{g}{C_p} \quad \text{(iv)}$$

4 74 एनट्रापी (Entropy)

यदि बिना तापमान बदले वायुराशि को रुद्धोष्म विधि से प्रसारित और फिर उतना ही संकुचित किया जाए, तो प्रक्रम उत्क्रमणीय (रिवर्सिबुल) हो जाएगा। इस दशा में प्रति इकाई तापमान, प्रयुक्त हुई ऊष्मा का कुल योग शून्य होगा, अर्थात्

$$\int_{\text{प्रथम दशा}}^{\text{द्वितीय दशा}} \frac{dQ}{T} = O$$

राशि $d\phi = \frac{dQ}{T}$, दोनों दशाओं (परिवर्तन से पहले और बाद) में एनट्रापी का अन्तर कहलाती है। एनट्रापी का निरपेक्ष मान ज्ञात नहीं किया जा सकता। किसी स्वेच्छ मूल बिन्दु से इसका तुलनात्मक मान ज्ञात किया जा सकता है।

$$\phi = \phi_o + \int \frac{dQ}{T}$$

जहाँ ϕ_o मूल बिन्दु पर एनट्रापी का निरपेक्ष मान है।

4 75 अवस्थाओं का परिवर्तन सम एनट्रापिक कहलाता है जब,

$d\phi = O$ या $\phi =$ स्थिरांक

इस स्थिति में स्पष्ट है कि $dQ = O$

अत सभी सम एन्ट्रापिक परिवर्तन रुद्धोष्म होते हैं। किन्तु सभी रुद्धोष्म प्रक्रम सम एन्ट्रापिक नहीं होते। सम एन्ट्रापिक होने के लिए प्रक्रमों का उत्क्रमणीय होना भी आवश्यक है।

4 76
$$d\phi = \frac{dQ}{T} = \frac{C_p dT - \alpha dp}{T}$$

$$d\phi = C_p \frac{dT}{T} - R\,\frac{dp}{p}$$

$$\phi = C_p \log T - R \log p + \phi_o$$

$$\phi = C_p \log \frac{T}{p^{R/C_p}} + \kappa$$

या
$$\phi = C_p \log \theta + \kappa$$

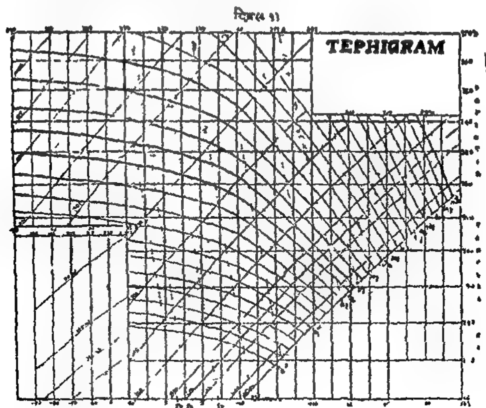
$$\phi \propto \log \theta$$

अत एनट्रापी (ϕ) विभव तापमान के लघु गणक के समानुपाती है।

4 80 तापमान-एनट्रापी आरेख या टी फाई ग्राम (Tephigram या $T - \phi$ gram)

मौसमी प्राचलों (पैरामीटर्स) जैसे, तापमान, दाब, आर्द्रता आदि के सतही और

चित्र(4 9)



ऊच्च वायुमण्डलीय प्रेक्षणो से वर्तमान मौसम अवस्था के बारे में निष्कर्ष निकालना और सही निरूपण करना मौसम पूर्वानुमान के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिए कुछ ऊष्मागतिक ग्रिड तैयार किए गए हैं, जिन पर इन प्राचलों या एक साथ आलेख करके इनका अध्ययन किया जाता है। ये रेखाचित्र तत्कालीन वायुमण्डलीय अवस्था का चाक्षुष चित्र प्रस्तुत करते हैं, जिनसे निष्कर्ष निकालना बहुत आसान हो जाता है। मौसम पूर्वानुमान केन्द्रो मे सर्वाधिक प्रचलित ग्रिड टीफाईग्राम के नाम से विख्यात है। भारतीय मौसम केन्द्रो मे प्रयुक्त होने वाले टी-फाइ (T-ϕ gram) ग्राम का नमूना चित्र (4 9) म दिया गया है। इन पर तापमान, आर्द्रता (या ओसाक) और वायु वेग के आँकड़े, ऊँचाई के अनुसार सरलता से अकित कर दिए जाते हैं, जिनसे इनका ऊर्ध्वाधर बटन एक नजर मे स्पष्ट हो जाता है।

4 81 टीफाईग्राम का X-अक्ष, तापमान (T) तथा Y-अक्ष, एनट्रापी (ϕ) व्यक्त करता है। अत इसका नाम टी फाई ग्राम रखा गया है। चूँकि ϕ विभव तापमान के लघुगणक के समानुपाती होता है, अत Y अक्ष पर विभव तापमान (θ) ही अकित किया जाता है।

1 इस प्रकार क्षैतिज रेखाओ पर विभव तापमान का मान स्थिर होता है और ये विभव तापमान की समरेखाएँ कहलाती हैं। चूँकि शुष्क रुद्धोष्म प्रक्रमो मे विभव तापमान अचर रहता है, अत इन रेखाओ को ड्राई एडिया बेट भी कहते हैं। Y अक्ष पर विभव तापमान निरपेक्ष इकाइयो मे दिया गया है। बायी ओर समतुल्य एनट्रापी पैमाना भी जूल/कि ग्राम/°C, इकाईयो मे व्यक्त किया गया है।

2 ऊर्ध्वाधर रेखाएँ समताप रेखाएँ हैं, ये नीचे °C तथा ऊपर निरपेक्ष इकाइयो मे अकित की गई हैं।

3 बायी ओर से दायी ओर को उठती सीधी रेखाएँ समदाब रेखाएँ हैं, जिन पर मिलीबार अकित किया गया है।

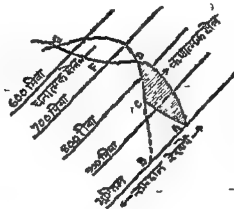
4 ऊपर को उभरी हुइ वक्र रेखाएँ, जो दायी ओर उठ रही है, सतृप्त एडिया बेट (Saturation adiabate) है। ये रेखाए एक सतृप्त वायु राशि के तापमान और दाब के सम्बन्ध बतलाती है, जब सतृप्त वायुराशि रुद्ध रुद्धोष्म अवस्था म ऊपर या नीचे गति कर रही हो। सतृप्त रुद्धोष्म पथ पर चढती हुई वायुराशि अपना सघनित जल खोती रहती है अत जब नीचे लौटाई जाती है, तो तुरन्त रुद्धोष्म उष्णन के कारण असतृप्त हो उठती है। अत शुष्क रुद्धोष्म पथ पर लौटेगी। स्पष्ट है कि यह प्रक्रिया उत्क्रमणीय नही है।

5 टूटी हुई रेखाएँ, जो दायी से बायी ओर थोडी झुकी हुई हैं, ओसाक रेखाएँ है। ये समरेखाएँ आर्द्रता मिश्रण अनुपात को व्यक्त करती हैं और साधारणत आइसोहाइग्रिक कहलाती हैं। ये रेखाएँ उस दाब और तापमान का बोध कराती हैं, जिस पर किसी दिए गए मात्रा की जलवाष्प 1 कि ग्राम शुष्क वायु को सतृप्त कर देगी। आइसोहाइग्रिक पर 'ग्राम' इकाइयाँ अकित की गई हैं। ओसाक पर आइसोहाइग्रिक का मान आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) तथा शुष्क बल्ब तापमान पर आइसोहाइग्रिक का मान सतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m_s) के बराबर होता है (यदि इकाई ग्राम/कि ग्राम म ली जाए)।

6 मुख्य समदाब रेखाओ, जैसे–1000 900, 850, 800, 700 मिलीबार आदि के मध्य छोटे छोटे ऊर्ध्वाधर निशान आभासी तापमान के लिए ऊँचाई की त्रुटि पढते हैं।

4 82 गुप्त अस्थायित्व (Latent Instability)

मान लीजिए वक्र, ADFE वायुमण्डल की सामान्य ह्रास दर प्रदर्शित करती है और ACDE उठाई गई वायु राशि का भाग है।



चित्र (4 10)

छायांकित क्षेत्र ACDA में वायु राशि का तापमान आसपास के वायुमण्डल की अपेक्षा कम होगा। अतः इस क्षेत्र में स्थायित्व रहेगा। किन्तु बिन्दु D के पश्चात् उठती हुई वायु राशि आसपास की अपेक्षा गर्म हो जाती है। अतः स्वयमेव रुद्धोष्म प्रक्रम में उठती जाएगी। चित्र (4 10) से स्पष्ट है कि बिन्दु D के नीचे वायुमण्डल में स्थायित्व है, किन्तु यदि किसी प्रक्रिया द्वारा वायुराशि D तक उठा दी जाए, तो उसमें अस्थायित्व का गुण स्वतः आ जाएगा।

क्षेत्र ACDA को ऋणात्मक तथा क्षेत्र DFED को धनात्मक कहते हैं। यदि धनात्मक क्षेत्र, ऋणात्मक क्षेत्र से अधिक है, तो वायुमण्डल अस्थायी कहलाएगा। इसे गुप्त-अस्थायित्व कहते हैं। इसका कारण यह है कि D के बाद वायुराशि से गुप्त ऊष्मा मुक्त होने लगती है जिससे उसका तापमान बढ़ता है और अस्थायित्व का गुण उत्पन्न होता है।

4 83 विभव-अस्थायित्व (Potential Instability)

अपेक्षाकृत मोटी तह की वायुराशि में साधारणतः निचला भाग अधिक आर्द्र होता है। जब यह वायु ऊपर उठाई जाती है तो उसका निम्न भाग पहले संतृप्त हो जाने के कारण, संतृप्त रुद्धोष्म दर से ठंडी होती है जबकि ऊपरी भाग शुष्क रुद्धोष्म दर, अर्थात् तेजी से ठंडा होता जाता है। परिणामस्वरूप निचला भाग अपेक्षाकृत गर्म होने से अस्थायित्व उत्पन्न कर लेता है और ऊपर उठ जाता है। इसे **विभव अस्थायित्व** कहते हैं। विभव अस्थायित्व के लिए अनुकूल परिस्थिति यह है कि टीफाईग्राम पर आर्द्र बल्ब की रेखा की ढाल (Slope) संतृप्त रुद्धोष्म वक्र से अधिक हो।

4 84 टीफाईग्राम के कुछ उपयोग

ऊष्मा गतिकी के कुछ वायुमण्डलीय प्राचल (पैरामीटर) टीफाईग्राम द्वारा बड़ी सरलता से ज्ञात किए जा सकते हैं जैसे विभव तापमान (θ), शुष्क बल्ब तापमान से शुष्क

रुद्धोष्म वक्र के समानान्तर 1000 मिलीबार स्तर तक रेखा खींचिए। 1000 मिलीबार पर जो तापमान पढ़ा जाएगा, वही θ है।

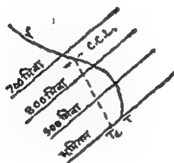
उत्थापन संघनन स्तर या L C L (lifting condensation level)—शुष्क बल्ब तापमान से शुष्क रुद्धोष्म, आर्द्र बल्ब तापमान से सुघ रुद्धोष्म तथा ओसांक से आइसोहाइग्रिक रेखाएँ एक विन्दु गामी होती हैं। इस विन्दु को L C L या नामड बिन्दु कहते हैं और यह नियम नामड का पहला साध्य (proposition) कहलाता है।

आर्द्र बल्ब तापमान (T_w) और विभवआर्द्र बल्ब तापमान (θ_w)

शुष्क बल्ब तापमान से शुष्क रुद्धोष्म तथा ओसांक से आइसोहाइग्रिक के समानान्तर चलिए। दोनों का कटान विन्दु L C L होगा। L C L से सुघ रुद्धोष्म वक्र के समानान्तर भूमितल के स्तर पर आने से T_w तथा 1000 मिलीबार स्तर पर आने से θ_w प्राप्त होगा।

$$\text{तुल्यांक-तापमान } (Te) = T + 2\ 5\ m$$

$$\text{तुल्यांक विभव तापमान } (\theta_o) = \theta + 3\ m$$



चित्र (4 11)

आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m)—ओसांक पर आइसोहाइग्रिक का मान अन्तर्वेशन (interpolation) द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। यही m का मान होगा।

संतृप्त आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m_s)—शुष्क बल्ब तापमान पर आइसोहाइग्रिक का मान m_s होगा।

संवाहनिक संघनन स्तर या C C L (Convective Condensation level)

जिस विन्दु पर वायुमण्डलीय तापमान वक्र को भूमि-स्तरीय ओसांक से आइसोहाइग्रिक रेखा काटती है वह C C L कहलाता है।

4 85 उदाहरण

टीफाइग्राम पर निम्नांकित आँकड़ों का आलेख तयार कीजिए।

दिल्ली, 9 1 73/05 30 बजे सुबह का रेडियो सोन्डे का प्रेक्षण

दाब स्तर मिलीबार	ऊंचाई (मीटर)	तापमान	ओसांक	वायु दिशा उत्तर से कोण	गति (नाटि कल मील/घंटा)
983	भूमितल	10 0	1 0	315	10
954		13 4	3 4	—	—
885	1483	6 8	–4 2	—	—
850	1483	2 4	–5 6	315	12
700	3022	–15 7	–7 0	295	10
500	5700	–15 0		295	35
400	7350	–36 9		300	40
300	10550	–49 9		275	80
200	12010	–51 0		270	85
150	13830	–59 3		275	83
100	16360	–63 5		260	52

1 भूमितल और 850 मिलीबार स्तर पर आद्र बल्ब तापमान (T_w) ज्ञात कीजिए।

2 भूमि व्युत्क्रमण तह की मोटाई ज्ञात कीजिए।

3 भूमितल और 850 मिलीबार पर विभव तापमान θ, आर्द्र बल्ब विभव तापमान (θ_w), आर्द्रता मिश्रण अनुपात (m) तथा सतृप्त आद्रता मिश्रण अनुपात (m_s) का मान ज्ञात कीजिए।

4 L C L तथा C C L की ऊँचाई ज्ञात कीजिए।

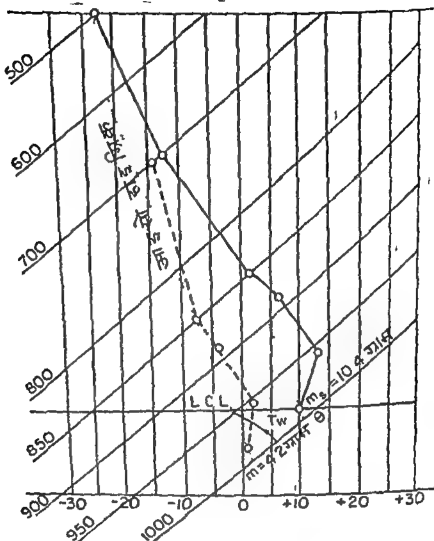
5 क्षोभ सीमा की ऊँचाई और तापमान क्या होगा।

6 वायुमण्डल की स्थिरता अवस्था ज्ञात कीजिए।

हल (1) and (3)

	T_w (°C)	θ(°C)	θ_w(°C)	m ग्राम प्रति कि ग्राम	m_s ग्राम प्रति कि ग्राम
भूमितल	4 7	6 0	10 6	4 2	10 4
850 मिलीबार	0 8	21 0	14 2	3 2	7 8

1 भूमि व्युत्क्रमण तह की मोटाई = 983 − 955 = 28 मिलीबार



चित्र (4 12)

2 L C L = 868 मिलीबार और

C C L = 700 मिलीबार

3 क्षोभ सीमा स्तर = 250 मिलीबार या 10 550 किलोमीटर क्षोभ सीमा का तापमान = − 50 0°C

4 भूमि व्युत्क्रमण से स्पष्ट है कि निचले तहों की वायु स्थायी है।

उदाहरण—निम्नांकित रेडियो सोन्डे प्रेक्षण से 1000 से 600 मिलीबार तक के वायुमण्डल मे उपस्थित अवक्षेपण योग्य कुल वाष्प की मात्रा ज्ञात कीजिए।

कलकत्ता–जुलाई 20 1968/05 30 बजे प्रात

दाब स्तर (मिलीबार)	तापमान (°C)	ओसांक (°C)
1000	27	25
950	24	22
900	22	20
850	18	17
800	16	14
750	14	11
700	11	8
650	8	3
600	3	–1
550	1	–4
500	–4	—
450	–9	—
400	–14	—
350	–21	—
300	–29	—
250	–39	—
200	–52	—
150	–66	—
100	–80	—

हल कुल अवक्षेपीय वाष्प की मात्रा ज्ञात करना

सिद्धान्त एक इकाई क्षेत्रफल के वायु स्तम्भ में अवक्षेपीय वाष्प की मात्रा उस स्तम्भ में स्थित कुल जल की मात्रा है। यदि जल का घनत्व ρ_v हो, तो ΔZ ऊँचाई के स्तम्भ में स्थित जल की मात्रा

$$\Delta u = \rho_b \, \Delta Z$$

$$= q\rho \, \Delta Z \text{ (जहाँ } \rho \text{ वायु का घनत्व है, } q = \frac{\rho_v}{\rho})$$

$$= \frac{q}{g} \, \Delta p, \text{ (ऋण चिह्न छोड दिया गया है)}$$

प्रस्तुत प्रश्न मे 600 मिलीबार तक के वायु स्तम्भ को निम्नांकित तहों मे बांटा जा सकता है —

1000–900, 900 800, 800–700, 700–600

प्रथम तह के लिए $\Delta p = 100 \times 1000$ डाइन/सेमी ^{2}

तथा $g = 980$ डाइन/सेमी ^{2}

औसत आर्द्रता मिश्रण अनुपात $m = 18$ ग्राम/कि ग्राम

$$q = \frac{m}{1000+m} = \frac{18}{1018} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

इस तह मे कुल अवक्षेपीय जल, $w_1 = \frac{18 \times 100 \times 1000}{1018 \times 980}$

$= 1\ 8$ ग्राम

दूसरे तह (900–800 मिलीबार) के लिए औसत $m = 15$ ग्राम/कि ग्राम

$$q = \frac{15}{1015} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

$$w_2 = \frac{15 \times 100 \times 1000}{1015 \times 980}$$

$= 1\ 5$ ग्राम

तीसरे तह (800–700 मिलीबार) के लिए औसत $m = 11$ ग्राम/कि ग्राम

$$q = \frac{11}{1011} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

$$w_3 = \frac{11 \times 100 \times 1000}{1011 \times 980}$$

$= 1\ 1$ ग्राम

चौथे तह (700–600 मिलीबार) के लिए औसत $m = 7\ 5$ ग्राम/कि ग्राम

$$q = \frac{7\ 5}{1007\ 5} \text{ ग्राम/ग्राम}$$

$$w_4 = \frac{7\ 5 \times 100 \times 1000}{1007\ 5 \times 980}$$

$= 0\ 8$ ग्राम

कुल जल वाष्प की मात्रा $= w_1 + w_2 + w_3 + w_4$

$= 5\ 2$ ग्राम

5

मेघ और अवक्षेपण

(CLOUDS AND PRECIPITATION)

5 10 वायुमण्डलीय वाष्प का सघनन (Condensation)

तापमान घटने या आर्द्रता बढते रहने से वायुमण्डलीय वाष्प, संतृप्तता बिन्दु तक पहुँच जाती है और फिर जलकणों के रूप में सघनित होना आरम्भ कर देती है । जब नम हवा ऊपर उठ कर प्रसार द्वारा श्रोसाक तक शीतल होती है, तो मेघ कणों में तथा जब सर्दियों में भूमितल का तापमान घटने से शीतलन होता है, तो वाष्प कुहरा कणों में सघनित होती है । सघनन के लिए एक सतह की आवश्यकता होती है जिस पर जलकण अपने आपको स्थापित कर सकें । यह सतह सघनन केन्द्रक कहलाती है । केन्द्रकों की अनुपस्थिति या अत्यन्त अभाव के कारण तापमान के श्रोसाक से नीचे आ जाने पर भी हवा सघनित नहीं हो पाती । ऐसी हवा अति संतृप्त कहलाती है । अतिसंतृप्तता की दशा में हवा की सापेक्ष आर्द्रता 100% से अधिक सम्भव है । वास्तविक वायुमण्डल में अतिसंतृप्तता बहुत थोडी सीमा तक ही पाई जाती है और वह भी साधारणतः ऐसी हवा में, जो प्रदूषणों से बिल्कुल मुक्त हो ।

यूँ तो वायुमण्डल में पर्याप्त मात्रा में धूल आदि के सूक्ष्म कण विद्यमान रहते हैं, किन्तु सभी कण सघनन केन्द्रक नहीं बन सकते । सघनन केन्द्रक वही कण बन सकते हैं, जिनमें जल वाष्प के प्रति आकर्षण हो । इन्हें आर्द्रता ग्राही (Hygroscopic) केन्द्रक कहते हैं । वायुमण्डल में विद्यमान जलकण स्वतः सघनन केन्द्रक का कार्य करते हैं । ये सम-केन्द्रक कहलाते हैं, किन्तु वायु मण्डल में बहुत कम मिलते हैं । दूसरे केन्द्रक जैसे, नमक, धूल के कण, अथवा चिमनियों से निकले वायु प्रदूषक, विषम केन्द्रक कहलाते हैं ।

केन्द्रक यदि अधिक आर्द्रता ग्राही है, तो संतृप्तता की अवस्था से पूर्व ही सघनन हो सकता है । ऐसी दशा में हवा उप संतृप्त कहलाती है । सापेक्ष आर्द्रता 100% से कम पर भी, कुछ कुहर या कुहासा का पाया जाना इसी का परिणाम है ।

5 11 यदि श्रोसाक 0°C से कम है, तो जल वाष्प हिमकणों के रूप में सघनित होगा । गैस से सीधे ठोस में परिवर्तित होने की यह क्रिया उर्ध्व पातन (सब्लीमेशन) कहलाती है । अत्यधिक सर्दियों वाली रात्रि में श्रोसाक हिमांक बिन्दु से साधारणतः नीचे आ जाता है और भूमितल की हवा जब इस सीमा के नीचे शीतल हो जाती है तो घास या फसल की पत्तियों पर, हिमकणों के रूप में जम जाती हैं । इसी को तुषार या पाला के नाम से जाना जाता है ।

5 12 वायु विलय (Aerosol)

वायुमण्डल मे निलम्बित ठोस या द्रव से सूक्ष्म कण वायु विलय कहलाते हैं। वायु विलय की सान्द्रता प्रति घन सेमी प्राकृतिक हवा में इनकी सख्या से जानी जाती है। इनका आकार साधारणत 10^{-7} से 1सू$^{-3}$ सेमी व्यास तक का होता है। ये वायु विलय आर्द्रता ग्राही प्रकृति के होने पर सघनन केन्द्रक का काय कर सकते हैं। 10^{-7} सेमी से कम व्यास वाले कण, जो वायुमण्डल मे बहुत कम पाए जाते हैं, ब्राउनियन-कण कहलाते हैं और और इनकी गति ब्राउनियन गति कहलाती है। ये कण इतने छोटे होते हैं कि इन पर सघनन होना सम्भव नही है।

10^{-3} सेमी व्यास से बडे कण भारी होने के कारण, वायु के बहाव म न थम कर बूँदो के रूप मे नीचे गिरना प्रारम्भ कर देते हैं।

वायु विलय साधारणत तीन वर्गों मे बाटे जा सकते हैं

(1) एटकन केन्द्रक

ये 10^{-7} से 10^{-5} सेमी व्यास के सूक्ष्मकण होते है, जो साधारणत अवक्षेपण म कोई भाग नही लेते। इनकी सान्द्रता महासागरो के ऊपरी वायुमण्डल मे निम्नतम होती है, जहा प्रति घन सेमी एटकन केन्द्रक कुछ सौ की सख्या मे मिलते हैं। औद्योगिक नगरो मे भूमि तल के आसपास एटकन केन्द्रको की सान्द्रता कुछ लाख प्रति घन सेमी तक पायी जाती है। किसी स्थान विशेष पर इनकी सान्द्रता, मौसम तत्वो जैसे–वायु वेग, सवाहनिक मिश्रण, आर्द्रता, सौर ऊष्मा आदि पर निभर करती है।

(2) वृहत केन्द्रक

ये कुछ बडे ($10^{-5}-10^{-4}$ सेमी व्यास) केन्द्रक हैं, जो मौसमी तत्वो द्वारा अपेक्षाकृत कम प्रभावित होते है। इनकी सान्द्रता कुछ से लेकर कुछ सौ केन्द्रक/घन सेमी तक पायी जाती है। औद्योगिक क्षेत्रो म प्रदूषको के कारण सान्द्रता और बढ जाती है।

(3) विशाल केन्द्रक

ये सबसे बडे आकार ($10^{-4}-10^{-3}$ सेमी व्यास) के वायु विलय हैं, जो अवक्षेपण मे सबसे अधिक भाग लेते हैं। समुद्रो के ऊपर नमक कणों तथा औद्योगिक क्षेत्रो मे प्रदूषको के रूप म इनकी अधिकता पायी जाती है। जलकणो के बनने के समय, सभी वृहद् और विशाल कण सघनन केन्द्रक बनाने की क्षमता रखते हैं।

5 13 वायु विलय के स्रोत

वायुमण्डलीय वायु विलय निम्नांकित पाच विधियो द्वारा उत्पन्न होते हैं

(1) जलवाष्प के सघनन का उध्वपातन।

(2) मानव निर्मित औद्योगिक चिमनिया तथा मोटर-गाडियो द्वारा निकले प्रदूषक।

(3) वायुमण्डलीय ट्रेस गसो पर सौर विकिरण तथा आर्द्रता के फोटो, रासायनिक प्रक्रिया द्वारा।

(4) पृथ्वी सतह के यान्त्रिक विनाश या अपरदन (erosion) द्वारा उत्पन्न ठोस कणों का वायुमण्डल म प्रकीणन (dispersal)।

समुद्र से नमक के कणो तथा थल म खनिज धूल कणो का वायुमण्डल म व्याप्त होना इसका उदाहरण है।

(5) उन केन्द्रकों के स्कन्दन (Coagulation) से जो दूसरे केन्द्रकों से मिलकर बडे कणो का निर्माण करते हैं।

5 14 मेघो का बनना

वायुमण्डल मे जलकणो या हिमकणो का चाक्षुष (Visual) रूप बादल कहलाता है। मेघ कण जलवाष्पो के सघनन द्वारा उत्पन्न होते हैं।

हवा का कषण (drag) प्रतिरोध इन मेघ कणो को नीचे गिरने से रोकता है। ये कण हवा मे तैरते हैं तथा विभिन्न प्रक्रमो के अन्तर्गत विकसित होते रहते हैं। कोई मेघ कण जब पर्याप्त आकार ग्रहण कर लेता है, तो अपने भार के कारण वर्षा की बूँदो के रूप मे गिरने को बाध्य हो जाता है। जब मेघ कण का भार कषण प्रतिरोध के ठीक बराबर हो जाता है तो यह जिस वेग से नीचे की ओर गिरता है वह उसका अन्तिम वेग (terminal velocity) कहलाता है। इस अवस्था मे त्वरण शून्य होता है। अन्तिम वेग का मान मेघ कणो के आकार के साथ बदलता जाता है। बडे कण, छोटे कणो की अपेक्षा तीव्र गति से गिरते हैं।

कषण प्रतिरोध (D), अन्तिम वेग (v) तथा बूँद का व्यास (d) निम्नांकित सम्बन्धो मे बँधे हैं

$$D = K\rho v^2 d^2,$$

जहाँ K एक स्थिरांक तथा ρ हवा का घनत्व है। जल कणो के विभिन्न आकारो के लिए v का मान सारिणी (5 1) मे दिया गया है।

सारिणी (5 1)

कणो का विवरण	कणो का व्यास (मिमी)	अन्तिम वेग (मीटर/सैकण्ड)
वर्षा की बडी बूंद	5	8 9
वर्षा की छोटी बूँद	1	4 0
वर्षा की सूक्ष्म बूँद	0 5	2 8
फुहार कण	0 2	1 5
बृहत् मेघ कण	0 1	0 3
साधारण मेघ कण	0 05 से 0 01	0 076 से 0 003
सूक्ष्म कण	0 0	0007

5–6 मिमी व्यास से बडी जल की बूँदे कई बूँदो मे साधारणत टूट जाती है, अत वास्तविक रूप मे v की अधिकतम सीमा निर्धारित की जा सकती है।

5 15 सामान्य रूप से हवा का, ओसांक के नीचे तक शीतलन निम्नांकित प्रक्रमों द्वारा होता है

(1) ठण्डे भूमितल के सचालन द्वारा शीतलन

इस प्रक्रम से भूमि तल और उसके समीप की वायु सह शीतल होती है, जिससे जल वाष्प ओस कणों के रूप में सघनित हो जाते हैं। यदि ओसांक 0°C से कम हुआ, तो वाष्प का ऊर्ध्वपातन तुषार के रूप में सम्भव है। विक्षुब्ध (turbulent) मिश्रण द्वारा यदि शीतलन कुछ ऊपर तक फैल गया तो कुहरा या कुहासा उत्पन्न हो सकता है।

(2) वायु राशियों के उत्थापन से प्रसार के कारण

रुद्धोष्म शीतलन होता है और इसी शीतलन के कारण, वाष्प सघनित होकर मेघ कणों को जन्म देती है।

संवाहनिक धाराओं के अतिरिक्त पर्वतीय ढाल तथा विक्षोभों द्वारा भी वायु राशियाँ ऊर्ध्वाधर गति प्राप्त कर लेती हैं।

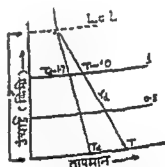
(3) विकिरण द्वारा शीतलन

(4) शीतल हवा या नमी के अभिवहन से

5 16 उत्थापन सघनन स्तर (L C L) पर सघनन क्रिया आरम्भ होती है, अत इस स्तर को संवाहनिक मेघों का आधार माना जा सकता है तथा इसकी ऊँचाई टी फाई ग्राम द्वारा सरलतापूर्वक पढ़ी जा सकती है।

उत्थापन संघनन स्तर की ऊँचाई ज्ञात करने की एक विधि और है।

असंतृप्त वायु राशि का ह्रास दर (D A L R) = 10°C प्रति किमी। ऊँचाई के साथ ओसांक भी घटता जाता है, जिसका ह्रास दर सामान्य अवस्था में लगभग 1 7°C/किमी पाया जाता है। मान लीजिए, भूमितल पर वायु राशि का तापमान T तथा ओसांक T_b है। वायु राशि के उठने से T, 10°C/किमी तथा T_b, 1 7°C/किमी की दर से कम होता जाएगा। उत्थापन सघनन स्तर पर वायु राशि संतृप्त हो जाएगी। अत T और T_d बराबर हो जाएँगे।



चित्र (5 1)

चूँकि 1 किमी चढ़ने में T और T_d का अन्तर (10 − 1 7) = 8 3°C/किमी घटता है, अत अन्तर $T - T_d$ को शून्य कर देने में वायुराशि को यदि h ऊँचाई तक उठना पड़े, तो

$$h = \frac{1000}{8\ 3}(T - T_d) \text{ मीटर}$$

$$= 120\ (T - T_d) \text{ मीटर (लगभग)}$$

h उत्थापन सघनन स्तर की ऊँचाई है।

5 2 वक्रता और विलेय प्रभाव (Curvature and Solute effect)

जब हवा सतृप्त हो जाती है, तो उसका वाष्पदाब, सतृप्त वाष्पदाब कहलाता है। इस अवस्था म वायुराशि मे वाष्प और जल कण सन्तुलन की अवस्था मे रहते हैं। सतृप्त वाष्पदाब का मान विभिन्न वक्रता सतहो पर अलग अलग होता है।

यदि किसी समतल सतह पर शुद्ध हवा का सतृप्त वाष्पदाब e_s और किसी वक्र सतह पर e'_s हो तो

$$e'_s = e_s \left(1 + \frac{k}{r} \right)$$

जहाँ k, एक धनात्मक स्थिराक तथा r सतह की वक्रता त्रिज्या है। वायुमण्डलीय सघनन साधारणत गोलाकार (उत्तल) सतह वाले केन्द्रको पर होता है। इस सम्बन्ध मे दो निष्कर्ष निकलते हैं

(1) वक्र तला (उत्तल) पर सतृप्त वाष्प दाब की मात्रा अधिक है। अत सघनन केन्द्रको पर वाष्प को सघनित होने के लिए अति-सतृप्त होना अनिवार्य है। यह प्रभाव सघनन अर्थात् मेघकणो की उत्पादन क्षमता को घटाता है।

(2) r, जितना कम होगा (अर्थात् मेघकण जितने छोटे होगे) अति-सतृप्तता की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी। बूँदें बडी होने पर अपेक्षाकृत सरलता से उन पर सघनन हो जाता है। स्पष्ट है कि मेघ कणो की वृद्धि दर उनके आकार के समानुपाती होगी अर्थात् बडे कण छोटे कणो की अपेक्षा तेजी से विकसित होग।

उपर्युक्त प्रभाव सघनन पर वक्रता प्रभाव कहलाता है।

5 21 वायुमण्डलीय हवा समान्यत प्रदूषणो से बिल्कुल मुक्त नही होती। इसमे कुछ लवण सदा घुले रहते हैं। यह विलयन भी सतृप्त दाब पर प्रभाव डालता है, जिसे विलेय प्रभाव कहते हैं। शुद्ध हवा की अपक्षा दूषित हवा किसी सतह पर शीघ्र सघनित होने की प्रवृत्ति रखती है। यह प्रभाव मेघ कणो की वृद्धि के अनुकूल और वक्रता प्रभाव के विपरीत होता है।

यदि किसी सतह पर शुद्ध हवा का सतृप्त वाष्प दाब e_s तथा प्रदूषण युक्त हवा का सतृप्त वाष्प दाब e''_s हो, तो

$$e''_s = e_s \left(1 - \frac{C}{r^3} \right)$$

जहाँ r सघनन केन्द्रक (मेघ-कण) की त्रिज्या तथा C एक स्थिराक है। यह स्थिराक घुले हुए लवण की सान्द्रता तथा उसके आणविक भार पर निर्भर करता है। इस समीकरण के अनुसार, दूषित हवा का सतृप्त वाष्प दाब, शुद्ध हवा के सतप्त वाष्प दाब से कम होगा, अर्थात् दूषित हवा, शुद्ध हवा से पहले ही सतप्त हो जाएगी।

5 22 उपर्युक्त दोनों प्रभावो के सयुक्तीकरण से निम्नांकित समीकरण प्राप्त होता है

$$e_s = e_s \left(1 + \frac{A}{r} - \frac{B}{r^3} \right)$$

जहाँ A और B स्थिराक है और रेणामी सतप्त वाष्प दाब है।

यदि $\left(\frac{A}{r} - \frac{B}{r^3} \right)$ धनात्मक है, तो वक्रता प्रभाव प्रमुख होता है। इस दशा म

सघनन के लिए अतिसतृप्तता की आवश्यकता होगी । सापेक्ष आद्र ता 100% से अधिक पायी जाएगी । बडे मेघ कणो के लिए (जहाँ r का मान अधिक हो) यह स्थिति लागू हो सकती है।

बहुत छोटे कणो के लिए साधारणत $\left(\frac{A}{r}-\frac{B}{r^3}\right)$ ऋणात्मक हो जाती है तथा इस अवस्था मे विलेय प्रभाव प्रमुख हो जाता है, जिससे 100% से कम सापेक्ष आद्र ता पर भी केन्द्रको पर सघनन हो सकता है ।

छोटे कणो पर विलेय प्रभाव तथा बडे कणो पर वक्रता प्रभाव की प्रमुखता चित्र (5 2) मे स्पष्ट की गई है ।



चित्र (5 2)

r बढने से H का मान बढ जाता है, किन्तु यह मान एक उच्चतम बिन्दु (H_c) के बाद r के साथ घटने लगता है । H_c को क्रान्तिक सापेक्ष आद्र ता तथा उसके सगत अद्ध व्यास r_c को क्रान्तिक अद्ध व्यास कहते है । क्रान्तिक रेखा AB के दायीं ओर जलकणों से वाष्पीकरण नही होता, जबकि बायी ओर होता रहता है । दूसरे शब्दो मे, AB से बायीं ओर जहाँ H घटने से r का मान घटता है, स्थायी वायुमण्डल की अवस्था रहती है, जबकि दायी ओर का वायुमण्डल अस्थायी होता है । इस प्रकार दायी ओर H का मान घटने पर r का घटना समझाया जा सकता है ।

क्रान्तिक बिन्दु B पर $\frac{dH}{dr}=0$, जहाँ $H=1+\frac{A}{r}-\frac{B}{r^3}$

$$r_c^3=\frac{3B}{A}$$

5 23 उपर्युक्त व्याख्या से यह स्पष्ट है कि जसे-जैसे जल कण बडे होते जाते हैं सघनन के लिए सामान्य सतृप्तता (H = 100%) के निकट होते जाते तथा इन पर वक्रता और विलेय, दोनों प्रभाव कम हो जाते हैं । एक सीमा के बाद जल की बूंद शुद्ध तथा समतल सतह की ही उपगामी बन जाती है ।

5 24 इस प्रकार मेघ कणो की वृद्धि दर निम्नांकित बातो पर निभर करती है

1 केन्द्रक का आकार
2 केन्द्रक की प्रकृति
3 हवा की अति-सतृप्तता
4 हवा का प्रसरण-गुणाक
5 केन्द्रक की ताप सचालकता

कणो का अर्द्ध व्यास और समय का ग्राफ अर्द्ध घन परवलीय (semi cubical parabola) चित्र (5 3) होता है। यदि तापमान 0°C, सतृप्तता 105% तथा केन्द्र का प्रारम्भिक अर्द्ध-व्यास 000 75 मि मी हो, तो कण को,

001 मि मी होने मे 2 सैकण्ड,

01 मि मी होने मे 2700 सैकण्ड,

तथा 04 मि मि होने मे 45000 सैकण्ड लगेंगे।



चित्र (5 3)

5.30 मेघों का वर्गीकरण

शीतलन तथा सघनन प्रक्रमो के आधार पर, सन् 1803 मे पहली बार ल्यूक होवड ने मेघो का, विभिन्न प्रकारो मे सफलतापूवक वर्गीकरण किया। तब से कई अन्तर्राष्ट्रीय समितियों ने मेघो के नए-नए नाम देकर अनेक वर्गीकरण प्रस्तुत किए। वर्तमान स्वीकृत वर्गीकरण विश्व मौसम सघ के तत्वावधान म 'मेघ और जलो की अध्ययन समिति' ने तैयार किया, जो सन् 1956 मे मेघ एटलस के नाम से चार भागो मे प्रकाशित किया गया है।

मेघों का बनना, उनमे वृद्धि या ह्रास होना वायुमण्डल मे एक अविरत प्रक्रम है, अत व्यष्टित्व (individuality) के आधार पर, अनगिनत प्रकार के मेघ सम्भव हैं अत उनके वर्गीकरण के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण धाराएँ निश्चित कर ली गई हैं, जैसे —

1 भूमितल से मेघ के आधार तथा शीर्ष की ऊँचाई
2 मेघ के उर्ध्वाधर विस्तार का माप
3 मेघ कणो की प्रकृति (वाष्प कण, जल कण या हिम कण)

5 31 प्रेक्षणो से यह ज्ञात हो चुका है कि मेघों के आधार (निचला तल जो भूमि से दिखाई देता है) की ऊँचाई अलग अलग प्रकारो के लिए अलग-अलग होती है। उष्ण कटिब धो म यह ऊँचाई समुद्रतल से 18 किमी ऊँचाई तक साधारणत हो सकती है। उच्च अक्षाशो मे यह ऊँचाई कम होती जाती है, क्योकि मेघ सामा य रूप से क्षोभ सीमा के नीचे ही बनते ह और यह सीमा अक्षाशो के साथ घटती जाती है।

आधार तल की ऊँचाई के अतिरिक्त मेघो का उर्ध्वाधर विस्तार अलग अलग पाया जाता है। कुछ मेघ पतली तह के 'स्तरी प्रकार' के होते हैं, तो कुछ उर्ध्वाधर वायुमण्डल म बहुत ऊँचाई तक स्तम्भ की भाति विकसित रहते हैं, जैसे—वज्रपात के मेघ। सवाहनिक धाराएँ तथा वायुमण्डलीय अस्थिरता मेघो का ऊर्ध्वाधर विकास करने म सहायक होती है।

मेघ कणों का प्रकार भी कुछ सीमा तक मेघ को अलग-अलग पहचानने में सहायक हो सकता है। निचले स्तर पर बनने वाले मेघ, वाष्प या जल कणों से बनते हैं जबकि हिमांक तल से ऊपर मेघ साधारणत हिम कणों या कुछ मात्रा में अतिशीतल, जल कणों से युक्त रहते हैं।

5 32 आधार तल की ऊँचाई के आधार पर मेघ तीन समूहों में विभक्त किए गए हैं,

(1) निम्न मेघ (2) मध्यम मेघ (3) उच्च मेघ।

इन मेघों के आधार तलों की ऊँचाइयाँ वायुमण्डलीय कारणों से उष्ण कटिबंध, मध्य अक्षांश तथा ध्रुवीय क्षेत्रों के लिए अलग अलग निश्चित की गई हैं। इस प्रकार

सारिणी (5 1)

मेघ-आधार तलों की ऊँचाई सीमा

मेघ समूह	उष्ण कटिबंध	शीतोष्ण कटिबंध	ध्रुवीय क्षेत्र
निम्न मेघ	भूमितल–2 किमी	भूमि तल–2 किमी	भूमि तल–2 किमी
मध्यम मेघ	2–8 किमी	2–7 किमी	2–4 किमी
उच्च मेघ	6–18 किमी	5–13 किमी	3–8 किमी

उच्च मेघों की ऊपरी सीमा विभिन्न अक्षांशों में वहाँ की क्षोभ सीमा की औसत ऊँचाई से लगभग बराबर ही रखी गई है।

5 33 मेघ-दशा के आधार पर उपर्युक्त समूहों का पुन उप विभाजन किया गया है। मुख्य मेघ प्रकार सारिणी (5 2) में दिये गये हैं। अन्तिम कॉलम में इन प्रकारों का संक्षिप्त नाम दिया गया है, जो इनके लैटिन नामों के संक्षिप्तीकरण से बनाया गया है।

निम्न मेघ पुन दो उप-समूहों में बाँट दिए गए हैं—

1 वे मेघ, जिनका ऊर्ध्वाधर विस्तार नहीं होता है। ये साधारणत एक पतली तह के रूप में क्षैतिज विस्तार के मेघ हैं। इन्हें स्तरी मेघ कहते हैं।

2 वे मेघ, जिनमें अत्यधिक ऊर्ध्वाधर विस्तार होता है। ऊर्ध्वाधर वायु धाराओं द्वारा आर्द्रता के उत्थापन के परिणामस्वरूप ही इन मेघों का विकास होता है। ये कपासी या ऊर्ध्व विस्तार के मेघ कहलाते हैं।

सारिणी 5 2

मेघ समूह	उप विभाजन	संक्षिप्त नाम
उच्च मेघ	1 पक्षाभ (Cirrus)	Ci
	2 पक्षाभ स्तरीय (Cirrostratus)	Cs
	3 पक्षाभ कपासी (Cirrocumulus)	Cc
मध्यम मेघ	1 मध्य स्तरी (Altostratus)	As
	2 मध्य कपासी (Altocumulus)	Ac
निम्न मेघ 1 निम्न स्तरी मेघ	1 स्तरी (Stratus)	St
	2 स्तरी कपासी (Strato cumulus)	Sc
	3 कपासी (Cumulus)	Cu
2 ऊर्ध्व विस्तार के मेघ	4 कपासी वर्षी या वज्रपात मेघ (Cumulonimbus or Thundercloud)	Cb

5 34 उपर्युक्त मेघ प्रकारो का सक्षिप्त परिचय निम्नांकित है ।

(1) पक्षाभ मेघ

श्वेत तन्तुओ या सकीर्ण बैंड के धब्बो जैसी आकृति का मेघ है। जो भूमितल से रेशम के रेशों की तरह दिखाई देता है। यह मेघ मुख्यत हिमकणो से बना होता है और अनुकूल परिस्थितियो मे स्तरी पक्षाभ या कपासी पक्षाभ मे विकसित हो सकता है। ह्रास होने पर यह मेघ समाप्त हो जाता है।

(2) पक्षाभ कपासी

यह पतले श्वेत धब्बो या तहों का मेघ है लेकिन ये तहे दानो या उर्मिकाओ की आवृत्ति की छोटी-छोटी लहरो द्वारा बनी होती है। ये लहरें एक दूसरे के समानान्तर स्थापित होकर एक नियमित व्यवस्था प्रस्तुत करती हैं। अधिकांश लहरो की पट्टी 1 अंश से कम चौडी होती है।

कपासी पक्षाभ मुख्यत हिमकणों तथा अंशत अतिशीतल जलकणों से मिलकर बिना होता है। साधारणत इस मेघ की वृद्धि मध्य-कपासी मेघ मे हो जाती है। ह्रास होने पर यह पक्षाभ बन जाता है या फिर समाप्त हो जाता है।

(3) पक्षाभ स्तरी

यह बहुत श्वेत, पारदर्शी तथा पतले तह का मेघ है, जो साधारणत आकाश का अधिकाश भाग घेर लेता है और विस्तृत क्षैतिज गु ठिका (Veil) का आकार ग्रहण करता है। नीचे से इसका स्वरूप चिकना दिखाई देता है। सूय और चन्द्रमा के चारों ओर प्रभा मण्डल इसी मेघ द्वारा किरणो के आवतन के फलस्वरूप दिखाई देता है। स्तरी पक्षाभ से मेघाच्छन्न होने पर भी आकाश आंशिक रूप मे दृश्य रहता है।

यह भी मुख्यत हिमकणो या अतिशीतल जल कणो से बना होता है। स्तरी पक्षाभ मेघ की वृद्धि मध्यस्तरी मेघो म होती है। ह्रास के समय यह साधारणत पक्षाभ, या कपासी पक्षाभ बन जाता है अथवा अदृश्य हो जाता है।

(4) मध्य कपासी

यह श्वेत या भूरे धब्बो या तहो वाला मेघ है, जिसकी तहे इतनी मोटी होती हैं कि सूय की किरणो को साधारणत रोक देती है। इस मेघ की छटा निश्चित होती है। यह गोलाकार मेघ राशियो या रोल मेघो से मिलकर बना होता है, जो आंशिक रूप से रेशेदार हो सकता है। मध्य कपासी मेघो के गोले उतने नियमित नही दिखाई देते जितने पक्षाभ कपासी के दिखाई देते हैं। मध्य कपासी के गोले 1 से 5 अंश तक चौडे हो सकते हैं। आधार 2 से 5 किमी तक ऊँचा हो सकता है।

मध्य कपासी मेघ मुख्यत जलकणो से बना होता है। इसकी वृद्धि कपासी या स्तरी कपासी मे हो सकती है। ह्रास होने पर यह साधारणत समाप्त हो जाता है।

(5) मध्य स्तरी

यह भूरी या नीली छटा वाली मेघो की सम चादर या तह है जिसका स्वरूप साधारणत रेशेदार होता है। यह क्षैतिज आकाश के सैकडा किलोमीटर क्षेत्र मे अविच्छिन्न रूप से विस्तृत होती है। इसका ऊर्ध्वाधर विस्तार भी कुछ सौ मीटर तक हो सकता है। जिस स्थान पर तहे अपेक्षाकृत पतली होती है वहाँ यह मेघ सूय की किरणो को पूर्णत नही रोक पाता। प्रभामण्डल की घटना इन बादलो से नही होती। आधार की ऊँचाई विभिन्न अक्षाशो मे 2 से 5 किमी तक पाई गई है।

यह बादल साधारणत मूसलाधार वर्षा करने की क्षमता रखता है। बरसते समय इसका रग गहरा भूरा हो जाता है तथा सान्द्रता और अधिक बढ जाती है। घनत्व के कारण इस अवस्था म मेघ तह और नीचे आकर, सूय किरणो को पूर्णत रोक देती हैं। इस अवस्था मे इन मेघो को वर्षा स्तरी मेघ (Nimbostratus) के नाम से भी जाना जाता है। किन्तु कुछ मौसम वैज्ञानिक इस अलग नाम की आवश्यकता नही समझते, अत इसे मेघ प्रकारों की प्रस्तुत विभाजन सूची मे स्थान नही दिया गया है।

मध्य स्तरी मेघ साधारणत जलकणो तथा आंशिक तौर पर हिमकणो से बना होता है। इसकी वृद्धि घन मध्य स्तरी या स्तरी मेघ मे होती है। कहीं-कहीं कपासी स्तरों म भी

यह परिवर्तित हो जाता है । ह्रास के समय यह विरल होता जाता है और अन्त में समाप्त हो जाता है ।

(6) स्तरी कपासी

यह सफेद या भूरी चादर अथवा तहों वाला सामान्य रूप से अविच्छिन्न मेघ है । तहों की मोटाई 100 से 1000 मीटर तक पाई जाती है । अधिक भूरे भाग साधारणत गोलाकार मेघ राशियों अथवा बेलनाकार मेघ राशियों से बने होते हैं, जो कहीं-कहीं नियमित और कहीं अनियमित आकृतियाँ धारण किए रहते हैं । नियमित गोलाकार वायु राशियों की चौड़ाई लगभग 5 अंश होती है । यह मेघ जलकणों से बना होता है, जिसमें अक्सर बड़ी बूँदें पर्याप्त संख्या में विद्यमान रहती हैं । इसकी वृद्धि साधारणत विशाल कपासी मेघों में तथा ह्रास छोटे कपासी मेघों में हुआ करता है ।

(7) स्तरी

यह भूरे बादलों की अविच्छिन्न समतह होती है, जो आकाश में एक क्षैतिज चादर की तरह विस्तृत होती है । यह मेघ भूमि तल से कुछ ही ऊँचाई पर (लगभग 600 मीटर) साधारणत तेज गति से चलता हुआ दिखाई देता है । ऊँचे स्थानों पर यह कुहरे का आभास देता है । इसका ऊर्ध्वाधर विस्तार 50 मीटर से 300 मीटर तक हो सकता है । तह इतनी पतली होती है कि सूर्य किरणों को रोक नहीं पाती । परिस्थिति के अनुसार, स्तरी मेघ, कपासी या मध्य-स्तरी में रूपान्तरित हो सकता है ।

(8) कपासी

यह तीक्ष्ण रूप रेखा का गहरा ऊर्ध्वाधर विस्तार वाला मेघ है, जो क्षैतिज रूप से अपेक्षाकृत बहुत कम जगह घेरता है । इसका ऊपरी भाग गुम्बद या मीनार की आकृति जैसा दिखाई देता है, कभी कभीऊपरी भाग क्षतिज दिशाओं में प्रसारित होकर गोभी के फूल जैसा आकार ग्रहण कर लेता है । किरणों के परावर्तन के कारण, ऊपरी भाग चमकीला दिखाई देता है, जबकि आधार काफी गहरे रंग का होता है । आधार की ऊँचाई 300 से 1600 मीटर तक हो सकती है । शीर्ष साधारणत 6 7 किमी की ऊँचाई तक पहुँचता है ।

कभी-कभी यह मेघ कई छोटे टुकड़ों में खण्डित हो जाता है, या छोटे आकार में ही विकसित हो पाता है । इन्हें स्वच्छ मौसम कपासी कहा जा सकता है । कपासी मेघ साधारणत जलकणों और जल की बड़ी बूँदों से मिलकर बना होता है । इसकी वृद्धि कपासी वर्षी अथवा स्तरी कपासी में तथा ह्रास मध्य कपासी में हुआ करता है ।

(9) कपासी वर्षी

यह अत्यधिक घना और ऊर्ध्वाधर विस्तार का मेघ है, जो कभी कभी क्षोभ सीमा तक भी पहुंच जाता है । इसका आकार पहाड़ों की तरह विशाल होता है । मध्य अक्षांशों में 10 किमी तथा उष्ण कटिबन्धों में 14-15 किमी ऊँचाई तक यह मेघ पहुँच जाता है। कभी कभी विस्तार इससे भी अधिक देखा गया है । ऊपरी भाग साधारणत चमकीला और रेशेदार होता है । जेट धाराओं के प्रवाह में इसका शीर्ष क्षैतिज दिशा में बिखर कर निहाई (anvil) की आकृति धारण कर लेता है । कपासी वर्षी के आधार तल के नीचे बहुत से खण्डित मेघों के टुकड़े पाए जाते हैं । क्षैतिज आकार 5 से 15 किलोमीटर व्यास में सीमित होता है तथा आधार की ऊँचाई 200 से 1500 मीटर तक

साधारणत पायी जाती है। इस मेघ का निचला भाग मुख्यत जलकण से बना होता है, किन्तु ऊपरी भाग मे हिमकण, बड़ी बूँदें तथा बड़े ओला के टुकड़े पाये जाते हैं। वज्रपात, हिमपात तथा टोरनेडो घटनाएँ इसी मेघ से सम्बन्धित हैं। इसकी वृद्धि वृहद् वपासी वर्षा तथा ह्रास वपासी मेघ मे होती है।

5 40 अवक्षेप प्रक्रम (Precipitation Process)

मेघ कणो की आकार वृद्धि की क्रिया विधि ही अवक्षेप प्रक्रम कहलाती है। आकार जब इतना बढ जाता है कि उसका भार, वायु प्रतिरोध को सन्तुलित कर लेता है, तो कण अन्तिम वेग प्राप्त कर लेता है और वर्षा की बूँद के रूप में गिरने लगता है। अत अवक्षेप प्रक्रम वह है, जो मेघ कणो का सयोग करा कर कुछ वहद् कणो का उत्पादन कर सके। 005 मिमी त्रिज्या के कणो की अपेक्षा 0 5 मिमी त्रिज्या का मेघ कण लगभग 10 लाख गुना भारी होता है। सबसे छोटा जल कण, जो फुहार के रूप मे लगभग शान्त हवा मे नीचे गिर सकता है, 0 1 मिमी त्रिज्या का होना चाहिए।

मेघ कणो के वर्षा-बूँदो तक विकसित होने के सम्बन्ध मे दो सिद्धान्त निम्नांकित हैं-

5 41 बर्जरान का हिम क्रिस्टल सिद्धान्त

बर्जरान (1935) का यह सिद्धान्त मुख्यत उच्च अक्षाशो मे होने वाली वर्षा की व्याख्या करता है, जहाँ अधिकाश मेघ हिमाक स्तर से पर्याप्त ऊँचाई तक पहुँच जाते हैं, क्योकि हिमाक स्तर इन क्षेत्रो मे काफी नीचे होता है। उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों की केवल वही वर्षा इस सिद्धान्त से समझाई जा सकती है जहाँ मेघ ऊर्ध्वाधर विस्तार के कारण हिमाक तल से बहुत आगे तक जा सकें। इसका कारण यह है कि इस सिद्धान्त मे यह कल्पना कर ली गई है कि मेघ मे अतिशीतल जल कण तथा हिमकण साथ-साथ स्थित हैं।

0°C से – 10°C तक मेघ मुख्यत अतिशीतल जलकणो से ही बना होता है, किन्तु – 10°C से – 41°C तक अतिशीतल जलकण तथा हिमकण दोनो पाए जाते हैं। जैसे जैसे तापमान कम होता जाता है, हिमकणो की सख्या बढती जाती है। –41°C से कम तापमान पर मेघ पूर्णत हिमकणो से बना होता है। यह स्थिति उच्च मेघो मे रहती है जिनसे साधारणत कोई अवक्षेपण नही पाया जाता है।

अतिशीतल जलकण के ऊपर सतृप्त वाष्प दाब, हिमकण के ऊपर के सतप्त वाष्पदाब से अधिक होता है। इसका तात्पर्य यह है कि हिमकण के ऊपर की हवा पहले सतृप्त हो जाएगी।

विभिन्न तापमानो पर अतिशीतल जलकण तथा हिमकणो के ऊपर सतप्त वाष्प दाब की मात्रा (सारिणी 5 3) मे दी गई है, जिससे दोनो का अन्तर स्पष्ट हो जाता है। यह अन्तर – 12°C पर सर्वाधिक पाया गया है और इसके बाद तापमान कम होने पर अन्तर भी कम होने लगता है। इसलिए बर्जरान का सिद्धान्त इसी तापमान के आसपास सबसे अच्छी तरह लागू होता है।

जब अतिशीतल जल और हिमकण दोनो साथ साथ स्थित होते हैं, तो हिमकण के आसपास सतप्त अवस्था पहले ही स्थापित हो जाती हैं, जबकि जल का वाष्पीकरण जारी रहता है। यह वाष्पीकरण हिमकणो पर अति सतप्तता की स्थिति उत्पन्न कर देता है जिससे वाष्प उर्ध्वपातन द्वारा हिमकणो पर सघनित होता रहता है। इस प्रकार हिमकण मेघ कणो के निक्षेपण (deposition) में वृद्धि करते रहते हैं।

हिमकणों पर मेघ कणों का उन्नयपातन से वाष्प दाब पुन: घट जाता है, जिससे जल का वाष्पीकरण अविच्छिन्न रूप से चलता रहता है और हिमकण अतिशीतल जलकणों के मूल्य पर वृद्धि करते रहते हैं।

अपेक्षित आकार के बाद अंतिम वेग से ये हिमकण गिरना प्रारम्भ करते हैं तथा मार्ग में आने वाले मेघ कणों के संघट्टन से आकार में और वृद्धि प्राप्त करते हैं। नीचे गिरते समय उनका तापमान भी बढ़ता जाता है। यदि तापमान पर्याप्त मात्रा में बढ़ा, तो वे भूमि पर जल की बूंदें के रूप में, अन्यथा तुषार के रूप में पहुँचते हैं।

सारिणी (5 3)

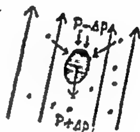
तापमान (°C)	संतृप्त वाष्प दाब (मिलीबार)	
	अतिशीतल जल पर	हिम पर
0	6 11	6 11
−2	5 27	5 17
−4	4 55	4 37
−8	3 35	3 10
−10	2 86	2 60
−12	2 44	2 17
−14	2 08	1 81
−20	1 25	1 03
−30	0 51	0 38
−40	0 19	0 13
−50	0 06	0 04

5 42 सम्मिलन सिद्धान्त (Coalescence Theory)

उष्ण कटिबन्धों में कपासी वर्षा के अलावा, वर्षा करने वाले सभी मेघ साधारणतः हिमांक स्तर से बहुत नीचे ही रह जाते हैं और पूर्णतः जलकणों से बने होते हैं। इन मेघों से होने वाली वर्षा की व्याख्या सम्मिलन सिद्धान्त से होती है।

इस सिद्धान्त म भी यह पूर्व कल्पना की गई है कि मेघ म पहले से ही कुछ इतने बड़े जल कण उपस्थित है, जो मेघ की आरोही धाराओं के विरुद्ध नीचे गिरने योग्य भार रखते हैं । ऐसा समझा जा सकता है कि कुछ मेघ कण, आसपास के कणों के सम्मिलन के निक्षेपण स प्रारम्भ म ही पर्याप्त पृथुल बन जाते हैं ।

नीचे गिरते हुए ये कण, मार्ग म आरोही प्रवाह के कारण ऊपर उठते हैं तथा अन्य मेघ कणो के सम्घट्टन से आकार म बढ़ते जाते हैं । इसके अतिरिक्त गिरती बूँद के कारण एक धारा रेखी (stream line) प्रवाह स्थापित हो जाता है । बूँद के मार्ग से आगे दाब कुछ बढ जाता है तथा पीछे कम हो जाता है । इस प्रकार एक नियमित दाब प्रवणता स्थापित हो जाती है (चित्र 5 5) । इस दाब प्रवणता से त्वरित होकर मेघ कण स्वत बड़ी बूँद के ऊपर बठने लगते है ।



चित्र (5 5)

मेघकणो के इस दोहरे निक्षेपण से बड़ा मेघ कण और तेजी से वद्धि प्राप्त करता है । काफी बडे हो जाने से, वायु प्रतिरोध के कारण यह कई छोटे कणो म टूट कर बिखर जाता है, जो ऊर्ध्व धाराओ द्वारा पुन ऊपर उठने लगते हैं । आरोही गति म भी ये कण अन्य कणो के सम्मिलन से वद्धि करते जाते हैं और क्रान्तिक अवस्था मे पहुँच कर पुन भार के नीचे गिरने लगते हैं तथा उपयु क्त प्रक्रम दोहराते जाते हैं ।

इस प्रकार केवल कुछ बडी बूँदें श्रृखला प्रक्रम द्वारा असख्य बडी बूँदें उत्पन्न कर देती हैं जिससे वर्षा आरम्भ हो जाती है ।

स्पष्ट है कि इन प्रक्रमो के लिए तीव्र ऊर्ध्व वायु धाराएँ होनी आवश्यक हैं । ऐसी दशा अस्थायी वायुमण्डल मे पायी जाती है, जिसम साधारणत कपासी समूह के मेघ विकसित होते हैं ।

5 43 अत विषम आकार के मेघ कणो, जिनमे कुछ पर्याप्त बडे हो, की उपस्थिति मे सम्मिलन द्वारा गुरुत्व क्षेत्र म मेघ कण वद्धि करते रहते हैं । इस प्रक्रम मे वद्धि दर मेघकणो के आकार तथा सान्द्रता पर निभर करेगी ।

लैंगमूर (1948) की गणना के अनुसार यदि सम मेघ (1 ग्राम प्रति घन मीटर, वाष्प) 02 मिमी व्यास क समान जलकणा स बना हो और बडे कणो का व्यास 03 मिमी हो तो सम्मिलन द्वारा बडे कण की वद्धि दर सारिणी (5 4) के अनुसार होगी,

सारिणी 5 4

बूँद का व्यास (मिमी)	संचयी समय (मिनट)	संचयी अवतलित दूरी (मीटर)
0 03	0	0
0 04	45	65
0 06	74	163
0 1	92	322
0 2	105	650
0 5	116	1475
1 0	123	2675

ये आंकड़े केवल एक उदाहरण के तौर पर लिए जाने चाहिए, न कि इन प्रक्रियाओं के आंकिक मान के तौर पर।

5 44 हिम क्रिस्टल सिद्धान्त प्रारम्भिक अवस्था मे सम्मिलन सिद्धान्त से अधिक क्रियाशील रहता है किन्तु बाद मे सम्मिलन प्रक्रियाओ मे वृद्धि अधिक तीव्र हो जाती है। ऐसा सोचा जा सकता है कि उन सभी मेघो मे, जिनमे हिमकण विद्यमान है, हिम क्रिस्टल की विधि का ही, अवक्षेपण प्रक्रम के प्रारम्भीकरण मे प्रमुख हाथ रहता है। सम्मिलन क्रिया विधि, हिमकणों की अनुपस्थिति मे अवक्षेपण प्रक्रम प्रारम्भ कर सकती है। किंतु क्रान्तिक आकार (त्रिज्या = r_c) के बाद संघटन और सम्मिलन से ही मेघ कण प्रमुख रूप से संवर्द्ध होते रहते हैं।

5 45 यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि सम्मिलन और संघटन प्रक्रिया के अंतर्गत, क्यो नही सभी मेघ विकसित और अवक्षेपण देते ? गणना द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रत्येक मेघकण का कम से कम एक निश्चित आकार होता है, जिसके नीचे वे संघटन करने मे असमर्थ रहते हैं। जैसे 0 045 मि मी व्यास से छोटा मेघकण 0 12 मि मी व्यास के कणों से सम्मिलित नही हो सकता। वास्तव मे छोटे कणो से युक्त मेघ अवक्षेपण मुक्त करने की क्षमता नही रखते। सैद्धांतिक गणनाओ से ज्ञात होता है कि सम्मिलन योग्य वही मेघ कण है जिसका व्यास कम से कम 0 3 मि मी है। हौम (1948) के अनुसार, स्वच्छ मौसम कपासी तथा स्तरी कपासी मेघ, वृहत् कपासी तथा स्तरी मेघो की अपेक्षा सूक्ष्म कणों से बने होते हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ मेघ ऐसे अवक्षेपण मुक्त करते हैं, जो वाष्पीकरण के कारण मार्ग मे ही लुप्त हो जाते है।

5 50 अवक्षेपण के प्रकार

(1) फुहार (drizzle)

यह सूक्ष्म जलकणो (व्यास 0 5 मि मी से कम) का सम अवक्षेपण है। फुहार साधारणत शान्त या धीमी वायु-धारा मे ही गिरती है। आरोही वायु धारा तेज होने से, फुहार कण छोटे होने के कारण नीचे नही गिर सकेंगे। फुहार साधारणत स्तरी मेघ द्वारा उत्पन्न होते है।

(2) वर्षा (rain)

0 5 मि मी व्यास से बडी बूँदो का अवक्षेपण वर्षा कहलाता है। इन बूँदों की दीर्घतम सीमा 5 5 मि मी है। इससे बडी बूँदें साधारणत टूट जाया करती हैं। वर्षा As, Sc, St, Cb और Cu बादलो से हो सकती है।

(3) बौछार (shower)

थोडे समय की तेज और बडी बूँदो वाली वर्षा, बौछार कहलाती है। यह साधारणत Cu और Cb मेघो से सम्बन्धित घटना है। अन्य मेघ स्टेशन से गुजरते समय बौछार दे सकते हैं।

(4) हिमकारी वर्षा (freezing rain)

वह वर्षा, जो भूमि पर जल के रूप मे पहुँचती है, पर भूमि पर पहुँचने के बाद जम जाती है, हिमकारी वर्षा कहलाती है।

(5) तुषार पात (Snow fall)

सफेद बर्फ के रवेदार टुकडों की वर्षा तुषार कहलाती है। ये रवे अपारदर्शी तथा सितारों जैसी आकृति के 4 या 5 मिलीमीटर व्यास के सुन्दर टुकडे होते हैं। बडे रवे भूमि पर तभी गिरते हैं, जब भूमि का तापमान कम से कम 0°C हो। भूमि का तापमान थोडा अधिक (1 से 4°C) होने से तुषार-पात पाऊडर के रूप मे होता है। तुषार पात साधारणत As Sc, St, Cu, तथा Cb मेघो से सम्बन्धित होता है।

(6) तुषार गोली (Snow pellet)

यह सफेद अपारदर्शी गोलाकार, या शाखाकार बर्फ के दानो का अवक्षेपण है, जिसका व्यास 2 से 5 मि मी तक हो सकता है। साधारणत भूमि से टकराने पर ये दाने टूट जाते हैं। सम्बन्धित मेघ Sc या Cb हो सकता हैं।

(7) हिमगोली तथा हिम सूचिका (Ice pellet and Ice needle)

पारदर्शी, गोलाकार या अनियमित आकार (व्यास 5 मि मी. से कम) की गोलियाँ, मध्यस्तरी या कपासीवर्षी बादलो से प्राप्त होती है। बर्फ के, कुछ रवे सूइयो के आकार (2 मि मी लम्बे) के भी अवक्षेपित होते हैं। सुइयाँ बहुत हल्की होती हैं और कभी कभी वायुमण्डल मे निलम्बित होकर प्रकाशीय घटनाएं उत्पन्न करती हैं।

(8) सहिम वृष्टि (Sleet)

जब भूमि तल का तापमान कुछ अधिक होता है, तो तुषारपात भूमि तक आते-आते जल में पिघल जाता है। अतः जल और तुषार दोनों का अवक्षेपण साथ-साथ प्रतीत होता है। यह सहिम वृष्टि कहलाती है।

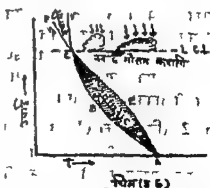
(9) ओला (hail)

बर्फ के अपेक्षाकृत बड़े टुकड़ों (व्यास 5 से 50 मि मी या कभी कभी इससे भी बड़े) का गिरना ओला कहलाता है। कुछ टुकड़े साधारणतः अल्प पारदर्शी तथा कई तहों में बने होते हैं तथा कुछ टुकड़े बहुत छोटे मुलायम सफेद बर्फ के गोले होते हैं।

ओले साधारणतः कपासी वर्षी मेघ से गिरते हैं। इस मेघ में ऊर्ध्व प्रवाह द्वारा जलकण, जब हिमांक स्तर से ऊपर पहुँचते हैं तो कुछ छोटे हिमकण के रूप में जम जाते हैं। ये कण अतिशीतल जल के सह अस्तित्व में बर्जरान प्रक्रम के अनुसार आकार में वृद्धि प्राप्त करते हैं तथा भार के कारण नीचे गिरते समय संघटन द्वारा और बढ़ते जाते हैं। अत्यधिक तीव्र ऊर्ध्व प्रवाह के कारण पुनः उठते हैं और उसी प्रक्रम से बढ़ते हैं और वृद्धि करने का पर्याप्त समय मिल जाता है। अतः ओलों के विकास के लिए आवश्यक है कि ऊर्ध्वाधर विकास के मेघ बहुत तीव्र वायुधाराओं से युक्त हों। हर बार उठने और गिरने से इन टुकड़ों पर तुषार की नई तहें चढ़ती जाती हैं। यह दोलन क्रिया तब तक चलती रहती है, जब तक कि बर्फ के टुकड़ों का आकार ऊर्ध्व धाराओं को संतुलित करने में सक्षम नहीं हो जाता। यही कारण है कि साधारणतः ओले में विभिन्न घनत्वों के बर्फ और तुषार की कई तहें पायी जाती हैं। छोटे ओले प्रायः भूमि तक आते आते पिघल कर या तो समाप्त हो जाते हैं या बहुत छोटे हो जाते हैं।

5 60 ऊर्ध्व विस्तार के मेघ

वायुमण्डल का अस्थायित्व और नमी, ऊर्ध्व विस्तार के मेघ, जिन्हें संवाहनिक मेघ भी कहते हैं, जनित करते हैं। अस्थायित्व की तह जितनी गहरी और नमी की मात्रा जितनी अधिक होगी, मेघों का ऊर्ध्व विस्तार उतना ही विशाल होगा। यदि संघनन तल के ऊपर वायुमण्डल स्थायी हो जाता है, तो वह मेघों के ऊर्ध्व विस्तार को दबा देता है, जिससे मेघ मीनार की तरह बढ़ने के बजाय छिछले तथा चपटे होकर छोटे छोटे टुकड़ों में फैल जाया करते हैं। ये मेघ स्वच्छ मौसम कपासी कहलाते हैं और साधारणतः अवक्षेपण उत्पन्न करने की क्षमता नहीं रखते हैं। स्वच्छ मौसम कपासी के लिए वायुमण्डलीय अवस्था का आकलन (estimation), चित्र (5 6) में दिया गया है। इस प्रकार के मेघ साधारणतः गर्मियों में दिन के समय बनते हैं।



चित्र (5 6)

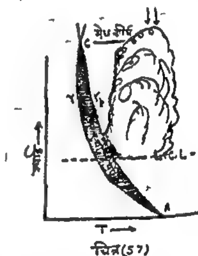
रेखा ABCD वायुमण्डलीय ह्रास दर (γ) दर्शाती है तथा AECF उठती हुई वायुराशियो का ह्रास दर (γ_p)। इन रेखाओ के कटान बिन्दु C के नीचे ABCEA भाग में वायु अस्थायी है, अत अवतलन प्रवाह उत्पन्न करेगी। यह अवतलन प्रवाह, वृद्धि करते हुए बादलो का प्रतिरोध करेगा तथा उन्हे छिछला और चपटा बना देगा।

स्वच्छ मौसम कपासी बनने की अनुकूल परिस्थितिया ये हैं

(1) भूमितल का तीव्र उष्मन (2) पर्याप्त आद्रता तथा (3) ऊर्ध्व वायु-मण्डल का स्थायित्व।

5 61 सघनन तल से ऊपर वायुराशिया साधारणत सतृप्त हो जाया करती हैं और सतृप्त रुद्धोष्म ह्रास-दर से ऊपर बढती है। सतृप्त हवाएँ स्वत वायुमण्डल को अस्थायी रखने की प्रवृत्ति रखती है। अत सामान्य रूप से यदि हवा सघनन तल तक अस्थायी है, तो यह अस्थायित्व और अधिक ऊँचाइयो तक स्वत विकसित हो जाती है। इससे मेघ कणो के उच्च विस्तार को प्रोत्साहन मिलता है और वे वृहद कपासी या कपासी वर्षी मेघ बना सकते है।

इन मेघो का विस्तार इस बात पर निर्भर करता है कि अस्थायित्व तह, सघनन तल कितनी ऊँचाई तक व्याप्त है। γ और γ_p के से कटान बिन्दु 'c' द्वारा इन मेघो का विस्तार नियन्त्रित होता है अत बिन्दु c को मेघ का माना जा सकता है। चित्र (5 7)



चित्र(5 7)

5 62 कपासी वर्षी बादलो की तीव्रता और ऊँचाई साधारणत उष्ण कटिबन्धो मे उच्च अक्षाशो की अपेक्षा अधिक होती है। इसका कारण यह है कि क्षोभ सीमा की ऊँचाई उष्ण कटिबन्धो मे अधिक है। इस सीमा से आगे मेघ नही बढ सकते क्योंकि स्थिर मण्डल स्वयं एक बहुत गहरी और स्थायी व्युत्क्रमण-तह है। इसके अलावा, उष्ण कटिबन्धो म सघनन तल का तापमान अधिक होता है। अत वायुमण्डल अधिक वाष्प ग्रहण करने की क्षमता रखता है, जिससे स्वभावत मेघ की तीव्रता बढ जाएगी।

5 62 तडित झझा (Thunderstorm)

— जब प्रतिबन्धी-स्थायित्व की तह अत्यधिक गहरी होती है (कम से कम 3 किलोमीटर) और वायुमण्डल म नमी की मात्रा भी यथेष्ट होती है, तो मेघ हिमांक स्तर से बहुत अधिक ऊँचाई तक विकसित होता है। इसका ऊपरी भाग स्वाभाविक रूप से हिमकणों तथा अतिशीतल जल कणो से मिलकर बना होता है। अधिक विकसित अवस्था म यह कपासी वर्षी मेघ बन जाता है और मूसलाधार वर्षा तथा तडित झझा की घटनाएँ घटित करता है।

थंडर से थंडरस्टॉम के लिए अपेक्षित वायुमण्डलीय दशाएँ अनिवार्य हैं।

(1) 3 या 4 कि मी ऊँचाई तक तीव्र ह्रास दर अर्थात् संघनन स्तर तक γ_d तथा इसके ऊपर γ_s से वायुमण्डलीय ह्रास-दर अधिक होनी चाहिये।

(2) भूमितल पर पर्याप्त नमी की मात्रा।

(3) यथेष्ट ट्रिगर क्रिया विधि जो वायुराशियो मे प्रारम्भिक उठान उत्पन्न कर सके। यह ट्रिगर (अ) सौर ऊष्मा (ब) पर्वतीय ढाल या (स) वाताग्र-उत्थापन (Frontal lifting) द्वारा साधारणत मिलता है।

(4) उच्च स्तरो पर धीमी क्षैतिज वायु-प्रवाह। तीव्र क्षैतिज प्रवाह से मेघकणो मे क्षैतिज खिंचाव पैदा होने से उनके ऊर्ध्वाधर विकास मे बाधा पडेगी।

5 63 जब कपासी वर्षी मेघ $-20°C$ सेऊ पर पहुँच जाते हैं, तो साधारणत जल कण बडी-बडी राशियो म जमने लगते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि निम्न तलो मे ये वायुराशियाँ पर्याप्त उष्ण और नम हो। केवल तीव्र ऊर्ध्वाधर वायु धारा ही इन वृहत् जल राशियो को अधिक ऊँचाइयो तक ले जाने की क्षमता रखती हैं।

जमी हुई राशियों मे वृहद् मात्रा मे विद्युत आवेश एकत्र हो जाते हैं। ये आवेश धनात्मक होते हैं। यो तो मेघ रहित वायुमण्डल में भी किंचित् मात्रा में धनात्मक आवेश वर्तमान रहते हैं किन्तु कपासी वर्षी मेघो की उपस्थिति मे उच्च स्तर स भूमि तक तीव्र विभव प्रवणता स्थापित हो जाती है। विद्युत बल तडितझंझा म अधिकतम होता है, जिससे चिनगारी विसर्जन और परिणामस्वरूप तडित-जनित होती है। इन्ही विसर्जनो की ध्वनि हमें गर्जन (thunder) के रूप मे सुनाई पडती है।

5 64 गर्जन मेघ की संरचना (Structure of Thunder cloud)

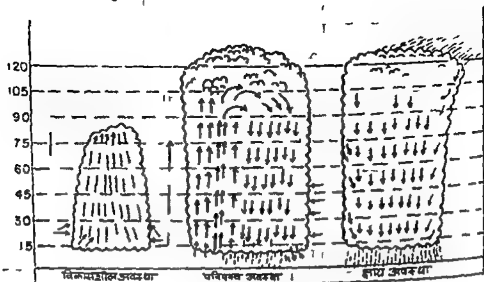
गर्जन मेघ का जीवन चक्र साधारणत 2–3 घण्टे मे पूरा हो जाता है। इस बीच यह तीन अवस्थाओ से गुजरता है।

1 विकासशील अवस्था या कपासी अवस्था

इस स्थिति मे यह ऊपर की ओर वृद्धि करता कपासी मेघ होता है, जिसमे तीव्र ऊर्ध्वाधर वायुधाराएँ (10–15 मीटर प्रति सैकण्ड) होती हैं। सम्पूर्ण मेघ राशि केवल ऊर्ध्वधाराओ से भरी होती है। धाराएँ ऊँचाई क साथ तीव्र होती जाती हैं। इस अवस्था में बादल मुख्यत उष्ण मेघ कणो तथा हिमांक स्तर के ऊपर कुछ अतिशीतल जलकणो स बना होता है शीर्ष के आसपास हिमकण भी किंचित् मात्रा म बन जाते हैं। मेघ पदार्थ साधारणत आसपास के वातावरण से काफी उष्ण होता है।

ऊर्ध्वाधर धाराओ के कारण अक्सर विभिन्न स्तरो से क्षैतिज हवा का खिंचाव मेघ राशियो की ओर होता रहता है। यह खिंचाव मेघ राशियो को बिखरने से रोकता है तथा सगठित रूप से विकसित होने मे सहायक होता है।

यह अवस्था चित्र (5 8) मे दिखाई गई है।



चित्र 5 8

(2) परिपक्व अवस्था (Mature-Stage)

इस स्थिति मे मेघ शीर्ष – 20°C के तापमान स्तर के ऊपर पहुँच चुका होता है और अवक्षेपण साधारणत प्रारम्भ हो जाता है। पूर्णत परिपक्व हो जाने पर मेघ, शीर्ष हिमांक स्तर 6–7 किमी या इससे भी अधिक ऊँचाई तक पहुँच जाते हैं। कम ऊँचाई वाले शीर्ष के बादल साधारणत अपरिपक्व होते हैं और विकसित होने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस दशा मे मेघ का ऊपरी भाग आरोही धाराओ से भरा होता है, जबकि निचले भाग मे अवक्षेपण प्रारम्भ हो जाने के कारण अवतलन धाराएँ प्रमुख होती हैं।

अवतलन वायुप्रवाह के कारण, निम्न भागो का तापमान S A L R की दर से बढ़ता रहता है। किन्तु ऊपर उठती हवा की तापमान ह्रास-दर इससे तीव्र होती है। परिणाम स्वरूप, अवतलित होती मेघ-राशियाँ उतनी गर्म नही हो पाती, जितनी वे ऊपर उठते समय ठण्डी हुई थी। इस प्रकार, इनका तापमान आसपास की अपेक्षा कम रह जाता है। ठण्डी होने के कारण अवतलित होती वायुराशियाँ, अवतलन के लिए और अधिक प्रोत्साहित होती हैं। इस तरह अवतलन प्रवाह एक बार प्रारम्भ होकर तीव्रतर होता जाता है।

पूर्ण परिपक्वता की अवस्था मे ऊपरी भाग पर्याप्त संख्या मे बडे हिमकणो से भर जाते हैं, जो आरोही धाराओ के विपरीत नीचे गिरने लगते हैं। इस प्रकार, मेघ की परिपक्वता के साथ-साथ अवतलन प्रवाह भी ऊँचाई के प्रति बढता जाता है।

परिपक्वता की स्थिति (चित्र 5 9) मे आरोही और अवतलन धाराएँ साथ-साथ वर्तमान रहती हैं। अवतलन प्रवाह साधारणत मेघ के मध्य से आरम्भ होता है।

3 विसरण या क्षयकारी अवस्था (Dissipating-Stage)

इस अवस्था मे आरोही धाराएँ, बहुत क्षीण या नगण्य हो जाती हैं। मेघ के सम्पूर्ण निचले भागो म अवतलन धाराएँ प्रमुख हो जाती हैं। आरोही धाराओ की क्षीणता के कारण,

मेघ का आकार विक्षुब्ध होने लगता है तथा पार्श्वीय प्रसार आरम्भ हो जाता है। यह प्रसार मेघ के विकास को रोककर उसका क्षय आरम्भ कर देता है।

मेघ अधिकतम ऊर्ध्वाधर वृद्धि को पा चुका होता है तथा शीर्ष जेट धाराओ के प्रभाव क्षेत्र मे आ जाने के कारण, निहाई के रूप मे पार्श्व मे खिच जाता है। यह निहाई मेघ का पूर्ण क्षय हो जाने के बाद पक्षाभ मेघ के रूप मे बची रहती है। तीव्र अवतलन धारा के परिणामस्वरूप, एकाएक ठण्डी हवाओ का तेज झोका अल्पकालिक झंझा या चडवात (स्क्वाल) (Squall) के रूप मे पृथ्वी पर पहुँचता है।

अविरत वर्षा तथा पार्श्वीय खिचाव के कारण, कपासी वर्षी मेघ क्षय तथा विघटन को प्राप्त होता जाता है। यह दशा चित्र (5 10) मे दिखाई गई है।

5 65 ऊष्ण कटिबन्धो म तडित झझा, सौर ऊष्मा द्वारा उत्पन्न अस्थायित्व के कारण, नमी की उपस्थिति मे होती है किन्तु शीतोष्ण कटिबन्धो मे अधिकाश तडित झझाऐं वाताग्र प्रक्रियाओ द्वारा उत्पन्न होती हैं जिनका विवरण अध्याय 8 मे दिया गया है। सौर ऊष्मा के कारण उत्पन्न, गर्जन मेघ प्राय दोपहर के बाद विकसित होते हैं और शाम तक बिसरित हो जाते है।

उपर्युक्त कारणो के अतिरिक्त, दाब प्रणालियां भी साधारणत तडित झझाऐं उत्पन्न करती हैं। इन प्रणालियो मे अभिसरण द्वारा अस्थायित्व तथा नमी सरलता से आ जाती है। इनके लिए दैनिक समय का कोई बन्धन नही है। विभिन्न प्रणालियो द्वारा उत्पन्न झझाऐं, जो भारतीय क्षेत्रो को प्रभावित करती हैं, अध्याय 14 म वर्णित हैं।

5 66 तडित झझा, स्थान विशेष को निम्नांकित प्रकार से प्रभावित करती है

1 स्थान के तापमान को एकाएक घटा देती है, विशेष तौर पर जब ठण्डी हवा का झोका (Squall) आता है।

2 वायु दाब मे वृद्धि हो जाती है।

3 अवतलन प्रवाह के कारण झोकीला पवन बार बार आने से वायुगति और दिशा बहुत विक्षुब्ध रहती है।

4 उपल वृष्टि, ठण्डक उत्पन्न करने व अन्नादि फसलो के लिए विशेष क्षतिकारक है।

5 67 वृष्टि प्रस्फोट (Cloud burst)

यह शब्द साधारणत कपासी वर्षी मेघो द्वारा जनित बहुत तीव्र वर्षा के लिए प्रयुक्त किया जाता है। कभी कभी अल्पकाल मे ही अत्यन्त मूसलाधार वृष्टि होती है जो अधिकतर पहाडी प्रदेशो मे पायी जाती है। विकसित सवाहनिक मेघो म जब ऊर्ध्व धाराएँ किन्ही कारणो से एकाएक रुक जाती है तो वर्षा और ओले भार के कारण तेजी से गिरने लगते हैं और थोडे ही समय मे तीव्र वर्षा के रूप म सब के सब भूमि पर आ जाते हैं। पहाडी पर चढते मेघराशि मे ठण्डक के कारण और उष्ण हवाओ की पूर्ति कट जाने से ऊर्ध्व धारायें एकाएक रुक सकती है।

5 70 कुहरा और कुहासा (Fog and Mist)

जब भूमितल के निकट की हवा संतृप्त हो जाती है, तो उसका वाष्प जलकणों में संघनित हो जाता है। ये जलकण मेघकणों की तरह भूमितल से कुछ ऊँचाई तक निलम्बित रहते हैं और दृश्यता कम कर देते हैं। यदि जलकणों की सान्द्रता बहुत अधिक है तो वे कुहरा कहलाते हैं तथा कम सान्द्र होने पर कुहासा। दोनों की सीमा रेखा दृश्यता (visibility) के माप से बांध दी गई है। इस प्रकार जलकणों के निलम्बन से यदि दृश्यता 1 कि मी से कम हो जाती है, तो उसे कुहरा और यदि दृश्यता इससे अधिक है, तो उसे कुहासा कहा जाता है। सघन कुहरे में दृश्यता कभी-कभी केवल कुछ मीटर तक सीमित रह जाती है।

5 71 भूमि तल की असतृप्त-हवा दो प्रक्रमों से सतृप्त हो सकती है —

(अ) भूमि तल की हवा का ओसांक के नीचे तक शीतलन।

(ब) हवा में जल का वाष्पीकरण।

इन दो भौतिक प्रक्रियाओं के आधार पर कुहरा कई विधियों से बन सकता है। जनन विधियों के अनुसार कुहरा निम्नांकित प्रकारों में बांटा जा सकता है—

(अ) शीतलन प्रक्रम द्वारा उत्पन्न कुहरे

1 विकिरण कुहरा (Radiation fog)
2 अभिवहन कुहरा (Advection fog)
3 आरोही या पवनीय कुहरा (Upslope or mountain fog)
4 दो लगभग सतृप्त वायुराशियों के मिश्रण से उत्पन्न कुहरा।

(ब) वाष्पीकरण प्रक्रम द्वारा उत्पन्न कुहरे

1 प्राकृतिक सागर धुंध या वाष्प कुहरा (Steam fog)
2 पूर्व उष्णाग्र तथा उत्तर शीताग्र कुहरा (Pre warm front and post cold front fog)

5 72 विकिरण कुहरा

सर्दियों में स्वच्छ आकाश की रातों में बिना किसी रुकावट के अधिकतम भू विकिरण वायुमण्डल से बाहर जाता है, जिससे भूमितल पर्याप्त ठण्डा हो जाता है। इससे कुछ ऊँचाई तक की वायु-पर्तें, संचालन द्वारा अपनी ऊष्मा धरातल को खो देती हैं। ताप के कुचालक होने के कारण केवल बहुत छिछली वायु तह ही शीतल हो पाती है। यदि शीतलन ओसांक से नीचे पहुँच जाता है, तो हवा में उपस्थित वाष्प संघनित होकर कुहरा उत्पन्न कर देता है।

इस प्रकार के कुहरे के लिए स्वच्छ आकाश के अलावा पर्याप्त नमी तथा बहुत धीमी हवा होनी आवश्यक है। सागर तलों पर विकिरण कुहरे की सम्भावना नहीं होती, क्योंकि जलीय तल विकिरण द्वारा अपेक्षाकृत बहुत कम शीतल हो पाता है। विकिरण कुहरे के लिए अनुकूल दशाएं थल के आन्तरिक भागों में पाई जाती हैं, जहाँ ऊपर अवतलन प्रवाह प्रमुख होता हो, जो बादलों को बिसरित करके उनकी नमी भूमि पर ला सके।

5 7 3 अभिवहन कुहरा

वायुराशियो की गति के साथ उनकी विशेषताएँ भी एक स्थान से दूसरे स्थान को अभिवहित होती रहती हैं। वायुराशियाँ स्वत नय स्थानो की विशेषताएँ आत्मसात् करके सशाधित होती रहती हैं।

जब कोई नम वायुराशि किसी ठडे भूमि-तल पर बहती है, तो वायुराशि शीतल हो जाती है। यदि शीतलन यथेष्ट हुआ, तो वाष्प सघनित होकर कुहरा बना देता है।

सागर तलो या तटीय क्षेत्रो मे इस प्रकार के कुहरे अधिक बनते होते हैं, जो सामान्यत थलीय कुहरो से अधिक घने होते हैं।

अभिवहन कुहरे के लिए हवा का प्रवाह, बहुत अधिक या बहुत कम नही होना चाहिए, क्योंकि कम वायु-वेग शीतलन के लिए अनुकूल नही है और अधिक वेग ऊर्ध्वाधर विक्षोभ उत्पन्न करके कुहरा कणो को बिखरा देगा। 8 से 20 किमी/घटा की हवा सामान्यत उपयुक्त होती है।

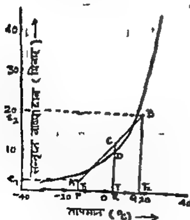
5 7 4 पर्वतीय कुहरा

पर्वतीय ढालो पर बहती आरोही हवाओ मे रुद्धोष्म शीतलन होता रहता है, जो किसी स्थान पर ओसाक के नीचे पहुँच सकता है। यदि हवाओ मे नमी की मात्रा अधिक है, तो बहुत कम ऊँचाई पर ही कुहरा बन जाता है। अन्यथा काफी ऊँचाई तक पहुँचने के बाद हवा सतृप्त होकर कुहरा उत्पन्न कर पाती है।

आरोही प्रवाह द्वारा उत्पन्न विक्षोभ (turbulence) कुहरा उत्पत्ति का विरोध करते हैं। अधिक विक्षुब्धावस्था मे कुहरे उत्पन्न नही हो पाते।

5 7 5 मिश्रण-कुहरा

दो लगभग सतृप्त वायुराशियाँ जब मिश्रित होती हैं, तो बिना तापमान घटाए या अतिरिक्त वाष्प दिए ही मिश्रण, सतृप्त होने की प्रवृत्ति रखता है।



चित्र (5 11)

चित्र (5 11) के (T – e) आलेख मे मान लीजिए, पहली वायुराशि का तापमान T_1 और वाष्पदाब $e_1 = AP$ तथा दूसरी वायुराशि का तापमान T_2 और वाष्पदाब $e_2 = BQ$ है।

मिश्रण का तापमान वायुराशियो की मात्रा पर निर्भर करता है। यदि दोनो वायुराशियो की मात्राएँ बराबर हो तो मिश्रण का

तापमान $T = \dfrac{T_1 + T_2}{2}$

चित्र से स्पष्ट है कि तापमान T पर मिश्रण का वाष्पदाब RC है, जो सतृप्त वाष्पदाब RD से अधिक है। अत मिश्रण अतिसतृप्त हो गया। यह अवस्था कुहरा उत्पन्न करने के लिए बहुत अनुकूल है।

वायुराशियो के सम्मिलन से उत्पन्न वाताग्रो मे इस प्रकार का कुहरा उत्पन्न होना बहुत सामान्य है।

5 76 वाष्प-कुहरा

यदि जलीय तल का सतृप्त वाष्पदाब (e_w) तथा इसके ठीक ऊपर की वायु तह का वास्तविक वाष्प दाब e है तो, ($e_w - e$) सतृप्तता कमी (Saturation deficit) कहलाती है। जलीय तल से वाष्पीकरण, सतृप्तता कमी के समानुपाती होता है। वाष्पीकरण तब तक होता रहेगा, जब तक वायु तह का वाष्पदाब e_w, के बराबर न हो जाए।

यदि जल का तापमान, सलग्न वायु तह के तापमान से अधिक है, तो e_w का मान वायु-तह के सतृप्त वाष्पदाब (e_s) से अधिक होगा। इस दशा मे वायु-तह के सतृप्त हो जाने के बाद भी, सतृप्तता कमी, ($e_w - e_s$) के बराबर विद्यमान रहेगी, फलत वाष्पीकरण जारी रहेगा, जिससे वायु तह मे अतिसतृप्त होने की प्रवृत्ति आ जाएगी। किन्तु साधारणत सघनन केन्द्रको की उपस्थिति मे यह अतिरिक्त वाष्प, सघनित होकर कुहरा उत्पन्न कर देती है।

अत उष्ण जल सतह पर शीतल हवा के आगमन मे कुहरा आसानी से उत्पन्न हो जाता है। यह स्थिति सर्दियो मे आर्कटिक सागर क्षेत्रो मे साधारणत उपलब्ध रहती है जहाँ समीप के महाद्वीपो से उत्पन्न ठडी हवाएँ सागर पर बहा करती हैं।

5 77 वाताग्र कुहरा

ऊपर दिए गए कारणो से स्पष्ट है कि जब उष्ण जल की वर्षा शीतल वायु-तहो के बीच से गुजरती है, तो बूँदे तेजी से वाष्पीकृत होने की प्रवृत्ति रखती हैं। वाष्पीकरण यथेष्ट मात्रा मे होने से कुहरा उत्पन्न हो सकता है।

ऐसी स्थिति वाताग्रो से सम्बधित पाई जाती है। उष्ण वाताग्र के आगे तथा शीत वाताग्र के पीछे कुहरे उत्पन्न होते हैं जिनका विवरण अध्याय 8 मे किया गया है।

5 78 उष्मन तथा वायुवेग की अधिकता कुहरे को क्षीण कर देते है। स्पष्ट है कि घने कुहरे (साधारणत अभिवहन तथा पर्वतीय कुहरे) विरल कुहरो की अपेक्षा देर मे क्षीण होते हैं। यही कारण है कि सुबह के समय कुहरा सबसे अधिक देखा जाता है और दोपहर के बाद सबसे कम।

हवा का तापमान अधिक होने से कुहरा शीघ्र क्षीण होता है क्योकि वाष्पीकृत होने के बाद, कुहरे के जलकणो को आत्मसात् करने की क्षमता हवा के तापमान के ही समानुपाती होती है। अत सर्दियो मे उत्पन्न होने वाले कुहरे अपेक्षाकृत देर से विसरित होते हैं और उच्च अक्षाशो मे बनने वाले कुहरे तो कई दिनो तक स्थिर रहा करते हैं।

5 80 हिम अभिवृद्धि (Ice accretion)

हिमाक स्तर के ऊपर उडने वाले विमानो के पखो, नोदक (प्रोपेलर) या स्ट्रट आदि पर अतिशीतल जल सघनित होकर बर्फ की तह की तरह जम जाता है। यह स्थिति विमान

के लिए सकटपूर्ण है क्योकि वर्फ की तह विमान पर कर्पण प्रतिरोध बढा देती है, तथा उत्थापन क्षमता 50% तक कम कर देती है, जिससे विमान को हवा मे सन्तुलित रखने के लिए अधिक ईधन का अपव्यय करना पडता है। हिम अभिवृद्धि बादलो के अन्दर तथा बाहर दोनो स्थितियो मे सम्भव है। 0 से $-15^{\circ}C$ की सीमा के मध्य मेघो से हिम अभिवृद्धि सर्वाधिक होती है। हिम अभिवृद्धि के मुख्य प्रकार निम्नांकित हैं। ये प्रकार इन बातो पर निर्भर करते हैं

1 जलकणो का आकार।
2 जलकणो का तापमान।
3 सापेक्ष गति, जिससे जलकण वायुयान की सतह से टकराते हैं।
4 हवा के इकाई आयतन में स्थित जलकणो की सख्या।

(1) ग्लेज हिम

यह पारदर्शी और कडा हिम है, जो आगे के किनारो पर साधारणत जमा हो जाता है। ग्लेज बडे जलकणो या बौछार कणो के ऊर्ध्वपातन से बनता है। यह बहुत दृढता से चिपकता है।

(2) राइम हिम

यह अपारदर्शी, तथा आसानी से टूटने वाली बर्फ है, जो ग्लेज की अपेक्षा कम दृढता से चिपकती है। राइम बनने के लिए हवा मे छोटे छोटे जलकण बहुत अधिक सख्या मे उपस्थित होने चाहिएँ।

(3) पिच्छ तुषार (feather frost)

जब विमान ठडे क्षेत्र मे उष्ण क्षेत्र मे प्रवेश करता है, तो हवा के अदृश्य वाष्पकण ऊर्ध्वपातन द्वारा मुलायम तुषार के रूप मे पखो या शीशो पर जम जाते हैं। इससे दृश्यता कम हो जाती है। अन्यथा यह तुषार विशेष सकटपूर्ण नहीं है।

(4) कारबुरेटर हिम

कारबुरेटर का पिस्टन खीचने से अन्दर की हवा का प्रसार होता है, जिसके शीतलन से यदा-कदा कारबुरेटर के अन्दर बर्फ जमा हो जाती है। यह जमाव गर्म करके हटाया जा सकता है।

5 81 अवतलन और व्युत्क्रमण (Subsidence and Inversion)

वायु-राशि के क्रमिक अवतलन से, उसका रुद्धोष्म उष्मन होता है तथा तापमान लगभग $10^{\circ}C$ प्रति किमी दर से बढता जाता है। इस अवस्था में मेघ विसरित होने लगते हैं तथा आसमान स्वच्छ हो जाता है। प्रतिचक्रवातो मे वृहत् वायुराशियाँ साधारणत 300 – 400 मीटर प्रति दिन की गति से अवतलित होती हैं।

5 82 क्षोभ मण्डल मे साधारणत तापमान ऊँचाई के साथ घटता जाता है किन्तु विशेष परिस्थितियो मे ह्रास दर का व्युत्क्रमण सम्भव है, अर्थात् हवा की किसी तह मे तापमान ऊँचाई के साथ अस्थायी रूप से बढता जाता है। यह क्रिया व्युत्क्रमण तथा

सम्बन्धित वायुतह, व्युत्क्रमणतह कहलाती है। व्युत्क्रमण भूमितल के पास तथा उच्च वायुमण्डल—दोनो मे हो सकता है। शान्त वायु और मेघरहित आकाश वाली सर्दियो की रात मे साधारणत भूमि के विकिरण शीतलन के कारण कुछ ऊँचाई तक व्युत्क्रमण विकसित हो जाता है। इस प्रकार का भूमि व्युत्क्रमण ध्रुवीय अक्षाशो की सर्दियो में लगभग स्थायी विशेषता है। तटीय क्षेत्रो मे निम्न तहो का शीतलन कम होने के कारण व्युत्क्रमण सामान्यत स्थापित नही हो पाता।

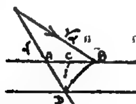
इस प्रकार के व्युत्क्रमण सूर्योदय से पूर्व सर्वाधिक तीव्र होते हैं, जो सूर्योदय के पश्चात् क्षीण होने लगते हैं।



चित्र (5 12)

जब कोई उष्ण वायुराशि शीतल प्रदेश पर होकर बहती है, तो भी व्युत्क्रमण उत्पन्न हो सकता है। यदि हवा की गति तीव्र है, तो व्युत्क्रमण, तह भूमि पर न होकर कुछ ऊपर पाया जाता है।

5 83 उच्चस्तरीय व्युत्क्रमण प्राय अवतलन प्रवाह के कारण उत्पन्न होते हैं। अवतलित वायुराशि साधारणत 10°C प्रति किमी की दर से उष्ण होती जाती है। अत किसी स्तर AB पर अवतलित वायु (B) का तापमान आसपास की वायु (A) से अधिक रहेगा। इनके मिश्रण से उत्पन्न तापमान, सामान्य तापमान से अधिक रहेगा। हो सकता है यह तापमान निम्न तल की वायु (D) के तापमान से अधिक हो जाए। इस स्थिति में 'CD व्युत्क्रमण तह बन सकती है।



चित्र (5 13)

इस प्रकार के व्युत्क्रमण साधारणत भूमि पर नही पहुँचते हैं।

5 84 वाताग्र तथा विभिन्न तापमानों की वायुराशियाँ जब किसी स्थान विशेष से गुजरती हैं, तो उष्ण तापमान बटन कुछ समय के लिए विक्षुब्ध हो उठता है । ऐसी परिस्थितियो मे व्युत्क्रमण उत्पन्न हो सकता है । यदि उष्ण हवा का अभिवहन हो रहा हो, तो अभिवहन प्रवाह के निचले भाग मे तथा यदि शीतल हवा अभिवहित हो रही है, तो प्रवाह के ऊपरी भाग मे, व्युत्क्रमण बनने की प्रवृत्ति आ जाती है ।



चित्र (5 14)

5 85 व्युत्क्रमण तह अत्यधिक स्थायी होती है । अत किसी भी प्रकार के आरोही प्रवाह का विरोध करती है । संवाहनिक धाराओं के लिए यह छत की तरह रुकावट डालती है ।

भूमि तल का व्युत्क्रमण प्रदूषकों को प्रसरित होने से रोकता है । अत इस समय वायुमण्डलीय प्रदूषण की सान्द्रता निम्नतम तहो मे, जिनमे हम साँस लेते हैं, सर्वाधिक होती है ।

5 90 कृत्रिम वर्षा का सिद्धान्त

पहले लोग यज्ञो, मन्त्रो जादू या अन्य चमत्कारों से वर्षा के देवता वरुण या इन्द्र को प्रसन्न करके वृष्टि कराने म आस्था रखते थे । इन देवताओं की प्रार्थना के अनेक श्लोक ऋग्वेद मे भी मिलते हैं, जिनका आशय है कि वे उचित समय पर वर्षा करके मनुष्य को दुर्भिक्ष और अकाल की सम्भावनाओ से मुक्त रखें । बल्कि आज भी भारत और दुनिया की अनेक आदिम जातियाँ वर्षा के लिए नग्न नृत्यो, ढोल पीटना तथा जादू आदि की तरकीबें इस्तेमाल करती पाई जाती हैं । तात्पर्य यह है कि प्राचीनकाल से ही मनुष्य की यह महत्वाकांक्षा रही है कि वह जब चाहे, जहाँ चाहे, वर्षा उत्पन्न करने की क्षमता प्राप्त कर सके ।

किन्तु वैज्ञानिक तथ्यो की रोशनी मे कृत्रिम वर्षा के जो सिद्धान्त प्रकट हुए हैं, वे अत्यन्त सरल तथा रोचक होते हुए भी प्रायोगिक तौर पर दुरूह और अनिश्चित हैं ।

आपने खिड़की या दरवाजे के छिद्रों से आती प्रकाश किरणों की रेखा में चमकते धूल के कण देखे होंगे। इसी प्रकार वाष्प के कण वायुमण्डल में सदा निलम्बित रहते हैं। साधारण अवस्था में ये कण धूल के कणों से भी सैकड़ों गुना छोटे होते हैं। बादलों में वाष्प कण अपेक्षाकृत बड़े और सघन होते हैं। किन्तु ये वाष्प या मेघ कण इतने सूक्ष्म होते हैं कि हवाओं के प्रतिरोध के विपरीत, पृथ्वी पर वर्षा के रूप में गिर नहीं पाते। जब कभी मेघ कणों को ऐसी सुविधा प्राप्त होती है कि वे एक-दूसरे से मिलकर या किसी अन्य प्रणाली द्वारा बूँदों के आकार में यथेष्ट बड़े हो जाएं, तो वे भार के कारण भूमि की ओर बरसने लगते हैं। इस सुविधा के अभाव में बादल होते हुए भी, हम वर्षा से वंचित रह जाना पड़ता है। मेघ कणों की यथेष्ट आकार वृद्धि ही वास्तव में वर्षा का कारण और इस वृद्धि के लिए, सुविधा प्रदान कराना ही कृत्रिम वर्षा का सिद्धान्त है।

क्या है यह सुविधा? इसका उत्तर ढूँढने के लिए यह अध्ययन आवश्यक है कि प्रकृति स्वयं किस प्रकार मेघ कणों को वर्षा की बूँदों में रूपान्तरित करती है।

बादलों द्वारा वर्षा होने के लिए, उनके अन्दर पर्याप्त मात्रा में आर्द्रता ग्राही सघनन केन्द्रकों की उपस्थिति अनिवार्य शर्त है। जलकण, नमक, हिमकण तथा औद्योगिक चिमनियों के धुएँ में विद्यमान प्रदूषक कण अच्छे सघनन केन्द्रक साबित होते हैं।

इन्हीं केन्द्रकों की अनुपस्थिति या अभाव में मेघ, बिना वर्षा किए या तो विलीन हो जाते हैं या स्थानान्तरित हो जाते हैं। राजस्थान के वायुमण्डल में यों तो 9–10 किमी ऊँचाई तक धूल या रेत के कण व्यापक मात्रा में भरे हुए हैं परन्तु आर्द्रताग्राही कणों का नितान्त अभाव होने के कारण ही बहुधा देखा जाता है कि आकाश पूर्ण मेघाच्छन्न हो जाने पर भी वर्षा की बूँदें उपलब्ध नहीं होतीं।

कृत्रिम वर्षा का सिद्धान्त यही है कि आर्द्रताग्राही कणों को विमानों द्वारा बादलों के भीतर छिड़क दिया जाए या फिर उन्हें भूमितल से ही धुओं के रूप में बादलों में बिखेर दिया जाए। इस क्रिया को बादल की सीडिंग (Seeding) कहते हैं।

सागरों तथा अन्य स्रोतों से उठता वाष्प ठण्डा होकर, कुछ ऊँचाई के बाद सघनित होने लगता है। ये सघनित जलकण ही हमें बादलों के रूप में दिखलाई देते हैं। किन्तु वर्षा के लिये यह आवश्यक है कि छोटे-छोटे असंख्य जलकण सम्मिलन द्वारा कुछ बड़ी बूँदों में परिवर्तित हो जाएँ। आर्द्रताग्राही केन्द्रक इसी सम्मेलन की सुविधा प्रदान करके बादलों को वर्षा करने पर बाध्य करते हैं। मेघ राशियों में सम्मिलन जितना तीव्र होगा वर्षा उतनी शीघ्र और तेज होगी।

1959 बादलों को सीड करने की अनेक विधियां प्रयोग में लाई जा चुकी हैं। शुष्क बर्फ अर्थात् ठोस कार्बन डाइ आक्साइड के टुकड़े बादलों में बिखेर देना इस कड़ी का पहला प्रयास था। सिल्वर आयोडाइड के कण विमानों द्वारा मेघ राशियों में छिड़कने का सफल प्रयोग हो चुका है। सिल्वर आयोडाइड भूमितल पर स्थित जनरेटरों द्वारा भी धुएँ के रूप में बादलों में पहुँचाए जा सकते हैं। अमेरिका और आस्ट्रेलिया में नमक के

कण और जल की बडी बूँदो द्वारा आधार मे 300 मीटर की ऊँचाई से बादलो को सीड करने का प्रयोग हो चुका है ।

भारत मे पहला प्रयोग सन 1952 मे किया गया । सिल्वर आयोडाइड और गनपाउडर युक्त एक बाक्स को गुब्बारे द्वारा बादलो मे भेजा गया, ताकि बादलो मे पहुँचते ही गनपाउडर के विस्फोट से बाक्स फट जाए। उष्ण बादलो के ऊपर शीतल जल का छिडकाव भी किया गया । सन् 1954 और 55 म दिल्ली और राजस्थान के बीच स्थित बादलो को नमक के घोल मे सीड करने का प्रयोग किया गया ।

इन प्रयोगो के परिणाम उत्साहवधक तो हैं किन्तु इनके आर्थिक महत्त्व को आकलित करने के लिए यह जानकारी आवश्यक है कि किस सीड किए गए बादल से सामान्यावस्था की अपेक्षा कितनी अधिक और किस स्थान पर वर्षा प्राप्त हुई । सीडिंग का बिल्कुल सही सही परिणाम ज्ञात करना हमारे नियन्त्रण के बाहर होने के कारण, कठिन काय है किन्तु इस सन्दभ मे प्रयोग होने आवश्यक हैं ।

5 92 वायुमण्डल विज्ञान के अध्ययन से हमे विभिन्न प्रकार के बादलो की सरचना और प्रकृति की पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो चुकी है । अत सीड करने के लिये उपयुक्त बादलो का चनाव एक सरल काय है । शीतोष्ण कटिब धो म, जहाँ हिमाक स्तर नीचे होने के कारण बादलो के ऊपरी भाग 0°C से 15–20°C नीचे तक पहुच जाते ह, शुद्ध हिम कणो द्वारा सीड किए जाने पर बजरान प्रक्रम के अनुसार शीघ्र वर्षा दे सकते हैं । भारत तथा अन्य उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो मे जहाँ बादल साधा णत हिमाक स्तर से नीचे रह जाते और पर्याप्त ऊष्ण रहते हैं, जलकणो, नमक या सिल्वर आयोडाइड द्वारा अच्छी तरह सीड किए जा सकते हैं । साधारणत विकासशील कपासी मेघो को सीड करना अधिक लाभप्रद देखा गया है ।

यह स्पष्ट है कि कृत्रिम वर्षा प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक रूप से बादलो का होना अनिवाय है । अत कृत्रिम विधियो से एक स्थान पर वर्षा करा लेने का अथ है किसी दूसरे स्थान को उस वर्षा से वचित कर देना । इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय झगडो की एक और समस्या खडी हो सकती है । इसके अलावा एक स्थान पर सीड किया गया बादल हवाओ के साथ किसी अन्य स्थान पर जाकर बरस सकता है ।

कुल मिलाकर, अभी तक अमरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, अफ्रीका, भारत तथा यूरोप के अनेक देशो मे जो प्रयोग कृत्रिम वर्षा के लिए किए गए है, उनकी तकनीकी सफलता तो साबित हुई किन्तु आर्थिक पहलू अभी तक अज्ञात है, अत सन्देहपूर्ण है ।

सारिणी

मेघ प्रकारो का संक्षिप्त परिचय

मेघ प्रकार	अवयव	बनावट	आधार की ऊँचाई	ऊर्ध्व विस्तार	वृद्धि तथा ह्रास
1 पक्षाभ	हिमकण	विच्छिन्न	6 किमी से ऊपर	—	Cs मे वृद्धि कर सकती है या Cb मे मिल जाती है
2 पक्षाभ स्तरी	हिमकण	सतत	6 किमी से ऊपर	बहुत पतला	वृद्धि As तथा ह्रास की व्यवस्था मे समाप्त हो जाती है।
3 पक्षाभ कपासी	हिमकण तथा अतिशीतल जलकण	विच्छिन्न रोल मेघराशियाँ	6 किमी से ऊपर	—	Cs मे मिल सकता है।
4 मध्यस्तरी	हिमकण तथा जलकण	सतत	2 से 5 किमी	बहुत थोड़ा	सघन As मे
5 मध्य कपासी	जलकण	रोल मेघराशि	2 से 5 किमी	साधारणत पतला	वृद्धि Sc मे तथा ह्रास Cc मे
6 कपासी	जलकण	ऊर्ध्व विस्तार युक्त	300 से 1600 मीटर	6 से 9 किमी	वृद्धि Cb मे
7 कपासी वर्षी	निम्नतहो मे जलकण तथा ऊर्ध्वतहो मे अति शीतल जल एव हिमकण	5 स 15 वग किमी व्यास	200 से 1500 मीटर	10 किमी से ऊपर	और अधिक विकसित हो सकता है।
8 स्तरी कपासी	जलकण	सतत रोल मेघराशियाँ	200 से 1000 मीटर	100 से 1000 मीटर	वृद्धि Cu या Cb मे
9 स्तरी	जलकण	सतत	भूमितल से 600 मीटर	50 से 300 मीटर	सघन होता है।

6

वायुमण्डल की गति

(MOTION OF THE ATMOSPHERE)

6 10 भूमिका

न्यूटन के नियमानुसार, किसी जड पदार्थ को गति मे लाने के लिए बाहरी बल की आवश्यकता होती है। वायुराशियाँ भी कुछ बाह्य बलो के अधीन गतिशील रहती हैं। इन बलों का मूल स्रोत सूर्य की ऊष्मा तथा पृथ्वी की घूर्णन गति है। इनकी विस्तृत परिभाषा अगले अनुच्छेदो मे दी गई है।

वायुराशियो की क्षैतिज गति हवा (Wind) तथा ऊर्ध्वाधर गति वायु धारा (Air Current) कहलाती है। हवा का बहाव समतल न होकर, साधारणत उतार-चढाव वाला होता है, जिसे विक्षुब्ध प्रवाह (Turbulent flow) कहा जाता है। यो तो उपयुक्त बलों के अधीन भूमण्डलीय पैमाने पर कुछ विशाल वायु तरगें बहती हैं, जो ऋतुओ के साथ सशोधित होती रहती हैं, किन्तु अधिकाश हवाएँ द्वितीयक विक्षोभो तथा स्थानीय कारणो के फलस्वरूप छोटे पैमानों पर होती हैं। इन हवाओ की प्रकृति को यन्त्रो द्वारा लगातार उनके माप लेकर समझा जा सकता है।

सबसे छोटे पैमाने पर वायु गति का उदाहरण अणुओ की गति हो सकती है किन्तु इसके कारण और प्रभाव सामान्य वायुप्रवाह से बिलकुल अलग हैं। वायु की आणविक गति, सघटन द्वारा दाब और तापमान उत्पन्न कर सकती है किन्तु उसका मौसम पर कोई सीधा प्रभाव नहीं पडता। अत आणविक गतियो को वायु-राशियो के प्रवाह के अध्ययन में सम्मिलित करने का कोई औचित्य नहीं।

6 20 वायु-गति के कारक बल

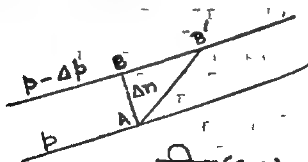
(1) पृथ्वी की सतह पर सौर विकिरणो की विभिन्नता के कारण, स्थान-स्थान पर वायुदाब मे अन्तर आ जाता है। यदि क स्थानो के एक समय पर लिए गए वायुदाब के माप मानचित्र पर अकित करके समदाब रेखाएँ खीचें, तो स्पष्ट दिखाई देगा कि एक तरफ को दाब कम होता जाता है और दूसरी तरफ को अधिक। दाब की यह ढाल, वायु गति के लिए एक बल उत्पन्न करती है, जिसे दाब प्रवणता बल (Pressure gradient force) कहते हैं। वायु गति के लिए यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बल है। यदि और बल न होते, तो हवा दाब के ढाल पर उसी प्रकार बहती, जैसे पानी सतह के ढाल पर बहता है, अर्थात् उच्चदाब से निम्नदाब की ओर।

(2) पृथ्वी अपने ध्रुवीय अक्ष पर 7.3×10^{-5} रेडियन/सैकंड के कोणिक वेग से, पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है। यह घूर्णन एक बल उत्पन्न करता है, जो सदा क्षैतिज वायुवेग या हवा के लम्बवत् कार्य करता है इसे भूघ्र्णावर्ती-बल या इसके आविष्कार के नाम पर कोरियालिस बल कहते हैं। लम्बवत् दिशा में होने के कारण कोरियालिस बल हवा की गति को नहीं बदल सकता। यह केवल हवा की दिशा में विक्षेप उत्पन्न करता है। इसी बल के कारण, हवा उत्तरी गोलार्द्ध में दाहिनी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में बायीं ओर विक्षेपित हो जाती हैं।

(3) लगभग 1 किलोमीटर ऊँचाई से नीचे की हवा पर पृथ्वी तल (जल या थल) का घर्षण बल भी प्रभावकारी होता है, जो अपनी प्रकृति के अनुसार सदा वायुगति के विपरीत दिशा में कार्य करता है। घर्षण बल की मात्रा सतह की रुक्षता पर निर्भर करती है तथा पृथ्वी तल पर सर्वाधिक होती है। जैसाकि बताया जाएगा दाब प्रवणता तथा कोरियालिस बलों के अधीन हवा, समदाब रेखाओं के समानान्तर बहती है। किंतु घर्षण बल न केवल इसकी गति कम कर देता है, बल्कि दिशान्तर भी इस प्रकार उत्पन्न कर देता है कि हवाएँ समदाब रेखाओं को 15 से 45 अंश के कोणों पर काटती हुई निम्नदाब की ओर बहती है।

बाह्य घर्षण के अतिरिक्त वायु तहों का आन्तरिक घर्षण भी जिसे विस्कासी बल (Viscous force) कहते है, वायुगति के विपरीत लगा रहता है। 1 किमी. से अधिक ऊंचाई पर भी, जहां बाह्य घर्षण प्रभावहीन हो जाता है, विस्कासी बल क्रियाशील रहता है। किन्तु यह अपेक्षाकृत नगण्य है। अतः अधिक ऊँचाइयों पर हवाएँ समदाब रेखाओं के समानान्तर बहती मानी जा सकती हैं।

(4) गुरुत्व का बल वायु की ऊर्ध्वाधर गति के लिए एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, किन्तु क्षैतिज प्रवाह के लिए इसका कोई महत्त्व नहीं।



चित्र (6·1)

क्षैतिज प्रवाह के लिए इन बलों के निम्नांकित सूत्र स्थापित किए जा सकते हैं

6.2.1 दाब प्रवणता

दूरी के प्रति दाब परिवर्तन की अधिकतम दर दाब प्रवणता कहलाती है।

मान लीजिए p, $p-\Delta p$ की

समदाब रेखाएँ (चित्र 6.1) में दी गई हैं। दोनों के बीच दाबान्तर $= \Delta p$,

$$\text{दाब परिवर्तन की दर} = \frac{\Delta p}{\text{समदाब रेखाओं के बीच की दूरी}}$$

बिन्दु A पर दाब प्रवणता = दाब परिवर्तन की अधिकतम दर

$$= \frac{\Delta p}{\text{समदाब रेखाओं के बीच की निम्नतम दूरी}}$$

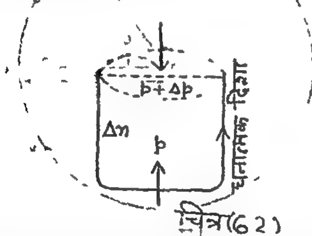
$$= \frac{\Delta p}{\text{समदाब रेखाओं के बीच की लम्बवत् दूरी}}$$

$$= \frac{\Delta p}{\Delta n}$$

अतः किसी बिन्दु पर दाब प्रवणता, उस बिन्दु के समदाब रेखा के, लम्बवत् दिशा में दाब परिवर्तन दर के बराबर होती है। दाब प्रवणता निम्न दाब से उच्च दाब की ओर नापी जाती है। अतः उपर्युक्त उदाहरण में दाब प्रवणता धनात्मक होगी।

6.22 दाब-प्रवणता बल

एक वायुराशि लीजिए जिसके क्षैतिज तलों पर दाब क्रमशः p और $p+\Delta p$ है। अतः तल में इकाई क्षेत्र पर लगने वाला बल $= \Delta p$, यह बल उच्च दाब से निम्नदाब की



चित्र (6.2)

ओर लगता है अतः दाब प्रवणता की दिशा के विपरीत है। यदि दाब प्रवणता की दिशा को धनात्मक माना जाए, तो तल के ऊपर लगने वाला कुल बल $= -A\Delta p$

जहाँ A तल का क्षेत्रफल है। ऋणात्मक चिह्न दाब प्रवणता की धनात्मक दिशा को ध्यान में रख कर लगाया गया है।

वायुराशि की मात्रा $= \rho A \Delta n$,

जहाँ ρ वायु का घनत्व तथा Δn दोनों क्षैतिज तलों के बीच की लम्बवत् दूरी है। इस वायु राशि की प्रति इकाई मात्रा पर लगने वाला बल ही दाब प्रवणता बल होगा।

$$\text{अतः प्रवणता बल} = -\frac{1}{\rho}\,\frac{\Delta p}{\Delta n}$$

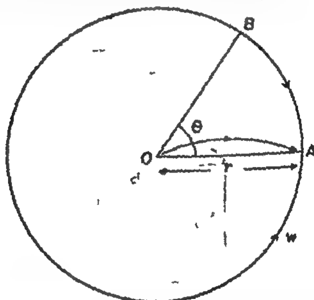
टिप्पणी यदि ΔZ ऊँचाई के अन्तर पर दाब में कमी $= \Delta p$,

$$\text{तो ऊर्ध्वाधर दाब प्रवणता बल} = \frac{\Delta p}{\Delta Z}$$

$$\text{तथा ऊर्ध्वाधर दाब प्रवणता बल} = -\frac{1}{\rho}\,\frac{\Delta p}{\Delta z}$$

6 23 कोरियालिस बल

पृथ्वी के घूर्णन प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए निम्नांकित प्रयोग पर विचार कीजिए। मान लीजिए, एक गोलाकार चबूतरा कुम्हार के चक्के की भाँति केन्द्र 0 लम्बवत् अक्ष पर वामावर्त (Anticlockwise) दिशा में घूम रहा है और इसका कोणीय वेग w है। केन्द्र 0 पर बैठा शिकारी बिन्दु A पर स्थित पक्षी को निशाना लगाकर गोली



चित्र 6 3

चलाता है। जब तक गोली वेग v से बिन्दु A तक पहुँचती है, पक्षी घूर्णन के कारण बि B पर आ जाता है। पक्षी का स्थानान्तरण वास्तविक है किन्तु केन्द्र पर बैठा शिकारी सापेक्ष पक्षी की स्थिति में कोई अन्तर नहीं है। अर्थात् शिकारी अपनी दृष्टि में पक्षी मूल स्थान पर ही स्थिर देखेगा और यही समझेगा कि किसी बल के द्वारा उसकी गोली दाहिनी ओर विक्षेपित कर दी गई है जिसके कारण उसका निशाना BA दूरी से चूक गया

यदि चबूतरे का घूर्णन दक्षिणावर्त (Clockwise) है तो शिकारी को गोली का विक्षेप बायीं ओर प्रतीत होगा।

यही विक्षेपक बल जो किसी सीमा तक काल्पनिक है, कोरियालिस बल कहलाता है। गति के सामान्य नियमों के आधार पर इसका परिमाप ज्ञात किया जा सकता है। इस प्रकार

मान लीजिए विक्षेप का त्वरण f और समय t है।

$$\frac{1}{2}ft^2 = AB = r\Theta = rwt$$

$$t = 2rw/f$$

गोली द्वारा दूरी OA तय करने का समय = पक्षी द्वारा दूरी AB तय करने का समय

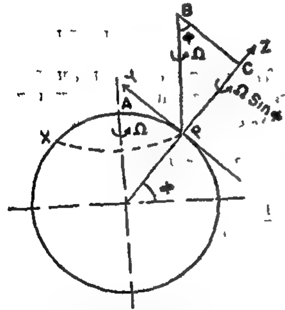
$$\frac{r}{v} = \frac{2rw}{f}$$

or $f = 2vw$

अर्थात् इकाई मात्र पर लगा कोरियालिस बल = 2 × घूर्णन का कोणिक वेग × गोली का रैखिक वेग।

6 24-पृथ्वी के अक्षांश ϕ पर कोई बिन्दु P लीजिए। इस बिन्दु से गुजरने वाले अक्षांश और देशान्तर रेखाओं को क्रमश X तथा Y अक्ष मान लिया जाए, तथा ऊर्ध्वाधर को z – अक्ष, तो

OA रेखा के चारों ओर पृथ्वी के घूर्णन (Ω) की दिशा OA अथवा PB है।



चित्र 6 4

बिन्दु P, पर लिए गए इकाई क्षेत्र को क्षैतिज, दिशाओ (X – Y तल) मे घूर्णित करने वाला वेग, Ω_z होगा, जो Ω का z, दिशा के अवयव है। इसकी दिशा बिन्दु P पर वामावर्त होगी।

चित्र 6 4 से $\angle PBC = \phi$,

$\Omega_z = \Omega \sin\phi$

बिन्दु P के प्रति इकाई मात्रा पर क्षतिज दिशा मे लगने वाला कोरियालिस बल,

$C = 2\Omega \sin\phi, V$,
जहाँ V वायु का वेग है।

6 25 स्पष्ट है कि अक्षांशो (ϕ) के साथ C का मान बढ़ता जाता है।

विषुवत् रेखा ($\phi = 0$) पर, $C = 0$

30° अक्षांश पर, $C = \Omega V$

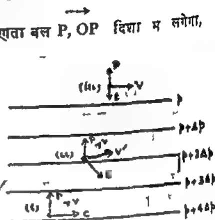
तथा उत्तरी ध्रुव ($\phi = 90°$) पर, $C = 2\Omega V$

दक्षिणी गोलार्द्ध ϕ का मान ऋणात्मक होने से C का मान ऋणात्मक हो जाएगा जिससे स्पष्ट है कि इसकी विक्षेपण प्रवृत्ति उत्तरी गोलार्द्ध से उल्टी होगी।

6 30 भूव्यावर्ती-हवा (Geostrophic Wind)

यदि घर्षण बल को नगण्य कर दिया जाए, तो वायु का क्षैतिज प्रवाह केवल दाब प्रवणता तथा कोरियालिस बलो के अधीन होता है।

इकाई मात्रा की वायुराशि पर दाब प्रवणता बल P, $\overrightarrow{OP}$ दिशा म लगेगा, जिससे वायुराशि $\overrightarrow{OP}$ दिशा मे गति करेगी। कोरियालिस बल C तुरंत वायुगति के लम्बवत् दाहिनी ओर $\overrightarrow{OC}$ दिशा मे लागू हो जाएगा। इससे गति की दिशा दोनो के परिणामी $\overrightarrow{OV}$ की ओर हो जाएगी, स्थिति (1)। किन्तु यह स्थिति सतुलन की



चित्र (6 5)

नही है, क्योकि अब C पुन $\overrightarrow{OV}$ के लम्बवत् हो जाएगा, जिससे परिणामी हवा बल P से अधिक कोण बनाने लगेगी, स्थिति (2)। पूर्णत सतुलित स्थिति (3) म दिखाई गई है। इस दिशा मे P और C एक दूसरे के ठीक विपरीत तथा बराबर हैं और हवा समदाब रेखाओं के समानान्तर स्थिर गति V से बह रही है। यह सतुलित हवा भूव्यावर्ती हवा कहलाती है। यदि भूव्यावर्ती हवा की गति V_g हो तो सतुलन समीकरण के अनुसार

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n}+2V_g\,\Omega\sin\phi=0$$

$$V_g=\frac{1}{2\rho\,\Omega\,\sin\,\phi}\frac{\Delta p}{\Delta n}$$

$$=\frac{1}{f\rho}\frac{\Delta}{\Delta n},\qquad \text{जहा } f=2\Omega\,\sin\phi$$

f, कोरियालिस प्राचल कहलाता है।

6 31 बायज बेलट का नियम

चित्र 6 5 की स्थिति (3) मे निम्नांकित नियम स्पष्ट है, जो प्रेक्षणो की कसौटा पर भी खरे उतरत हैं।

जिस ओर को हवा जा रही हो, उधर को मुँह करके प्रेक्षक यदि खड़ा हो, तो निम्न दाब का क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध में उसके बायें हाथ की ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में उसके दाहिने हाथ की ओर पड़ेगा।

यह नियम बायज बेलट का नियम कहलाता है तथा प्रायोगिक मौसम पूर्वानुमान में काफी उपयोगी सिद्ध होता है।

6 32 किसी स्थान के मौसम मानचित्र म समदाब रेखाएँ साधारणत 2 या 4 मिलीबार के अन्तराल से खींची जाती हैं। अत वहाँ के लिए ρ, ϕ, और Ω के साथ Δp भी स्थिरांक हैं।

$$\text{अत } V_g \propto \frac{1}{\Delta n}$$

अर्थात् भूम्यावर्ती हवा की तीव्रता समदाब रेखाओं के बीच की दूरी के व्युत्क्रमानुपाती होती है। सघन समदाब रेखाओं के क्षेत्र म वायु गति तीव्र तथा विरल रेखाओं के क्षेत्र मे वायु गति धीमी होगी।

इसके अतिरिक्त V_g $\sin\phi$ के भी व्युत्क्रमानुपाती होती है, अर्थात् जैसे जैसे निम्न अक्षांशों की ओर बढ़ेंगे, यदि दाब प्रवणता समान रहे तो वायुगति तेज होती जाएगी, विषुवत् रेखा पर $\sin\phi = 0$ अत यहाँ V_g का मान अनन्त हो जाना चाहिए। किन्तु यह प्रायोगिक रूप से असम्भव है। इस प्रकार, भूम्यावर्ती हवा का सूत्र विषुवत् रेखा तथा उसके बहुत निकट के स्थानों पर लागू नही हो पाता। वास्तव मे उष्ण कटिबंधीय अक्षांशों के बाद ही भूम्यावर्ती हवा का सूत्र अधिक उपयोगी हुआ करता है।

यदि दाब प्रवणता हर अक्षांश पर समान मान ली जाए, तो अक्षांशों के प्रति भूम्यावर्ती हवाओं का परिवर्तन निम्न तालिका द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

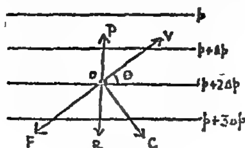
अक्षांश (अंश)	90	75	60	45	30	15
भूम्यावर्ती हवा (नाट)	21	22	25	39	40	82

किन्तु वास्तव में उष्ण कटिबंधों म इतनी तेज गति की हवा केवल अवदाबों तथा चक्रवातों मे ही मिलती है, सामान्य दशा मे नही। इसका कारण यही है कि निम्न अक्षांशों मे दाब प्रवणता बहुत कम होती है।

6 33 घर्षण का प्रभाव

घर्षण का बल (F) वायु दिशा के विपरीत काम करता है। इस बल की उपस्थिति म हवा समदाब रेखाओं के समानान्तर होने से पूर्व ही चित्र (6 6) की स्थिति मे सन्तुलित हो

जाती है। इस स्थिति में C और F का परिणामी बल R, P के बराबर और विपरीत



चित्र (6 6)

दिशा में आ जाता है। स्पष्ट है कि सन्तुलन की अवस्था में वायुदिशा $\vec{OV}$, समदाब रेखाओं से θ कोण बनाएगी। इस प्रकार घर्षण बल, भूव्यावर्ती प्रवाह को क्रास समदाबरेखीय बना देता है।

थल सतह पर घर्षण बल अधिक प्रभावकारी होता है, जहाँ हवा समदाब रेखाओं से 30° से 45° अंश तक का कोण बनाती हुई बहती है। सागर तलो पर रूक्षता काफी कम होती है। यहाँ वायु दिशा समदाब रेखाओं से 15° से कम कोण पर ही झुकी रहती है।

दाब प्रणालियाँ जब सागरीय क्षेत्रो से थल भाग पर पहुँचती हैं, तो साधारणत वे कमजोर होती जाती है, अर्थात् उनमे 'भराव' आता जाता है। इसका एक कारण थल सतह का अधिक घर्षण प्रभाव भी है, जो वायु तीव्रता को कम करने की प्रवृत्ति रखता है। एक अनुमान के अनुसार, सागरीय तल का घर्षण, भूव्यावर्ती प्रवाह की गति को एक तिहाई तथा स्थलीय तल का घर्षण आधा कम कर देने मे सक्षम है।

6 34 अभूव्यावर्ती हवा (Ageostrophic Wind)

भूव्यावर्ती हवा अचर गति की एक परिशुद्ध (Precise) हवा है, जो दाब प्रवणता और कोरियालिस बलो के ठीक सन्तुलित होने पर, समदाब रेखाओं के समानान्तर स्थापित होती है, अत यह आवश्यक है कि समदाब रेखाएँ आपस मे समानान्तर हो। किन्तु वास्तविक मौसम मानचित्रो मे ये रेखाएँ अनियमित वक्रताओ से युक्त होती हैं। अत वास्तविक हवाएँ पूर्णरूप से भूव्यावर्ती नही होती। अनियमित समदाब रेखाओं के अलावा असमतल वायु प्रवाह तथा स्थानीय कारणो से दाब प्रवणता मे समय के अनुसार तीव्र उतार-चढाव भी बलो मे सन्तुलन स्थापित होने नहीं देते और वास्तविक हवा को भूव्यावर्ती की शर्तों से दूर कर देते हैं।

निम्न वायु तहो मे घर्षण का बल सबसे प्रभावशाली तत्त्व है, जो भूव्यावर्ती दशाओं से वास्तविक हवाओ को विक्षेपित करता है। यही कारण है कि जैसे-जैसे ऊपर जाते हैं, घर्षण का प्रभाव कम होने से वास्तविक हवाएँ भूव्यावर्ती के अधिक निकट होती जाती हैं और प्रायोगिक उपयोगो के लिए 1 किमी से ऊपर की हवा बहुधा भूव्यावर्ती मान ली जाती है।

वास्तविकता से दूर होने पर भी भूव्यावर्ती हवाओ की धारणा महत्त्वपूर्ण है। इसे एक औसत क्षैतिज हवा की तरह समझा जा सकता है जिससे ऊपर नीचे वास्तविक हवा उच्चावचन करती है।

अत वास्तविक हवा = भूव्यावर्ती हवा + भूव्यावर्ती से विक्षेप । मान लीजिए X और Y दिशाओ में वास्तविक हवाएँ क्रमश u और v तथा भूव्यावर्ती हवाएँ क्रमश u_g और v_g हैं । उपर्युक्त समीकरण को गणितीय रूप मे इस प्रकार लिखा जा सकता है ।

$$u = u_g + u'$$

तथा $$v = v_g + v'$$

या $$u' = u - u_g \text{ और } v' = v - v_g$$

u′ और v′ क्रमश X और Y दिशाओ मे अभूव्यावर्ती हवाएँ कहलाती हैं, जो वास्तविक हवा का भूव्यावर्ती सन्निकटन (Approximation) से विचलन प्रदर्शित करती है । u_g और v_g का मान निम्न सूत्रो द्वारा दिया जा सकता है

$$u_g = \frac{1}{f\rho} \frac{\Delta p}{\Delta x} \quad (1)$$

और $$v_g = -\frac{1}{f\rho} \frac{\Delta p}{\Delta y} \quad (ii)$$

समीकरण (2) मे ऋण चिह्न कारण यह है कि Y − दिशा (देशान्तर) में p का मान घटता जाता है । अत दाब प्रवणता $\frac{\Delta p}{\Delta y}$, Y − अक्ष की ऋणात्मक दिशा मे धनात्मक होता है ।

6 35 भूव्यावर्ती हवा का एक और सूत्र

ऊपरी वायुमण्डल के मौसम विश्लेषण मे समदाब रेखीय मानचित्रो की अपेक्षा स्थिर दाब मानचित्रो का प्रयोग अधिक उपयोगी होता है । इसमे विभिन्न स्थानो पर निश्चित दाब स्तर (साधारणत 850, 700, 500, 200 या 100 मिलीबार) की ऊँचाइयो (साधारणत भूविभव मीटर की इकाई मे) मे अंकित कर देते है । यह चार्ट समदाब पृष्ठ के उतार-चढाव का चित्र प्रस्तुत करता है ।

दाब की समरेखाओ की जगह ऊँचाइयो की समरेखाएँ खींचकर इन स्थिर दाब मानचित्रो का विश्लेषण किया जाता है । इन रेखाओ को समऊँचाई रेखाएँ या कन्टूर रेखाएँ कहते हैं ।

मान लीजिए, दो समदाब पृष्ठों के बीच दाबान्तर Δp तथा किसी स्थान पर सगत ऊँचाई का अन्तर Δz है तो,

$$\Delta p = -g\rho\Delta z$$

Δp का यह मान भूव्यावर्ती हवा के समीकरणो म रखने से उस स्थान पर

$$u_g = -\frac{g}{f} \frac{\Delta z}{\Delta x} \text{ तथा}$$

$$V_x = \frac{g}{f} \frac{\Delta z}{\Delta y}$$

जहाँ $\frac{\Delta z}{\Delta x}$ तथा $\frac{\Delta z}{\Delta y}$ क्रमश X और Y दिशाओं मे कन्टूर प्रवणता है।

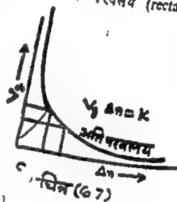
स्पष्ट है कि भूव्यावर्ती बल, कन्टूर प्रवणता के समानुपाती है। यह सूत्र वायु घनत्व के पक्ष से मुक्त है।

6 36 भूव्यावर्ती पैमाना (Geostrophic scale)

यदि घनत्व का पक्ष छोड दिया जाए तो किसी स्थान पर भूव्यावर्ती हवा समदाब रेखाओ के बीच की लम्बवत् दूरी (Δn) के व्युत्क्रमानुपाती होती है।

अर्थात् $Vg\Delta n = K$ (स्थिराक)

अत Δn और Vg का ग्राफ एक आयातकार अति परवलय (rectangular hyperbola) होगा (चित्र 6 7)। इस ग्राफ से Δn के किसी मान के लिये Vg का मान ज्ञात किया जा सकता है। अत विभिन्न दूरियो पर वायु गति का मान अकित करके एक पैमाना इस प्रकार का तैयार किया जा सकता है कि दो समदाब रेखाओ के बीच जब पैमाने को रखें तो उनकी दूरी के सगति वायु गति का मान पढा जा सके। इस पैमाने को भूव्यावर्ती पैमाना कहा जाता है।



चित्र (6 7)

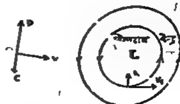
6 40 प्रवणता हवा (Gradient Wind)

यदि दाब प्रवणता (P) और कोरियालिस बल (C) एक-दूसरे को ठीक सन्तुलित न कर सकें, तो दो स्थितियाँ सम्भव हैं

(i) $P>C$, और (ii) $P<C$

यदि P और C का परिणामी बल R है, तो P और C का सयुक्त प्रभाव वायु प्रवाह V पर वही होगा, जो अकेले बल R का है। R वायु प्रवाह के लम्बवत् लगता है अत केन्द्राभिसारी बल की तरह कार्य करके वायु प्रवाह का पथ वृत्ताकार कर देगा।

1 पहली स्थिति मे R दाब प्रवणता बल की दिशा मे V के लम्बवत् रहेगा। अत वायु प्रवाह वामावर्त दिशा मे वृत्ताकार हो जाएगा, जिसमे R केन्द्राभिसारी बल की तरह काय



चित्र (6 8)

करेगा । यह वृत्ताकार वायु प्रवाह **चक्रवाती प्रवणता हवा** कहलाती है । इसमे हवाएँ निम्न दाब केन्द्र के चारो ओर घडी की सुइयो के विपरीत (वामावर्त) दिशा मे बहती [redacted] ।

यदि चक्रवाती प्रवणता हवा का वेग V_G तथा वत्ताकार प्रवाह पथ की त्रिज्या r मान ली जाए, तो गति का समीकरण इस प्रकार लिखा जा सकेगा —

$$R = \text{केन्द्राभिसारी बल}$$

$$\text{या} -\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n} + fV_G = -\frac{V_G^2}{r}, \quad (1)$$

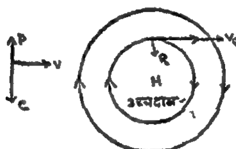
केन्द्राभिसारी बल के साथ ऋणात्मक चिन्ह, इसी कारण लगा है कि दाब प्रवणता बल (ऋणात्मक) कोरियालिस बल से अधिक है ।

(2) दूसरी स्थिति मे जब $C > P$, तो परिणामी R, दाब प्रवणता बल के विपरीत, अर्थात् उच्चदाब की ओर V के लम्बवत् लगता है । यह उच्चदाब के चारो ओर दक्षिणावर्त दिशा मे वत्ताकार गति उत्पन्न कर देगा । यह वृत्ताकार वायु प्रवाह **प्रतिचक्रवाती प्रवणता हवा** कहलाती है ।

प्रति चक्रवाती प्रवणता हवा का समीकरण इस प्रकार होगा

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n} \quad fV_G - \frac{T_G^2}{r},$$

जहाँ V_G प्रतिचक्रवाती प्रवणता हवा का वेग है ।

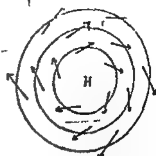


चित्र (6 9)

6 41 स्पष्ट है कि चक्रवाती और प्रतिचक्रवाती हवा मे प्रवाह-पथ के समानांतर समदाब रेखाएँ भी वृत्ताकार हो जाती हैं । चक्रवाती प्रवाह मे समदाब रेखाएँ, निम्नदाब क्षेत्र को घेरती हैं, जिसमे केन्द्र पर दाब निम्नतम होता है । प्रतिचक्रवाती प्रवाह मे उच्चदाब केन्द्र के चारो ओर वृत्ताकार रूप से घेरती हैं । प्रवणता हवाएँ इन रेखाओ के समानान्तर बायज बैलट नियम का पालन करती हुई बहती हैं ।

6 42 प्रवणता वायु प्रवाह की दिशा दक्षिणी गोलार्द्ध मे ठीक विपरीत हो जाती है । अर्थात् चक्रवाती प्रवाह मे निम्न दाब केन्द्र के चारो ओर दक्षिणवर्त दिशा मे हवा बहती है तथा प्रतिचक्रवाती प्रवाह मे उच्चदाब केन्द्र के चारो ओर वामावत दिशा मे ।

6 43 अनुच्छेद 6 33 के अनुसार, घर्षण के प्रभाव से प्रवणता हवाओं का प्रवाह-पथ, समदाब रेखाओ के समानान्तर न होकर क्रास समदाबरेखीय हो जाता है। चक्रवाती दिशा मे हवा, समदाब रेखाओ को काटती हुई निम्न दाब केन्द्र की ओर अग्रसर होती है, जिससे केन्द्र पर अभिसरण उत्पन्न होता है—चित्र 6 10 स्थिति (1)। प्रतिचक्रवाती दशा मे हवा समदाब रेखाओ को काटती हुई उच्चदाब केन्द्र से बाहर निकलने की प्रवत्ति रखती है। अत केन्द्र पर अपसरण उत्पन्न करती है—चित्र (6 10), स्थिति (2)।



स्थिति (1)
(चित्र 6 10)

6 44 भूव्यावर्ती तथा प्रवणता हवा मे सम्बन्ध

प्रवणता हवा का समीकरण निम्नांकित प्रकार से लिखा जा सकता है

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n}+fV_G=\frac{V_G^2}{r} \qquad (i)$$

जहाँ r का मान चक्रवाती प्रवाह के लिए ऋणात्मक तथा प्रतिचक्रवाती प्रवाह के लिए धनात्मक होगा।

भूव्यावर्ती हवा का समीकरण,

$$-\frac{1}{\rho}\frac{\Delta p}{\Delta n}+fV_g=0 \qquad (ii)$$

समीकरण (i) और (ii) को मिलाने से

$$-fV_g+fVG=\frac{V_G^2}{r}$$

या $V_g\left(\frac{1}{V_G^2}\right)-\frac{1}{V_G}+\frac{1}{rf}=0$

या $$\frac{1}{V_G}=\frac{1\pm\sqrt{1-\frac{4V_g}{rf}}}{2V_G}$$

अत $$V_G=\frac{2y_g}{1\pm\sqrt{1-\frac{4V_g}{rf}}}$$

यदि $r=\infty$ तो V_G और V_g का मान बराबर होना चाहिए, क्योंकि अनन्त त्रिज्या का वृत्त सीधी रेखा ही हो सकती है। यह शर्त केवल + चिह्न द्वारा सही होती है।

$$\text{अत}\quad V_G = \frac{2V_G}{1+\sqrt{1-\frac{4V_g}{rf}}} \qquad \text{(iii)}$$

समीकरण (iii) मे यदि r का मान ऋणात्मक रखा जाए, तो हर (Denominator) दो या दो से अधिक हो जाएगा और V_G का मान V_g से कम होगा।

अत चक्रवाती प्रवणता हवा $\leqslant$ भूव्यावर्ती हवा।

समीकरण (iii) मे r, का मान धनात्मक रहने से हर का मान 2 या 2 से कम ही रहेगा इस दशा मे V_G का मान V_g से अधिक होगा।

अत प्रतिचक्रवाती प्रवणता हवा, $>$ भूव्यावर्ती हवा।

इस प्रकार निम्नांकित नियम सिद्ध हुआ।

V_G प्रतिचक्र $> V_g > V_G$ चक्र

6 45 V_G का मान अधिकतम, तब होगा जब,

$$1-\frac{4V_g}{fr}=0 \qquad \text{(iv)}$$

अर्थात् $\quad 4V_g = fr$

और इस शर्त के पूरा होने पर, समीकरण (iii) से V_G का अधिकतम मान $= 2V_g$ इस प्रकार प्रतिचक्रवाती हवा (V_G) का मान भूव्यावर्ती से अधिक होता है, जो अधिक से अधिक भूव्यावर्ती हवा के दुगने के बराबर हो सकता है।

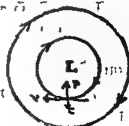
6 46 साइक्लोस्ट्राफिक प्रवाह (Cyclostrophic Flow)

विषुवत् रेखा के आसपास ϕ का मान कम होने के कारण, कोरियालिस बल $2\Omega V \sin\phi$ का मान नगण्य हो जाता है। इस दशा मे दाब प्रवणता बल P पूर्णत केन्द्राभिसारी बल की तरह काय करता है, जिसमे प्रवाह पथ निम्न दाब केन्द्र के चारो ओर वत्ताकार बन जाता है। स्पष्टत यह प्रवाह विरोधी बल C के हट जाने के कारण चक्रवाती प्रवणता प्रवाह की अपेक्षा अधिक तीव्र होगा।

इस चक्रवाती प्रवाह को साइक्लोस्ट्राफिक प्रवाह कहते हैं। उष्ण कटिबन्धीय चक्रवाती तूफान तथा टोरनैडो मे दाब प्रवणता बल इतना शक्तिशाली होता है कि अन्य सभी विरोधी बल नगण्य हो जाते है।

6 47 बायज-बैलट नियम का उल्लघन

साधारणत पृथ्वी पर हवा इस नियम के अनुसार ही बहती है। किन्तु कभी-कभी बहुत छोटे पैमाने की स्थानीय हवाएँ इन नियमो का उल्लघन भी करती हैं। इसका एक उदाहरण, खुले स्थानो पर गर्मियो मे उठने वाले धूलभरे बवडर (Dust devil) हैं। बवडर वास्तव मे निम्नदाब केन्द्र के चारो ओर एक वत्ताकार प्रवाह है। किन्तु वास्तविक प्रेक्षणो से यह प्रवाह, चक्रवाती और प्रतिचक्रवाती दोनो प्रकार का पाया जाता है।



चित्र (6 n)

अत मुख्य बवंडर, जो निम्न दाब केन्द्र के चारो ओर घड़ी की सुइयों की दिशा में (प्रतिचक्रवाती) वायु प्रवाह रखते हैं, स्पष्ट रूप से बायज बैलट नियम का उल्लंघन करते हैं।

6.50 हवाओं का ऊर्ध्वाधर चलन

साधारणत अधिक तापमान वाले क्षेत्र में भूमि तल पर निम्नदाब तथा उच्चतर स्तर पर उच्चदाब क्षेत्र स्थापित हो जाता है। इसी प्रकार, कम तापमान के क्षेत्र में नीचे उच्चदाब तथा ऊपर निम्न दाब बन जाता है।

जल स्थैतिकी समीकरण

$$\frac{\Delta p}{\Delta z} = -g\rho = -\frac{pg}{RT},$$

से स्पष्ट है कि ऊँचाई के साथ दाब की परिवर्तन दर औसत तापमान (T) के व्युत्क्रमानुपाती होती है। तापमान जितना अधिक होगा, ऊँचाई के साथ दाब परिवर्तन उतना ही धीमा होगा। वायुमण्डल की निचली तहों का तापमान भूमध्य रेखा पर ध्रुवों की अपेक्षा अधिक होता है। फलत ध्रुवों पर ऊँचाई के साथ दाब अपेक्षाकृत तेजी से घटता है। इस प्रकार विषुवत् रेखा से ध्रुवों की ओर एक रेखांशिक (Meridional) दाब प्रवणता स्थापित होती है जो ऊँचाई के साथ लगभग 10 से 12 किमी तक तीव्रतर होती जाती है। फलस्वरूप पछुवा हवाएँ ऊँचाई के साथ तीव्रतर होती जाती हैं।

उत्तरी गोलार्द्ध तल पर जिन क्षेत्रों की दाब प्रवणता की दिशा उत्तर से दक्षिण (निम्न अक्षांशों) की ओर है, पृथ्वी तल पर वहाँ पूर्वी हवाएँ चलती हैं। जैसे, उपउष्णकटिब ध्रीय उच्चदाब तथा विषुवत् रेखीय निम्न दाब के बीच और ध्रुवीय उच्चदाब तथा उपध्रुवीय निम्नदाब के बीच। चूँकि, ऊँचाई के साथ दाब प्रवणता की प्रवृत्ति निम्न से उच्च अक्षांशों की ओर होती जाती है, अत पूर्वी हवाएँ ऊँचाई के साथ घटती जाती हैं तथा कुछ ऊँचाई के बाद पश्चिमी हवाओं में बदल जाती हैं।

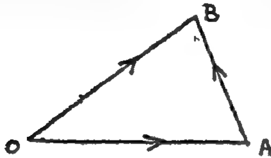
पूर्वी हवाओं के ऊँचाई के साथ बढ़ने का एकमात्र उदाहरण भारतीय उपमहाद्वीप और सागरों पर (20° उ अक्षांश से नीचे) मानसून ऋतु (जून से सितम्बर) का पूर्वी प्रवाह है जो लगभग 9 किमी से ऊपर पूर्वी जेट धारा स्थापित करती है।

पश्चिमी हवाओं की ऊँचाई के साथ वृद्धि लगभग क्षोभ सीमा तक पाई जाती है। सर्दियों में जब रेखांशिक ताप प्रवणता अधिक तीव्र होती है, यह वृद्धि स्थिर मण्डल में भी काफी ऊँचाई तक जारी रहती है। किन्तु साधारणत स्थिर मण्डल की निम्नतहों में रेखांशिक ताप प्रवणता उल्टी हो जाती है, अर्थात् ध्रुवों पर उच्च तथा विषुवत् रेखा पर निम्न तापमान क्षेत्र स्थापित हो जाता है।

सर्दियों में मध्य अक्षांशों में लगभग 30 किमी की ऊँचाई तक लगभग 60 किमी प्रति घण्टा की पश्चिमी हवाएँ मिलती हैं। किन्तु गर्मियों में 18 किमी के बाद पूर्वी हवाएँ स्थापित हो जाती हैं जो ऊँचाई के साथ बढ़ती हैं और 30 किमी के आसपास 70–80 किमी प्रति घण्टा की गति तक पहुँच जाती हैं।

6 51 ताप हवा (Thermal Wind)

किसी वायु तह के ऊपरी और निचले स्तर पर वायु-प्रवाह का अन्तर, तह की तापमान प्रवणता पर निर्भर करता है। क्षतिज तापमान प्रवणता के कारण ही ऊँचाई के साथ दाब प्रवणता तथा भूव्यावर्ती हवाओं में परिवर्तन होता है। हवाओं का परिवर्तन गति और दिशा, दोनों या किसी एक में भी हो सकता है। वायु दिशा का घड़ी की सुइयों की



चित्र (6 12)

दिशा में परिवर्तन दक्षिणावर्त (Veering) तथा विपरीत दिशा में परिवर्तन वामावर्त (Backing) कहलाता है। यह सोचा जा सकता है कि ऊपरी स्तर पर वायु वेग, दो अवयवों का परिणामी है

(1) निचले स्तर का वायु वेग।

(2) क्षतिज ताप-प्रवणता से उत्पन्न अवयव।

यह नापीय वायु अवयव ताप हवा कहलाती है। दो स्तरों के बीच ताप हवा ऊपरी तथा निचले स्तर के भूव्यावर्ती हवाओं के सदिश (Vector) अन्तर के बराबर होगी।

चित्र (6 12) में यदि दिशा और मान में निम्न और उच्च तलों पर भूव्यावर्ती वायु वेग क्रमश $\vec{OA}$ तथा $\vec{OB}$ द्वारा प्रदर्शित किए जाएँ तो इन तलों के बीच की ताप

हवा $= \vec{OB} - \vec{OA}$

$= \vec{AB}$

औसत तापमान का क्षैतिज ग्रावट जिस पर ताप हवा निर्भर करती है समताप रेखाओं द्वारा व्यक्त किया जाता है। अत ताप हवा समताप रेखाओं के समानान्तर इस प्रकार बहती है, कि उत्तरी गोलार्द्ध में निम्नताप क्षेत्र ताप हवा के बायीं ओर रहे तथा दक्षिणी गोलार्द्ध के दायीं ओर। ताप हवा की गति, ताप प्रवणता के समानुपाती होती है।

z_0 और z ऊँचाई स्तरों के बीच ताप हवा के X और Y अक्षों में अवयव (क्रमश u_T और v_T) निम्नांकित सूत्रों द्वारा ज्ञात किए जा सकते हैं

$$u_T = -\frac{g}{fT}\frac{\Delta T}{\Delta y}(z - z_0)$$

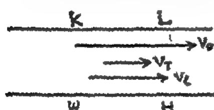
तथा $$v_T = \frac{g}{fT} \frac{\Delta T}{\Delta x} (z - z_0),$$

जहाँ T वायु-नद का औसत तापमान तथा $\frac{\Delta T}{\Delta x}$ और $\frac{\Delta T}{\Delta y}$ क्रमश X और Y दिशाओं मे तापमान की क्षैतिज प्रवणता है।

6 52 विभिन्न दशाओं मे ताप हवाओ की प्रवृति निम्नलिखित उदाहरणो से स्पष्ट की जा सकती है।

(1) जब निम्न तापमान (K) के साथ निम्न दाब (L) तथा उच्च तापमान (W) के साथ उच्च दाब क्षेत्र (H) सयुक्त हो।

वह दशा चित्र (6 13) मे दिखाई गई है। बायज बेलट नियम के अनुसार, निचले स्तर पर भूव्यावर्ती हवा V_l पछुआ होगी। ताप हवा (V_T) भी पछुआ ही है। फलत ऊँचाई के साथ वायु वेग बढ़ेगा और ऊपरी स्तर पर भूव्यावर्ती हवा (V_u) इसी दशा मे ($V_T + V_l$) गति से बहेगी।

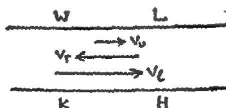


चित्र (6 13)

(2) जब निम्न तापमान के साथ उच्च दाब तथा उच्च तापमान के साथ निम्न दाब सयुक्त हो।

निचले स्तर पर हवा पछुआ होगी तथा ताप हवा पूर्वी। फलत V_u का मान ऊँचाई के साथ घटता जाएगा। अर्थात्

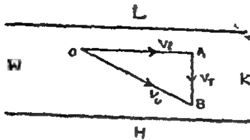
$$V_u = V_l - V_T$$



चित्र (6.14)

(3) जब हवा, समताप रेखाओं को काटते हुए उच्च तापमान (W) से निम्न तापमान (K) की ओर बह अर्थात जब गर्म हवा का अभिवहन होता हो।

इस दशा मे H, L, W और K की स्थितियाँ चित्र (6 15) मे दिखाई गई हैं।



चित्र (6 15)

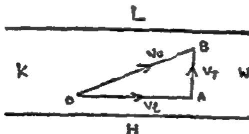
V_T की दशा चित्र के अनुसार होगी, जिसमे K ताप हवा के बायी ओर पड़ता है।

$$\vec{V_u} = \vec{V_l} + \vec{V_T}$$
$$= \vec{OB}$$

इस प्रकार ऊँचाई के साथ हवा दक्षिणावर्त दिशा मे घूमती जाती है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जब गर्म हवा का अभिवहन होता हो, तो हवा ऊँचाई के साथ दक्षिणावर्त घूमती है। दक्षिणी गोलार्द्ध मे इस अवस्था मे घुमाव वामावर्त होता है।

(4) जब ठंडी हवा का अभिवहन होता हो तो, अर्थात वायुप्रवाह समताप रेखाओं को काटते हुए K से W की ओर हो।

इस अवस्था मे $\vec{V_n}$ ($-\vec{OB}$) ऊँचाई के साथ वामावर्त दिशा मे घूमती जाती है।



चित्र (6 16)

दूसरे शब्दो मे ठंडी हवा के अभिवहन म हवा ऊँचाई के साथ बैक (back) करती है। इस स्थिति मे हवा दक्षिणी गोलार्द्ध मे दक्षिणावर्त दिशा मे घूमेगी।

6.53 दाब प्रणालियो का ऊँचाई के साथ परिवर्तन

ताप हवाओं की उपर्युक्त प्रवृत्तियो के कारण माध्य समुद्रतल की दाब प्रणालियाँ ऊँचाई के साथ परिवर्तित होती जाती हैं। इस विषय मे कुछ सामान्य नियम इस प्रकार हैं

(1) शीत कार का समुद्रतलीय निम्न दाब ऊँचाई के साथ तीव्र होता जाता है। वायु प्रवाह भी ऊँचाई के साथ तीव्र होता जाता है। दिशा मे थोड़ा परिवर्तन हो सकता है।

(2) उष्ण कार का समुद्र तलीय निम्न दाब ऊँचाई के साथ कमजोर होता जाता



(चित्र 6 17)

है। मुख्य ऊपर जाकर यह उच्चदाब क्षेत्र का रूप धारण कर सकता है। वायु गति ऊँचाई के साथ घटती है और उच्चदाब बन जाने के बाद दिशा में उलटी हो जाती है।

(3) शीतकोर का समुद्रतलीय प्रतिचक्रवात, ऊँचाई के साथ कमजोर होता जाता है तथा उच्च स्तर तल पर निम्न दाब में रूपान्तरित हो सकता है। वायु-गति भी ऊँचाई के साथ घटती जाती है तथा प्रतिचक्रवात के रूपान्तरण के समय उलटी दिशा में हो जाती है।

(4) उष्ण कोर का समुद्रतलीय प्रतिचक्रवात ऊँचाई के साथ तीव्रतर हो जाता है। वायु प्रवाह भी थोड़ा दिशान्तरण के साथ तेज होता जाता है।

(5) ऊर्ध्वाधर तल में निम्नदाब का अक्ष शीत क्षेत्र की ओर तथा उच्चदाब का अक्ष उष्ण क्षेत्र की ओर झुक जाता है।

6 54 विक्षुब्ध प्रवाह (Turbulent flow)

एनीमोग्राफ (स्वत अभिलेखी वायु मापी) द्वारा रिकार्ड किए गए दैनिक चार्ट से पता चलता है कि वायुगति तथा दिशा दोनो के क्षणिक आवृत्ति काल के छोटे-छोटे असंख्य उच्चावचो (fluctuations) से पूरा चार्ट भरा पड़ा है, चित्र (6 17)। अर्थात् वायु प्रवाह अपरिवर्ती (Steady) नही है। ऐसे प्रवाह को विक्षुब्ध प्रवाह कहते हैं।

एक मध्यमान रेखा AB, इस प्रकार खींची जा सकती है कि उसके ऊपर और नीचे आन्दोलनो का आयाम (Amplitude) बराबर हो। यह रेखा किसी निश्चित समय पर वायु गति का औसत मान दे सकती है।

मध्यमान रेखा से ऊपर का उच्चावचन, निर्वात (Gust) तथा नीचे का उच्चावचन, लल (Lull) कहलाता है। इन उच्चावचो का माप निर्वातीय गुणक (coefficient of gustiness) कहलाता है। जिसकी परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है —

$$\text{निर्वातीय गुणक} = \frac{\text{उच्चावचन का परास (Range)}}{\text{औसत वायु}} \times 100$$

6 55 विक्षुब्ध प्रवाह जलीय तलो की अपेक्षा भूमितल पर अधिक पाया जाता है, जो ताप तथा घर्षण दोनो प्रभावो से उत्पन्न हो सकता है।

जब हवा रूक्ष धरातल, वृक्षो, इमारतो या अन्य रुकावटो से होकर गुजरती है-तो घर्षण विक्षोभ उत्पन्न होता है। इस प्रवाह में रुकावटो के समीप छोटे छोटे भँवरे (Eddies) या बुलबुले स्वत पैदा हो जाते हैं। जब वायुमण्डल स्थायी है, तो विक्षोभ रुकावटो की ऊँचाइयो तक ही पाये जाते हैं, और उसके ऊपर वायु प्रवाह समतल हो जाता है। किन्तु अस्थायी वायुमण्डल में विक्षोभ और अधिक ऊँचाई तक उठ जाता है। संक्षेप में, घर्षण विक्षोभ की तीव्रता वायुमण्डलीय ह्रास पर, वायु गति तथा रुकावट की क्षमता पर निर्भर करती है।

भूमि तल के सौर ऊष्मा से अपेक्षाकृत अधिक गर्म हो जाने से, ताप विक्षोभ उत्पन्न होते हैं, जो बहुधा भूमितल पर ऊर्ध्वाधर वायु गति उत्पन्न कर देते हैं। दोपहर के बाद जब वायुमण्डलीय ह्रास दर सर्वाधिक अतिप्रवण (Steep) होती है ताप विक्षोभ काफी ऊँचाई तक पहुँच जाता है, अन्यथा इसका प्रभाव 100 मीटर की वायु तह के ऊपर साधारणत नही पहुँच पाता है। ताप विक्षोभो की तीव्रता वायुमण्डलीय ह्रास दर तथा सतह के उष्मन पर निर्भर करती है।

6.56 अल्पकालिक झंझा या स्क्वाल (Squall)

कभी कभी बहुत तेज हवा का झोंका एकाएक उठता है और कुछ मिनट (साधारणत 1 से 10 मिनट) के बाद एकाएक ही शान्त हो जाती है यह झोंका साधारणत तत्कालिन प्रचलित वायु दिशा में न आकर, किसी दूसरी दिशा में आता है। इस प्रकार के झोंके कभी कभी अत्यधिक विकसित ताप विक्षोभ के कारण उत्पन्न हो जाते हैं। किन्तु साधारणत ये वज्रपात (कपासी वर्षा) के बादलों में उत्पन्न होने वाली अवरोही वायु धाराओं के फलस्वरूप भूमि पर पहुँचते हैं। वर्षा के बीच बीच आने वाली तेज झंझावात, इसी प्रकार की धारायें हैं। इस परिस्थिति में एकाएक ठंडी हवा के तीव्र अभिवहन से तापमान गिर जाता है। इन झोंकों को स्क्वाल या अल्पकालिक झंझा कहते हैं।

स्क्वाल और निर्वात का मुख्य अन्तर उनकी अवधि है। निर्वात में वायु गति की वृद्धि केवल कुछ क्षणों की होती है, जबकि स्क्वाल में अपेक्षाकृत अधिक तीव्र हवा कुछ मिनटों तक स्थापित रहती है। भारत में स्क्वाल के लिए जो शर्त निर्धारित की गई है, उसके अनुसार वायु गति कम से कम ब्यूफट पैमाने की तीन अवस्थाएँ पार कर 22.27 नाटिकल मील/घण्टा या इससे अधिक पहुँच जानी चाहिए।

6.57 हवा का दैनिक चलन

उत्तरी गोलार्द्ध में धरातलीय और उच्च स्तरीय हवाओं का दैनिक चलन इस प्रकार है

दिन में और ऊष्मा के कारण भूमितल से कुछ ऊँचाई तक विक्षोभ मिश्रण पर्याप्त मात्रा में होता है, जिससे वायु गति तीव्र होती है। समदाब रेखाओं से इसका विचलन अपेक्षाकृत कम होता है। अत दिन की हवा भू यावर्ती दशाओं से अधिक निकट होती है। रात्रि में हवाएँ धीमी और समदाब रेखाओं को अधिक कोण पर काटती रहती हैं। धरातलीय हवाएँ कुछ ऊँचाई तक दिन में दक्षिणावत पवन तथा रात्रि में वामावत-पवन की प्रवृत्ति रखती हैं।

रात्रि के समय मिश्रण नहीं होने के कारण घर्षण का प्रभाव कम ऊँचाई तक सीमित रहता है। इससे थोड़ी ही ऊँचाई (200-300) मीटर के बाद हवा स्वतन्त्र प्रवाह में आ जाती है जो भू यावर्ती दशाओं के अधिक निकट होती है। दिन में मिश्रण के कारण घर्षण-सतह काफी ऊँचाई तक उठ जाती है। अत 300 मीटर से 1000 मीटर तक की हवा, जो रात्रि में भूयावर्ती होती है, दिन में घर्षण के कारण धीमी और सम दाब रेखाओं में विक्षेपित हो जाती है।

रात और दिन में हवा का यह परिवर्तन, सागरीय क्षेत्रों पर नगण्य होता है। भूमितल पर केवल मेघ रहित दिनों में दैनिक चलन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

6.58 हवाओं की ऋतु-विभिन्नता (Seasonal Variation)

तापमान और दाब में सर्दियों से गर्मियों और गर्मियों से सर्दियों में व्यापक परिवर्तन होता है जिसके परिणामस्वरूप भूमितल और निम्न क्षोभ मण्डल की हवाओं में बहुत अधिक परिवर्तन होना स्वाभाविक है क्योंकि वायु प्रवाह दाब प्रवणता द्वारा ही मुख्य रूप से नियन्त्रित होता है।

घर्षण प्रभाव की नगण्यता के कारण मौसमी परिवर्तन सागरीय क्षेत्रों में अधिक स्पष्ट होता है। 20° उ से 40° उ अक्षांशों के महाद्वीपीय भागों में सर्दियों में उच्च दाब तथा गर्मियों में

गम्भीर निम्न दाब स्थापित रहता है। फलत इन क्षेत्रो मे भूमितल की हवाएँ गर्मियो और सर्दियो मे लगभग विपरीत दिशाओ मे बहती रहती हैं। भारतीय उपमहाद्वीप का ग्रीष्म और शीत मानसून प्रवाह, मौसमी परिवर्तन का एक उत्कृष्ट उदाहरण है जिसमे सागरीय क्षेत्रो मे गर्मियो के 6 महीने दक्षिणी-पश्चिमी तथा सर्दियो के 6 महीने उत्तरी पूर्वी मानसून धाराएँ चलती हैं।

विषुवत् रेखा के आसपास तापमान की ऋतु विभिन्नता कम होने से हवाओ का मौसमी चलन कम पाया जाता है।

6 60 भूमितल की कुछ स्थानीय हवाएँ

उत्तरी उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र (0 – 30 उ) मे उपउष्ण कटिबंधीय उच्चदाब से, विषुवत रेखीय निम्न दाब की ओर ताप प्रवणता स्थापित रहती है। फलत उत्तर से दक्षिण की ओर हवा चलती है जो पृथ्वी के घूर्णन के कारण, दायी ओर विक्षेपित होकर साधारणत उत्तर पूर्व से बहती रहती है। इसे उत्तरी पूर्वी व्यापारिक हवा कहते हैं। इसी प्रकार, दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध मे दक्षिण से उत्तर की ओर बहती हवा घूर्णन के कारण, बायी ओर विक्षेपित होकर दक्षिणी पूर्वी हो जाती है। यह दक्षिणी पूर्वी व्यापारिक हवा कहलाती है।

मध्य अक्षांशो मे दाब प्रवणता, उपउष्ण कटिबंधीय उच्चदाब से उपध्रुवीय निम्न दाब (60° उ और द) की ओर होती है। फलत इन क्षेत्रो मे हवाएँ उत्तरी गोलार्द्ध मे दक्षिण से उत्तर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे उत्तर से दक्षिण की ओर बहती। यह प्रवाह कोरियालिस बल के अन्तर्गत विक्षेपित (उत्तरी गोलार्द्ध मे दायी ओर तथा दक्षिणी मे बायी ओर) होकर उत्तरी गोलार्द्ध मे दक्षिणी पश्चिमी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे उत्तरी पश्चिमी हो जाता है। इन हवाओ को **मध्य अक्षांशीय पश्चिमी हवाएँ** (Mid latitude westerlies) कहते हैं।

इससे ऊपरी अक्षांशो मे दाब प्रवणता पुन ध्रुवीय उच्चदाब से उपध्रुवीय निम्न-दाबो की ओर पाई जाती है। इसके कारण उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्रो मे उत्तरी-पूर्वी तथा दक्षिणी ध्रुवीय क्षेत्रो मे दक्षिणी पूर्वी प्रवाह प्रचलित रहता है, जिन्हे ध्रुवीय पूर्वी हवाएँ polar eastecl.ies) कहते हैं।

भूमितल के प्रारूप, समतलता तथा प्रकृति के कारण, जगह-जगह हवा का सामान्य प्रवाह परिवर्तित होकर स्थानीय हवाओ का रूप धारण करता है। सतह की प्रकृति मे अन्तर होने के कारण (जैसे जल और थल), ताप ग्राह्यता की क्षमता स्थान पर बदल सकती है, जिससे हवाएँ ऊष्मा द्वारा नियन्त्रित हो जाती है। इस प्रकार के कुछ प्रमुख स्थानीय प्रवाह निम्नांकित हैं

(1) आरोही तथा अवरोही हवा (Anabatic and Katabatic Wind)
(2) पर्वतीय तथा सागर समीर (Mountain and Valley Breeze)
(3) थल समीर तथा सागर समीर (Land Breeze and Sea Breeze)
(4) *फाहन हवा या चिनूक (Fohn Wind)*
(5) लू (Loo)

6 61 आरोही तथा अवरोही हवा

अधिक ढाल वाली भूमि पर अथवा पहाड़ी क्षेत्रो में हवा का प्रवाह ढाल की सतह

पर ऊपर या नीचे की ओर होता रहता है । ऊपर चढने वाला प्रवाह, आरोही हवा तथा नीचे अवतरित होने वाला प्रवाह अवरोही हवा कहलाती है । इन प्रवाहों का मुख्य कारण ताप जनित है ।

दिन म ढाल की सतह सौर ऊष्मा से पर्याप्त गर्म हो जाती है । इससे सतह के सम्पर्क की वायु, उसी स्तर की मीर वायु राशियो की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाती है। फलस्वरूप हल्की होने के कारण, सम्पर्क वायु ढाल पर ऊपर बहने लगती है । साथ ही ढाल से कुछ ऊपर की स्वतन्त्र वायु मे, अपेक्षाकृत ठण्डी होने से अवतलन प्रवाह होता है । पहाडियो पर आरोही हवा दोपहर के बाद सर्वाधिक तीव्र होती है । पहाडी की चोटी छोडने के बाद इसमे तेजी से शीतलन होता है और यदि हवा में नमी अधिक हुई, तो कपासी प्रकार के मेघ बनने की सम्भावना रहती है ।

रात्रि से ढाल पर अवरोही हवाएँ चलती हैं, क्योकि इस समय ढाल की सतह भू-विकिरण के कारण आसपास के वायुमण्डल की अपेक्षा अधिक शीतल होती है । फलस्वरूप भारी होने के कारण, सतह के सम्पर्क की हवा नीचे उतरने लगती है । यदि ढाल हिमाच्छादित है तो दिन मे भी अवरोही हवाएँ प्राप्त होती हैं ।

कम ढालू भूमि पर भी रात्रि मे धीमी गति से अवरोही हवाएँ चलती हैं तथा निचले क्षेत्रो मे ठण्डी हवाए अभिवहन करती हैं । पहाडी ढालो म अवरोही हवाए काफी तेज बहती है । ये हवाएँ आर्द्रता की उपस्थिति म साधारणत कुहरा तथा पाला उत्पन्न कर सकती हैं ।

6 62 पर्वतीय और घाटी हवा

यदि कोई क्षेत्र चारो ओर ऊँचे पर्वतो स घिरी हुई घाटी हो, तो आरोही और अवरोही प्रभाव और तीव्र हो जाता है । दिन में चारो ओर से हवाएँ ढाल पर चलती हैं । यदि वायुमण्डलीय ह्रास दर अधिक हो और हवा नम हो, तो सवाहनिक मेघ बनने की बहुत सुविधा रहती है ।

पहाडी पर चलती हुवाएँ घर्षण के कारण पवनाभिमुखी तथा अनुवर्ती, दोनो दिशाओ में भँवर उत्पन्न करती हैं । अनुवर्ती भाग की भँवरें विशेष प्रभावकारी होती हैं ।

रात्रि में सकरी घाटियो में अवरोही हवाएँ तेजी स ठण्डी वायु तथा नमी अभिवहित करती हैं । इन घाटियो में सुबह तक इतना कुहरा या पाला आदि उत्पन्न हो जाता है कि जो बहुधा दिन में भी नही टूट पाता । यह स्थिति घाटी क्षेत्रो में बहुत हानिकारक असर डालती है ।

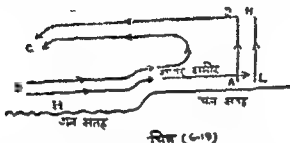
यदि घाटी पर्वत शृखलाओ के बीच में खण्डित होने से बनी है और चारो ओर से नहीं घिरी है तो खण्डित भाग स बहुत तेज हवाएँ घाटी में बहने को बाध्य होती हैं जो साधारणत एक ही दिशा से बहती रहती हैं ।

साधारण तौर पर पर्वतीय और घाटी हवाओ की प्रकृति में विशेष अन्तर नही है । दोनो ही ढाल पर बनने वाले ताप जनित प्रवाह हैं ।

6 63 थल और सागर समीर

तटीय क्षेत्रो में दिन क समय, विशेषत दोपहर के बाद धरातलीय हवा सागर से थल की ओर बहती है । इन सागर समीर कहते हैं । स्वभावत सागर समीर प्रभावित क्षेत्र का तापमान कम तथा आर्द्रता अधिक कर देता है ।

दिन मे सौर उष्मा से थल का भाग (A) सागरीय क्षेत्र की अपेक्षा अधिक गर्म हो जाता है, जिससे वहाँ की हवा ऊपर उठ कर कुछ ऊँचाई (100–300 मीटर) (B) पर उच्च दाब तथा (A) पर निम्न दाब उत्पन्न कर देती है। (B) के स्तर पर सागरीय क्षेत्र मे (C) का दाब स्थिर रहने से (B) की अपेक्षा कम रहता है। अत भूमि से सागर की ओर दाब प्रवणता स्थापित हो जाती है, जिससे हवा (B) से (C) की ओर वहने लगती है।



चित्र (6·19)

सागरीय सतह (D) पर दाब (A) की अपेक्षा स्वत कुछ अधिक हो जाती है, जिससे धरातलीय हवा (D) से (A) की ओर बहने लगती है। यही सागर समीर है।

सागर समीर का अभ्युदय सर्वप्रथम तट पर होता है, जहाँ से वह थल के आन्तरिक भागो की ओर शनै शनै बढता है। साधारणत तट से 20–25 किलोमीटर तक का क्षेत्र सागर समीर से प्रभावित होता है, किन्तु अनुकूल पर्वतीय परिस्थितियों के कारण या आन्तरिक भू-भाग पर स्थित निम्न दाबो के आकर्षण से सागर समीर महाद्वीपो को और अधिक अन्दर तक प्रभावित कर सकता है। उदाहरणार्थ समुद्र से लगभग 60 किलोमीटर दूर स्थित पूना और आसपास के क्षेत्रो मे गर्मियो मे, लगभग हर दिन 2 बजे के बाद सागर समीर पहुँचता है और वायुमण्डल मे एकाएक शीतलता उत्पन्न कर देता है। सागर तट से 100 किमी से अधिक दूर स्थित कलकत्ता मे लगभग साढे तीन बजे दोपहर के बाद सागर समीर प्रवेश करता है। सूर्यास्त के बाद सागर समीर मन्द पड जाता है।

रात्रि मे प्रवाह इसके ठीक विपरीत होता है। रात्रि शीतलन के कारण भू भाग (A) पर सागरीय क्षेत्र (D) की अपेक्षा उच्च दाब स्थापित हो जाता है। फलत थल से सागर की ओर शुष्क हवा बहने लगती है। इसे थल समीर कहते हैं। थल समीर सामान्यत स्थिर वायुमण्डल मे ही प्रचालित होता है।

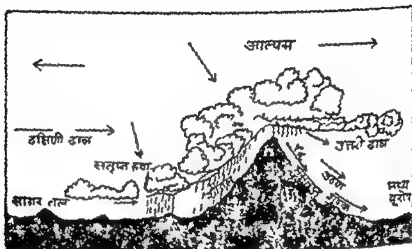
सागर और थल समीर का उन्मुक्त प्रवाह, मेघ रहित दिन और रात्रि मे ही सम्भव है क्योंकि इन प्रवाहो का मुख्य कारण थल और जल पर उष्मा के प्रभाव की भिन्नता है। मेघाच्छन्न दिनो मे थल भाग, न तो दिन मे सौर विकिरणो द्वारा पर्याप्त गर्म हो पाता है और न रात्रि मे भू-विकिरणा के कारण पर्याप्त ठण्डा।

6 64 फोहन हवा (Foehn Wind)

पर्वत के पवनाभिमुखी ढाल पर चढती हुई हवा म रुद्धोष्म शीतलन होता है, जिससे कुछ ऊँचाई पर हवा सतृप्त होकर बादल बनाती है। सतृप्त हवा जब और ऊपर चढती है,

तो उसमें संतृप्त रुद्धोष्म ह्रास दर (5°C/किमी) से तापमान घटता है। ऊपर बढ़ते हुए यदि कोई संघनित होता है, तो संघनित जल वर्षा के रूप में गिर जाता है।

जब यह हवा शिखर पर पहुँचने के बाद अनुवर्ती भाग की ओर उतरने लगती है, तो वह गर्म हो जाती है तथा तुरन्त असंतृप्त हो उठती है, जिसमें शुष्क रुद्धोष्म ह्रास दर



चित्र (6.20)

(10°C/किमी) से हवा का तापमान बढ़ने लगता है। फलतः अनुवर्ती ढाल पर उतरने वाली हवा अधिक गर्म तथा शुष्क होती है।

इस प्रकार की हवा का उदाहरण आल्पस पर्वत के उत्तरी ढाल पर बहने वाली गर्म हवा है। यह हवा मध्य यूरोप के ठण्डे क्षेत्रों के लिए आनन्ददायक मौसम उत्पन्न करती है। इस हवा का स्थानीय नाम फोहन हवा है।

अमेरिका में राकी के अनुवर्ती भाग से ऐसी ही हवाएँ चलती हैं, जहाँ वे चिनूक के नाम से विख्यात हैं। भारत में इस प्रकार का उदाहरण, पश्चिमी घाट के अनुवर्ती भागों में बहने वाली हवाएँ हैं, जो गर्म और शुष्क होती हैं। पूना में इसी प्रकार की हवाएँ पहुँचती हैं। इसीलिए पूना के वायुमण्डल में बम्बई की अपेक्षा कम उमस पायी जाती है।

6.65 लू (Loo)

पूर्व मानसून काल (अप्रेल, मई, जून) में उत्तरी भारत में चलने वाली गर्म और अत्यधिक शुष्क पश्चिमी या उत्तरी पश्चिमी हवा 'लू' कहलाती है, जिसमें हवा की आर्द्रता 10% से भी कम तथा गति 20 किमी प्रति घण्टा से साधारणतः अधिक होती है। इस प्रवाह का कारण सौर ऊष्मा के आधिक्य से उत्पन्न तीव्र दाब प्रवणता है। तेज ताप के कारण भूमि तल की हवा विशेषकर दोपहर के बाद अति शुष्क रुद्धोष्म अवस्था में आ जाती है। धूल उड़ाती हवाएँ उत्तरी भारत में साधारणतः ग्रीष्म ऋतु में दोपहर से कुछ पहले आरम्भ होकर सूर्यास्त तक बहती हैं किन्तु कभी कभी विशेष मौसम दशाओं के कारण रात्रि में भी लू का चलना जारी रहता है। धूप में भ्रमण करने वाले कभी-कभी

लू के प्रभाव मे जलाभाव (Dehydration) रोग से आक्रान्त हो जाते है। उत्तरी भारत के सभी प्रान्तो मे लू के कारण प्रतिवर्ष कुछ लोग मृत्यु के शिकार होते हैं।

मानसून धाराओ के अभ्युदय होने से लू-प्रवाह शनै शनै खत्म हो जाता है।

6 66 मध्य अक्षांशीय महाद्वीपीय क्षेत्रो की सर्दियो मे उच्च दाब तथा गर्मियो मे निम्न दाब जनित करने की प्रवृत्ति होने के कारण, भारतीय उपमहाद्वीप तथा दक्षिणी चीन मे छ महीने तक परस्पर विपरीत दिशाओ की मौसमी हवाएँ प्रवाहित होती रहती हैं। इन मौसमी हवाओ को अरबी भाषा के शब्द मानसून द्वारा सम्बोधित किया जाता है, जिसका अर्थ 'मौसम' को व्यक्त करता है। उपयुक्त क्षेत्रो मे सर्दियो मे मानसून उत्तर पूर्व से तथा गर्मियो म दक्षिण पश्चिम से बहता है। इन मानसून हवाओ का विस्तारपूर्वक वर्णन अध्याय 14 मे किया गया है।

6 67 छोटे पैमाने पर ताप और दाब चलन तथा भूमितल के प्रारूप के कारण अनेक स्थानो की हवाएँ विशेष गुणो से युक्त हो उठती हैं तथा स्थानीय रूप से अपने प्रभाव के कारण इतनी महत्वपूर्ण हो जाती हैं कि इन्हे अलग नामो से जाना जाता है। इस प्रकार की कुछ हवाएँ निम्नांकित ह —

(1) ब्लिजर्ड

उत्तरी अमेरिका मे सर्दियो मे अवदाबो के तत्काल बाद उदित होने वाली अतिशीत और तेज हवा स्थानीय रूप से ब्लिजर्ड के नाम से जानी जाती है। इस हवा के साथ तुषार क कण भी प्रवाहित होते रहते है।—

उत्तरी भारत मे भी सर्दियो मे पश्चिमी विक्षोभो के पीछे साधारणत दो तीन दिनो तक शीत तरग बहती है, पर इन्हें किसी स्थानीय नाम से नही जाना जाता।

एन्टार्कटिक प्रदेशो मे भी भूमितल पर इसी प्रकार की तुषार भरी ठंडी हवायें तीव्र गति से चलती ह। यहाँ पर ब्लिजर्ड हवाएँ सतह की अतिशीत वायु राशि हटाकर, कुछ हद तक तापमान बढाने का काम करती हैं।

(2) बोरा

एड्रियाटिक सागर के उत्तर और उत्तर-पूर्व मे स्थित पठार से सर्दियो मे तेज अवरोही हवाएँ सागर के उत्तरी तट पर बहती हैं। इन हवाओ का तापमान बहुत कम होता है तथा अनुकूल परिस्थितियो मे 100 से 150 किमी/घण्टा की गति पायी जाती है। कालासागर के उत्तर-पूर्वी तट पर ऐसी हवाएँ चलती ह। इन्हे स्थानीय रूप से बोरा के नाम से जाना जाता है।

(3) सीस्टन हवा

ईरान के सीस्टन प्रात मे गर्मियो की तीव्र तूफानी हवा जो उत्तर से लगभग 4 महीने तक बहती रहती है, सीस्टन हवा के नाम से जानी जाती है।

(4) शमाल

मेसोपोटामिया क मैदानी भागो मे ग्रीष्म ऋतु मे बहने वाली उत्तरी-पूर्वी उष्ण वायु प्रवाह वहाँ शमाल के नाम स विख्यात है।

(5) सिमूम

अफ्रीका और अरब के रेगिस्तानों में गर्म और शुष्क रेत उड़ाती तूफानी आँधियाँ अचानक उठा करती हैं। इनकी अवधि साधारणत आधे घण्टे से कम होती है। बहुधा सिमूम हवाएँ बवंडर की भाँति चक्रवाती होती हैं। बसन्त तथा ग्रीष्म ऋतुओं में इस प्रकार की हवाएँ बहुत प्रचलित होती हैं।

(6) सिरोक्को

मध्य अक्षांशीय वाताग्र अवदाबों में बहने वाली उष्ण और दक्षिणी हवाएं अफ्रीका के उत्तर तट तथा दक्षिणी यूरोप में सिरोक्को के नाम से जानी जाती हैं। सहारा मरुस्थल में उत्पत्ति के कारण ये हवाएँ अफ्रीका के उत्तरी तट तक उष्ण तथा शुष्क होती हैं। भूमध्यसागर पार करने के बाद माल्टा, सिसली तथा इटली आदि में ये उष्ण किन्तु नम हवाओं के रूप में पहुँचती हैं।

(7) हरमत्तन

सर्दी के महीनों में पश्चिमी अफ्रीका में बहुत ही शुष्क हवा प्रचलित रहती है। वास्तव में सहारा की शुष्क हवा ठंडी होकर निम्न दाब (सागर क्षेत्र) की ओर प्रवाहित होती है। हरमत्तन तटवर्ती क्षेत्रों के उष्ण और ऊमस भरे वायुमण्डल से व्याकुल लोगों को राहत देती है और प्राय स्वास्थ्यवर्द्धक समझी जाती है।

(8) गरजती चालीसा (रोरिंग फार्टीज)

दक्षिणी गोलार्द्ध में 40 अक्षांश के पूरे वृत्त के आसपास, कोई महाद्वीपीय भाग नहीं है। अत वायु प्रवाह पर घर्षण का प्रभाव अपेक्षाकृत बहुत कम होता है, जिसके परिणामस्वरूप हवाएँ बहुत तेज गति से सागर सतह पर चलती हैं। ये हवाएं पछुवाँ होती हैं और गर्जन के साथ ऊँची लहरें उठाती हैं। इन हवाओं को गरजती चालीसा के नाम से जाना जाता है।

इसके विपरीत 40° उत्तर के सागरीय क्षेत्रों में बहुत ही धीमी हवाएँ चलती हैं। वायुमण्डल अधिकतर शान्त और आकाश स्वच्छ रहता है। इन क्षेत्रों को अश्व अक्षांश (हार्स लैटिट्यूड) कहते हैं। यह नाम पड़ने का कारण यह है कि प्राचीन काल में पाल युक्त जहाजों द्वारा अमरिका और वेस्ट इण्डीज को घोड़ों का निर्यात इन क्षेत्रों से होता था और शान्त क्षेत्रों में जब जहाज फस जाते थे और नावों को पतवार द्वारा खेना पड़ता था तो अधिकांश घोड़ों को भार और खाद्य सामग्री के अभाव के कारण समुद्र में फेंक दिया जाता था।

(9) डोलड्रम की शांत हवाएँ

विषुवत् रेखा के आसपास का क्षेत्र लगभग समदाब का क्षेत्र है, जहाँ दाब प्रवणता नगण्य होती है। अत यहाँ वायुमण्डल सामान्यत शांत होता है या बहुत धीमी हवाएं बहती हैं जिनकी दिशा बहुत तेजी से परिवर्तित होती रहती है। वायु दिशा की अनिश्चितता के कारण इस क्षेत्र को डोलड्रम कहा जाता है।

डोलड्रम के ही किसी भाग में दोनों गोलार्द्धों की व्यापारी हवाएँ अभिसरित होती हैं

जिसमे उर्ध्वाधर वायु धाराएँ उठकर मेघ और वर्षा उत्पन्न करती हैं। इस क्षेत्र को अन्तउष्ण कटिबन्धीय अभिसरण क्षेत्र (Inter Tropical Convergence Zone या I T C Z) कहते हैं। I T C Z के अतिरिक्त डोल्ड्रम मे मौसम प्राय साफ रहता है।

सूर्य के स्थानान्तरण के साथ डोल्ड्रम और I T C Z ग्रीष्म गोलार्द्ध की ओर स्थानान्तरित होते रहते हैं। किन्तु उत्तरी गोलार्द्ध मे इनका स्थानान्तरण अपेक्षाकृत अधिक होता है। अत औसत रूप से डोल्ड्रम की स्थिति विषुवत् रेखा से थोडी उत्तर मे होती है।

6 68 पर्वत तरगें (Mountain Waves)

पर्वतीय भूमि प्रदेशों मे वायु प्रवाह, समतल प्रदेशो की अपेक्षा अधिक विक्षुब्ध होता है। पर्वत शृंखलाएँ सामान्य वायु प्रवाह पर अनेक प्रकार के प्रभाव डालती हैं। उपलब्ध आँकडो तथा सिद्धान्तो के आधार पर कुछ प्रभावों की जानकारी प्राप्त की जा सकी है। हिमालय तथा राकी जैसे बडे पर्वत छोटे वायु भँवर से लेकर अनुवर्ती निम्न दाब तथा भूमण्डलीय पैमाने पर वायु प्रवाह मे विक्षोभ उत्पन्न किया करते हैं। इन्ही विक्षोभों के परिणामस्वरूप वायुयानों की अधिकतम दुघटनाएँ पर्वतीय क्षेत्रो मे होती रही हैं।

पर्वतीय ढाल पर आरोह और अवरोह के परिणामस्वरूप, वायु प्रवाह में तरग धाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जिनका क्षैतिज तरग दैर्ध्य 1 से 20 किमी तक साधारणत पाया जाता है। ये तरगें अर्द्ध अग्रगामी गुरुत्व तरगो (Quasi Stationary Gravity Waves) के रूप मे होती हैं और पर्वत तरगें कहलाती हैं।

इन तरगों के परिणामस्वरूप, काफी ऊँचाई तक विक्षोभ तथा उर्ध्वाधर वायु धाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं। ये धाराएँ साधारणत क्षोभ सीमा को पार कर स्थिर मण्डल मे जा पहुँचती हैं। सामान्य प्रेक्षणो के अनुसार, पर्वत की तुगता से दूनी ऊँचाई तक विक्षोभ प्रभावशील रहता है। पर्वत तरगों से जनित उध्व वायु धाराएँ अक्सर विशिष्ट गुणो से युक्त पर्वतीय मेघ उत्पन्न करती हैं, जिनकी विशेषताओं के आधार पर वायु प्रवाह की प्रकृति का अध्ययन किया जा सकता है। वायु प्रवाह तेज होने पर भी ये मेघ साधारणत स्थिर रहते हैं और हवा इनके मध्य से होकर गुजर जाती है। पर्वतीय मेघ, शिखर के ऊपर या नीचे कही भी हो सकते हैं। इन मेघो के कुछ मुख्य प्रकार ये हैं —

(1) छत्रक मेघ (Cap Cloud)

यह निम्न स्तर पर निलंबित (hanging) मेघ है, जिसका आधार शिखर के समीप तथा ऊँचाई लगभग एक किलोमीटर होती है। मेघ का अधिकांश भाग पवनाभिमुखी दिशा मे रहता है।

(2) रोटर या वर्तुल (roll) मेघ

अनुवर्ती भाग मे कभी-कभी कपासी या स्तरी कपासी मेघो की कतार वर्तुलाकार रूप मे विकसित होती है, जिसका आधार पर्वत शृंग के निकट तथा ऊँचाई कुछ किलोमीटर पायी जाती है। ये मेघ विशाल आयाम के अनुवर्ती तरगो के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं। मेघो के बीच धनात्मक उध्व वायु अपरूपण (Shear) गुजरता है, इसलिये इनका ऊपरी भाग घूमता सा प्रतीत होता है।

(3) मसूराकार मेघ (Lenticular Cloud)

ये लेन्स के आकार के अग्रगामी या अर्द्ध अग्रगामी मेघ हैं, जो साधारणत पवना भिमुखी भाग में पर्वत के समानान्तर बैंडों के रूप में उत्पन्न होते हैं । दो या तीन बड बहुधा दिखाई देते हैं ।

मसूराकार मेघ विभिन्न ऊँचाइयों पर पाये जाते हैं तथा एक के ऊपर एक, कई तहें एक साथ भी देखी जाती हैं । निम्न स्तरों के पर्वतीय मसूराकार मेघ स्तरी कपासी के सदृश दिखाई देते हैं किन्तु अधिक ऊँचाईयों पर इनका आकार काफी चिकना प्रतीत होता है । इनका रंग सफेद के अलावा पीला, नारंगी या गहरा भूरा भी हो सकता है ।

(4) मुक्ताभ मेघ (Nacreous or Mother of Pearl Cloud)

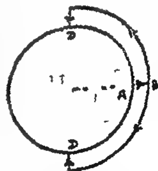
ये सबसे चमकीले मेघ हैं, जो स्थिर मण्डल में सामान्यत 20 से 30 किमी ऊँचाई पर उत्पन्न होते हैं । ऊँचाई के कारण सूर्यास्त के बाद भी ये प्रकाशमान रहते हैं । उत्तरी ध्रुव क्षेत्र में उच्च अक्षांशों के शीतकालीन अवदाबों के कारण, तीव्र पश्चिमी हवाएं पहाड़ी भागों से गुजरती हुई लगभग 30 किमी ऊँचाई तक विक्षोभ पहुँचा पाती हैं । इन्हीं अक्षांशों में मुक्ताभ मेघ दिखाई देता है । इनके बनने के लिए इतनी ऊँचाई (तापमान —40°C के आसपास) पर जल या हिमकण का होना भी आवश्यक है । वैसे इन मेघों की भौतिक संरचना अभी तक अज्ञात है ।

6.70 आदर्श सामान्य वायु-प्रवाह (Idealised General Circulation)

सूर्य की ऊष्मा और पृथ्वी के घूर्णन द्वारा वायुमण्डल का सामान्य प्रवाह उत्पन्न होता है । इन दोनों के संयुक्त प्रभाव को समझने के लिए इनका अलग अलग विवेचन करना उचित है ।

सर्वप्रथम, मान लीजिए पृथ्वी अपनी धुरी पर स्थिर है । इस अवस्था में केवल सौर विकिरणों की मात्रा के अक्षांशों पर भिन्नता के कारण वायु में प्रवाह उत्पन्न होगा । कैसे ?

विषुवत् रेखा के पृथ्वी तल (A) पर अधिक ऊष्मा के कारण वायु गर्म होकर ऊपर उठेगी, जिससे A पर अपसरण के कारण निम्नदाब क्षेत्र उत्पन्न हो जाएगा । उच्च वायु मण्डल के किसी क्षेत्र B पर यह हवा अभिसृत होकर उच्च दाब स्थापित करेगी । फलस्वरूप उच्च वायुमण्डल में विषुवत्-रेखा से ध्रुवों की ओर प्रवाह आरम्भ हो जाएगा । ध्रुवीय क्षेत्र C पर शीतलन के कारण इस वायु का अवतलन स्वाभाविक है जिससे ध्रुवीय तल D पर उच्च दाब बन जाता है । अतः सतह पर उच्च दाब D से निम्न दाब A की ओर, अर्थात् ध्रुव से विषुवत् रेखा की ओर हवा बहेगी । इस प्रकार वायु प्रवाह का पथ आकृति ABCDA द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है ।



चित्र (6.21)

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि निम्न दाब क्षेत्र से वायु ऊपर उठती है तथा उच्च दाब क्षेत्र पर उसका अवतलन होता है ।

अब भू-मण्डल पर दाब क्षेत्रों के वास्तविक वटन पर विचार कीजिए। विषुवत् रेखा पर निम्न दाब, 30° के अक्षांशों के आस पास उप-उष्ण कटिबंधीय उच्च दाब, 60° अक्षांशों पर उप ध्रुवीय निम्न दाब तथा ध्रुवों पर उच्चदाब के क्षेत्र स्थायिवत् रूप से स्थित है।

अत B से ध्रुवों की ओर बहने वाली हवा उपउष्ण कटिबंधीय उच्चदाबों (30 अंश अक्षांश) पर अवतलित हो जाती है। भूमि तल पर प्रवाह स्पष्टत F से A की ओर होगा। इस प्रकार एक कोशिका ABEFA पूरी हो जाती है।

उपध्रुवीय निम्न दाब (G) से उठने वाली हवा उच्च स्तर (H) पर अभिसरण उच्चदाब उत्पन्न करने के बाद ध्रुवीय तथा उपउष्ण कटिबंधी उच्चदाब दोनों ओर प्रवाहित होगी तथा दोनों उच्चदाबों पर अवतलित होगी। भूमितल पर प्रवाह F से G तथा D से G की ओर होगा। इस प्रकार, दो ओर प्रवाह कोशिकाएँ GHEFG तथा GHCDG पूर्ण हो जाती हैं।

इस प्रकार स्थिर भू मण्डल पर ताप प्रवणता के कारण भूमि तथा उच्च स्तर पर आदर्श वायु प्रवाह, निम्नांकित तीन कोशिकाओं द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। ये प्रवाह पूर्णत रेखांशिक (Meridional) हैं।

(i) ABEFA
(ii) GHEFG
(iii) GHCDG

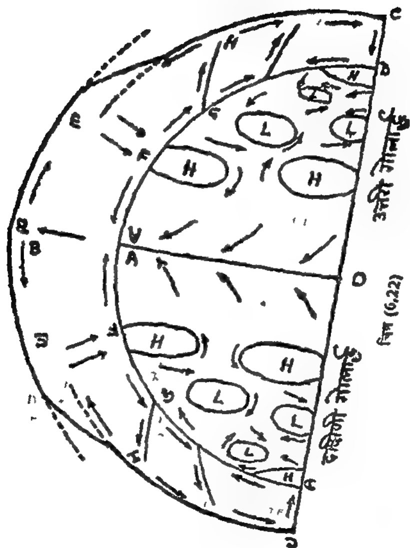
स्पष्ट है कि कोशिकाएँ (i) और (iii) का प्रवाह एक ही दिशा में है तथा बीच की कोशिका (ii) का प्रवाह इनके ठीक विपरीत होगा। इन्हे क्रमश हैडली तथा विपरीत हैडली कोशिकाएँ भी कहा जाता है।

पृथ्वी के घूर्णन के कारण यह रेखांशिक प्रवाह विक्षेपित हो जाता है, उत्तरी गोलार्द्ध दायी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में बायी ओर। इस विक्षेप के कारण ही प्रवाह मे मण्डलीय (Zonal) अवयव विकसित होता है। शनै शनै भूमि तथा उच्च स्तर पर सम्पूर्ण प्रवाह मुख्यत मंडलीय अर्थात् पूर्वी या पश्चिमी हो जाना चाहिए।

किन्तु पूर्णत मण्डलीय प्रवाह पृथ्वी के तापमान सन्तुलन को विक्षुब्ध कर देगा, क्योंकि रेखांशिक अवयव की अनुपस्थिति में विषुवत् रेखीय तापमान उच्च अक्षांशों की ओर नही ले जाया जा सकेगा। अत यह आवश्यक है कि हर अक्षांशो मे उत्तरी दक्षिणी अवयव युक्त हवा बहे।

यह अवयव चक्रवातों तथा प्रतिचक्रवाती स्थायिवत् दाब प्रणालियो द्वारा विकसित होता है।

इन परिस्थितियों से उत्पन्न परिणामी सामान्य वायु प्रवाह चित्र (6 22) मे दिखाया गया है।



चित्र (6.22)

भूमितल पर सामान्य प्रवाह का विवरण धारा 6 60 तथा चित्र (6 23) मे स्पष्ट किया गया है ।



चित्र (6 23)

6 80 अभिसरण और अपसरण (Convergence and Divergence)

क्षैतिज प्रवाह मे किसी स्थान विशेष पर वायु का सचयन (Accumulation) हो सकता है । जैसे स्थान A पर कई दिशाओ से वायु केन्द्रित हो सकती है —चित्र (6 24)



चित्र (6·24)

स्थिति (i) अथवा A पर पहुँचने वाली हवा की गति, A से बाहर जाने वाली हवा की गति से अधिक हो सकती है स्थिति (ii) । इन दशाओ मे बिन्दु A पर अभिसरण हो रहा है ।

किन्तु स्थितियाँ (iii) और (iv) इसके विपरीत हैं । यहा स्थान A से वायुराशि अपसरित हो रही है । इस स्थिति को अपसरण कहते हैं ।

हवा के क्षैतिज सचयन से उध्वधाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जिससे अतिरिक्त वायु-राशि ऊपर की ओर अभिवहित होने लगती है । अपसरण की स्थिति मे वायु का अवतलन होता है और यही अवतलित वायु राशि बाहर की ओर होने वाले क्षैतिज अपसरण को सन्तुलित करती है ।

अभिसरण का वास्तविक उदाहरण सागर समीर द्वारा दिया जा सकता है । जब यह समीर थल भाग मे प्रवेश करता है, तो घर्षण के कारण इसकी गति बहुत कम हो जाती है । फलत तट के आस-पास, हवा का अभिसरण स्वाभाविक है ।

चक्रवाती प्रवाह मे घर्षण के कारण हवाएँ समदाब रेखाओ को काटते हुए केन्द्र की ओर अभिसरित होती हैं। प्रति चक्रवाती प्रवाह मे केन्द्र से बाहर की ओर हवाओं का अपसरण होता है।

6 81 क्षैतिज अपसरण का माप

X – अक्ष पर दो बिन्दु A और B लीजिए, जहाँ वायु-गति धनात्मक दिशाओं में क्रमश u तथा $u + du$ है।

$$AB \text{ के मध्य बिन्दु O पर अपसरण का X – अवयव} = \frac{du}{dx},$$

जहाँ $AB = dx$ ।

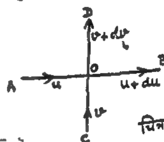
इसी प्रकार Y – अक्ष के बिन्दुओ C और D पर यदि धनात्मक दिशा की ओर वायु गति v और $v+dv$ हो, तो

$$\text{बिन्दु O पर अपसरण का Y – अवयव} = \frac{dv}{dy},$$

जहाँ $CD = dy$ और O, CD का मध्य बिन्दु है।

अत बिन्दु O पर कुल क्षैतिज अपसरण

$$D = \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy}$$



चित्र (6 25)

6 82 अभिसरण (C) अपसरण के ठीक उत्क्रम ((reverse) होता है।

$$C = -D$$

6 83 अभिसरण (C) ऊर्ध्व दशा मे वायु वेग उत्पन्न कर देता है और उर्ध्वाधर अपसरण द्वारा संतुलित होता है।

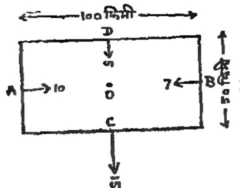
$$C = \text{उर्ध्वाधर अपसरण} = \frac{dw}{dz}$$

जहाँ w ऊपर की ओर ऊर्ध्वाधर वायु वेग है।

$$\frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} = -\frac{dw}{dz}$$

$$\text{या} \quad \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} + \frac{dw}{dz} = 0$$

6 84 उदाहरण—निम्नांकित चित्र से बिन्दु O पर क्षैतिज अपसरण की मात्रा ज्ञात कीजिए। वायु गति की इकाइयाँ किमी /घण्टा मे दी गयी है।



चित्र (6.26)

हल— $du =$ B पर गति—A पर गति

$= (-7) - (10) = -17$

और $dx = 100$ किमी।

$$\frac{du}{dx} = -\frac{17}{100} \text{ प्रति घण्टा}$$

$$= -\frac{17}{100 \times 3600} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$$= -4.7 \times 10^{-5} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$dv =$ D पर वायुगति — C पर वायुगति

$= (-5) - (-15) = 10$

और $dy = 50$

$$\frac{dv}{dx} = \frac{10}{50 \times 3600} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$$= 5.6 \times 10^{-5} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$$D = \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} = 0.9 \times 10^{-5}/\text{सेकण्ड}$$

6.85 भ्रमिलता (Vorticity)

व्यंजक $q = \frac{dv}{dx} - \frac{du}{dy}$,

भ्रमिलता कहलाती है। यह वह गुणक है जो किसी स्थान पर वायु प्रवाह की चक्रवाती प्रवृत्ति का माप बतलाती है। हवा पूर्णत चक्रवाती न होने पर भी आंशिक रूप से घूर्णन-अवयव रख सकती है। q का धनात्मक मान चक्रवाती तथा ऋणात्मक मान प्रतिचक्रवाती घूर्णन की ओर संकेत करता है। उपर्युक्त उदाहरण मे,

चक्रवाती प्रवाह मे घर्षण के कारण हवाएँ समदाब रेखाओं को काटते हुए केन्द्र की ओर अभिसरित होती हैं। प्रति चक्रवाती प्रवाह मे केन्द्र से बाहर की ओर हवाओं का अपसरण होता है।

6 81 क्षैतिज अपसरण का माप

X – अक्ष पर दो विन्दु A और B लीजिए, जहाँ वायु-गति धनात्मक दिशाओं मे क्रमश u तथा $u+du$ है।

$$\text{AB के मध्य विन्दु O पर अपसरण का X – अवयव} = \frac{du}{dx},$$

जहाँ $AB = dx$।

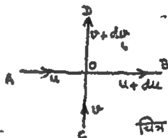
इसी प्रकार Y – अक्ष के विन्दुओं C और D पर यदि धनात्मक दिशा की ओर वायु गति v और $v+dv$ हो, तो

$$\text{विन्दु O पर अपसरण का Y – अवयव} = \frac{dv}{dy},$$

जहाँ $CD = dy$ और O, CD का मध्य विन्दु है।

अत विन्दु O पर कुल क्षैतिज अपसरण

$$D = \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy}$$



चित्र (6 25)

6 82 अभिसरण (C) अपसरण के ठीक उत्क्रम ((reverse) होता है।

$$C = -D$$

6 83 अभिसरण (C) ऊर्ध्व दशा मे वायु वेग उत्पन्न कर देता है और उर्ध्वाधर अपसरण द्वारा सतुलित होता है।

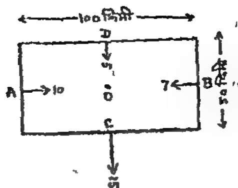
$$C = \text{उर्ध्वाधर अपसरण} = \frac{dw}{dz}$$

जहाँ w ऊपर की ओर ऊर्ध्वाधर वायु वेग है।

$$\frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} = -\frac{dw}{dz}$$

$$\text{या} \quad \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} + \frac{dw}{dz} = 0$$

6 84 उदाहरण—निम्नांकित चित्र से विन्दु O पर क्षतिज अपसरण की मात्रा ज्ञात कीजिए। वायु गति की इकाइयाँ किमी /घण्टा मे दी गयी हैं।



चित्र (6 26)

हल— du = B पर गति—A पर गति

$= (-7) - (10) = -17$

और $dx = 100$ किमी ।

$$\frac{du}{dx} = -\frac{17}{100} \text{ प्रति घण्टा}$$

$$= -\frac{17}{100 \times 3600} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$$= -4\ 7 \times 10^{-5} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

dv = D पर वायुगति — C पर वायुगति

$= (-5) - (-15) = 10$

और $dy = 50$

$$\frac{dv}{dx} = \frac{10}{50 \times 3600} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$$= 5\ 6 \times 10^{-5} \text{ प्रति सेकण्ड}$$

$$D = \frac{du}{dx} + \frac{dv}{dy} = 0\ 9 \times 10^{-5}\text{/सेकण्ड}$$

685 भ्रमिलता (Vorticity)

व्यंजक $q = \frac{dv}{dx} - \frac{du}{dy}$,

भ्रमिलता कहलाती है । यह वह गुणक है, जो किसी स्थान पर वायु प्रवाह की चक्रवाती प्रवृत्ति का माप बतलाती है । हवा पूर्णत चक्रवाती न होने पर भी आंशिक रूप से घूर्णन-अवयव रख सकती है । q का धनात्मक मान चक्रवार्ती तथा ऋणात्मक मान प्रतिचक्रवाती घूर्णन की ओर संकेत करता है । उपर्युक्त उदाहरण मे,

$$\frac{dv}{dx} = \frac{10}{100 \times 3600} = 2\ 8 \times 10^{-5}/\text{सेकण्ड}$$

तथा $$\frac{du}{dy} = \frac{17}{50 \times 3600} = -9\ 4 \times 10^{-5}/\text{सेकण्ड}$$

$$q = \frac{dv}{dx} - \frac{du}{dy} = 12\ 3 \times 10^{-5}/\text{सेकण्ड}$$

6 86 उर्ध्वाधर वायु गति (Vertical motion of air)

उपर्युक्त विवरणो से स्पष्ट है कि किस प्रकार अभिसरण आरोही प्रवाह तथा अपसरण अवतलन प्रवाह को जन्म देता है। यह क्रिया पृथ्वी तल के अलावा ऊर्ध्व वायु मण्डल के किसी भी स्तर पर सभव है।

वायुमण्डल मे ऊर्ध्व प्रवाह छोटे तथा क्षणिक विक्षोभो से लेकर कई दिनो तक स्थायी रहने वाले नियमित आरोही या अवतलन प्रवाह तक होता है। ये नियमित प्रवाह साधारणत दाब प्रणालियो के अधीन हुआ करते हैं। निम्नदाब क्षेत्र आरोही तथा उच्च दाब क्षेत्र अवतलन प्रवाह से सम्बन्धित होते हैं।

ऊर्ध्व गति, क्षैतिज हवा की तुलना मे बहुत क्षीण होती है। अत सामान्य प्रवाह पर विचार करते समय इसे नगण्य कर दिया जाता है। साधारणत ऊर्ध्व गति कुछ सेन्टीमीटर प्रति सैकण्ड के क्रम की पायी जाती है किन्तु गभीर अवदाबो या चक्रवातो म आरोही प्रवाह कुछ मीटर प्रति सकण्ड तक पहुच जाता है, जो क्षैतिज वायु प्रवाह के ही क्रम का होता है।

आंकिक मान मे कम होते हुए भी ऊर्ध्व गति का महत्व इसलिए बहुत अधिक है कि इसी के कारण मौसमी घटनाएँ उत्पन्न होती हैं। आरोही गति के कारण ही वायुराशि का शीतलन तथा सघनन हो पाता है, जो बादल और फिर वर्षा मे परिवर्तित होता है। अवतलन प्रवाह रुद्धोष्म उष्मन के कारण बादलो को क्षीण करने तथा साफ मौसम उत्पन्न करने की प्रवृत्ति रखता है।

ऊर्ध्वाधर गति जनित करन के कारण निम्नांकित हैं—

(1) ताप किरणों द्वारा वायुमण्डल का उष्मन या शीतलन

गर्म होने से आरोही धाराएँ तथा ठडा होन का अवतलन प्रवाह उत्पन्न हो जाता है।

(2) रुद्धोष्म अवस्था मे तापमान या आर्द्रता का अभिवहन

आर्द्र हवा सूखी हवा से हल्की होती है। अत वायुमण्डल मे यदि आर्द्रता बढाई जाए तो वह स्वत ऊपर उठने लगेगी और ऊर्ध्व-प्रवाह उत्पन्न हो जाएगा।

(3) भ्रमिलता अभिवहन (Vorticity advection)

भ्रमिलता अभिवहन का तात्पर्य अभिसरण तथा अपसरण की वद्धि से है। चक्रवाती प्रवाह म केन्द्र पर अभिसरण बढने लगता है। फलस्वरूप आरोही प्रवाह प्रारम्भ हो जाता है। इसके विपरीत प्रतिचक्रवाती प्रवाह मे केन्द्र से हवा का अभिवहन बाहर की ओर होता है, जिसके परिणामस्वरूप केन्द्र पर अपसरण की वद्धि हो जायगी, इसे सतुलित करने के लिए अवतलन प्रवाह स्थापित हो जाता है।

(4) घर्षण प्रभाव

पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि भूमितल के घर्षण से विक्षुब्ध प्रवाह उत्पन्न हो जाता है। यह विक्षोभ सूक्ष्म पैमाने से लेकर पर्याप्त ऊँचाई तक नियमित ऊर्ध्व धारा तक हो सकता है। इसकी तीव्रता, रुकावट की प्रकृति तथा आकार पर निर्भर करती है।

(5) पर्वतीय ढाल

पर्वतीय ढाल चढने वाली आरोही हवा भी ऊर्ध्वाधर प्रवाह का अवयव रखती है। पर्वत तरंगें नियमित ऊर्ध्वाधर गति उत्पन्न करने की क्षमता रखती हैं।

6 87 ऊर्ध्वाधर गति (w) की गणना करने की सबसे सरल विधि समीकरण $\frac{du}{dx}+\frac{dv}{dy}+\frac{dw}{dz}$ 0 है।

इसके अनुसार,

$$\frac{dw}{dz} = -\left(\frac{du}{dx}+\frac{dv}{dy}\right) = -D \text{ (क्षैतिज अपसरण)}$$

$$dw = \quad Ddz \qquad (1)$$

इस समीकरण के दायें पक्ष को क्रमबद्ध रूप से (step wise) समाकलित करने से w का मान ज्ञात किया जा सकता है। किन्तु यह विधि केवल उन्हीं गतियों की गणना कर सकेगी, जो अभिसरण के कारण उत्पन्न हुई हैं।

6 88 तापमान अभिवहन से उत्पन्न w की गणना निम्नांकित सूत्र से ज्ञात की जा सकती है। यह सूत्र रुद्धोष्म दशाओं में ऊष्मा गतिकी के प्रथम नियम द्वारा प्राप्त किया गया है।

$$w = \frac{\frac{\partial T}{\partial t} + u\frac{\partial T}{\partial x} + v\frac{\partial T}{\partial y}}{\gamma - \gamma d}$$

जहाँ $\frac{\partial T}{\partial t}$ = तापमान परिवर्तन की स्थानीय दर,

$\frac{\partial T}{\partial t}$ और $\frac{\partial T}{\partial y}$ = क्रमश X और Y – दिशाओं में तापमान परिवर्तन की दर,

u, v = क्रमश X और Y – दिशाओं में हवा का अवयव

γ = वायुमण्डलीय ह्रास दर, और

γd = D A L R

6 89 वृहद पैमाने पर ऊर्ध्वाधर गति की गणना करना एक दुरूह कार्य है, जिसमें उपयुक्त सभी कारकों के गणितीय समीकरणों का समावेश करना पड़ता है। मौसम वैज्ञानिक उपयुक्त समीकरण तैयार करने तथा आधुनिकतम कम्प्यूटर की सहायता से उसका हल निकालने में संलग्न हैं।

6 90 जेट-धाराएँ (Jet Streams)

जब द्वितीय महायुद्ध मे अमेरिका के B--29 बमवषक के एक पायलेट ने पहली बार जापान के ऊपर 6 से 9 किमी ऊँचाई के बीच 200 'नाट' की वायुगति रिपोट की, तो मौसम विशेषज्ञों को इसका विश्वास करना कठिन हो गया। किन्तु अब प्रचुर मात्रा मे उच्चतर वायु प्रेक्षणो के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि उत्तरी गोलार्द्ध के 30–35 तथा 50 अश अक्षाशो के लगभग पूरे वृत्त पर सकीण बंद मे अत्यधिक तीव्र हवाएँ स्थायिवत् रूप से उच्चतर क्षोभ मण्डल मे बहती रहती हैं।

उत्तरी गोलार्द्ध के उन अक्षाशो मे, जहाँ उच्चतर वायुमण्डल मे पछुवा हवाएँ प्रमुख रहती है, क्षोभ सीमा के कुछ नीचे तीव्र हवाएँ पश्चिम से पूव की ओर बहती हैं। कुछ अक्षाशो पर ये हवाएँ सकीण नलिका की भाति तग धाराओ के रूप में, अपेक्षाकृत और तीव्र (60 नाट से अधिक) गति से बहती है। मौसम चाट पर इन धाराओ के बीच से एक ऐसा अद्ध क्षैतिज अक्ष खीचा जा सकता है, जिस पर धाराएँ केन्द्रित होती हुई मान ली जाएँ। इन्हें जेट धाराएँ कहा जाता है। सकीणता के कारण ही इन धाराओ मे ऊध्व और पाश्व वायु अपरूपण (Shear) बहुत तीव्र होता है। शीत ऋतु मे जेट धाराओ की तीव्रता तथा विस्तार, दोनो ही अधिक हो जाते है।

साधारणत जेट धाराएँ 200 मिलीबार (11–12 किमी) ऊँचाई-स्तर पर पायी जाती हैं। ये धाराएँ सामान्य रूप से कुछ हजार किमी लम्बी, कुछ सौ किमी चौड़ी तथा कुछ किमी गहरी होती हैं। हवा का ऊध्व अपरूपण 5–10 मीटर/सकण्ड प्रति किमी तथा पाश्व अपरूपण, 5 मीटर/सेकण्ड प्रति 100 किमी पाया गया है। जेट धाराओ मे वायु की केन्द्रीय गति 100 नाट के क्रम की होती है, जो यदा कदा 200 नाट तक भी पहुँच जाती है।

जेट धाराएँ प्रमुख रूप से ताप हवाओ के कारण ही जनित होती हैं और इनकी तीव्रता वायुमण्डल के तापमान विपर्यास (Temperature Contra t) के समानुपाती होती है। निम्न क्षोभ मण्डल मे तापमान विषुवत् रेखा से ध्रुवो की ओर तीव्रता से घटता है T तापमान का अधिकतम विपर्यास 35 अश उत्तरी अक्षाश के आस पास पाया जाता है—जो तीव्रतम जेट धाराओ का क्षेत्र है। वाताग्र अवदाबो मे भी पर्याप्त ऊँचाई तक तीव्र तापमान विपर्यास जनित होता है। यही कारण है कि इस प्रकार के अवदाबो के क्षेत्र, ध्रुवीय वाताग्र क्षेत्रो (50–60 उ) मे भी जेट धाराएँ स्थायिवत् रूप में पायी जाती हैं।

6 91 प्रमुख विशेषताएँ

(1) क्रोड (core) के पास धाराओ की गति 60 से 200 'नाट तक पायी जाती है। 60 नाट की राशि एक स्वेच्छ मान है, जिसे जेट धाराओ की निम्नतम सीमा के लिए निर्धारित कर दिया है।

(2) जेट अक्ष से हर ओर वायु-गति तेजी से घटती जाती है। ध्रुवो की ओर 100 नाट प्रति 160 किमी तथा विषुवत रेखा की ओर 100 नाट प्रति 500 किमी की दर से गति का ह्रास होता है।

(3) जेट धारायें प्राय तीव्र तापमान विपयास से सम्बंधित होती हैं। यह विपर्यास

प्राय मध्य अक्षाशो मे पछुवा क्षेत्र के उन वाताग्रो मे पाया जाता है, जो लगभग पूरे अक्षाशीय वृत्त पर व्याप्त होते हैं।

(4) सामान्यत जेट धाराएँ पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हैं, किन्तु कहीं-कहीं धाराओ का आयाम पर्याप्त बढ़ जाने के कारण रेखाशिक (meridional) अवयव उत्पन्न हो जाता है।

(5) तीव्र वायु अपरूपण के कारण कहीं-कहीं जेट धाराओ के नीचे पर्याप्त उच्छलन (Bumping) से युक्त विक्षुब्ध तरगें पायी जाती हैं, जो विमानों के लिए खतरनाक स्थिति उत्पन्न कर सकती हैं। इस उच्छलन को स्वच्छ वायु विक्षोभ (Clear Air Turbulence या CAT) कहते हैं।

6 92 जेट धाराओं के प्रकार

जेट धाराओ के दो प्रमुख और स्थायिवत् क्षेत्र हैं, जिनके आधार पर उन्हे निम्नाकित दो प्रकारो मे बांट दिया गया है। जेट धारायें सर्दियों मे अधिक तीव्र और सगठित होती हैं।

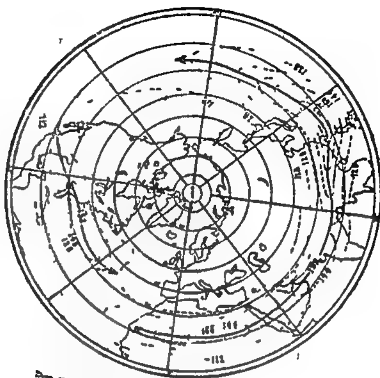
(1) ध्रुवीय सीमाग्र जेट धारा (Polar front jet stream)

ये जेट धारायें ध्रुवीय सीमाग्र क्षेत्रो (40 से 60 अश अक्षांश) मे बहती हैं, इनकी स्थिति और तीव्रता परिवर्तनशील रहती है। तीव्रता साधारणत 125 से 150 नाट के क्रम की पायी जाती है। यदाकदा वायु गति 200 नाट तक भी पहुँच जाती है।

(2) उप उष्ण कटिबन्धीय जेट धारा (Sub tropical jet stream)

दोनो ही गोलार्द्धों मे 25 से 35 अक्षाश के बीच बहने वाली 200 मिलीबार के आसपास 100 नाट के क्रम की तीव्र हवायें उप उष्ण कटिबन्धीय जेट धारायें कहलाती हैं। सर्दियो मे ये तीव्रतर हो जाती हैं और निम्न अक्षाशो की ओर खिच जाती हैं तथा 25 अक्षाश की मध्य स्थिति ग्रहण करती हैं। गर्मियो मे जेट धारायें उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर 35° अक्षाश पर स्थापित हो जाती हैं।

इन जेट धाराओ की औसत भौगोलिक स्थिति जनवरी और जुलाई मे क्रमश चित्र 6 27 और 6 28 मे प्रदर्शित की गयी हैं।



जेट धाराओं का भौगोलिक आवटन–जनवरी,
वायुगति की इकाई–किमी /घण्टा
चित्र (6 27)



6 93 भारत मे जेट धाराएँ

अक्टूबर से मई तक उप-उष्ण कटिबन्धीय जेट धारा उत्तरी भारत के क्षेत्रो से होकर गुजरती है। इसकी औसत स्थिति लगभग 27 5° उत्तरी अक्षांश मे मानी जा सकती है। औसत वायुगति पूर्व मानसून काल (मार्च मई) तथा उत्तरी मानसून काल (अक्टूबर-नवम्बर) मे कम रहती है, 60 नाट के लगभग, जो सर्दियो मे बढ कर 100 नाट के आसपास पहुँच जाती है।

ग्रीष्म मानसून के अभ्युदय के साथ जेट धारा उच्च अक्षाशो की ओर स्थानान्तरित होकर भारतीय क्षेत्र से बाहर चली जाती है। ग्रीष्म मानसून समाप्त होने के तत्काल बाद ही पुन स्थापित हो जाती है। फरवरी मे इसकी स्थिति सबसे नीचे, अर्थात् 25° उ० अक्षाश तक आ जाती है जबकि भारत मे जेट धारा तीव्रतम होती है।

मानसून काल मे 15° उ अक्षाश के वृत्त के आसपास उत्तरी पूर्वी एशिया से अफ्रीका तक उच्चतर क्षोभ मण्डल मे तीव्र पूर्वी हवाओ का अभ्युदय होता है, जो ऊँचाई के साथ बढती जाती हैं। फलत 13 से 15 किमी ऊँचाई पर इन अक्षाशो के आसपास पूर्वी जेट धाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

इसका कारण सभवत यह है कि मई से जुलाई या सितम्बर तक सूर्य के स्थानान्तरण के कारण, निम्न क्षोभ मण्डल का सर्वाधिक उष्ण क्षेत्र विषुवत् रेखा पर न होकर, एशिया और अफ्रीका के उप उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय भागो पर स्थापित हो जाता है। फलत ताप जन्य हवाएँ उत्क्रमित (reversed) होकर पश्चिम से पूर्व की ओर बहने लगती हैं जिससे इन क्षेत्रो म पश्चिमी मानसून हवाएँ ऊचाई के साथ घटने तथा पूर्वी हवाएँ ऊँचाई के साथ बढने लगती हैं।

भारतीय प्रायद्वीप पर पूर्वी जेट धाराएँ अनुकूल परिस्थितियो मे 19 – 20° उ० अक्षाश तक आ जाती हैं जबकि उनके अक्ष की गति लगभग 100 नाट तक पहुँच जाती है। साधारणत पूर्वी जेट धारा 60 नाट के क्रम की पायी जाती है।

दक्षिणी-पश्चिमी मानसून की तीव्रता तथा मानसून के अवदाबो के प्रभाव मे पूर्वी जेट अत्यधिक परिवर्तनशील रहती है और मानसून क्षीण होते ही समाप्त हो जाती है।

7

मौसम प्रेक्षण और यन्त्र

(Weather Observations and Instruments)

7.10 मौसम प्रेक्षणों की आवश्यकता अनेक उद्देश्यों के लिए होती है। ये उद्देश्य सामान्यतः दो विभिन्न वर्गों में बाँट जा सकते हैं।

(1) समकालीन उद्देश्य—जिसमें प्रेक्षण, मौसम पूर्वानुमान और चेतावनियाँ तैयार करने के लिए प्रयुक्त होते हैं।

(2) जलवायु सम्बन्धी उद्देश्य—जिसमें प्रेक्षण, औसतीकरण द्वारा जलवायु निर्धारण तथा शोध कार्यों के लिए प्रयुक्त होते हैं।

समकालीन उद्देश्य के लिए गए प्रेक्षणों को सुरक्षित रखना अनिवार्य है क्योंकि बाद में ये जलवायु सम्बन्धी अनुप्रयोगों के काम आते हैं। इसके अतिरिक्त विशेष जलवायुविक अध्ययन, जैसे कृषि, औषधि विज्ञान, जल विज्ञान आदि के लिए आवश्यकतानुरूप विशेष मौसम प्रेक्षण भी लिए जाते हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संसार भर में समकालीन और जलवायुविक वेधशालाओं (आब्जरवेटरीज) का जाल बिछा हुआ है।

वस्तुतः समकालीन और जलवायुविक उद्देश्यों के लिए गए प्रेक्षणों की क्रिया विधि में कोई आधार भूत अन्तर नहीं है। समकालीन उद्देश्य के लिए कुछ निर्धारित मौसम तत्वों के प्रेक्षणों की बहुलता से आवश्यकता होती है, जिन्हें मौसम केन्द्रों तक अति शीघ्र पहुँचने के लिए तीव्र संचार व्यवस्था अनिवार्य है।

7.11 वेधशालाओं का जाल (Net work of Observatory)

मौसम उत्पन्न करने वाली दाब प्रणालियाँ राष्ट्रों की राजनैतिक सीमाओं की मुहताज नहीं होती। ये प्रणालियाँ अपने उद्गम से दूर अनेक देशों में पहुँचकर मौसम उत्पन्न किया करती हैं। इनकी स्थिति एवं गति की सही जानकारी के लिए यह आवश्यक है कि भूतल पर वेधशालाओं का व्यवस्थित जाल बिछा हो। इसके लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग अनिवार्य है।

संसार के लगभग सभी देश विश्व मौसम वैज्ञानिक संगठन (World Meteorological Organisation) के सहयोग से काफी सीमा तक वेधशालाओं का जाल बिछा चुके हैं। दुर्गम क्षेत्रों में यह संगठन वेधशालाओं की स्थापना का कार्यभार स्वयं संभालता है। यही संगठन विश्व भर में प्रेक्षणों और प्रेक्षण-समयों का मानकीकरण करता है, ताकि समन्वय

की दृष्टि से प्रेक्षण सर्वत्र तुलनात्मक हो सकें। 00 जी एम टी (0530 भारतीय मानक समय) से आरम्भ होकर हर तीन घण्टे बाद की घड़ी प्रेक्षण लेने के लिए नियत की गई है, जो समकालीन घड़ी (Synoptic Hour) कहलाती है। इन 8 समकालीन घड़ियों में 00, 06, 12 और 18 जी० एम० टी० का समय मुख्य समकालीन घड़ी कहलाता है। भारत में सरकारी मौसम सेवा सन् 1875 में आरम्भ हुई थी। तब से वेधशालाओं के जाल में निरन्तर वृद्धि होती गई। इस समय पूरे देश में धरातलीय प्रेक्षण (Surface observation) के लिए लगभग 500 वेधशालाएँ तथा उच्चतर वायुमण्डलीय प्रेक्षण के लिए लगभग 60 पायलट बैलून केन्द्र एवं 19 रेडियो सोंडे केन्द्र हैं।

इनके अतिरिक्त राज्य और केन्द्र सरकारों के अधीन हजारों वर्षा मापी केन्द्र हैं, जो केवल वर्षा के प्रेक्षण लेते हैं।

7 12 एक पूर्ण समकालीन वेधशाला, समकालीन घड़ियों में निम्नांकित प्रेक्षण रिकार्ड करती है।

पवन की दिशा और चाल

जिस दिशा से हवा आ रही हो वह पवन की दिशा मानी जाती है और यह दिशा पवन दर्शन (Wind-vane) द्वारा नापी जाती है। हवा की गति पवन वेग मापी (एनीमोमीटर) या एनीमोग्राफ द्वारा ज्ञात की जाती है। मौसम विज्ञान में पवन गति की इकाई साधारणतः नाट (Knot) ली जाती है। एक 'नाट' लगभग 2 किमी प्रति घण्टा के बराबर होता है।

वायुदाब

यह वायुदाब मापी द्वारा मिलीबार की इकाइयों में व्यक्त किया जाता है। दाब के सतत और स्वचालित माप के लिए बेरोग्राफ प्रयुक्त किया जाता है।

तापमान और आर्द्रता

भूमि से लगभग 4 फुट ऊपर की हवा का तापमान और आर्द्रता स्टीवेंसन स्क्रीन में रखे गए तापमापियों से नापे जाते हैं। इसके तापमान का माप साधारणतः सेंटीग्रेड (सेल्सियस) में लिया जाता है। तापमान और आर्द्रता के सतत तथा स्वचालित प्रेक्षणों के लिए क्रमशः थर्मोग्राफ और हाइग्रोग्राफ नामक उपकरण प्रयोग में लाये जाते हैं।

वर्षा

साधारण वर्षा मापी और स्वालेखी (self recording) वर्षा मापी द्वारा मिलीमीटर की इकाई में वर्षा का माप लिया जाता है।

उपर्युक्त यन्त्रों के अतिरिक्त बिना उपकरण के आकलन (estimation) द्वारा कुछ प्रेक्षण लिए जाते हैं, जैसे दृश्यता, मेघाच्छन्नता की मात्रा और प्रकार तथा वर्तमान और पिछली मौसम अवस्था। इनका विवरण अनुच्छेद 7 20 में दिया गया है।

7 20 दृश्यता

यह वह क्षैतिज दूरी है जहाँ तक प्रेक्षण के समय वस्तुएं स्पष्ट देखी और पहचानी जा सकें। इसका अनुमान मीटर या किलोमीटर की इकाइयों में लगाया जाता है। आकलन

की सहायता के लिये निश्चित दूरियों पर पूर्व निर्धारित भू-चिह्नों, जैसे मीनार, पहाड़ियाँ विशिष्ट इमारतों को देखा जाता है, भू-चिह्नों के चयन में यह सावधानी रखनी चाहिये कि वे वातावरण के पार्श्व में स्पष्ट पहचाने जा सकें। चिह्न हर दिशाओं में होने चाहियें। दृश्यता का मान बहुत कुछ मौसम अवस्थाओं पर निर्भर करता है गहरे कुहरे में दृश्यता 50 मीटर से भी नीचे गिर जाती है। मृदु कुहरे में भी दृश्यता 1 किमी से कम हो जाती है। कुहासे में दृश्यता 1 से 2 तथा हेज में 2 से 4 किमी के बीच रहती है। भारी वर्षा में भी दृश्यता सामान्यतः 4 किमी से घट जाती है। हल्की वर्षा का दृश्यता पर प्रायः कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

रात्रि में दृश्यता का आकलन अपेक्षाकृत क्लिष्ट है और केवल उन्हीं वेधशालाओं में इसका प्रेक्षण लिया जा सकता है जहाँ ज्ञात कैंडिल पावर के प्रकाश स्तम्भों का भू-चिह्नों के स्थान पर व्यवस्था हो। दृश्यता की यांत्रिक माप के लिये कुछ उपकरण भी अब तैयार कर दिये गये हैं जैसे दृश्यतामापी, स्कोपोग्राफ और ट्रान्समिसोमीटर।

7.21 मेघ प्रेक्षण

सम्पूर्ण मेघ प्रेक्षण 4 भागों में विभक्त है

(1) मेघ की मात्रा का आकलन

(2) मेघ प्रकार की पहचान

(3) मेघ के आधार तल की ऊँचाई का आकलन या यांत्रिक माप

(4) मेघ की गति और दिशा की माप

साधारणतः समकालीन प्रेक्षणों में पहले तीन भाग ही सम्मिलित करते हैं।

मेघाच्छन्नता की मात्रा अष्टमांशों (Oktas) में नापी जाती है। पूरे दृश्य आकाश का आठवाँ हिस्सा एक अष्टमांश कहलाता है। यदि आधा आकाश मेघाच्छन्न है तो मेघ की मात्रा चार अष्टमांश होगी और यदि आकाश पूर्णतः मेघाच्छन्न है तो मेघ की मात्रा आठ अष्टमांश होगी। यह माप प्रेक्षक के चाक्षुष आकलन (Visual estimation) पर निर्भर करता है।

प्रेक्षण में मेघ प्रकार की पहचान भी अंकित करनी पड़ती है। अध्याय 5 में विभिन्न मेघ प्रकारों की विशिष्टताएँ संक्षिप्त रूप में बतलाई गई हैं। प्रायः आकाश में एक साथ एक से अधिक प्रकार के मेघ, तह-दर-तह छाये रहते हैं। इनकी पहचान प्रेक्षक को अपनी बुद्धिमत्ता और अनुभव के आधार पर ही करनी पड़ती है।

पक्षाभ, कपासी तथा स्तरी रूप में मेघों (जिनका विवरण अध्याय 5 में किया जा चुका है) के अलावा भी अनेक प्रकार के मेघों का वर्णन मेघ एटलस में किया गया है, जो कुछ विशेषताओं के कारण मुख्य प्रकारों से अलग किए गए हैं। इन मेघों के लैटिन नाम दिए गए हैं। उन सबका विवरण प्रस्तुत पुस्तक के क्षेत्र से बाहर है। इनमें से कुछ मुख्य मेघ ये हैं।

(1) पर्वतीय या लेन्टीकुलर मेघ—इनका विवरण अध्याय 6 में दिया जा चुका है। ये *Cc Ac* तथा *Sc* प्रकार के तीक्ष्ण किनारों वाले मेघ हैं, जो प्रायः लेंस के अनुप्रस्थ काट की भाँति दिखाई देते हैं।

(2) कैस्टेलेटस—ये मेघ प्राय गर्मियों में दृष्टिगोचर होते हैं तथा कगूरी या क्रेनेलटेड जैसी आकृति रखते हैं।

(3) मेम्मेटस—कभी-कभी कोई मेघ-सह कहीं से फूल कर पाउच या स्तन की तरह दिखाई देने लगती है। इस मेम्मेटस-मेघ कहते हैं।

7 22 मेघ के आधार तल की ऊँचाई मापने या आकलित करने की अनेक विधियाँ हैं जिनमे कुछ निम्नांकित हैं

(1) सीलिंग-बेलून—यह दिन म निचले मेघ के आधार तल की ऊँचाई (H) ज्ञात करने की मानक विधि है। हाइड्रोजन भरा एक छोटा रबर का गुब्बारा छोड़ा जाता है तथा मेघ मे गुब्बारे के विलीन होने का समय (T), विराम घड़ी से नोट कर लिया जाता है। हाइड्रोजन की मात्रा के आधार पर गुब्बारे की आरोहण गति (V) पूर्व निर्धारित होती है। स्पष्टत $H = VT$

भारतीय वेधशालाओ में सामान्यत 15 ग्राम के गुब्बारे प्रयुक्त किए जाते हैं, जिनमे V का मान लगभग 10 किमी/घण्टा के बराबर होता है।

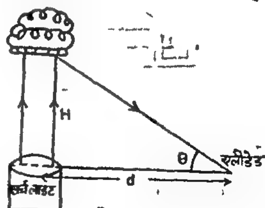
यह विधि निम्न मेघो के लिए बहुत उपयोगी है। ऊँचे मेघो के लिए इसका उपयोग इसलिए उचित नही है कि उच्चस्तरीय हवाएँ गुब्बारे को ऊर्ध्वाधर मार्ग से बहुत विक्षेपित कर सकती हैं।

गुब्बारे के साथ लालटेन या मोमबत्ती संलग्न करके यह विधि रात्रि म भी प्रयुक्त हो सकती है। इस स्थिति मे गुब्बारे की आरोहण दर ज्ञात करने मे लालटेन का भार भी सम्मिलित करना होगा।

(2) सर्चलाइट और एलीडेड—सर्चलाइट स मेघ के आधार-तल पर प्रकाश पुंज ऊर्ध्वाधर दिशा मे फेंकते हैं और सर्चलाइट से ज्ञात दूरी (d) पर रखे गए एक यन्त्र द्वारा प्रकाशित मेघ तल का उन्नतांश (θ) पढ़ लेते हैं। इस यन्त्र का नाम एलीडेड है। सर्चलाइट और एलीडेड साधारणत एक ही तल पर लगभग 300 मीटर की दूरी पर रखे जाते हैं।

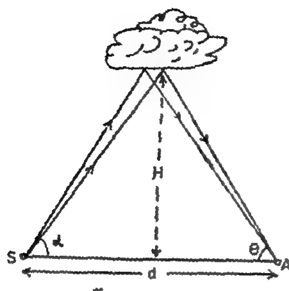
आधार की ऊँचाई,

$$H = d \tan \theta$$



चित्र (7 1)

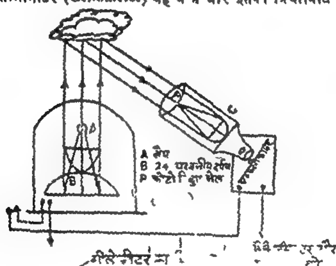
यदि बादल सिर के ठीक ऊपर नहीं है, तो प्रकाश पुंज किसी कोण α पर प्रक्षेपित करना पड़ेगा। इस स्थिति मे जैसा कि चित्र (7 2) से स्पष्ट है,



$$H = \frac{d}{\cot\ \alpha + \cot\ \theta}$$

चित्र (7 2)

3) सीलोमीटर (Cellometer) यह यन्त्र और इसकी क्रियाविधि चित्र (7 3)



चित्र (7 3)

द्वारा समझाई गई है । एक माडुलित (mooulated) प्रकाश पुंज मेघ तल पर प्रक्षेपित किया जाता है और प्रकाशित तल का उत्तरांश सीलोमीटर के रिसीवर द्वारा ज्ञात किया जाता है । रिसीवर सयन्त्र एक प्रकाश 'विद्युत दूरबीन (Photo electric tele scope) होता है जो केवल माडुलित प्रकाश के लिए ही सवेदन शील होता है, अन्य किसी प्रकाश के लिए नही ।

7 23 उपयुक्त विधियो के बावजूद भी मेघ तल की ऊँचाई प्राय आकलित करने की आवश्यकता पड़ती है । प्रवतीय अचलो मे, जहाँ पवतो पर मेघ जनित होते हैं, मेघ तल की ऊँचाई शिखरो की तुलना द्वारा पर्याप्त यथार्थता से ज्ञात की जा सकती है । मैदानी भागो

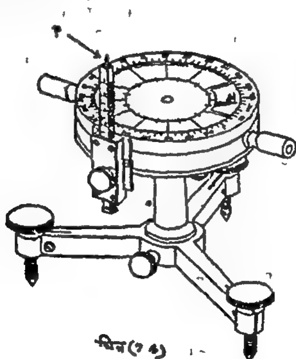
पर, विशेषकर रात्रि मे, यह आकलन केवल प्रेक्षक के अनुभव और विभिन्न मेघ प्रकारों की मानक ऊँचाइयो के आँकडो के आधार पर किया जाता है।

7 24 नेफोस्कोप प्रेक्षण

नेफोस्कोप वह यन्त्र है जो मेघ गति की दिशा तथा कोणिक वेग (w) नापता है। यदि मेघ की ऊँचाई H हो, तो मेघ की गति (v) सूत्र, $v = Hw$ द्वारा सरलता से ज्ञात की जा सकती है।

नेफोस्कोप दो प्रकार के होते हैं—(1) परावर्तन नेफोस्कोप जैसे फाइनमैन दर्पण नेफोस्कोप (2) डाइरेक्ट विजन नेफोस्कोप जैसे बेसन कोम्ब नेफोस्कोप।

यहा केवल फाइन मैन दर्पण नेफोस्कोप का वर्णन किया जा रहा है। इसमे एक गोलाकार अंकित काले का दर्पण होता है, जो क्षैतिज कारी पदो से युक्त एक ट्राईपोड स्टैंड पर स्थित कर दिया जाता है।



चित्र (7 4)

दर्पण एक पीतल के फ्रेम में बन्द कर दिया जाता है जिस पर अंशो का पैमाना अंकित होता है। फ्रेम से एक उर्ध्वाधर सूचक (P) लगा होता है, जिसे ऊपर-नीचे खिसकाने की पेंच व्यवस्था होती है। सूचक पर एक मिलीमीटर पैमाना भी लगा होता है, जिससे सूचक के शिखर की दर्पण तल से ऊँचाई ज्ञात की जा सके।

दर्पण पर 25 मिमी त्रिज्यान्तर के दो समकेन्द्र वृत्त अंकित किए जाते हैं। व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि बड़ा वृत्त फ्रेम के किनारे से भी 25 मिमी का त्रिज्यान्तर रखे। अभिविन्यास (orientation) के लिए दर्पण के नीचे एक कम्पास सुई

(N) इस प्रकार स्थित की जाती है कि उसका अग्रभाग काले शीशे में कटी एक छोटी सी खिड़की द्वारा देखा जा सके ।

प्रेक्षण के लिए नेफोस्कोप किसी समतल पर रखकर दर्पण को स्पिरिट लेविल की सहायता से समतल कर लिया जाता है । अब यंत्र इस प्रकार समायोजित किया जाता है कि 180 अंश का निशान ठीक उत्तर की ओर पड़े ।

एक उपयुक्त मेघ-राशि इस प्रकार चुनली जाती है कि उसका बिम्ब दर्पण के केन्द्र पर पड़े । अब प्रेक्षक सूचक को घुमाकर उसकी लम्बाई इस तरह समायोजित करता है कि उसके नोक का परावर्तित बिम्ब भी केन्द्र पर पड़े । प्रेक्षक अपना सिर इस प्रकार हिलाता है कि मेघ राशि और सूचक का बिम्ब संलग्न रहे ।

अंकित शीशे का वह बिन्दु, जहाँ मेघ राशि शीशे से बाहर चली जाती है, नोट कर लिया जाता है । यह मेघ गति की दिशा बतलाती है । केन्द्र से भीतरी वृत्त की परिधि तक मेघ-राशि के पहुँचने का समय भी नोट कर लिया जाता है ।

मान लीजिए, वृत्त की त्रिज्या a (= 25 मिमी) तथा सूचक के नोक की ऊँचाई h मिमी है । यदि A से B तक मेघ राशि (t) समय में पहुँची है, तो

$$\frac{AB}{a} = \frac{H}{h}$$

$$AB = \frac{aH}{h}$$

जहाँ, H मेघ की ऊँचाई है ।

मेघ की गति, $v = \frac{aH}{ht}$

7.26 वर्तमान और पिछला मौसम

इस शीर्षक के अन्तर्गत मौसम घटनाओं, जैसे वर्षा, फुहार, ओला, तुषार, कुहरा कुहासा, नभा-नहिम आंधियाँ, रवात आदि का उल्लेख किया जाता है । यह उल्लेख सांकेतिक कोड के रूप में होता है । वर्तमान मौसम का अध्ययन प्रेक्षण समय से 10 मिनट पूर्व प्रारम्भ कर दिया जाता है । 'पिछला मौसम' शीर्षक में 1 घण्टे पूर्व घटित मौसम का उल्लेख किया जाता है ।

वर्तमान मौसम को 100 प्रकारों में उपविभाजित किया गया है, जिनकी कोड संख्याएं 00 से 99 तक दी गई हैं । प्रथम 50 संख्यायें अवक्षेपण रहित मौसम प्रकारों के लिए दिया का गई हैं । 50–99 तक के कोड अवक्षेपण युक्त मौसमी घटनाओं को व्यक्त करते हैं । 50–59 कोड-समूह फुहार और उसके उप प्रकारों के लिए, 60–69 वर्षा के लिए 70–79 तुषार, हिमपात तथा अन्य ठोस प्रकार के अवक्षेपणों के लिए तथा 80–99 कुछ कोड के विभिन्न अवक्षेपण, आंधी आदि के लिए बनाए गए हैं ।

7.30 उल्काएं और मौसम घटनाएँ (Meteors and weather phenomena)

मेघो के अतिरिक्त अन्य घटना, जो वायुमण्डल या पृथ्वीतल पर देखी जाती है, उल्का कहलाती है। यह घटना वर्षा तथा आर्द्र या अनार्द्र कणो का हवा मे निलम्बन हो सकती है। उल्काएँ प्रकाशिक वैद्युतिक आरूप मे भी देखी जा सकती हैं, जिनसे यदा कदा ध्वनि भी सम्बन्धित होती है। अत उल्काओ को निम्नांकित मुख्य वर्गों मे विभक्त किया जा सकता है—

7 31 (अ) जलोल्काएँ (Hydrometeors)—जैसे, फुहार, वर्षा, बौछार, तुषार तथा ठोस हिमकणो का अवक्षेपण। इनका विवरण अध्याय 5 मे दिया जा चुका है।

कुहरा, कुहासा, तथा हेज यद्यपि मेघो की प्रकृति के ही होते हैं, क्योंकि ये जलकणो के हवा मे निलम्बन से उत्पन्न होते हैं, तथापि इन्हें भूमितल के पास जनित होने के कारण मेघा से अलग करके जलोल्काओ में सम्मिलित कर लिया गया है।

कुहरा और कुहासा में आर्द्रता 75% से अधिक होती है तथा दृश्यता क्रमश 1 किमी से कम और 1 से 2 किमी के बीच होनी चाहिए। हेज भी भूमितल के निकटतम वायुमण्डल मे अति सूक्ष्म कणा (प्राय आर्द्रता ग्राही) का निलम्बन है। ये सूक्ष्म कण बहुत बड़ी सख्या में उपस्थित होते हैं। हेज मे दृश्यता 3 से 5 किमी तक हो सकती है।

भूमितल के आसपास की नमी, जल या ठोस कणो के रूप मे सतह या वनस्पतियो पर निक्षेपित हो जाती है। इन्हें भी जलोल्काएं कहा जाता है। ये मुख्यत चार प्रकार के होते हैं

(1) ओस (Dew)

यह भूमि के आस पास किसी सतह पर जलकणो का निक्षेपण है, जो निकट की स्वतन्त्र नम हवाओ के सघनन से बनता है।

(2) पाला या तुषार (Frost)

जब ओसाक 0°C से कम होता है, तो वायुमण्डलीय नमी का ऊर्ध्वपातन तुषार कणो के रूप म हो जाता है जो पत्तियो और भूमि तल पर जम जाते हैं। ये साधारणत मुलायम और रवेदार ठोस के रूप मे होते हैं।

(3) राइम (Rims)

अतिशीतल सूक्ष्म जल कणो के जमने से छोटे-छोटे हिमकण तैयार हो जाते हैं। शीघ्र जमने के कारण राइम के दांतों के मध्य हवा फसी रहती है। अधिक मात्रा में होने से राइम तहो के रूप म जम जाते हैं।

(4) ग्लेज (Glaze)

यह हिम का सम और पारदर्शी निक्षेपण है जो वर्षा की बूंदो के जमने से बनता है।

7 32 लिथोउल्काएँ (Lithometeors)

धूल या अन्य अनार्द्र ठोस कणा का वायुमण्डलीय निलबन लिथो उल्का कहलाती है। धूल, धुध, चिमनियो स निकले कार्बनिक धूम्रकण तथा समुद्र स निकले नमक के कण, लिथोउल्का के कुछ उदाहरण हैं। रेगिस्तान की गर्मियो म उठन वाली धूल के बगूले या रतीली आधियाँ भी इसी श्रेणी म आती है। मुख्य प्रकारो का सक्षिप्त विवरण निम्नांकित है—

(1) धूल धुंध (Dust-Haze)

यह वायुमण्डल की निकटतम तहों में भूमि तल से उठाई गई धूल या रेत के कणों का निलम्ब है, जिसमें आर्द्रता निश्चित रूप से 75% से कम और दृश्यता धुंध के समान ही होती है।

(2) धूम (Smog)

यह औद्योगिक चिमनियों तथा मोटर गाड़ियों से निकले प्रदूषक कणों का वायुमण्डल में निलम्बन है।

(3) धूल या रेत भ्रमिल (Dust or Sand Whirl)

कभी-कभी ग्रीष्म काल के दोपहरों में भूमितल के अत्यधिक उष्मन से वायु मण्डल के निचले तह काफी गर्म हो जाते हैं। स्थल की आकृति और प्रकृति के कारण जब कोई सीमित भू भाग अपेक्षाकृत अधिक तप्त हो जाता है, तो वहाँ स्वयं संवाहनिक धाराएँ (Auto Convective Currents) उत्पन्न हो जाती हैं। ये धारायें अपने साथ धूल या रेत की पर्याप्त मात्रा कुछ ऊँचाई तक उठा देती हैं। निम्न दाब क्षेत्र के चारों ओर प्रवाह चक्रवाती या प्रतिचक्रवाती रूप में भ्रमिल पैदा कर देता है। धूल-भ्रमिल साधारणतः कुछ फुट व्यास तथा कुछ मीटर ऊँचाई के आकार का होता है।

(4) धूल या रेत उड़ाती हवाएँ (Dust or Sand Raising Winds)

तीव्र दाब प्रवणता के कारण तेज धूल उड़ाती हवायें गर्मियों में बहती हैं। यह विक्षुब्ध प्रवाह है जो दृश्यता को साधारणतः एक किमी से भी कम कर देती है।

(5) धूल भरी या रेतीली आंधी (Dust or Sandstrom)

अस्थायी वायुमण्डल और नमी की अनुपस्थिति में धूल या रेत की भारी राशियाँ उर्ध्वधाराओं द्वारा बहुत ऊपर तक उठा ली जाती हैं। इस घटना में साधारणतः कपासी वर्षी बादल बन जाते हैं। आर्द्रता की कमी से वर्षा प्रायः नहीं होती किन्तु गर्जन और तड़ित की घटनायें सामान्य रूप से पायी जाती हैं।

7 33 प्रकाशोल्काएँ (Photo Meteors)

ये प्रकाशीय घटनायें हैं जो सूर्य और चन्द्रमा की किरणों के परावर्तन, आवर्तन या विवर्तन (Diffraction) से उत्पन्न होती हैं। ये घटनायें स्वच्छ आकाश और मेघयुक्त, दोनों स्थितियों में जन्म लेती हैं। स्वच्छ आकाश की प्रमुख प्रकाश-उल्कायें, मृगतृष्णा (mirage) शिमर (Shimmer), हरित क्षण दीप्ति (Green flash), सांध्य प्रकाश स्तम्भ (Twilight Columns) आदि हैं। मेघयुक्त आकाश में आभामण्डल, कराना, इन्द्रधनुष, धुंध धनुष, क्रेपसुनर किरणें आदि घटनायें देखी जाती हैं। इनमें से कुछ के विवरण निम्नांकित हैं—

(1) आभामण्डल (Halo)

यह प्रकाश घटनाओं का एक समूह है जो प्रकाश के घेरा (ring), स्तम्भ तथा चमकीले धब्बों की आकृति जैसी आकाश में दिखाई देती हैं। ये घटनायें निलम्बित हिम-कणों द्वारा किरणों के आवर्तन के फलस्वरूप जन्म लेती हैं।

$-20°C$ स्तर से ऊपर मेघ-कण, मुख्यत हिम-कणो से ही बने होते हैं। जब हिम-कणो की सान्द्रता कम होती है (साधारणत पक्षाभस्तरी मेघ मे), तो इनसे आवर्तित किरणें भूमि तक पहुँचती हैं और सूर्य या चन्द्रमा धुंधले रूप मे बादलो से झलकते हैं। अनुकूल परिस्थितियो मे रात्रि मे चन्द्रमा तथा दिन मे सूर्य को केन्द्रित किए हुए, रंगीन वृत्त के आभामण्डल स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। कभी-कभी बड़े वृत्त का एक और आभामण्डल भी दृष्टिगोचर होता है। चन्द्र आभामण्डल प्राय सौर आभामण्डल से कम चमकीले होते हैं। साधारणत 22 अंश अर्द्ध व्यास के आभामण्डल ही दिखाई देते हैं। बड़ा आभामण्डल 46 अंश त्रिज्या का होता है। (शिरोबिन्दु (Zenith) से क्षितिज के पूरे चाप का माप 90 अंश लिया जाता है।)

विभिन्न आकारो के हिमकणो द्वारा आवर्तन से भिन्न भिन्न प्रकाशीय आकृतियाँ दिखलाई दे सकती हैं।

(2) करोना

जब प्रकाश की किरणें पतली तह के हिम-कणो से युक्त मेघ से गुजरती हैं, तो हिम-कणो द्वारा विवर्तन के फलस्वरूप आभामण्डल से बहुत छोटे कई चमकीले वृत्त, सूर्य या चन्द्रमा का घेरा बना लेते हैं। साधारणत तीन से अधिक वृत्त दृष्टिगोचर नही होते। यह घटना करोना कहलाती है। चन्द्र करोना अधिक सामान्य घटना है। यद्यपि सूर्य के चारो ओर भी करोना उसी बहुलता से उत्पन्न होते हैं, तथापि तीव्र चमक के कारण दिन मे अधिकतर दिखाई नही देते।

करोना मण्डल म रंगो की स्थिति और क्रम आभामण्डल के ठीक विपरीत होते हैं।

(3) इन्द्र धनुष (Rainbow)

यह वर्षा की गिरती बूँदो से, सौर किरणो के आवर्तन तथा परावर्तन का परिणाम है, जिसम रंगीन प्रकाश वृत्ताकार चाप की तरह दिखाई देता है। सूर्य, प्रेक्षक की आँख तथा इन्द्र धनुष का केन्द्र एक सरल रेखा पर पड़ता है। इस प्रकार इन्द्र धनुष के उच्चतम बिन्दु का दिगंश (Azimuth) सूर्य के दिगंश से 180° विपरीत होता है।

अच्छी तरह विकसित इन्द्रधनुष मे द्वितीयक तथा तृतीयक रंगीन चाप भी स्पष्ट दिखाई देते हैं। इन्द्रधनुष का वर्ण-पट अन्दर से क्रमश बैंगनी, नीला, हरा, पीला, नारंगी तथा लाल के क्रम म होता है। लेकिन द्वितीयक इन्द्रधनुष पर रंगो का क्रम बिल्कुल विपरीत होता है।

प्रारम्भिक इन्द्रधनुष सौर किरणो के गोलाकार जल बूँदो द्वारा एक बार पूर्ण आन्तरिक परावर्तन से बनते हैं तथा द्वितीयक धनुष दो बार पूर्ण आन्तरिक परावर्तन के फलस्वरूप बनते हैं। मान लीजिए, जल की बूँद के स्थान A पर कोई किरण आपतित होती है, जहाँ पर आवर्तन के बाद यह किरण, दिशा AB ग्रहण करती है। यदि B पर इसका पूर्ण आन्तरिक परावर्तन होता है, तो परावर्तित किरण BC बिन्दु C से आवर्तन द्वारा बूँद के बाहर आ जाती है। इस बीच मान लीजिए, किरण बूँद की आन्तरिक तहो से n बार पूर्ण परावर्तित हुई। तब आगत और बहिर्गत किरणो के बीच का कुल विक्षेप,

$$D = 2(i - r) + n(180 - 2r), \qquad (1)$$

जहा i और r क्रमश A पर आपतन तथा परावतन कोण हैं। चूंकि निम्नतम विक्षेप के लिए लिए किरणें सबसे अधिक चमकीली होती हैं, अत इस स्थिति मे,

$$\frac{dD}{di} = 2 - \frac{dr}{di} - n\frac{dr}{di} = 0$$

या $\frac{dr}{di} = \frac{1}{n+1}$

चूंकि $\sin i = \mu \sin r,$ (ii)

$$\cos i = \frac{di}{dr} = \mu \cos r$$

$$\cos i = \frac{\mu}{n+1} \cos r \qquad \text{(iii)}$$

(ii) और (iii) से—

$$\cos i = \sqrt{\frac{\mu^2 - 1}{n^2 + 2n}}$$

तथा $\cos r = \frac{n+1}{\mu}\sqrt{\frac{\mu^2 - 1}{n^2 + 2n}}$

अब मान लीजिए, $n = 1$,

बैंगनी किरणो के लिए $i = 58° \ 48'$, $r = 39° \ 33'$ तथा $180 - D = 40° \ 36'$ और लाल किरणो के लिए $i = 59° \ 29'$ $r = 40° \ 19'$ तथा $180 - D = 42° \ 18'$

स्पष्ट है कि इन्द्रधनुष तभी दिखाई देगा, जब $180 - D$ का मान क्षितिज से ऊपर होगा। D के मान मे भिन्नता के कारण अलग अलग रग की किरणें अलग माग से प्रेक्षक तक आती हैं, अत इन्द्रधनुष अलग रगों मे स्पष्ट दिखाई दता है।

चित्र (7.6)

चित्र (7.7)

यदि $n=2$ हो तो $180-D$ का मान बैंगनी रग के लिए $(53^\circ\ 38')$ लाल $(50^\circ\ 40')$ से अधिक हो जाता है। फलत द्वितीयक इन्द्रधनुष मे, रगो का क्रम विपरीत होता है।

7 34 विद्युतोल्काएँ (Electro Meteors)

ये वायुमण्डलीय स्थिर विद्युत के दृश्य या श्रव्य प्राकट्य हैं—जैसे तड़ित या मेघ गर्जन जो आवेशों के अनियमित विसर्जन से उत्पन्न होते हैं। ये घटनाएँ सामान्यत संवाहनिक मेघों से सम्बन्धित हैं।

सेंट एल्मो अग्नि या ध्रुवीय अरोरा अविच्छिन्न और नियमित विद्युतोल्का हैं। ध्रुवीय क्षेत्रों की रात्रि में अरोरा एक दिव्य वक्र या धब्बे की तरह दिखाई देती है, जिसके नीचे से आकाश अपेक्षाकृत अधिक गहरा प्रतीत होता है।

7 40 मौसम के यांत्रिक प्रेक्षण दो प्रकार के होते हैं—

(1) धरातलीय मौसम वैज्ञानिक प्रेक्षण

(2) उच्चतर वायु प्रेक्षण

धरातलीय वायुदाब, तापमान, आर्द्रता, वायुवेग और वर्षा मापन के लिए, मौसम वेधशालाओं में सामान्य यन्त्रों के अतिरिक्त स्वालेखी (Self recording) यन्त्र भी प्रयुक्त किए जाते हैं। इनका संक्षिप्त परिचय निम्नांकित है

7 41 वायुदाब का माप

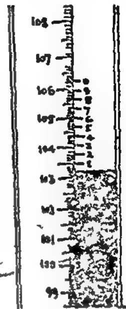
फोरटिन अथवा क्यू (Kew) प्रकार के दाबमापी जिनमें वर्नियर पैमाने की व्यवस्था होती है। वायुदाब को मापने के लिए प्रयुक्त होते हैं। कुण्डिका समायोजन के पहले दाबमापी की नली को धीरे से थप-थपा लेना चाहिए। दाबमापी से संलग्न तापमापी द्वारा तापमान का पाठांक ज्ञात करके, दाबमापी के पाठांक को तापमान, गुरुत्व तथा निदेशांक त्रुटि के लिए संशोधित कर लेना आवश्यक है।

अधिक ऊँचाई पर स्थित वेधशालाओं के लिए फोरटिन दाबमापी उपयुक्त है क्योंकि दाब कम होने से नली का जो पारा नीचे गिरता है, उसे फोरटिन की कुण्डिका में स्थान मिल सकता है। क्यू प्रकार में यह व्यवस्था नहीं होती। दाब का माप साधारणतः मिलीबार की इकाई में अंकित किया जाता है। पाठांक के लिए वर्नियर पैमाने का समायोजन पारद के उत्तल मनिस्कस के शीर्ष स्तर पर करना चाहिए (चित्र 7 8)।

7 42 तापमान और आर्द्रता का माप

स्टीवन्सन स्क्रीन (चित्र 7 9) तथा उसमें रखे गए शुष्क बल्ब, आर्द्र बल्ब, उच्चतम और निम्नतम तापमापियों का विवरण अध्याय 3 में दिया गया है। ये क्रमश हवा का तापमान आर्द्र बल्ब तापमान तथा 24 घण्टों में उच्चतम और निम्नतम तापमान का पाठांक देते हैं। आर्द्र बल्ब तापमापी के बल्ब को सदा नम रखने के लिए, मस्लिन (मलमल) के धागों का आसवित जल में डूबा रहना आवश्यक है।

आर्द्र बल्ब और शुष्क-बल्ब तापमान से ओसाक ज्ञात करने के लिए आर्द्रता मापी सारणियाँ उपलब्ध हैं, जिनके प्रयोग से ओसाक ज्ञात कर लिया जाता है। वायु तापमान और ओसाक से सापेक्ष आर्द्रता भी उपलब्ध सारणियों से पढ़ ली जाती है। कुछ ठण्डे स्थानों पर जब आर्द्र-बल्ब तापमान 0°C से नीचे पहुँच जाता है, तो पानी जम जाने के कारण धागों द्वारा जल शोषण रुक जाने की आशंका उत्पन्न हो जाती है। ऐसे अवसरों पर प्रेक्षण से एक घण्टा पहले निरीक्षण कर लेना चाहिए। यदि जल का संभरण (Supply) रुक गयी है, अर्थात् शुष्क और आर्द्र तापमापी पाठांक में कोई अन्तर नहीं दर्शाते, तो आर्द्र बल्ब के ऊपर लिपटा कपड़ा हटा कर, बल्ब के ऊपर जमी बर्फ को जल में रखकर पिघला देना चाहिए। इस क्रिया के लगभग आधे घण्टे बाद ही आर्द्र बल्ब तापमापी अपरिवर्ती (steady) अवस्था में आ पाता है।



पैमाने का चार्ट

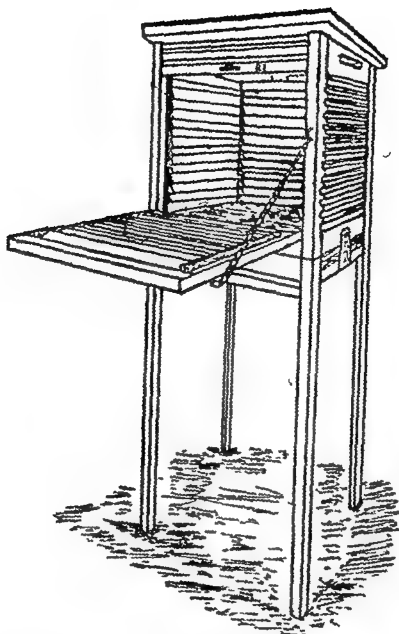
चित्र (7 8)

7 43 वायुवेग का माप

वायु दिशा और गति के माप के लिये, अलग-अलग यन्त्र हैं। वायु दिशा पवन दर्शक द्वारा ज्ञात की जाती है। यह एक सन्तुलित लीवर है, जो एक उच्च अक्ष के चारों ओर स्वतन्त्रता से घूम सकता है। लीवर का एक सिरा, जो कुछ चौड़ा होता है, उस दिशा में रहता है, जिधर से हवा आ रही हो और दूसरा तीर की तरह नुकीला सिरा हवा के बहने की दिशा प्रदर्शित करता है। लीवर के नीचे दिशाओं के निशान बने होते हैं।

हवा की दिशा साधारणतः उस कोण के रूप में व्यक्त की जाती है, जो उत्तर दिशा और उस दिशा के बीच बनता है, जिधर से हवा आ रही है। जैसे, यदि हवा ठीक पूर्व से बह रही है, तो उसकी दिशा 90 अंश और यदि पश्चिम से बह रही है, तो 270 अंश मानी जायेगी। चित्र (7 10) में दिशाओं के कोणिक मान स्पष्ट किए गए हैं।

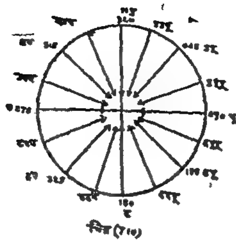
वायुगति या वायु बल का मान 'पवन वेग मापी' (एनीमोमीटर) नामक यन्त्र से ज्ञात किया जाता है। इसमें तीन या चार अर्द्ध-गोलाकार प्याले (व्यास = 76 मिमी) धातु की छड़ों के सिरों पर एक दूसरे से बराबर कोण बनाते हुए लगे होते हैं। यदि चार प्याले हैं तो एक दूसरे के समकोण पर और यदि तीन हैं तो 120° पर लगे होते हैं। छड़ का कटान बिन्दु, केन्द्र पर एक उर्ध्वाधर नली के सहारे स्थिर रहता है। इसी नली के नीचे एनीमोमीटर बक्स लगा होता है जिसमें वायु बल का पाठांक पढ़ने की व्यवस्था होती है। वायुबल से प्याले घूमते हैं। घूमने की गति वायु बल के समानुपाती होती है। यह गति गियर प्रणाली से एनीमोमीटर बक्स में स्थिर साइक्लोमीटर (Cyclometer) संचालित कर देता है।



चित्र (7-9)

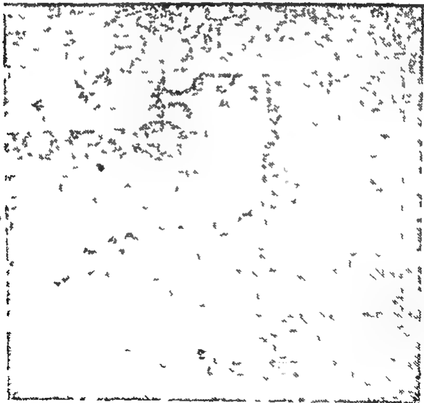
पवन दर्शक और पवन वेग मापी सामान्यतः भूमि से 10 मीटर ऊँचाई पर वृक्षों या भवनों की रुकावट से ऊपर लगाए जाते हैं, जिससे वे स्वतन्त्र हवा की दिशा और गति का ज्ञान दे सकें।

7.44 कभी-कभी बिना यन्त्र की सहायता से भी वायुगति का अनुमान लगाने की आवश्यकता होती है। इसकी सफलता प्रेक्षक का दक्षता और अनुभव पर निर्भर करती है। एडमिरल बीफोर्ट (Beaufort) ने, सन् 1805 में अनुभव के आधार पर, वायुबल आकलित



चित्र (7.10)

करने के लिए निम्नांकित पैमाना प्रस्तुत किया, जो अनुमानित वायुगति ज्ञात करने में अभी भी प्रेक्षकों के लिए एक आधार का काम करता है।



चित्र (7 11)

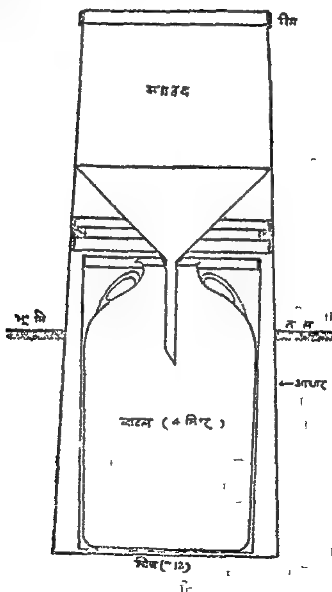
वायुगति का बीफोर्ट पैमाना

बीफोर्ट संख्या	सामान्य विवरण	सीमाचिन्ह	भूमितल से 6 मीटर ऊपर वायुगति का मान (किमी/घंटा)
0	शान्त	धूम्र सीधा ऊपर उठता है।	1 से कम
1	हल्की हवा	धूम्र रेखाओं के खिंचाव से वायु दिशा का पता लगता है। पवन दशक संचालित नहीं हो पाता।	2–6
2	अति धीमा समीर	चेहरे पर हवा का अनुभव। पवन दशक संचालित हो जाता है।	7–12
3	धीमा समीर	वृक्षों की पत्तियाँ हिलती हैं। हल्की ध्वजा तन जाती है।	13–18
4	मृदु समीर	धूल या कागज के टुकड़े गतिमान हो जाते हैं।	19–26
5	ताजा समीर	छोटे वृक्षों की टहनियाँ हिलती हैं।	27–35
6	तीव्र समीर	बड़ी टहनियाँ गतिमान हो उठती हैं, टेलीफोन के तारों में सीटी सी बजने लगती है।	36–44
7	मृदु गेल	पूरा वृक्ष हिलने लगता है।	45–55
8	ताजा गेल	टहनियाँ टूट जाती हैं।	56–66
9	तीव्र गेल	हल्की छतें उड़ सकती हैं या कमजोर निर्माण क्षति ग्रस्त हो सकता है।	67–77
10	पूर्ण गेल	वृक्ष उखड़ जाते हैं और निर्माण की क्षति थोड़ी बहुत होती है।	78–90
11	तूफान	निर्माण कार्य की पर्याप्त क्षति।	91–104
12	हरीकेन	—	105 से अधिक

7 45 वायुगति और दिशा का सीधा माप एक विद्युत चालित यन्त्र वायु पेनल द्वारा भी लिया जाता है। इस यन्त्र म एक छोटा जनरेटर जिसे मौसम प्रूफ रखा जाता है, लगा होता है। यह जनरेटर शक्वाकार वायु वेग मापी-प्यालो के ऊर्ध्वाधर तकु (Spindle) के चारो ओर घूमने से चलता है। जनित वोल्टेज, प्यालो की गति, अर्थात् वायु बल के समानुपाती होता है। अत सलग्न गोलाकार पैमाना नॉट (Knot) मे वायु गति पढने के लिए अकीकृत होता है। इसी प्रकार, पवन दशक की गति भी विद्युत विधि से अकित पैमाने मे प्रेषित कर दी जाती है।

7 46 वर्षामापन

भारत मे मुख्यत जिस मानक वर्षामापी को प्रयुक्त किया जाता है, उसे साइमन



वर्षामापी कहते हैं। इसके मुख्य भाग निम्नलिखित हैं —

(1) फनेल—जिसके रिम का व्यास निश्चित (127 मिमी) होता है।

(2) संग्राहक—यह प्लास्टिक या धातु का बर्तन होता है जिसकी ग्राहिता साधारणत 175 मिमी होती है। अधिक वर्षा के क्षेत्रों में 375 या 1000 मिमी ग्राहिता के संग्राहक भी प्रयोग में लाए जाते हैं।

(3) बेलनाकार ढक्कन—जिसका आधार भूमि में जड़ दिया जाता है।

(4) नपना गिलास—यह 20 या 25 मिमी ग्राहिता का एक अंकित बेलनाकार ग्लास होता है, जिससे 0 1 मिमी तक सही वर्षा नापी जा सकती है।

वर्षा मिमी या सेमी की इकाइयों में नापी जाती है। किसी स्थान पर 1 सेमी वर्षा की राशि वह है, जो भूमितल पर एक सेमी गहरे पानी की तह बना दे, बशर्ते कि भूमि सर्वत्र समतल मान ली जाए और शोषण, अपवाह (Runoff) तथा वाष्पीकरण द्वारा वर्षा की एक भी बूंद नष्ट न हो।

कुछ समय से विभिन्न वेधशालाओं में एक और वर्षामापी प्रयोग में लाया जा रहा है जिसे F R P (Fibre glass Reinforced Polyster) वर्षामापी कहते हैं। इसमें फनेल ढक्कन के साथ सम्बंधित होता है तथा संग्राहक और आधार पोलिस्टर के बने होते हैं।

तिर्यक पड़ती बूँदें, वृक्षों या भवनों आदि से रुक न जाएँ, इसके लिए वर्षामापी स्थापित करते समय यह सावधानी रखनी चाहिए कि निकटतम रुकावट से वर्षा मापी की दूरी कम से कम रुकावट की ऊँचाई से दूनी हो।

7 47 यदि वर्षा के साथ तुषार या ओले पड़े हों तो उन्हें नपना गिलास से ज्ञात राशि का गर्म जल छोड़ कर पिघला लिया जाता है और कुल जल का माप लेने के बाद मिलाए गए जल का माप घटा दिया जाता है।

यदि वर्षामापी तुषार से पूर्णतया ढक जाता है तो जमे तुषार की ऊँचाई एक छड़ द्वारा नाप लेनी चाहिए। इस ऊँचाई का दसवाँ भाग सम्बन्धित वर्षा का लगभग 'मान' देगा।

7 50 स्वत अभिलेखी यंत्र (Self Recording Instruments)

विभिन्न मौसम तत्वों के अविरत और स्वअंकित पाठांक प्राप्त करने के लिए, अनेक स्वत अभिलेखी यंत्रों का डिजाइन किया गया है। सभी स्वत अभिलेखी यंत्रों में निम्नांकित तीन अनिवार्य भाग होते हैं

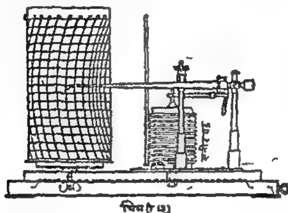
(1) एक सवेदनशील तत्व जो मौसम तत्वों के परिवर्तन की अनुक्रिया (response) दे सके। इसी अनुक्रिया को यंत्र रिकार्ड करता है।

(2) एक लीवर प्रणाली, जो सवेदनशील तत्व की सूक्ष्म गति को, ज्ञात अनुपात में अभिवर्धित कर देती है। यही प्रणाली आवर्धित गति को पेन भुजा तक पहुँचाती है।

(3) एक परिभ्रमक ड्रम जो घड़ी की सुइयों के अनुसार धीरे धीरे घूमता है और समय का मान करता है। इस ड्रम पर चार्ट लपेटा जाता है, जिस पर पेन भुजा, सवेदक तत्व की आवर्धित गति को अंकित करती है।

7.51 मुख्य मौसम तत्वों के स्वाचित और अविरत माप के लिए निम्नांकित यंत्र प्रयुक्त होते हैं —

(1) दाब लेखी (बैरोग्राफ)—यह वायुदाब का अविरत, स्वांकन करता है। इसमें निद्रव दाब मापी तत्व वायुदाब के संवेदन के लिए प्रयुक्त होता है। यह दाब परिवर्तन के साथ संकुचित होता है या फैलता है। यह प्रसार या संकुचन लीवर प्रणाली द्वारा आवर्धित होकर पेन भुजा द्वारा ड्रम से लिपटे चार्ट पर अंकित होता है। चार्ट पर गति के सानुपातिक दाब की इकाइयाँ छपी होती हैं चित्र (7.15)।



चित्र (7.15)

7.52 तापमानलेखी (थर्मोग्राफ)

इसमें संवेदक तत्व एक सर्पिल (Spiral) होता है जो दो विभिन्न प्रसार गुणांक वाली धातु पत्तियों से बनाया जाता है। तापमान बदलने से यह सर्पिल कुंडलित अथवा अनकुंडलित होता है। यह क्रिया लीवर प्रणाली से परावर्तित होकर पेन भुजा को नियंत्रित करती है।

7.53 केश आर्द्रता लेखी (हेयर हाइग्रोग्राफ)

यह यंत्र इस सिद्धांत पर काम करता है कि मनुष्य के केश की लम्बाई, सापेक्ष आर्द्रता के साथ बढ़ती है, किंतु यह वृद्धि सर्वत्र समान नहीं होती। आर्द्रता 30 से 40% होने में बाल की लम्बाई जितनी बढ़ेगी, वह 70 से 80% सापेक्ष आर्द्रता बढ़ने में होने वाली वृद्धि की अपेक्षा अधिक होगी। किंतु लीवर प्रणाली की क्रिया विधि इस प्रकार समायोजित कर दी जाती है कि बाल की वृद्धि द्वारा उत्पन्न गति, पेन भुजा की सम गति में अनुक्रियान्वित होती है।

इस यंत्र की एक कठिनाई यह है कि उपयुक्त सावधानियों के बावजूद केश के भौतिक गुण शनैः शनैः बदलते रहते हैं। परिणामस्वरूप, समान दशाओं में आर्द्रता के पाठांक सदा समान नहीं आते। केश बदलना भी अनुपयुक्त है क्योंकि इस दशा में यंत्र का सम्पूर्ण अंकन फिर से करने की आवश्यकता होगी।

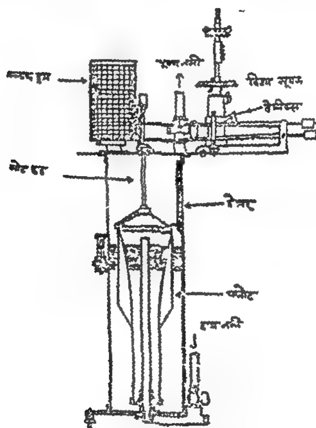
7.54 पवन वेग लेखी या एनीमोग्राफ (Anemograph)

हवा की गति और दिशा का अविरत एवं स्वांकित मान डाइंस दाब नली

(Pressure Tube) पवन वेग लेखी (आविष्कारक–डब्ल्यू० एच० डाइन्स) द्वारा ज्ञात किया जाता है। यह यंत्र निम्नांकित सिद्धान्त पर कार्य करता है।

एक ओर बन्द और दूसरी ओर खुली नली को क्षैतिज अवस्था में यदि इस प्रकार रखा जाए कि खुला सिरा हवा की ओर हो, तो नली का अन्दर का दाब बढ़ जाएगा। यह वृद्धि वायुगति के समानुपाती होगी।

यदि नली के दीवार में छेद करके उसे ऊर्ध्वाधर रख दिया जाए, तो इन छिद्रों से हवा बाहर निकल आयेगी, जिससे ट्यूब के अन्दर का दाब कम हो जाएगा। इसे चूषण



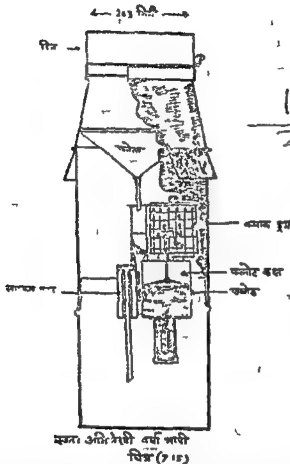
दाब नली पवनवेग लेखी
चित्र (7.14)

(Suction) प्रभाव कहते हैं। दाब नली पवन वेग लेखी में इसी प्रकार दाबान्तर उत्पन्न किया जाता है। यह दाबान्तर वायुगति के वर्ग के समानुपाती होता है। लीवर प्रणाली द्वारा यह दाबान्तर आवर्धित होकर क्लाक ड्रम पर लिपट उस चार्ट पर अंकित होता है, जो वायुगति की इकाइयों से छपा होता है। क्षैतिज दाब-नली पवन दशक के साथ सम्बद्ध रहती है, जो सदा पवनाभिमुखी होती है। चूषण-नली लम्बवत् होती है और दाब नली से सम्बंधित होती है। दाब और चूषण, दोनों प्रभाव नलियों द्वारा एक फ्लोट मैनामीटर को प्रेषित किए जाते हैं, जो दाबान्तर रिकार्ड करता है।

एक ही चार्ट पर वायुदिशा भी रिकार्ड होती जाती है। इसके लिए पवन दशक का परिभ्रमण, युग्मन (Coupling) द्वारा रिकार्डर को प्राप्त होता है।

7 55 स्वत अभिलेखी वर्षामापी (सेल्फ रिकार्डिंग रेन गेज)

वर्षा का जल फनेल द्वारा एक सग्रहक मे एकत्र किया जाता है। सग्रहक मे एक फ्लोट कक्ष और एक साइफन कक्ष होता है। पेन भुजा एक छड द्वारा फ्लोट कक्ष से सम्बधित रहती है। जब सग्रहक मे जलस्तर उठता है, फ्लोट भी उठ जाता है, जिसे पन भुजा क्लाक ड्रम पर लिपटे चार्ट पर रेखाकित करती जाती है।



स्वत अभिलेखी वर्षामापी
चित्र (7 15)

जब पेन, चार्ट के शिखर बिन्दु पर पहुँच जाती है तो सग्रहक मे भरा जल साइफन द्वारा स्वत बाहर आ जाता है और फ्लोट के साथ पेन, चार्ट की शून्य रेखा पर उतर आती है। जिस दिन कोई वर्षा नही होती, उस दिन पेन एक क्षैतिज सरल रेखा अकित करती है।

7 60 उच्चतर वायु प्रेक्षण (Upper Air Observation)

भूमितल पर उत्पन्न होने वाली दाब प्रणालियाँ उर्ध्वाधर मे पर्याप्त ऊँचाई तक विकसित होती हैं। कभी-कभी द्रोणिकाएँ तथा चक्रवाती भ्रमिरा केवल उच्चतर वायुमण्डल मे ही उत्पन्न होते हैं, भूमितल पर उनका कोई आभास नही मिलता। गति और इनकी तीव्रता के अध्ययन के लिए उच्चतर वायु मे तापमान, आर्द्रता दाब तथा वेग के प्रेक्षणो की आवश्यकता हाती है। प्रेक्षणो के लिए सर्वाधिक प्रचलित यत्र, पायलट गुब्बारा रेडियो सोन्दे, राडार तथा मौसम उपग्रह हैं।

7 61 विकास का संक्षिप्त इतिहास

सन् 1643 म सबसे पहले प्रसिद्ध वैज्ञानिक पैस्कल ने स्वयं पहाड़ियों पर चढ़ कर पता लगाया कि दाब ऊँचाई के साथ घटता है। ठीक 100 वर्ष बाद कुछ पर्वतारोहियों ने अनेक स्थानों से एन्डीज पवन पर चढ़ाई करके विभिन्न अक्षांशों पर हिमाक स्तर की ऊँचाई ज्ञात की। सन् 1749 म पतंग म तापमापी संलग्न करके अलेक्जेंडर विल्सन ने कुछ ऊँचाई की हवा का तापमान ज्ञात किया। तत्पश्चात् पतंगो का प्रयोग इस काम म लिए अक्सर होने लगा।

फिर मानवयुक्त गुब्बारो का समय आया। सन् 1784 मे डा० जैफरीज ने मौसम प्रेक्षण के लिए गुब्बारे पर पहली उड़ान भरी। सन् 1804 मे गलुजक और बायट ने 7 कि मी ऊंचाई तक उड़कर दिखाया। तब से छुटपुट उड़ानें की जाती रही। सन् 1852 मे वेल्स न गुब्बारो पर सर्वप्रथम दाब, तापमान और आर्द्रता के प्रेक्षण एक साथ लिए।

सन् 1873 मे पायलट गुब्बारो का युग आरम्भ हुआ जो परिष्कृत रूप म आज भी उच्चतर वायु की गति और दिशा ज्ञात करने के सर्वाधिक प्रचलित साधन हैं। 1912 मे पहली बार विमान मे कुछ यन्त्र रखकर मौसम प्रेक्षण प्राप्त किए गए। 1915 से ब्रिटेन और अमेरिका मे विमानो द्वारा उच्चतर वायु के तापमान, दाब और आर्द्रता के नियमित प्रेक्षण किए जाने लगे।

1927 म फ्रिजर मण्डल से रेडियो सकेत द्वारा वायु मण्डल का ज्ञान करने का पहला प्रयास किया गया और रूसी वैज्ञानिक मोलचेनोव ने पहला सफल रेडियो-सोन्ड सन् 1928 मे डिजाइन कर दिया। सन् 1939 तक अनेक देशो म रेडियोसोन्ड तैयार किए जाने लगे। सन् 1940 म अमरिका म पहला रेडियो थियोडोलाइट भी तैयार कर लिया गया।

सन् 1943 मे पहली बार उच्चतर वायु वेग ज्ञात करने के लिए राडार का प्रयोग किया गया। 1946 से राकेट का उपयोग भी किया जाने लगा। राकेट से धातुओ की छोटी छोटी असख्य पत्तियाँ वायुमण्डल मे बिखेर दी गई, जो वायु की गति और दिशा का ज्ञान कराती थी। सन् 1957 मे कृत्रिम उपग्रहो का युग आरम्भ हुआ तो मौसम उपग्रह भी डिजाइन किए गए। पहला मौसम उपग्रह 1 अप्रैल, 1960 को अन्तरिक्ष मे अमरिका द्वारा छोडा गया जिसका नाम 'टाइरास' रखा गया। टाइरास (TIROS), टैलीविजन, इन्फ्रारेड आब्जरवेशनल सैटलाइट का संक्षिप्तीकरण है। तब से 11 टाइरास उपग्रह छोडे जा चुके हैं। प्रथम 8 टाइरास विषुवत् रेखीय कक्षा म पृथ्वी की परिक्रमा करते थे किन्तु इसके बाद उपग्रहो की कक्षा ध्रुवीय रखी गई।

इस समय अमरिका और रूस के कई मौसम उपग्रह पृथ्वी की परिक्रमा ध्रुवीय कक्षा मे कर रह ह। ये बादलो क चित्र तथा विकिरण के प्रेक्षण नियमित रूप स रेडियो तरंगो द्वारा प्रेषित करते है जिनका लाभ अनेक देश उठा रहे हैं। भारत म इसके 5 रिसीविंग केन्द्र है। एक मौसम उपग्रह का जीवन सामान्यत 2 स 3 वर्ष तक होता है। इस समय ऐस्सा 8, निम्बस 4 तथा आइटास 1 नामक उपग्रह परिक्रमा कर रहे हैं।

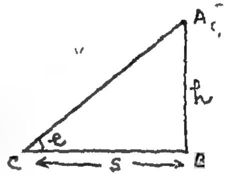
भारत म पहला उच्चतर वायु प्रेक्षण पायलट गुब्बारे की सहायता स सन् 1926 म आगरा म लिया गया।

7.62 पायलट गुब्बारे द्वारा प्रेक्षण

'पायलट गुब्बारा' नाम सम्भवतः बड़े-बड़े गुब्बारों पर स्वयं चढ़कर उड़ान भरने वालों द्वारा उस छोटे गुब्बारे को दिया गया है, जो उड़ान से पहले सम्भावित दिशा की जानकारी प्राप्त करने के लिए छोड़ा जाता था।

हाइड्रोजन भरा पायलट गुब्बारा हवा में छोड़ने के बाद थियोडोलाइट नामक यन्त्र से लगातार प्रेक्षित किया जाता है। इस यन्त्र की सहायता से निश्चित समय के अंतरालों के बाद गुब्बारे का उन्नतांश कोण तथा एजिमथ (दिगंश) पढ़ लिया जाता है। ठीक उत्तर दिशा से गुब्बारे का कोणीय विचलन एजिमथ कहलाता है।

गुब्बारे की ऊँचाई ज्ञात करने की सबसे सरल विधि यह है कि उसके आरोह की दर स्थिर मान ली जाए। उदाहरण के लिए, यदि आरोहण दर 12 किमी/घण्टा मान ली जाए तो गुब्बारे की ऊर्ध्वाधर ऊँचाई प्रति मिनट 200 मीटर की दर से बढ़ती रहेगी। इस स्थिति में प्रेक्षण निम्नांकित सारिणी द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है —



चित्र (7.13)

समय (मिनिट)	गुब्बारे की ऊँचाई (मीटर)	उन्नतांश	पवन दिशा (एजिमथ)	S = (पवन की गति) (मीटर प्रति मिनिट)
1	h_1	e_1	a_1	s_1
2	h_2	e_2	a_2	s_2
3	h_3	e_3	a_3	s_3
4	h_4	e_4	a_4	s_4

वायुगति अर्थात् एक मिनट में गुब्बारे द्वारा चली गई दूरी त्रिभुज ABC द्वारा ज्ञात की जा सकती है ।

$$S = \frac{h}{\tan e}$$

7.63 किन्तु गुब्बारे की आरोहण दर स्थिर मान लेना स्पष्टतः त्रुटिपूर्ण है। विशेषकर दिन में ऊर्ध्व वायु धाराएँ प्रबल होती हैं और आरोहण दर को विक्षुब्ध किया करती हैं । इसके अतिरिक्त आरोहण दर वायु घनत्व पर भी निर्भर करती है ।

गैस भरे गुब्बारे पर लगा कुल उत्थापन बल (L_T) कुल लिफ्ट कहलाता है। यह गुब्बारे द्वारा हटाई गई हवा के भार के बराबर होता है । यदि V गुब्बारे का आयतन, ρ हवा घनत्व तथा g गुरुत्व जनित त्वरण हो, तो

$$L_T = V\rho g \qquad (i)$$

स्वतन्त्र लिफ्ट (L) कुल लिफ्ट और गुब्बारे (संलग्न सामग्री सहित) के भार का अंतर को कहते हैं । अतः

$$L_T = L + W \qquad (ii)$$

स्वतन्त्र लिफ्ट के कारण गुब्बारे में आरोही त्वरण उत्पन्न हो जाता है । जब गुब्बारा गतिशील होता है, तो हवा के घर्षण (drag) का प्रतिरोध (D) लगने लगता है ।

$$D = K\rho\, v^2 d^2, \qquad (iii)$$

जहाँ K स्थिरांक है तथा v और d क्रमशः गुब्बारे की गति और व्यास हैं ।

स्पष्टतः आयतन $V = \frac{1}{6}\pi d^3$ or $d = \left(\frac{6V}{\pi}\right)^{\frac{1}{3}}$

या $d^2 = \left[\frac{6(L+w)}{\pi\rho g}\right]^{\frac{2}{3}} \qquad (iv)$

जब D और L एक-दूसरे को संतुलित कर देते हैं, तो आरोहण दर (v) स्थिर हो जाती है । इस स्थिति में,

$$L = K\rho v^2\left[\frac{6}{\pi}\left(\frac{L+w}{\rho g}\right)\right]^{\frac{2}{3}}$$

$$= K_1\rho v^2\left[\frac{L+w}{\rho g}\right]^{\frac{2}{3}}$$

या $\quad v = K\,\dfrac{L\rho^{-\frac{1}{6}}}{(L+w)^{2/3}} \qquad (v)$

मान लीजिए,

$$w = w_E + w_H$$

जहाँ w_E = खाली गुब्बारे का भार और w_H = हाइड्रोजन का भार

$$\therefore w = w_E + V\rho_H g = w_E + \frac{L+w}{\rho}\rho_H$$

$$\therefore L + w = L + w_E + \frac{L+w}{\rho}\rho_H$$

$$= (L + w_E) \Big/ \left(\frac{\rho - \rho_H}{\rho} \right) \qquad \text{(vi)}$$

∴ (v) और (vi) से

$$v = K_2 \rho^{-\frac{1}{6}} \left(\frac{\rho - \rho_H}{\rho} \right)^{\frac{1}{3}} \frac{L^{\frac{1}{2}}}{(L + w_E)^{\frac{1}{3}}} \qquad \text{(vii)}$$

इस सूत्र के अनुसार यदि भूमितल और किसी ऊँचाई पर वायु घनत्व क्रमश ρ_0 तथा ρ तथा गुब्बारे की उध्वगति v_0 तथा v हो, तो

$$\frac{v}{v_0} = \left(\frac{\rho_0}{\rho} \right)^{\frac{1}{6}}$$

विभिन्न ऊँचाईयो के लिए $\left(\frac{\rho_0}{\rho} \right)^{\frac{1}{6}}$ का मान इस प्रकार है

ऊँचाई (किमी)	0	2	4	6	8	10
$\left(\frac{\rho_0}{\rho} \right)^{\frac{1}{6}}$	1	1 04	1 08	1 11	1 15	1 19

अत घनत्व परिवर्तन का प्रभाव कुछ ऊँचाइयो तक नगण्य किया जा सकता है। इस अवस्था मे,

$$K_2 \rho^{-\frac{1}{6}} \left(\frac{\rho - \rho_H}{\rho} \right)^{\frac{1}{3}} = K \text{ (स्थिरांक)}$$

यदि v का मान मीटर प्रति मिनिट म लिया जाय, तो K = 84

अत आरोहण दर $v = 84 \frac{\sqrt{L}}{(L + w_E)^{\frac{1}{3}}}$ (viii)

7 64 गुब्बारे मे एक संलग्नी को, जिसे टेल (tail) कहते हैं, संलग्न करके प्रेक्षण लेने से आरोहण दर की कठिनाई दूर हो जाती है। गुब्बारे तथा टेल के सम्मिलित भार के

लिए, स्वतन्त्र लिफ्ट (L) का मान उपलब्ध सारणियों द्वारा निश्चित किया जाता है। ये सारणियाँ सूत्र (viii) द्वारा ωE और v के विभिन्न मानों से L के मानों को समायोजित करके बनाई गई हैं।

7 65 प्रकाशीय थियोडोलाइट

इसमे एक दूरबीन होता है जो क्षैतिज और उर्ध्वाधर, दोनों तलों में घूम सकता है। यह बीच से 90° पर इस प्रकार मुड़ा होता है कि नेत्रिका (eye piece) का क्षैतिज अक्ष स्थिर रहता है जबकि अभिदृश्यक (object glass) ऊर्ध्व तल मे घुमाया जा सकता है। समकोण मोड़ के समीप घनाकार यत्न में एक प्रिज्म इस प्रकार रखा जाता है कि अभिदृश्यक से आती किरणें इसके द्वारा नेत्रिका की ओर परावर्तित हो जाएँ।

नत्रिका में क्रास तार या रेखा जाल (graticule) लगा होता है जिसको फोकस करने की व्यवस्था साथ में सलग्न रहती है। दूरदर्शी मे गुब्बारे के उन्नतांश तथा एजिमथ पढने के लिए पैमाने लगे होते हैं।

7 66 रेडियो पवन प्रेक्षण (Radio Wind or Rawind)

मेघाच्छन्न दिनो में जब गुब्बारा शीघ्र ही बादलों में खो जाता है, तो प्रकाशीय थियोडोलाइट उसका अनुसरण करने में असमर्थ हो जाता है। स्वच्छ आकाश में भी पायलट बेलून साधारणत 10–12 किमी ऊँचाई तक पवन देने में समर्थ हो पाता है। जेट वायुयानों की उड़ान के लिए और अधिक ऊँचाई के प्रेक्षण आवश्यक हैं। पर्याप्त ऊँचाई तक और मेघाच्छन्न स्थितियों में पवन प्रेक्षण प्राप्त करने के लिए रेडियो विधि प्रयुक्त की जाती है। एक छोटा रेडियो ट्रांसमीटर गुब्बारे से सलग्न कर देते हैं, जिसके द्वारा सकेत प्राप्त करके धरती पर से रेडियो थियोडोलाइट, गुब्बारे के उन्नतांश और एजीमथ अङ्कित करता जाता है।

रेडियो थियोडोलाइट एक दिशाई (directional) शक्तिशाली एन्टेना होता है, जिसमें एक एरियल लगा होता है, जो सदा ट्रांसमीटर की ओर अभिविन्यस्त (Oriented) रहता है।

7 70 उच्चतर वायु तापमान और आर्द्रता मापन-रेडियो सोंदे

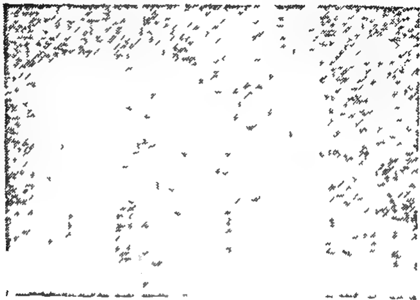
रेडियो सोन्दे वह यन्त्र है जो वायुमण्डल के विभिन्न स्तरों (जहाँ से होकर वह गुजरता है) के वायुदाब, तापमान और आर्द्रता का मान रेडियो सकेतों द्वारा धरती पर स्थित एन्टेना को भेजता है। इस यन्त्र को एक बड़े हाइड्रोजन भरे रबर के गुब्बारे के साथ सलग्न करके वायुमण्डल में छोड़ते हैं। इससे आने वाले सकेत धरती पर, रेडियो रिसीवर द्वारा ग्रहण किए जाते हैं, जो आवर्धित होकर एक रिकार्डर द्वारा अङ्कित होते रहते हैं। मध्य समुद्रतल से लगभग 30 किमी ऊँचाई तक के प्रेक्षण रेडियो सोंदे द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं।

रेडियो सोन्दे के मुख्य भाग निम्नांकित हैं

(1) सवेदक तत्व

जो विभिन्न मौसम तत्वों के प्रति सवेदनशील होते हैं और उनका परिवर्तन नोट करते हैं। अधिकतर रेडियो सोन्द में निर्द्रव कप्सूल ही दाब मापन के लिए प्रयुक्त होता है।

तापमान के लिए एक द्विधातु (स्टील और ब्रोज) की पत्ती सवेदक तत्त्व होता है । इसी पत्ती के साथ कोई आद्रता ग्राही पदार्थ या केश (hair) भी सलग्न कर देते हैं जो आद्रता की माप देता रहता है ।



चित्र (7 16)

एक नवीन रेडियो सोन्दे, जिसे 1680 मैगा साइकल सैकण्ड के नाम से जाना जाता है, मे सवेदक तत्त्वों का एक बक्स होता है । इसमे दाब के लिए निर्द्रव डायाफ्राम से युक्त एक बैरोस्विच, तापमान के लिए एक थर्मिस्टर छड तथा आद्रता के लिए एक हाइग्रिस्टर प्रयुक्त किया जाता है ।

(2) एक प्रणाली, जो सवेदक तत्त्वो के सकेतो को विद्युत कम्पन मे परिवर्तित कर दे । यही प्रेषक को माडुलित करता है ।

(3) रेडियो प्रेषक (Radio transmitter) ।

(4) बटरी, जो यन्त्र को काय करने की शक्ति देता है ।

धरती पर स्थित सग्रहक उपकरण मे एन्टेना सहित एक रेडियो रिसीवर तथा एक रिकार्डर होता है ।

7 71 गुब्बारों की पहुँच से ऊपर वायुमण्डल के प्रेक्षणो के लिए मौसम वैज्ञानिक राकेटो का भी प्रयोग यदा कदा किया जाता है । भारत मे पहला राकेट 21 नवम्बर, 1963 को त्रिवेन्द्रम के निकट थुम्बा से छोडा गया था ।

7 80 राडार प्रक्षण

राडार एक यन्त्र है जो रेडियो प्रतिध्वनि द्वारा किसी पिंड की उपस्थिति या

अभिज्ञान, कर लेता है, उसकी दिशा और दूरी निश्चित करता है तथा उसकी प्रकृति को पहचानता है।

राडार यन्त्र द्वारा रेडियो स्पंद (Pulses) अन्तरिक्ष में विकीर्ण की जाती हैं। ये रेडियो स्पंदें वायुमण्डल में स्थित पदार्थों, जैसे—विमान, मेघ, जलकण आदि से टकराकर परावर्तित होती है और राडार यन्त्र को पुनः प्राप्त होने पर इन पदार्थों की दूरी और दिशा का संकेत इन परावर्तित स्पंदों द्वारा प्राप्त हो सकता है।

सिद्धान्त—प्रेषक अत्यन्त उच्च निरन्तरता (फ्रीक्वेंसी) की विद्युत चुम्बकीय स्पंदें उत्पन्न करता है, जिसे एन्टेना एक निर्धारित दिशा में विकीर्ण कर देता है। अन्तरिक्ष में स्थित किसी वस्तु से टकरा कर ये विकिरण चारों ओर प्रकीर्ण हो जाते हैं। इस प्रकीर्ण विकिरण का एक भाग एन्टेना द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। लौटी हुई स्पंदें प्रतिध्वनि कहलाती है। प्रेषित और प्राप्त स्पंदों के बीच का समयान्तर सही-सही इलक्ट्रोनिक्स विधियों द्वारा ज्ञात कर लिया जाता है। चूँकि विद्युत चुम्बकीय स्पंदों की गति ज्ञात होती है, अतः वस्तु की तिर्यक दूरी आसानी से ज्ञात हो जाती है।

7.8.1 मेघकणों तथा जलकणों की वृद्धि के साथ स्पंदों की परावर्तन क्षमता में तेजी से वृद्धि होती है और जब राडार यन्त्र इन मेघकणों की दिशा में समायोजित किया जाता है, तो उसके पर्दे पर मेघकण चमकीले धब्बे में प्रतिबिम्बित होते रहते हैं। राडार विधि से लगभग 300 किमी. दूरी तक आकाश पर दृष्टि रखी जा सकती है। फलतः चक्रवाती तूफानों को तट से पर्याप्त दूरी पर अभिज्ञात करने में ये बहुत सहायक सिद्ध होते हैं।

150 किमी. दूर स्थित चक्रवाती भ्रमिल राडार पर्दे पर चमकीले सर्पिल आकार के धब्बों में स्पष्ट हो जाता है।

7.8.2 एक राडार सेट चार भागों से मिलकर बना होता है —

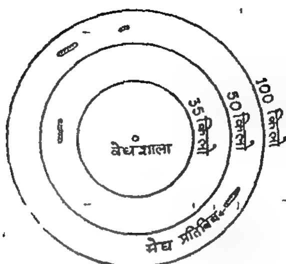
(1) प्रेषक—यह रेडियो ऊर्जा उत्पन्न करता है। (2) एन्टेना—यह रेडियो ऊर्जा को स्पंदों के रूप में विकीर्ण करता है तथा परावर्तित होकर लौटती तरंगों को अन्तः खण्डित (intercept) करता है। (3) रिसीवर – यह वस्तु का अभिज्ञान करता है, प्रवर्धन करता है तथा प्राप्त संकेतों को चाक्षुष रूप में रूपान्तरित करता है। (4) सूचक (Indicator)—जिसके ऊपर प्राप्त संकेतों का प्रदर्शन होता है।

अधिकतर मौसम राडारों में प्रेषण और प्राप्ति, दोनों के लिए एक ही एन्टेना प्रयुक्त होता है।

7.8.3 मौसम के राडारों में रेडियो तरंगों की निरन्तरता 1500 से 30000 मेगा साइकिल/सेकण्ड तक होती हैं। तरंग दैर्घ्य के पदों में परिसर 1 सेमी से 20 सेमी तक होगा। भारत में प्रायः 3 और 10 सेमी. के राडार प्रयोग में लाए जा रहे हैं।

7.8.4 प्रदर्शन सूचक दो प्रकार के होते हैं—

(1) पी० पी० आई० (प्लान पोजीशन इण्डीकेटर) जो प्रतिध्वनियों का क्षैतिज वंटन दर्शाते हैं। यह ध्रुवीय नियामक (Polar coordinate) ग्रिड पर प्राप्त सकता का व्यवस्थित दृश्य प्रस्तुत करते हैं।



चित्र (7 18)

(2) आर० एच० आई० (रेंज हाइट इण्डीकेटर)— यह प्रतिध्वनि के उच्च विस्तार की सूचना देता है। यह प्रतिबिम्ब को उस नियामक पर प्रदर्शित करता है जिसकी भुजा पर प्रतिध्वनि की तियक ऊंचाई (कि०मी०) अकित होती है। कोटि प्रतिध्वनि की खड़ी ऊंचाई (मीटर) व्यक्त करती है। कोटि का पमाना साधारणत अभिवर्धित कर दिया जाता है।

7 85 मौसम उपग्रह

दुर्गम स्थानो पर अथवा सागर तलो के प्रेक्षणो की कठिनाई कुछ सीमा तक मौसम उपग्रहो द्वारा हल कर दी गई है, जो नियमित रूप से मेघ और सौर विकिरण के प्रेक्षण भू-स्थिति ग्राही केन्द्रो को प्रेषित करते रहते हैं।

पहला, मानव निर्मित उपग्रह 1957 मे छोड़ा गया तथा पहला मौसम उपग्रह 'टाइरास-1' (TIROS-1) 1 अप्रैल, 1960 को। अब अनेक देश तरह-तरह के प्रेक्षण एव सचार उपग्रह आकाश मे छोड रहे हैं। इन्हे मुख्यत दो प्रकारो मे बाँटा जा सकता है—

1 भू-ससाधन प्रेक्षण उपग्रह (Earth Resource Satellite)

ये उपग्रह लगभग 800–1500 कि मी की ऊँचाई से पृथ्वी की परिक्रमा करते है और 1 5 से 2 घण्टे के अन्दर ध्रुवीय कक्षा मे एक चक्कर पूरा कर लेते हैं। गुरुत्व परिवतन तथा पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से उपग्रह में जनित विद्युत क्षेत्र की अन्योन्य क्रिया (Interaction) के कारण उपग्रह की ऊँचाई मे उतार चढाव होता रहता है। उपग्रह परिक्रमा करते हुए स्वय 10 से 12 चक्कर प्रति मिनट अपने अक्ष पर परिभ्रमित होते हैं। इसी परिभ्रमण के कारण उपग्रह अपना आधार पृथ्वी की सतह के समान्तर रख पाता है। इस तरह के उपग्रहो के उदाहरण हैं स्पाट (SPOT) लैंड सट (LAND SAT), भारतीय ससाधन उपग्रह (IRS) आदि। ये उपग्रह 30 से 80 मीटर के अन्तर पर

वस्तुओं को अलग अलग पहचान सकते है। लेकिन एक क्षेत्र का चित्र कम से कम 18 दिन के अंतराल पर ही मिल सकता है। ऐसे उपग्रहों का मुख्य उपयोग नदी के जल ग्रहण क्षेत्र (Catchment) के भौतिक लक्षण जैसे—वन क्षेत्र, दलदल, ताल, ग्लेशियर, बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र आदि की जानकारी प्राप्त करने में हो सकता है।

2 पर्यावरण उपग्रह (Environmental Satellite)

ये दो प्रकार के हैं—

(i) ध्रुवीय कक्षा में परिक्रमा करने वाले (polar orbiting)—जो लगभग 90 से 100 मिनट में एक चक्कर पूरा करते हैं और 24 घण्टे में एक ही क्षेत्र के दो चित्र प्रेषित कर सकते हैं। टाइरस, निम्बस (NIMBUS), एस्सा (ESSA), आइटास (ITOS) नोवा (NOAA) आदि इनके उदाहरण हैं। उपग्रहों का जीवन-काल प्राय 3 से 7 वर्षों तक होता है।

(ii) भूस्थिर (Geostationary) उपग्रह—ये उपग्रह विषुवत् रेखा के ऊपर आकाश में पृथ्वी की गति के साथ संतुलन रखते हुए घूमते हैं। अत हमेशा एक ही क्षेत्र के चित्र प्राप्त करते रहते हैं। भारत की इनसैट (INSAT) प्रणाली इसी तरह का एक उदाहरण है। इसके कुछ मुख्य विवरण इस प्रकार हैं—

पहली पीढ़ी (Generation) के भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह (Indian National Satellite—INSAT) प्रणाली में चार उपग्रह 1A, 1B 1C और 1D छोड़े जाने थे जिनमे 1B और 1C अभी (1990) कार्यरत हैं। 1–B, 30 अगस्त 1983 को 74° पूर्वी देशान्तर के विषुवत् रेखा पर लगभग 35000 किमी की ऊँचाई पर स्थापित किया गया। यह 'स्पेस डिपार्टमेंट, मौसम विभाग, सूचना व संचार मन्त्रालयों तथा डाक-तार विभाग का संयुक्त प्रयास है। इनसैट 1–B बहुउद्देश्यीय प्रणाली है, जिसके तीन मुख्य अंग है—

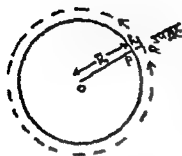
(क) मौसम वैज्ञानिक—इसमे लगभग 20 केन्द्रों पर मौसम सम्बन्धी आँकड़े उपलब्ध होते हैं लगभग 100 डाटा कलेक्शन प्लेटफॉर्म (DCP) तथा उनमें ही 'डिजास्टर वार्निंग सिस्टम (DWS) स्थापित किए गये हैं। आँकड़े दो तरह के बिम्बावली (imageries) के रूप में प्राप्त होते हैं

(i) विजिबल बैंड (0 55–0 75 माइक्रोमीटर)—इसका रिजाल्यूशन (resolution) 2 75 किमी है।

(ii) इन्फ्रारेड बैंड (10 5–12 5 माइक्रोमीटर)—इसका रिजाल्यूशन 11 किमी है। इसकी बिम्बावली तापमान का बंटन प्रस्तुत करती है।

7 86 उपग्रह के संतुलन का समीकरण सरलीकृत रूप में इस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है

यदि h ऊंचाई पर v रैखिक गति से उपग्रह (Q) घूम रहा है तो इस पर लगा गुरुत्व बल केन्द्रापसारी बल द्वारा संतुलित होगा, अत



चित्र (7.9)

$$G\frac{Mm}{(R+h)^2}=\frac{mv^2}{R+h},$$

जहाँ M और R क्रमश पृथ्वी की मात्रा और त्रिज्या है, m उपग्रह की मात्रा और G गुरुत्वाकर्षण स्थिरांक है।

$$v^2=\frac{GM}{R+h} \qquad (i)$$

चूंकि $$g=\frac{GM}{R^2}, \qquad (ii)$$

जहाँ g भूमितल पर गुरुत्व जनित त्वरण है।

(i) में (ii) का भाग देने से

$$\frac{v^2}{g}=\frac{R^2}{R+h}$$

$$v^2=g\frac{R^2}{R+h} \qquad (iii)$$

7.87 टाइरस उपग्रह 107 सेमी व्यास और 56 सेमी ऊंचाई का एक बेलनाकार यन्त्र है, जिसका भार लगभग 130 कि ग्राम होता है। इसके साथ टेलीविजन कैमरा सलग्न होता है। टाइरस लगभग 800 किमी की ऊँचाई पर पृथ्वी की एक परिक्रमा 90 से 100 मिनट में पूरा करते हैं। कमरा लगभग 1200 वर्ग किमी का क्षेत्र एक साथ दृष्टिगत रखता था।

निम्बस, एस्सा, नोवा और आइटास उपग्रह अपेक्षाकृत अधिक क्लिष्ट उपकरणों से युक्त हैं।

टेलीविजन कैमरा पृथ्वी तल की ओर अभिविन्यस्त (oriented) होते हैं, अत बादलों के चित्र और स्वच्छ आकाश वाले भू भागों में हिमाच्छादान, मरुस्थल तथा विस्तृत वनों के चित्र खींचते हैं। उपग्रह में इन्फ्रारेड बैंड के विकिरण का माप लेने के लिए भी उपकरण सलग्न होते हैं। इससे मेघ या वायुमण्डल के तापमान का पता चल सकता है।

7.88 उपग्रह द्वारा प्रेषित मेघ-चित्रों के सकेतो को, हर देश जब उसके ऊपर से उपग्रह गुजर रहा हो, धरती पर ग्राही (रिसीवर) उपकरण द्वारा प्राप्त कर सकता है। इस उपकरण को ए०पी०टी० (ऑटोमैटिक पिक्चर ट्रासमिशन) कहते हैं। ए०पी०टी० रिसीवर लगभग 1600 किमी त्रिज्या के क्षेत्र में, फोटोग्राफ सीधा उपग्रह द्वारा प्राप्त करता है।

7.89 ए०पी०टी० केन्द्रो द्वारा प्राप्त मेघ चित्रों से मेघ प्रकार और ऊँचाई, वायु-दिशा तथा जेटधारा का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है। फोटोग्राफ की चमक, प्रतिरूप (कोशिका युक्त बैंड युक्त, रोमयुक्त आदि), गठन (रेशेदार, चिकना, गुम्बदाकार आदि सरचना, आकृति तथा आकार के सूक्ष्म विश्लेषण से विभिन्न मेघ प्रकार पहचाने जाते हैं।

वस्तुओं को अलग अलग पहचान सकते है। लेकिन एक क्षेत्र का चित्र कम से कम 18 दिन के अंतराल पर ही मिल सकता है। ऐसे उपग्रहो का मुख्य उपयोग नदी के जल ग्रहण क्षेत्र (Catchment) के भौतिक लक्षण जैसे—वन क्षेत्र, दलदल, ताल, ग्लेशियर, बाढ ग्रस्त क्षेत्र आदि की जानकारी प्राप्त करने मे हो सकता है।

2 पर्यावरण उपग्रह (Environmental Satellite)

ये दो प्रकार के है—

(i) ध्रुवीय कक्षा म परिक्रमा करने वाले (polar orbiting)—जो लगभग 90 से 100 मिनट मे एक चक्कर पूरा करते हैं और 24 घण्टे म एक ही क्षेत्र के दो चित्र प्रेषित कर सकते है। टाइरस, निम्बस (NIMBUS), एस्सा (ESSA), आइटास (ITOS) नोवा (NOAA) आदि इनके उदाहरण हैं। उपग्रहो का जीवन-काल प्राय 3 से 7 वर्षों तक होता है।

(ii) भूस्थिर (Geostationary) उपग्रह—ये उपग्रह विषुवत् रेखा के ऊपर आकाश म पृथ्वी की गति के साथ सन्तुलन रखते हुए घूमते हैं। अत हमेशा एक ही क्षेत्र के चित्र प्राप्त करते रहते हैं। भारत की इनसैट (INSAT) प्रणाली इसी तरह का एक उदाहरण है। इसके कुछ मुख्य विवरण इस प्रकार है—

पहल पीढी (Generation) के भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह (Indian National Satellite—INSAT) प्रणाली मे चार उपग्रह 1A, 1B 1C और 1D छोड़े जाने थे जिनमे 1B और 1C अभी (1990) कार्यरत है। 1–B 30 अगस्त 1983 को 74° पूर्वी देशान्तर के विषुवत् रेखा पर लगभग 35000 किमी की ऊँचाई पर स्थापित किया गया। यह स्पेस डिपार्टमेंट', मौसम विभाग, सूचना व सचार मन्त्रालयों तथा डाक-तार विभाग का सयुक्त प्रयास है। इनसट 1–B बहुउद्देश्यीय प्रणाली है जिसके तीन मुख्य अग है—

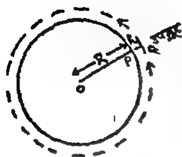
(क) मौसम वैज्ञानिक—इसमे लगभग 20 केन्द्रो पर मौसम सम्बन्धी आँकडे उपलब्ध होते हैं लगभग 100 डाटा कलेक्शन प्लेटफार्म (DCP) तथा उतने ही डिजास्टर वार्निंग सिस्टम (DWS) स्थापित किए गये है। आँकडे दो तरह के बिम्बावली (imageries) के रूप म प्राप्त होते हैं

(i) विजियल बैंड (0 55–0 75 माइक्रोमीटर)—इसका रिजाल्यूशन (resolution) 2 75 किमी है।

(ii) इन्फ्रारेड बैंड (10 5–12 5 माइक्रोमीटर)—इसका रिजाल्यूशन 11 किमी है। इसकी बिम्बावली तापमान का बटन प्रस्तुत करती है।

7 86 उपग्रह के सतुलन का समीकरण सरलीकृत रूप मे इस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है

यदि h ऊँचाई पर v रैखिक गति से उपग्रह (Q) घूम रहा है तो इस पर लगा गुरुत्व बल केन्द्रापसारी बल द्वारा सन्तुलित होगा, अत



चित्र (7.19)

$$G \frac{Mm}{(R+h)^2} = \frac{mv^2}{R+h},$$

जहाँ M और R क्रमश पृथ्वी की मात्रा और त्रिज्या है, *m* उपग्रह की मात्रा और G गुरुत्वाकर्षण स्थिरांक है।

$$v^2 = \frac{GM}{R+h} \quad \text{(i)}$$

$$\text{चूँकि } g = \frac{GM}{R^2}, \quad \text{(ii)}$$

जहाँ *g* भूमितल पर गुरुत्व जनित त्वरण है।

(i) मे (ii) का भाग देने से $\frac{v^2}{g} = \frac{R^2}{R+h}$

$$v^2 = g\frac{R^2}{R+h} \quad \text{(iii)}$$

7.87 टाइरस उपग्रह 107 सेमी व्यास और 56 सेमी ऊंचाई का एक बेलनाकार यन्त्र है, जिसका भार लगभग 130 कि ग्राम होता है। इसके साथ टैलीविजन कैमरा सलग्न होता है। टाइरस लगभग 800 किमी की ऊँचाई पर पृथ्वी की एक परिक्रमा 90 से 100 मिनट म पूरा करते हैं। कैमरा लगभग 1200 वर्ग किमी का क्षेत्र एक साथ दृष्टिगत रखता था।

निम्बस, एस्सा, नोवा और आइटास उपग्रह अपेक्षाकृत अधिक क्लिष्ट उपकरणों से युक्त हैं।

टेलीविजन कैमरा पृथ्वी तल की ओर अभिविन्यस्त (oriented) होते हैं, अत बादलो के चित्र और स्वच्छ आकाश वाले भू-भागो मे हिमाच्छादन, मरुस्थल तथा विस्तृत वनो के चित्र खींचते हैं। उपग्रह मे इन्फ्रारेड बैंड के विकिरण का माप लेने के लिए भी उपकरण सलग्न होते हैं। इससे मेघ या वायुमण्डल के तापमान का पता चल सकता है।

7.88 उपग्रह द्वारा प्रेषित मेघ-चित्रों के सकेतों को, हर देश जब उसके ऊपर से उपग्रह गुजर रहा हो, धरती पर ग्राही (रिसीवर) उपकरण द्वारा प्राप्त कर सकता है। इस उपकरण को ए०पी०टी० (ऑटोमैटिक पिक्चर ट्रासमिशन) कहते हैं। ए०पी०टी० रिसीवर लगभग 1600 किमी त्रिज्या के क्षेत्र मे, फोटोग्राफ सीधा उपग्रह द्वारा प्राप्त करता है।

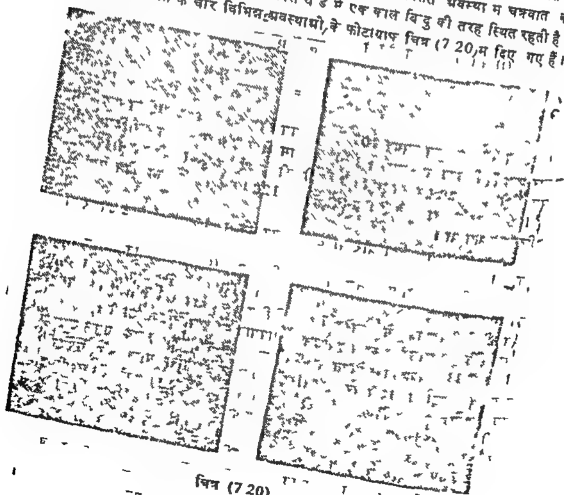
7.89 ए०पी०टी० केन्द्रों द्वारा प्राप्त मेघ चित्रो से मेघ प्रकार और ऊँचाई, वायु-दिशा तथा जेटधारा का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है। फोटोग्राफ की चमक, प्रतिरूप (कोशिका युक्त बैंड युक्त, रोमयुक्त आदि), गठन (रशेदार, चिकना, गुम्बदाकार आदि सरचना, आकृति तथा आकार के सूक्ष्म विश्लेषण से विभिन्न मेघ प्रकार पहचाने जाते हैं।

यथेष्ट अनुभव के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि ए०पी०टी० मेघ चित्रों के अध्ययन के लिए मेघों को केवल तीन मुख्य प्रकारों में बाँटना उपयुक्त है, ताकि वे एक-दूसरे से अलग सही सही पहचाने जा सकें। ये प्रकार (1) कपासी मेघ (2) स्तरी मेघ (3) पक्षाभ मेघ हैं।

विकसित कपासी वर्षी मेघ, अपनी छाया वाले अंधेरे भाग तथा निहाई आकृति के कारण सरलता से पहचान लिया जाता है।

मेघ रहित आकाश के नीचे हिमाच्छादित भू-भागों तथा रेगिस्तानों के चित्र भी बादलों की भाँति ही सफेद और चमकीले दिखाई देते हैं। किन्तु सामान्य भूगोल और समकालीन दाब प्रणालियों की जानकारी से इन्हें पहचान लेना सरल कार्य है। सूक्ष्म निरीक्षण से इनके प्रतिरूप और गठन का अन्तर भी नोट किया जा सकता है। इन्फ्रारेड बिम्बावली के तापमान वटन से भी बादलों के प्रकार का अनुमान लगता है।

चक्रवाती तूफान में मेघ वायुप्रवाह के प्रभाव से सर्पिल प्रतिरूप ग्रहण कर लेते हैं, जिससे उन्हें आसानी से पहचाना जा सकता है। पर्याप्त विकसित अवस्था में चक्रवात की आंख (मेघ रहित) सर्पिल मेघ के चमकीले बैंड में एक काले बिन्दु की तरह स्थित रहती है। एक समुद्री चक्रवात के चार विभिन्न अवस्थाओं के फोटोग्राफ चित्र (7 20) में दिए गए हैं।



चित्र (7 20)

7.90 प्रेक्षणों के संग्रह और वितरण की संचार व्यवस्था

समकालीन (Synoptic) आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संसार की हजारों वेधशालाओं तथा समुद्री जहाजों द्वारा किए गए प्रेक्षणों का तुरंत (2–3 घंटे के भीतर) सभी पूर्वानुमान केन्द्रों को प्राप्त हो जाना अभीष्ट है। इसके लिए एक मजबूत दूर-संचार व्यवस्था अनिवार्य है।

भारत में सभी वेधशालाएँ प्रेक्षण लेने के तत्काल बाद उन्हें प्राथमिकता से भू लाइन तारों, बेतार, टेलीफोन अथवा टेलीप्रिंटरों द्वारा क्षेत्रीय मौसम केन्द्रों को प्रेषित कर देती हैं, जहाँ से वे टेलीप्रिंटर और टेलेक्स परिपथ द्वारा सभी केन्द्रों को वितरित कर दिए जाते हैं। सभी क्षेत्रीय केन्द्र टेलीप्रिंटर परिपथ द्वारा बम्बई व दिल्ली स्थित मुख्य संचरण केन्द्र से जुड़े होते हैं।

अन्तर्क्षेत्रीय प्रसारण के लिए साथ-साथ ही सभी प्रेक्षण, नई दिल्ली स्थित अन्तर्क्षेत्रीय संचरण केन्द्र में एकत्र होते हैं। साथ ही रूस, बर्मा, मलाया तथा संलग्न महासागरों के प्रेक्षण भी इस केन्द्र में आते हैं। इन सभी प्रेक्षणों को प्राप्त होते ही काफी शक्ति में यह अन्तर्क्षेत्रीय केन्द्र पुनः अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका, जापान, आस्ट्रेलिया तथा अन्य देशों के लिये प्रसारित कर देता है। एशिया में दिल्ली की ही भाँति टोकियो तथा खाबारोवस्क (रूस) में अन्तर्क्षेत्रीय संचरण केन्द्र और हैं।

इनके अतिरिक्त, नई दिल्ली में एक उत्तरी गोलार्द्ध प्रेक्षण विनिमय केन्द्र है, जिसमें दिल्ली–मास्को तथा दिल्ली–टोकियो के बीच द्विमार्गी रेडियो टेलीटाइप की व्यवस्था है। संसार में कुल 5 विनिमय केन्द्र फ्रैंकफर्ट, मास्को, नई दिल्ली, न्यूयार्क और टोकियो, एक दूसरे से सीधे या परोक्ष रूप से जुड़े होते हैं और पूरे उत्तरी गोलार्द्ध की मौसम सामग्रियों का एकत्रीकरण और वितरण करते हैं।

अगस्त 1983 से 'इनसैट' (INSAT) मौसम उपग्रह द्वारा भी पर्याप्त आंकड़े मौसम विज्ञान विभाग के 20 केन्द्रों (Data Utilisation Centre) को तत्काल प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार, कुछ घंटों में पूरे उत्तरी गोलार्द्ध के मौसम प्रेक्षण नई दिल्ली में प्राप्त हो जाते हैं, जिन्हें मानचित्रों पर अंकित करके मौसम चार्ट तैयार किया जाता है। इसी प्रकार पूना में हिन्द महासागर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध के प्रेक्षण एकत्र करके अंकित किए जाते हैं तथा मौसम चार्ट तैयार किए जाते हैं।

7.91 मौसम मानचित्रों का अंकन

इतने व्यापक मौसम प्रेक्षणों के त्वरित संचरण के लिये यह आवश्यक है कि प्रेक्षणों का मानक रूप से संक्षिप्तीकरण हो। यह कार्य विश्व मौसम वैज्ञानिक संघ के तत्वावधान में तैयार किए गए मानक संख्यात्मक कोड प्रणाली द्वारा किया जाता है। ये कोड मौसम कार्यालयों में इस प्रकार प्रचलित हैं, जैसे साधारण बोल चाल की भाषा।

उदाहरण के लिए भारतीय वेधशालाएँ, धरातलीय प्रेक्षणों के मुख्य तत्व इस प्रकार रिपोर्ट करती हैं

(i) YYGG — दिनांक (YY) और प्रेक्षण का समय (GG)

(ii) $RRRD_LD_M$ — पिछले प्रेक्षण से बाद हुई वर्षा (मिमी) (RRR)

निम्न और मध्यम मेघों में गति की दिशा क्रमश: D_L और D_M

(iii) Nddff — कुल मेघाच्छन्नता का मान (अष्टमांशों में) (N), वायु की दिशा (dd) और गति (ff)

(iv) $VV_{ww}W$ — दृश्यता का मान (VV), वर्तमान मौसम अवस्था (ww) तथा पिछला मौसम (W)

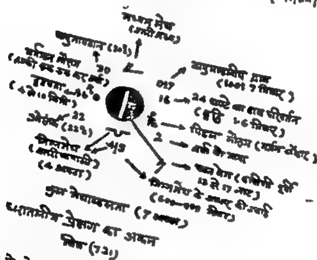
(v) PPPTT — वायुदाब (PPP) तथा तापमान (TT)

(vi) $NhC_LhC_MC_H$ — निम्न मेघों की मात्रा (Nh), निम्न मेघ प्रकार (C_L), निम्नतम मेघ की ऊँचाई (h) मध्यम मेघ प्रकार (C_M) तथा उच्चमेघ प्रकार (C_H)

(vii) $T_dT_d9p_{24}p_{24}$ — ओसांक (T_dT_d) तथा पिछले 24 घण्टों में दाबान्तर ($p_{24}p_{24}$)

(viii) 7RR $\frac{TnTn}{T_xT_x}$ — वर्षा की मात्रा सेमी में (RR) जो RRR में दिए गए वर्षा को प्रमाणित करने के लिए प्रयुक्त होती है, निम्नतम तापमान (TnTn) या उच्चतम तापमान (T_xT_x)

इन कोडित प्रेक्षणों को मौसम मानचित्रों में यथास्थान एक मानकीकृत मॉडल की आकृति में अंकित करते हैं। उपर्युक्त प्रकार के प्रेक्षणों के लिए निम्नांकित मॉडल प्रयुक्त होता है।



धरातलीय प्रेक्षण का अंकन
चित्र (7.2)

विभिन्न प्रकार के प्रेक्षणों, जैसे—जहाजों के प्रेक्षण पायलट गुब्बारा प्रेक्षण रेडियो सोंदे राडार तथा उपग्रहों के प्रेक्षणों आदि के लिए अलग अलग प्रकार के कोड निर्धारित किए गए हैं।

7.9.2 उदाहरण

एक समकालीन मौसम संदेश का वास्तविक नमूना इस प्रकार है

0303 0202 70215 60910 95612 04825 42464 20953

सामान्य भाषा मे इसका तात्पर्य निम्नांकित है—

पहला ग्रुप 0303 महीने की तीसरी तारीख और 03 जी एम टी (0830 भारतीय मानक समय) व्यक्त करता है।

RRR	(020)	वर्षा (पिछले 24 घन्टों मे) 020 मिमी
D_L	(2)	निम्न मेघो की गति की दिशा–पूर्वी
D_M	(1)	मध्यम मेघों की दिशा–अनिश्चित
N	(6)	कुल मेघाच्छन्नता–6 अष्टमांश
dd	(09)	वायु दिशा–पूर्वी (090 अश)
ff	(10)	धरातलीय वायुगति–(10 नॉट)
VV	(95)	धरातलीय दृश्यता–2000 से 4000 मीटर
ww	(61)	वतमान मौसम–अविरत वर्षा
W	(2)	पिछला मौसम–आधे से अधिक प्रकाश मेघाच्छन्न
PPP	(048)	वायुदाब–1004 8 मिलीबार
TT	(25)	तापमान = 25°C
Nh	(4)	निम्न मेघो से मेघाच्छन्नता = 4 अष्टमांश
C_L	(02)	निम्न मेघ का प्रकार–थोड़े विस्तार का कपासी
h	(4)	निम्न मेघ के आधार की ऊँचाई–300–599 मीटर
C_M	(6)	मध्यम मेघ का प्रकार–मध्य कपासी
C_H	(4)	उच्च मेघ का प्रकार–पक्षाभ
T_dT_d	(20)	ओसांक = 20°C
$p_{24}p_{24}$	(53)	पिछले 24 घन्टो मे दाब का परिवतन = – 0 3 मिलीबार
RR	(02)	पिछले 03 जी एम टी से वर्षा (सेमी) मे 2 सेमी
TnTn	(15)	निम्नतम तापमान = 15°C

विश्व मौसम चौकसी (World Weather Watch)

पृथ्वी की सतह की मौसम दशाओ के अध्ययन के लिये 24 घन्टे की अवधि मे लगभग 1,00,000 प्रेक्षणों तथा ऊपरी वायुमण्डल के लगभग 11,000 प्रेक्षणो का अभिलेख किया जाता है। ये प्रेक्षण विश्व के सभी देशों मे स्थित लगभग 8000 स्थल केन्द्रो से लिए जाते हैं। भारत मे इस समय 560 धरातलीय वेधशालाएँ, 80 पवन सूचक गुब्बारा वेधशालाएँ 30 रेडियो ध्वन्यात्मक वेधशालाएँ तथा 28 रेडियो पवन वेधशालाएँ हैं। इनमे मौसमी उपग्रहो व राकेटो से प्राप्त सकेतो का भी समावेश होता है।

प्रेक्षणो का अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रादेशिक व महाद्वीपीय केन्द्रों द्वारा संग्रह किया जाता है और ये सामूहिक सदेश के रूप मे सभी देशो को पुन सचारित कर दिए जाते हैं। इनमे प्राप्त सूचनाएं विश्व मौसम मानचित्रो पर आलेखित आधारभूत आकडे होते हैं। *साधारणत ये मानचित्र ■ घण्टे के अन्तराल या कभी कभी इससे भी कम अन्तराल पर* तैयार किये जाते हैं। ये आँकडे वतमान मौसमी दशाओ का विश्लेषण और मौसम की भविष्यवाणियों के साधन है।

8

वायु राशियाँ और वाताग्र

(Airmasses and Fronts)

8 10 वायु राशि (Airmass)

हवा के भौतिक गुण मुख्यत उसके तापमान और आद्रता पर निभर करत हैं। प्राय कुछ सौ या कभी-कभी कुछ हजार वर्ग किलोमीटर के क्षतिज विस्तार की वायु म, ये तत्व लगभग समान पाए जाते हैं। क्षैतिज रूप मे विस्तृत, मोटी तह वाली हवा की एक बडी राशि, जिसके भौतिक गुण जैसे तापमान, आद्रता, ह्रास दर आदि का क्षतिज आवटन, न्यूनाधिक समान हो, वायु राशि कहलाती है। जहाँ से उपयुक्त भौतिक गुणो म एकाएक असमानता प्रकट होने लगती है, वही वायु राशि की सीमा समझी जाती है। किसी स्थान की वायु राशि के, समान भौतिक गुणो से युक्त होने का कारण यह है कि एक ही स्थान पर, जिसे स्रोत-क्षेत्र कहते हैं वायु राशि को पर्याप्त समय तक स्थिर रहना पडता है। इस स्थिरता के कारण वायु राशि की निम्न तह, अपने नीचे के धरातल की भौतिक विशेषताओ को ग्रहण कर लेती है, जो कालान्तर में ऊपर की तहो तक पहुँच जाती है। यह क्रम पूरा होने म प्राय 4–5 दिन लग जाते हैं परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि सतह स्वय पर्याप्त सम (homogeneous) हो। विस्तृत थल या जल के भाग प्राय वायु राशियो के लिए अच्छे स्रोत क्षेत्र बन सकते हैं।

उच्च दाब क्षेत्र साधारणत पूर्ण रूप स या तो थल पर या महासागरो पर विस्तृत रहते है। इनमे अवतलन प्रवाह के कारण, वायु स्वत जल या थल के सम सतह पर फैलती जाती है तथा धीरे धीरे सतह के भौतिक गुण प्राप्त करे वायु राशि का रूप धारण कर लेती है। इसके विपरीत निम्न दाब क्षेत्र म, जहाँ अभिसरण और आरोही वायु धाराएँ प्रमुख होती हैं, ऊपर उठती वायु सदा नवीन वायु द्वारा विस्थापित होती रहती है। इस प्रकार निम्न दाब क्षेत्र की वायु अपने भौतिक गुण तजी से बदलती रहती है अत वायु राशियाँ जनित करन म असमर्थ है। पृथ्वी पर स्थित स्थायिवत् उच्चदाब क्षेत्र ही वास्तव म वायु राशि जनित करने क मुख्य स्रोत हैं।

8 11 वायु राशियाँ अपने स्रोत क्षेत्रो को छोडकर दूसरे क्षेत्रो पर से गुजरते समय अपने गुणानुसार उन क्षेत्र का मौसम परिवर्तित करती जाती है तथा स्वय भी प्रतिक्रिया स्वरूप परिवर्तित होता रहती है। किसी वायु राशि की प्रकृति तथा उसके भौतिक गुण निम्नाकित बातो पर निर्भर करत हैं

(1) स्रोत क्षेत्र (source–region)

पृथ्वी के वे विस्तृत और सम क्षेत्र जहाँ से वायु-राशि अपने मौलिक भौतिक गुणों को आत्मसात् करती है, स्रोत क्षेत्र कहलाते हैं ।

(2) वायु राशि का मार्ग

पर्याप्त दूर चलन के बाद विभिन्न प्रकृति और गुणों से युक्त सतह से गुजरने के कारण, वायु-राशि के संगठन (Composition) मे पर्याप्त परिवर्तन आ सकता है ।

(3) वायु राशि की आयु

वह समय जो वायु राशि, स्रोत-स्थल से अंतिम स्थान तक की यात्रा मे लगाती है, वायु राशि की आयु कहलाती है । यात्रा के दौरान विभिन्न सतहों के सम्पर्क मे आने से तथा दाब प्रणालियो द्वारा विक्षुब्ध होते रहने से, वायु राशि शनै शनै अपने मौलिक गुण खोती रहती है और एक स्थल पर उसके तमाम मौलिक गुण आस पास के वायु मण्डल मे, प्रकार विलीन हो जाते हैं कि इस वायु राशि को अलग करके पहचान पाना सम्भव नही हो पाता । यही उसके यात्रा का अंतिम स्थल माना जाता है ।

8 12 स्रोत-क्षेत्र की प्रकृति

वायु राशि मे तापमान और आर्द्रता की क्षतिज समता एक अनिवार्य विशेषता है । इसके लिए स्रोत-क्षेत्रो की एक विस्तृत सम सतह होनी आवश्यक है, जो सामान्यत स्थायिवत् दाब प्रणालियो मे ही पायी जाती हैं ।

यदि वायु-राशि इस प्रकार की सतहो पर 3 से 5 दिन तक स्थिर रहे, तो विकिरण और विक्षुब्ध मिश्रण द्वारा वायु राशियो मे इन गुणो का समावेश तह दर-तह होता जाता है । इस क्रिया के लिए विशेष सुविधाजनक स्थिति यह है कि वहा के भूमि तल की हवा का सामान्य प्रवाह बहुत धीमा और बहिर्गामी अथवा अपसरण की विशेषताओ से युक्त हो । अपसरण युक्त वायु की गति, सतह पर फैलने की प्रवृत्ति के कारण अधिक सम होने की सुविधा पा सकेगी । इसके विपरीत अभिसरण (Convergent) प्रवाह मे तापमान विपर्यास (Contrast) अधिक होने के कारण वायु विक्षुब्ध होकर ऊपर उठती रहेगी, जिसके स्थान पर नई नई वायु राशियाँ अभिसरित होकर असमान हवाओ का सिलसिला जारी रखेंगी ।

अत स्पष्ट है कि वायु-राशिया के सबसे उत्तम स्रोत क्षेत्र पृथ्वी के व स्थायिवत् उच्च दाब क्षेत्र ही बन सकते हैं, जो पर्याप्त सम सतह पर जनित हुए हो ।

8 13 जल और थल के विपर्यास के कारण, प्रतिचक्रवातो की स्थितियाँ ग्रीष्म और शीत काल म अलग अलग पाई जाती हैं । इसी कारण वायु राशियो के स्रोत-क्षेत्र भी ऋतुओं के अनुसार ही पाये जाते हैं । सर्दियो मे प्रतिचक्रवात मुख्यत महाद्वीपीय क्षेत्रो मे स्थित होते हैं जबकि गर्मियो मे महासागरीय क्षेत्रो की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं और इनकी तीव्रता भी अपेक्षाकृत बहुत कम हो जाती है ।

8 14 उत्तरी गोलार्द्ध के स्रोत क्षेत्र–सर्दियों मे

उत्तरी गोलार्द्ध म शीत ऋतु में वायु राशियो के निम्नांकित 8 प्रमुख स्रोत क्षेत्र हैं —

(1) आर्कटिक क्षेत्र (Arctic region)

ये आर्कटिक क्षेत्र (ध्रुवीय क्षेत्रों का उत्तरी भाग 70 90° अक्षांश) में तुषार और हिम से ढके वे भाग हैं जहाँ ध्रुवीय प्रति चक्रवात स्थायी रूप से स्थित होता है। यहाँ अवतलन प्रवाह प्रमुख होता है, हवा बहुत धीमी तथा साधारणत उत्तर दिशा से बहती है और वायु राशि लम्बे समय तक अति शीतल सतह के सम्पर्क में रही होती है। हिम क्रिस्टल कुहरा इस वायु राशि की प्रमुख जलोल्काएँ (hydrometeor) हैं। वायु राशि से कभी-कभी स्तरी मेघ बन जाते हैं। यह वायु-राशि प्रबल रूप से स्थायी होती है।

(2) ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्र (Polar Continental region)

महाद्वीपीय उच्च दाब क्षेत्र के अन्तर्गत ये तुषार से ढके थल भाग हैं, जहाँ अत्यन्त शीतल, शुष्क और स्थायी वायु-राशि जनित होती है। वायु धीमी तथा उत्तरी दिशा वाली होती है। ह्रास दर बहुत कम होता है तथा भूमि तल व्युत्क्रमण साधारणत प्रमुख होता है। कनाडा तथा उत्तरी यूरोप एशिया के तुषार युक्त भू-भाग, इस प्रकार के क्षेत्र हैं। ये क्षेत्र प्राय 55 अंश अक्षांश से ऊपर ही मिलते हैं।

(3) महासागरीय उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र (Tropical maritime region)

ये मुख्यत दो क्षेत्र हैं (i) प्रशान्त महासागर और (ii) अटलांटिक महासागर जो उप-उष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवात के प्रभाव क्षेत्र में पड़ते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य खाड़ियाँ तथा जलीय भाग भी इसी प्रकार के स्रोत क्षेत्र हैं, जो महासागरीय उष्ण तथा नम वायु राशियाँ जनित करते हैं। ये स्रोत क्षेत्र प्राय 40 से 45 अक्षांशों के बीच सीमित हैं। उप उष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवातों के पश्चिमी भागों में वायु राशि अस्थायी होती है, जिसके फलस्वरूप वहाँ कपासी मेघ सामान्य होते हैं। परन्तु पूर्वी किनारों पर वायु राशि स्थायी होती है और अवतलन प्रवाह प्रमुख होता है। क्षैतिज वायु प्रवाह बहुत धीमा तथा प्राय पछुवाँ होता है।

(4) उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय क्षेत्र

उत्तरी अफ्रीका के विस्तृत मरूस्थल पर सर्दियों में प्रतिचक्रवाती प्रवाह प्रमुख रहता है, जो शुष्क अपेक्षाकृत उष्ण तथा ऊपर से स्थायी वायु-राशियों का प्रजनन करता है। इस वायु राशि में साधारणत आसमान स्वच्छ रहता है। अफ्रीका का यह क्षेत्र प्राय 20 से 0 अंश उ० अक्षांशों के बीच सीमित है।

(5) और (6) संक्रमण के क्षेत्र (Region of transition)

ये दो क्षेत्र हैं (i) वह क्षेत्र जहाँ, अतिशीतल आर्कटिक और ध्रुवीय वायु राशियाँ ठण्डी महासागरीय धाराओं के ऊपर से बहती हैं। (ii) वह क्षेत्र जहाँ आर्कटिक और ध्रुवीय राशियाँ उष्ण महासागरीय धाराओं के ऊपर से प्रवाहित होती हैं। इस अवस्था में ये शीतल हवाएं तेजी से परिवर्तित होती हैं। ये तापमान तथा आर्द्रता का लाभ करती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनमें अस्थायित्व का गुण आ जाता है। इस प्रकार के संक्रमण क्षेत्रों में कपासी मेघ और बौछार युक्त वर्षा सामान्य घटना है। वायु प्रवाह इन क्षेत्रों में प्राय उत्तरी होता है।

इस प्रकार के स्रोत क्षेत्रों की एक विशेषता यह भी है कि ये प्रमुख रूप से उच्च दाब क्षेत्र न होकर, अपेक्षाकृत निम्न दाब क्षेत्र होते हैं। ऐसे संक्रमण क्षेत्र 55 से 70 अक्षांशों के बीच पड़ने वाले सागरीय क्षेत्र होते हैं।

(7) विषुवत रेखीय क्षेत्र

यह व्यापारिक हवाओं के बीच की अत्यधिक समान प्रकृति की विषुवत् रेखीय पेटिका है, जिसका अधिकांश भाग महासागरीय है। परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में उत्पन्न वायु राशियां उष्ण, अत्यधिक आर्द्र तथा अस्थायित्व के गुणों से युक्त होती हैं। ये क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध में 8 से 10 अंश अक्षांश के मध्य स्थित हैं, जो प्रमुख रूप से निम्न दाब प्रणालियों से प्रभावित रहते हैं। इस क्षेत्र में उष्ण और धीमी पूर्वी हवाएँ चलती हैं। ऊर्ध्व विस्तार के मेघ तथा उनसे सम्बन्धित झंझा और तीव्र वर्षा इस क्षेत्र की सामान्य विशेषताएँ हैं।

(8) मानसून क्षेत्र

ये शीत मानसून प्रकार की एक विशिष्ट वायु राशि के जनक क्षेत्र हैं, दक्षिण तथा जा दक्षिणी-पूर्वी एशिया में विस्तृत हैं। शीत मानसून वे ठण्डी और शुष्क हवाएँ हैं, जो उच्च अक्षांशों के महाद्वीपीय भागों में चलकर, प्रतिचक्रवाती प्रवाह के प्रभाव भारत और बहती हैं। इन्हीं वायु-राशियों के कारण इन क्षेत्रों की सर्दियां ठण्डी और शुष्क होती हैं।

8.15 उत्तरी गोलार्द्ध के स्रोत-क्षेत्र-गर्मियों में

गर्मियों में जल और थल के तापमान विपर्यास में पर्याप्त कमी आ जाती है। निम्न और उच्च अक्षांशों के बीच भी तापमान प्रवणता घट जाती है। परिणामस्वरूप प्रतिचक्रवाती प्रवाह मन्द हो जाता है और वायु राशियों के स्रोत क्षेत्र सर्दियों की तुलना में सामान्यत कमजोर पाए जाते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध की गर्मियों में 6 प्रमुख स्रोत-क्षेत्र पाए जाते हैं।

(1) आर्कटिक क्षेत्र

सर्दियों के आर्कटिक क्षेत्र, सामान्यत गर्मियों में भी अपरिवर्तित रहते हैं, किन्तु ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्र और उत्तर की ओर सिमट जाते हैं, क्योंकि महाद्वीपीय क्षेत्रों से ध्रुवीय प्रतिचक्रवात हट कर प्रमुख रूप से आर्कटिक क्षेत्रों पर ही केन्द्रित हो जाते हैं। अत आर्कटिक वायु राशि की सीमा उष्ण और आर्द्र हवाओं से घिर जाती है। आर्कटिक वायु राशियों में कुहरे तथा स्तरी मेघ की घटनाएं प्रचुरता से देखी जाती हैं।

(2) ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्र

ध्रुवीय महाद्वीपीय ठण्डी हवाओं का प्रजनन क्षेत्र, सिमट कर एक सकीर्ण बैंड में केवल उत्तरी कनाडा और साइबेरिया के थल भागों में सीमित रह जाता है। यह वास्तव में उष्ण कटिबन्धीय और आर्कटिक वायु-राशियों के बीच एक पतली तह है।

(3) उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय क्षेत्र

सम्पूर्ण एशिया तथा अफ्रीका और दक्षिणी यूरोप के विस्तृत उष्ण और शुष्क भू भाग, उष्ण व शुष्क वायु राशियों के प्रमुख जनक क्षेत्र हैं। उत्तरी अमेरिका में मिसीसिपी के पश्चिम में स्थित शुष्क भू-भाग भी इसी प्रकार की वायु राशियाँ जनित करते हैं। ये वायु-

राशियाँ उच्चतर वायु मण्डल में स्थायी रहती हैं और अवक्षेपण के लिए सर्वथा प्रतिकूल परिस्थितियाँ रखती हैं। 20 से 40 अंश अक्षांशों के बीच इन्ही क्षेत्रों में संसार के मुख्य मरुस्थल स्थित हैं।

(4) उष्ण कटिबन्धीय महासागरीय क्षेत्र

ये वे महासागरीय क्षेत्र हैं, जहाँ उप उष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवात उत्तर दिशा में स्थानान्तरण के बाद स्थापित हो जाते हैं। सर्दियों की अपेक्षा गर्मियों में ये स्रोत क्षेत्र अधिक विस्तृत होते हैं। सर्दियों की अपेक्षा इस ऋतु में महासागरीय वायु राशियों का तापमान अधिक पाया जाता है। इन महासागरीय क्षेत्रों का उत्तरी भाग, विशेष रूप से प्रतिचक्रवातों के पूर्व में पड़ने वाले भाग, इस प्रकार की वायु राशियाँ जनित करते हैं जो उच्चतर वायु में स्थायी और शुष्क होती हैं। यह परिस्थिति अवक्षेपण प्रक्रमों पर प्रतिकूल असर डालती है। दक्षिणी भाग अस्थायी प्रकार की वायु-राशियाँ जनित करते हैं, जो मेघ विस्तार तथा वर्षा की परिस्थितियों के लिए बहुत अनुकूल होती हैं।

(5) विषुवत रेखीय क्षेत्र

सर्दियों की अपेक्षा यह क्षेत्र सूर्य के स्थानान्तरण के कारण, और उत्तरी अक्षांशों तक खिंच आता है। चूँकि इस क्षेत्र में महासागरीय भाग प्रमुख हैं, अतः अत्यन्त उष्ण, नम तथा अस्थायी वायु राशियाँ जनित होती हैं, जो कपासी समुदाय के मेघ और तड़ित झंझा युक्त अवक्षेपण की झड़ी सी लगा देती हैं।

(6) मानसून क्षेत्र

भारत तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया के भू भाग जो सर्दियों में प्रतिचक्रवाती प्रवाह के प्रभाव क्षेत्र में ठण्डी और शुष्क हवाएँ जनित करते हैं, गर्मियों में तीव्र निम्न दाब क्षेत्र के प्रभाव में आ जाते हैं। निम्न दाबों के प्रवाह में इन क्षेत्रों के ऊपर विषुवत् रेखीय अक्षांशों की महासागरीय उष्ण और नम हवाएँ, मानसून धाराओं के रूप में बहती हैं तथा अत्यधिक वर्षा उत्पन्न करती हैं। इस प्रकार मानसून क्षेत्र सर्दियों और गर्मियों में सर्वथा विपरीत वायु राशियों के प्रभाव में होते हैं।

8.20 वायु-राशियों का वर्गीकरण

वायु-राशियों की मौसम सम्बन्धी विशेषताएँ उनके स्रोत क्षेत्रों पर ही प्रमुख रूप से निर्भर करती हैं। किन्तु कुछ सीमा तक इन विशेषताओं में अन्य प्रभावों के अधीन भी परिवर्तन होते रहते हैं विशेषकर उन वायु-राशियों से, स्रोत-क्षेत्र को छोड़ कर पर्याप्त दूर तक की यात्रा करती हैं।

स्रोत-क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियों के आधार पर, वायु-राशियाँ मुख्य रूप से दो वर्गों में रखी जा सकती हैं

(1) ध्रुवीय वायु राशियाँ (P)—आर्कटिक स्रोत-क्षेत्रों की वायु राशियाँ भी, इनमें एक संशोधित रूप में सम्मिलित हैं।

(2) उष्ण कटिबन्धी वायु-राशियाँ (T)—विषुवत् रेखीय और मानसून क्षेत्रों में

जनित होने वाली वायु राशियाँ इनमें सम्मिलित हैं जो अस्थायी उष्ण कटिबन्धीय हवाओं के रूप में समझी जा सकती हैं।

P और T वायु राशियों को महाद्वीपीय (c) और महासागरीय (m) हवाओं मे, उद्गम के अनुसार, पुनः उप विभाजित किया जा सकता है। 'c' संकेत से युक्त वायु राशियाँ महाद्वीपीय मूल की होने के कारण शुष्क तथा 'm' संकेत वाली वायु राशियाँ महासागरीय उद्गम के कारण आर्द्र और वर्षा उत्पन्न करने की विशेषताओं से युक्त होती हैं।

इस प्रकार स्रोत क्षेत्रों के प्रकार के आधार पर निम्नांकित चार वायु राशियाँ पाई जाती हैं —

(i) cP—ध्रुवीय महाद्वीपीय
(ii) mP—ध्रुवीय महासागरीय
(iii) cT—उष्ण कटिबन्धी महाद्वीपीय
(iv) mT—उष्ण कटिबन्धी महासागरीय।

8.21 वायु राशियों की प्रकृति मे परिवर्तन, उनकी यात्राओं के दौरान होता रहता है। इन परिवर्तनों के दो मुख्य कारण होते हैं—

(1) ऊष्मा गतिकी (Thermodynamic), (2) यान्त्रिकी (mechanical)

(1) ऊष्मागतिकी परिवर्तन

वायु राशि और उसके नीचे की सतह के बीच ऊष्मा का स्थानान्तरण, वायु राशियों के गुणों मे परिवर्तन उत्पन्न करने का प्रमुख ऊष्मा गतिज कारण है। जब सतह वायु-राशि की अपेक्षा उष्ण होती है तो ऊष्मा संचार सतह से वायु राशि मे होता है। फलतः वायु राशि उत्तरोत्तर अधिक अस्थायी होती जाती है। ऐसी वायु राशियों का संकेत 'k' से प्रकट किया जाता है, जिसका तात्पर्य है कि 'k' नाम वाली वायु राशि अपने निचले भू-सतह की अपेक्षा ठंडी है।

इसी प्रकार, उन वायु राशियों को 'w' संकेत से प्रकट किया जाता है, जो अपने नीचे के उस पृथ्वी तल की अपेक्षा उष्ण होती हैं जिस पर वे गति कर रही हैं। इसमे ऊष्मा का संचार वायु-राशि से पृथ्वी तल की ओर होता है, फलतः वायु राशि मे शीतलन होता है जिससे स्थायित्व का गुण आता जाता है।

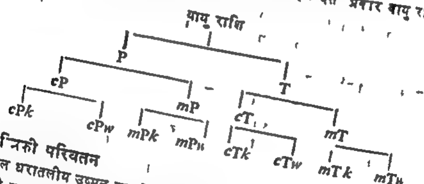
अब k और w वायु राशियाँ अपनी यात्रा के दौरान क्रमशः नीचे से गर्म और ठण्डी होती रहती हैं। किसी स्थान पर वायु राशि मे परिवर्तन की 'कुल' मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि अपने स्रोत से उस स्थान तक वायु-राशि किस गति से और कितनी दूरी तय कर चुकी है तथा इस बीच वह जिन जिन सतहों से गुजरी है उनकी प्रकृति (मुख्यतः उष्णता) क्या है? उष्ण सतहों के ऊपर से गुजरने वाली हवा मे अस्थायित्व जनित होता जाता है, जिसमे नमी की अनुकूल परिस्थितियों मे वर्षा उत्पन्न हो सकती है।

किन्तु वायु की ताप कुचालकता के कारण ऊष्मन या शीतलन वायु राशि में सर्वत्र नहीं आ पाता है। वायु राशियों की निचली तहें सर्वाधिक प्रभावित होती हैं। यही कारण है

है कि जब वायु राशि ठंडी सतह से गुजरती है, तो गर्त हुआ 'चपचपी' पैदा करने वाली शीत लहर की तरह चलती है। ऐसी वायु राशियों में सामान्यतः व्युत्क्रमण तक भी जनित हो जाती है, जो स्थायित्व की मात्रा बढ़ाने में सहयोग देती है। एक कारण यह भी है कि ठंडी सतहों से गुजरने वाली वायु राशि में भंवर या विक्षोभ बुलबुले उत्पन्न नहीं हो पाते जिससे शीतलन प्रभाव अधिक ऊपर तक ले जाने का कोई साधन नहीं मिलता और शीतलन केवल निचली तहों तक ही सीमित रह पाता है। लेकिन उष्ण सतहों से गुजरने वाली वायु राशियों में नीचे से ऊष्मा संचार के कारण उत्पन्न बुलबुले, ऊपर तक उष्ण मिश्रण तथा संवहन अपेक्षाकृत अधिक ऊँचाई तक उष्मा प्रभाव शीघ्र ले जाते हैं। इसके अतिरिक्त, उष्मन या शीतलन प्रभाव की व्यापकता सतहों के तापमान और प्रकृति पर भी निर्भर करती है।

यदि वायु राशि जल सतहों से गुजरती है तो k या w विशेषताओं के कारण वाष्पीकरण या संघनन द्वारा वायु राशि की आर्द्रता में भी परिवर्तन संभव है।

k और w संकेत क्रमशः द्वारा निर्धारित किए गए हैं जिन्हें उपर्युक्त चार प्रमुख वायु राशियों में प्रत्येक के साथ संलग्न किया जा सकता है। इस प्रकार वायु राशियों के निम्नांकित 8 वर्गीकरण प्राप्त हुए :—



8.22 यान्त्रिकी परिवर्तन

केवल धरातलीय उष्मन या शीतलन, वायु राशि की मौसम उत्पन्न करने की प्रवृत्ति निश्चित नहीं करता। जैसे, गर्म सतह से गुजरने वाली वायु राशि में, उष्मन के कारण निम्न तहों में उत्पन्न अस्थायित्व नमी के बावजूद वर्षा जनित नहीं कर सकता, यदि उच्चतर हवा में अवतलन प्रवाह प्रमुख हो। अतः उच्चतर वायुमण्डलीय परिस्थितियाँ भी वायु राशि की प्रकृति निश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसके अतिरिक्त उच्च वायु गति तथा विभिन्न तापमान की हवाओं के अभिवहन भी अपना प्रभाव डालते हैं।

यह विचार निश्चित रूप से वायु राशियों के वर्गीकरण को प्रभावित करता है। फलतः पेटरसन ने दो और संकेत निर्धारित किए हैं जो उपर्युक्त 8 वर्गों में प्रत्येक के साथ संलग्न किए जा सकते हैं। ये संकेत निम्नांकित हैं :—

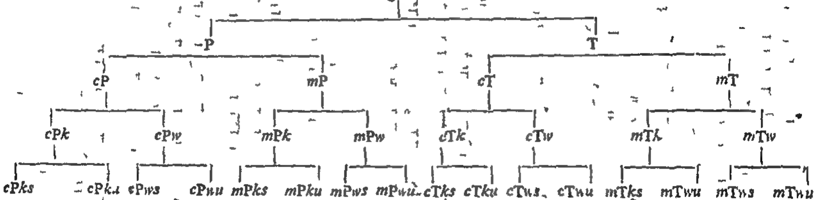
(i) s—स्थायी स्तरण (stable stratification) और (ii) u—अस्थायी स्तरण (unstable stratification)।

s उच्चतर स्तर पर स्थायित्व की ओर संकेत करता है। यह स्थिति, या तो प्रतिचक्रवाती प्रवाह में सम्बन्धित अवतलन प्रवाह में उत्पन्न होती है या उच्चतर स्तर में उष्ण हवाओं के अभिवहन से।

इसी प्रकार, संकेत u का तात्पर्य उच्चतर स्तर पर, अस्थायित्व से है। यह स्थिति उन क्षेत्रों में हो सकती है, जो तीव्र चक्रवाती प्रणालियों के प्रभाव में हों, या जहाँ उच्चतर वायुमण्डल में ठंडी हवाओं का यथेष्ट अभिवहन होता हो।

इसी प्रकार सामान्यत, विशेषताएँ s क्रमश u क्रमश प्रतिचक्रवाती और चक्रवाती दाब प्रणालियों से सम्बन्धित पाई जाती हैं।

8 23 उपर्युक्त धारणाओं के आधार पर वायु राशियों का कुल वर्गीकरण निम्नांकित व्यवस्था द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है, जो एच० सी० विल्लट द्वारा तैयार की गई है।



भाकटिक हवाएँ संशोधित ध्रुवीय हवाओं के समूह में रखी जाती हैं तथा विषुवत् रेखीय और मानसून हवाएँ *mTu* संकेत द्वारा व्यक्त की जाती हैं, जो निम्न-दाब प्रवाह में बहती उष्ण कटिबंधीय महासागरीय अस्थायी हवाओं में प्रदर्शित करता है। '*mTu*' वायु राशियों की सभी परिस्थितियाँ वर्षा के अनुकूल होती हैं। अतः विषुवत् रेखीय क्षेत्र सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते हैं।

8.24 वायुराशि प्रकारों का संक्षिप्त परिचय

संकेत P, T, *c*, *m*, *k*, *w*, *s* और *u* व्याख्याएँ ऊपर दी जा चुकी हैं, इनके विभिन्न संयोगों से वायु राशियों के उपर्युक्त 16 प्रकार प्राप्त हुए, जिनकी व्याख्या संकेतों के अनुरूप, उनके नाम से ही स्पष्ट है। उदाहरण के लिए, कुछ वायु-राशियों की व्याख्या नीचे की गई है

(1) **cPks**—शीतल और शुष्क महाद्वीपीय वायु-राशि, जो धरातलीय ऊष्मन के कारण निचली तहों में अस्थायी तथा अवतलन के कारण उच्चतर तहों में स्थायी है।

(2) **cPku**—शीतल, शुष्क और अस्थायी महाद्वीपीय वायु राशि। अस्थायित्व अंशतः धरातलीय ऊष्मन से जनित होता है, और अंशतः तीव्र चक्रवाती प्रवाह के कारण। फलस्वरूप, शुष्क आरोही धाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

(3) **cPks**—शीतल, शुष्क और स्थायी महाद्वीपीय वायु-राशि जो निचली तहों में धरातलीय शीतलन तथा उच्च तलों में अवतलन के कारण स्थायी होती है।

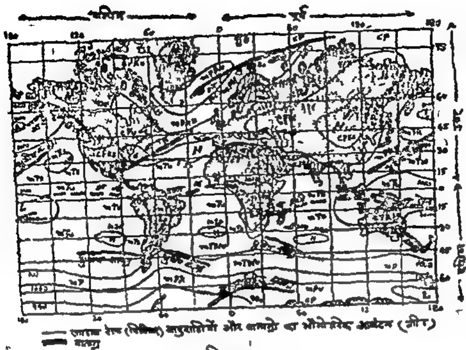
(4) **cPwu**—शीतल और शुष्क महाद्वीपीय वायु राशि जो धरातलीय शीतलन के कारण निचली तहों में स्थायी होती है किन्तु अवतलन प्रवाह की उपस्थिति में उच्चतर तहों में अतिप्रवण (Steep) ह्रास दर पाई जाती है।

mPus, *mPks* *mPku* और *mPwu* वायु राशियाँ, ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशियों से केवल इतना अन्तर रखती हैं, कि महासागरीय मूल की होने के कारण, इनमें आर्द्रता तथा तापमान अपेक्षाकृत अधिक होता है।

इसी प्रकार, उष्ण कटिबंधी वायु-राशियाँ हर तह में उच्च तापमान की विशेषता रखती हैं। उष्ण कटिबंधी, महाद्वीपीय हवाएँ शुष्क तथा महासागरीय हवाएं अत्यधिक नम होती हैं। इन गुणों के साथ *k w s* और *u* की विशेषताएँ संलग्न करके, अन्य प्रकारों की व्याख्या भी उपर्युक्त विधि से की जा सकती है।

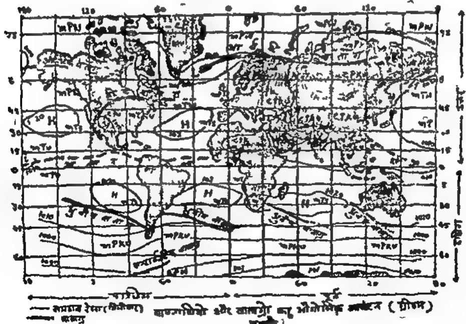
इन 8 संकेतों में गुणानुसार जितने संकेतों की आवश्यकता हो, उसके संयोग से सभी प्रकार की वायु-राशियाँ वर्णित की जा सकती हैं।

8.25 उत्तरी गोलार्द्ध में वायु राशियों का भौगोलिक आवंटन शीत और ग्रीष्म ऋतुओं के लिए अलग-अलग चित्रों (8.1 और 8.2) में प्रदर्शित किया गया है।



—— समदाब रेखा (मिलीबार) वायुराशियों और वाताग्रों का भौगोलिक आवंटन (शीत)
▬▬ वाताग्र

चित्र (8.1)



—— समदाब रेखा (मिलीबार) वायुराशियों और वाताग्रों का भौगोलिक आवंटन (ग्रीष्म)
▬▬ वाताग्र

चित्र (8.2)

8.30 एशिया को प्रभावित करने वाली वायु-राशियां

(1) cP–वायु राशि—सर्दियों मे

साइबेरिया और मगोलिया के उत्तरी भाग जो पहाडी श्रृंखलाओ के कारण महासागरीय प्रवाह के अनुवर्ती भाग मे पडते हैं, विस्तृत रूप से शीतल और शुष्क वायु-राशि जनित

करने के लिए अनुकूल हैं। यह वायु राशि सर्दियों में इन क्षेत्रों पर व्याप्त प्रतिचक्रवात के अधीन पर्याप्त समय तक स्थिर रह कर, अत्यधिक शीतलन प्राप्त कर लेती है। साइबेरिया के स्रोत-क्षेत्रों में इन दिनों धरातल का तापमान – 15 से – 40°C के बीच पाया जाता है। सबसे शीतल और गहरी वायु राशि, यूराल पर्वत के पूर्वी भागों में स्थापित होती है, जो निम्नांकित मौसम सम्बन्धी गुणों से युक्त होती है —

(1) प्रतिचक्रवात में अधःतलन प्रवाह से सम्बन्धित स्वच्छ आकाश।

(2) अत्यधिक कम धरातलीय तापमान, जो लगभग 1500 मीटर तक की ऊँचाई के साथ स्पष्ट रूप से बढ़ता जाता है, अर्थात् तीव्र धरातलीय व्युत्क्रमण।

(3) अत्यन्त कम निरपेक्ष आर्द्रता। विशिष्ट आर्द्रता 1–2 ग्राम/कि ग्राम के बीच पाई जाती है तथा उत्तरी साइबेरिया में इससे भी कम।

(4) स्रोत क्षेत्रों में वायु राशि अत्यन्त अस्थाई होती है।

(5) स्वच्छ आकाश के बावजूद, विकिरण शीतलन के कारण हिमक्रिस्टल-कुहरों की घटनाएँ सामान्य हैं।

60 पूर्वी देशान्तर के पश्चिमी भागों में cP वायु राशि छिछली होती जाती है और उच्चतर तहों में mP हवाओं से दबी होती हैं। ये mP हवाएँ या तो साइबेरियन प्रति चक्रवात के पश्चिम की ओर स्थानान्तरण से, या पूर्वी यूरोप पर स्थित महासागरीय हवाओं से प्राप्त होती हैं। फलतः इन भागों की हवाएँ साइबेरियन वायु-राशि की अपेक्षा अधिक नम तथा ऊष्ण होती हैं।

8 31 cP वायु-राशियों का परिवर्तन (Modification)

जब P हवाएँ अपने स्रोत-क्षेत्रों से चलती हैं, तो यात्रा के दौरान विभिन्न धरातलों से तापमान और नमी का शोषण करके परिवर्तित होती जाती हैं। इनमें सहसा (abrupt) परिवर्तन तब होता है जब वायु राशि हिम से ढकी सतह छोड़ती है। निम्नांकित परिवर्तन स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं।

(1) ह्रास दर बढ़ता जाता है तथा व्युत्क्रमण तह टूटने लगती है। कभी कभी पर्याप्त ऊष्ण तल में गुजरते हुए अस्थायित्व उत्पन्न हो जाता है, जिससे तीव्र आरोही धाराएँ आरम्भ हो जाती हैं।

(2) निरपेक्ष आर्द्रता बढ़ती जाती है। मुख्यतः उष्ण महासागरों में अस्थायित्व तथा आर्द्रता के कारण वर्षी कपासी मेघ विकसित हो सकते हैं जिनसे झंझा बौछार और स्क्वाल की घटनाएँ जनित होती हैं।

(2) तीव्र अस्थायित्व के अभाव में विक्षोभ मिश्रण के कारण यथेष्ट आर्द्रता, व्यापक रूप से स्तरी तथा स्तरी, कपासी मेघों को जन्म देती है।

8 32 एशिया में cP वायु राशियों का निम्नांकित परिवर्तन सामान्यतः पाया जाता है —

(1) उत्तरी एशिया के तटीय क्षेत्रों में विलोडित (stirred) वायु राशियाँ मिलती हैं, जिनमें विक्षोभ मिश्रण के कारण तापमान में वृद्धि होती रहती है। व्युत्क्रमण तह शनैः-शनैः समाप्त हो जाती है।

(2) 'एल्यूशियन' निम्नदाब के प्रभाव क्षेत्र, उत्तरी पूर्वी एशिया में भी विलोडित cP हवाएँ व्याप्त रहती हैं किन्तु मुख्यतः उच्चतर वायुमण्डल में। इसका कारण यह है कि चक्रवाती प्रवाह के द्वारा cP हवाएँ ऊपर उठा ली जाती हैं। अति प्रवण ह्रास दर होते हुए भी, धरातलीय हवा बहुत शीतल तथा शुष्क (विशिष्ट आर्द्रता, लगभग 0.5 ग्राम/कि ग्राम) पाई जाती है।

(3) चीन के ऊपर cP हवाएँ थल और जल, दोनों मार्गों से पहुँचती हैं। यदि उच्चदाब केन्द्र मङ्गोलिया तथा उत्तरी चीन पर है, तो ध्रुवीय हवाएँ थल भाग से अभिवहित होती हैं, जो अपने स्रोत-क्षेत्रों की अपेक्षा ऊष्ण होते हुए भी, इन क्षेत्रों के लिए बहुत कम तापमान रखती हैं। चीन की भूमि पर cP हवाओं का तापमान 10 से 20°C तक बढ़ जाता है। थल cP हवाएँ चीन में स्वच्छ आकाश और ठण्डे मौसम की प्रतीक हैं। स्वच्छ आकाश के कारण, उच्च दैनिक तापमान परिसर तथा प्रातःकालीन धरातलीय कुहरा भी सर्दियों की सामान्य घटनाएँ हैं।

लेकिन जब उच्चदाब कोशिकाएँ, जापान सागर या मन्चूरिया पर केन्द्रित होती हैं, तो cP हवाएँ जापान सागर, पोहे की खाड़ी, पीत सागर, चीन सागर तथा संलग्न प्रशान्त महासागर के जल भाग से चीन में प्रवेश करती हैं। स्वाभाविक रूप से इस प्रकार की cP हवाएँ तापमान और आर्द्रता के सन्दर्भ में थलीय cP वायु राशियों से इतनी अधिक भिन्न हो जाती हैं कि कुछ मौसमविज्ञ इन्हें mP हवाओं की संज्ञा भी देते हैं। किन्तु इन हवाओं से साधारणतः स्वच्छ मौसम ही सम्बन्धित रहता है। वैसे, जब सागरीय cP वायु राशि तथा शुष्क थलीय cP के सम्मिलन द्वारा वाताग्र सतह जनित होती है, तो वर्षा हो जाती है। इसके अतिरिक्त, सागरीय cP निचली तहों में साधारणतः अस्थायी होता है, जो पर्वतीय प्रदेशों में उत्थापन की अनुकूल परिस्थितियाँ पाकर, वर्षा उत्पन्न कर सकती है।

(4) दक्षिणी पूर्वी एशिया, भारत तथा दक्षिणी पश्चिमी एशिया की सर्दियों में cP हवाएँ अत्यधिक परिवर्तित रूप में पहुँचती हैं। कुछ मौसमविज्ञों की धारणा यह भी है कि वास्तविक cP हवाएँ हिमालय तथा सम्बन्धित पर्वतीय शृंखलाओं द्वारा इन क्षेत्रों पर आने से रोक ली जाती हैं और जो उत्तरी-पूर्वी मानसून हवाएँ भारतीय उप महाद्वीप में इस ऋतु में व्याप्त रहती हैं, उनका स्रोत स्थानीय व्यापारी हवाओं में ही है।

जो भी हो, ये cP हवाएँ उत्तर में स्थित पर्वत शृंखलाओं से नीचे उतरने के कारण, पर्याप्त रुद्धोष्म प्रक्रम द्वारा बहुत गर्म हो जाती हैं। आगरा में इन दिनों का औसत तापमान 20°C तथा विशिष्ट आर्द्रता 4 ग्राम/कि ग्राम तथा 'पूना' में क्रमशः 23°C और 7 ग्राम/कि ग्राम पाए जाते हैं।

(5) cP हवाओं का सर्वाधिक सहसा परिवर्तन तब होता है, जब वे और दक्षिणी अक्षांशों में आकार बङ्गाल की खाड़ी और अरब सागर के ऊष्ण जल के ऊपर से बहती हैं। ये हवाएँ साधारणतः उत्तर-पूर्व से बहती हैं तथा नमी और तापमान प्राप्त करके अधिक अस्थायी

हो उठती हैं । अस्थायित्व को यह सहयोग भी प्राप्त होता है कि वे उच्चतर वायुमण्डल के अवतलन प्रवाह से मुक्त होती हैं । भारत के पूर्वी तट पर इन्ही हवाओं द्वारा सर्दियो मे वर्षा की सर्वाधिक वर्षा होती है ।

8 33 cP वायु राशि–गर्मियो मे

गर्मियो म सम्पूर्ण दक्षिणी एशिया cP हवाओ के प्रभाव से लगभग मुक्त हो जाता है । cP हवाओ का स्रोत-क्षेत्र 50° से उत्तर के आर्कटिक क्षेत्रो मे ही सिमट जाता है । प्राकृतिक सतह इन दिनो प्राय पिघलते तुषार या हिमजल के रूप म होती है । इसके ऊपर cP वायु स्थायी, किन्तु पर्याप्त आर्द्र होती है । अत कुहरे या स्तरी मेघ की उपस्थिति सामान्य रूप से पाई जाती है ।

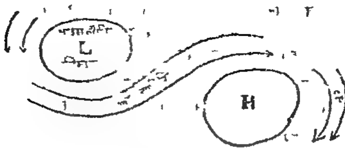
दक्षिण की तरफ की गति करती cP वायु राशियाँ, गम धरातल द्वारा ऊष्मा पाकर शीघ्र अस्थायी हो जाती हैं किन्तु मेघो का प्रकार नमी की मात्रा पर निर्भर करता है । उत्तरी-पश्चिमी एशिया पर गुजरती हुई इन वायु राशियो की आर्द्रता, उत्तरी-पूर्वी एशिया की अपेक्षा अधिक होती है, क्योकि उत्तरी-पश्चिमी भाग म ऊष्ण जलाशय अधिक हैं । इसलिए यह भाग cP हवाओ द्वारा अधिक मेघाच्छन्नता तथा वर्षा प्राप्त करता है ।

कभी कभी जापान और पीत सागर के भाग से cP हवाएँ चीन मे प्रवेश कर जाती है । चीन म इन दिनो ऊष्ण कटिबन्धीय हवाओ की प्रमुखता रहती है, जिसकी तुलना मे आगत cP वायु राशियाँ ठडी और शुष्क होती हैं । फलत cP हवाओ से स्वच्छ मौसम सम्बन्धित रहता है । किन्तु जहाँ cP वायु-राशि, उपस्थित ऊष्ण कटिबन्धी वायुराशि के सम्पर्क मे आकर वाताग्र पृष्ठ जनित करती है, वहाँ तूफानी मौसम उत्पन्न हो जाता है ।

8 34 mP वायु राशि–सर्दियो मे

वायु राशियाँ जो सर्दियो मे उत्तरी-पश्चिमी तथा कभी कभी पूर पश्चिमी एशिया को प्रभावित करती हैं, सामान्यत अटलान्टिक महासागर मे उत्पन्न होती हैं । स्रोत क्षेत्र म ये हवाएँ पर्याप्त उष्ण और आर्द्र होती हैं । पश्चिमी यूरोप म ये गुण वतमान रहते है किन्तु पूर्वी यूरोप स होकर पश्चिमी एशिया तक आते आते mP हवाओ के मौलिक गुण बहुत कुछ परिवर्तित हो जाते है क्योकि यह यात्रा उन्ह विशाल थलीय भाग पर ही तय करनी पडती है । धरातल स इनका लगातार शीतलन होता रहता है । फलत cP हवाओ के समान ही इनम स्थायित्व का गुण आ जाता है ।

किन्तु इस परिवर्तित mP वायु राशि के ऊपरी स्तरो मे अधिक आर्द्रता पाई जाती है और इसी गुण के कारण इन्हे वास्तविक cP हवाओ से अलग पहचाना जा सकता है । परिवर्तित mP वायु राशि, पश्चिमी रूस के उच्चतर स्तरों म प्राय विस्तृत होती है जहाँ धरातलीय तहो मे cP हवाओ की एक छिछली तह वतमान रहती है । फलस्वरूप इन क्षेत्रो म वाताग्र मेघ सामान्य रूप से जनित होते रहते हैं ।



शीत ऋतु

चित्र (8 3)

पूर्वी एशिया में सर्दियो मे उत्तर से दक्षिण की ओर तीव्र वायु प्रवाह वर्तमान होता है, जो इन क्षेत्रो मे परिवर्तित *mP* हवाओ को जमने नही देता।

8 35 *mP* वायु राशि–गर्मियो मे

गर्मियो मे आर्कटिक के पिघलते हिम क्षेत्रो से सर्वाधिक ठंडे प्रकार की *mP* वायु-राशियाँ जनित होती हैं। ये वायु राशियाँ आरम्भ मे धरातल पर अत्यन्त स्थायी तथा ठंडी होती हैं। परन्तु दक्षिणी तथा दक्षिणी-पश्चिमी दिशा मे अपनी यात्रा के दौरान, पश्चिमी एशिया तथा यूरोप से गुजरती हुई ये तेजी से परिवर्तित होती जाती हैं। परिवर्तित हवाएँ अस्थायी हो उठती हैं। उत्तरी-पश्चिमी एशिया पर तो ये प्राय *cP* हवाओ के ही समान गुण रखती हैं।

गर्मियो मे उत्तरी पूर्वी एशिया मे भी *mP* हवाएँ उपस्थित होती हैं। ठंडे जलीय भागो पर से बहने के कारण, इन हवाओ से कामचटका प्रायद्वीप तथा अन्य तटीय क्षेत्रो मे कुहरे का बाहुल्य पाया जाता है। *mP* हवाओ के पूर्वी एशिया पर आगमन के लिए, ओखोत्स्क (okhostsk) सागर की भूमिका महत्वपूर्ण है। 40° उ० अक्षाश से उत्तर के तटीय क्षेत्र मे ग्रीष्म मानसून प्राय इन्ही हवाओ से आता है।

8 35 *cT* वायु राशि

एशिया मे *cT* वायु राशियो की उपस्थिति मुख्यत गर्मियो म ही पाई जाती है जिसके स्रोत क्षेत्र मध्य तथा दक्षिणी पश्चिमी एशिया के तप्त भू-भाग होते हैं। मध्य एशिया के शुष्क भू भाग जहाँ ऊष्मन सर्वाधिक तीव्र होता है, सबसे गहन हवाएँ जनित करते हैं। ये *cT* हवाएँ उच्च तापमान और निम्न आर्द्रता की विशेषताओ से युक्त होती हैं। शुष्कता और स्वच्छ मौसम के कारण प्रभावित क्षेत्रो मे दैनिक तापमान परिसर बहुत ऊँचा होता है।

दक्षिणी-पूर्वी यूरोप के जलाशयो के कारण, पूर्वी यूरोप मे *cT* हवाएँ परिवर्तित होकर पहुँचती हैं, जो अपेक्षाकृत नम और अस्थायी होती हैं। यही हवाए इन क्षेत्रो मे ग्रीष्म-बौछार तथा तडित झंझा की घटनाओं के लिए उत्तरदायी हैं। सर्दियो मे *cT* हवाएँ केवल उत्तरी अफ्रीका पर जनित होती हैं जो वहा हमंतन के स्थानीय नाम से विख्यात हैं।

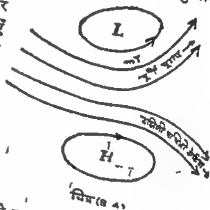
8.36 mT वायु राशि–सर्दियों में

इनके मुख्य स्रोत उप-ऊष्ण कटिबन्धी प्रतिचक्रवात हैं, जो 30 अंश उत्तरी और दक्षिणी अक्षांश के आसपास, सागरीय क्षेत्रों में वर्ष भर विद्यमान रहते हैं। अपने स्रोत क्षेत्रों में ये हवाएँ निम्नांकित गुणों से विशेषित होती हैं —

(1) ऊष्ण सागरों पर जनित होने के कारण उच्च तापमान तथा उच्च आर्द्रता। उच्च तापमान पर वायु राशि की आर्द्रता ग्राह्य शक्ति भी बढ़ जाती है।

(2) सामान्यतः स्थायी तहें—

इन हवाओं का प्रमुख स्रोत क्षेत्र, महासागरों के दक्षिणी भाग हैं। किन्तु सर्दियों में साइबेरियन प्रतिचक्रवात के कारण mT वायु-राशियाँ एशिया को बहुत कम प्रभावित कर पाती हैं। वाताग्र प्रक्रियाओं के समय mT हवाएँ पूर्वी यूरोप में उच्चतर वायुमण्डल में गहराई तक व्याप्त रहती हैं।



चित्र (8.4)

mT वायु राशि यूरोप के निम्न दाब तथा दक्षिणी अक्षांशों में उच्च दाब प्रवाह के अधीन दक्षिणी पश्चिमी एशिया में प्रवेश करती है। ये आर्द्र तथा ऊष्ण हवाएँ टर्की और उसस कुछ पूर्व तक प्रभावशील रहती है। वाताग्र अवदाबों के प्रवाह में परिवर्तित mT हवाएँ कभी कभी फारस की खाड़ी से होकर भारतीय उपमहाद्वीप तथा शेष दक्षिणी एशिया पर आ जाती है।

इण्डोनेशिया तथा आस पास के क्षेत्रों और सागरीय द्वीपों में वे mT हवाएँ बहती हैं जो cP हवाओं के परिवर्तित होने से जनित होती हैं। इन हवाओं में अस्थायित्व का गुण विशेष प्रखर होता है। संवाहनिक रूप से अस्थायी हवाएँ, दक्षिणी पश्चिमी प्रशान्त महासागर पर उत्पन्न होती हैं। यहाँ तापमान और आर्द्रता अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। ये हवाएँ थलीय भागों पर साधारणतः नहीं पहुँच पाती हैं क्योंकि शीतोष्ण कटिबन्धीय साइक्लोन सामान्यतः दक्षिणी पश्चिमी प्रशान्त महासागर में ही होकर उत्तर-पूर्व की ओर गति करते रहते हैं।

8.37 mT वायु राशि–गर्मियों में

mT और परिवर्तित mT वायु राशियाँ, ग्रीष्म में भारतीय उपमहाद्वीप तथा पूर्वी एशिया में प्रमुख होती हैं जो चक्रवाती प्रवाह से नियन्त्रित होने के कारण अस्थायी होती हैं। अस्थायित्व का गुण थलीय भागों पर ऊष्मन के कारण और तीव्र हो उठता है। फलस्वरूप, थल भागों पर प्रभावित होने वाली वायु राशि mTku प्रकृति की होती है। उच्चतर स्तरों पर भी अवतलन अनुपस्थिति के कारण, आर्द्रता पर्याप्त ऊँचाई तक उठ जाती है। उदाहरण के लिए आगरा में 3 किमी ऊँचाई पर भी औसत आर्द्रता लगभग 80% पाई जाती है। इन वायु राशियों के लगातार प्रवाह से एशियाई पठार के

पवनाभिमुखी भागों में, भारी संवाहनिक वर्षा होती है। ये हवाएँ दक्षिणी एशिया में ग्रीष्म मानसून के नाम से विख्यात हैं।

पूर्वी इन्डोनेशिया तथा न्यूगिनी और आसपास के क्षेत्रों में, दक्षिणी-पूर्वी व्यापारी हवाओं में अवतलन के कारण, स्थायी तहों वाली *m*T वायु राशि मिलती है। किन्तु उत्तरी प्रदेशों में फिलीपाइन के पास, *m*T वायु राशियाँ डोलड्रम निम्नदाब में अभिसरण के कारण अतिशय अस्थायी हो उठती हैं, जिसके कारण इन क्षेत्रों में स्थायी *m*T वाले क्षेत्रों की अपेक्षा बहुत वर्षा प्राप्त होती है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया के सागरीय द्वीपों में वर्षा की इतनी तीव्र असमानता का यही कारण है।

8.40 भारत की वायु राशियाँ

भारत मानसून हवाओं की भूमि है और मुख्य रूप से यहाँ दो प्रकार की वायु-राशियाँ बहती हैं - (1) शुष्क और ठंडी वायु राशि, जो उत्तरी पूर्वी मानसून के रूप में सर्दियों (दिसम्बर-फरवरी) में बहती है, (2) नम और ऊष्ण वायु राशि—जो दक्षिणी-पश्चिमी मानसून या ग्रीष्म मानसून धाराओं के रूप में गर्मियों (जून सितम्बर) में बहती हैं।

किन्तु सूक्ष्म रूप से अध्ययन करने पर, निम्नांकित वायु राशियाँ विभिन्न ऋतुओं में स्पष्टतः पाई जाती हैं —

शीत ऋतु दिसम्बर-फरवरी

(i) परिवर्तित *c*P या शीतोष्ण महाद्वीपीय वायु—यह उत्तरी तथा मध्य भारत की सामान्य शीतकालीन वायु राशि है, जो मध्य एशिया के प्रतिचक्रवाती प्रवाह के अधीन, उत्तर-पूर्व से भारत में प्रवेश करती है। राजस्थान तथा पश्चिम भारत पर वायु प्रवाह स्थानीय प्रतिचक्रवात में स्वतः जनित होती हैं किन्तु ये वायु राशियाँ वही विशेषताएँ रखती हैं, जो उप-ऊष्ण कटिबंधी प्रतिचक्रवाती मूल की वायु राशियों में पाई जाती हैं।

इन हवाओं से तापमान और निरपेक्ष आर्द्रता, प्रभावित क्षेत्रों में बहुत गिर जाती है। वैसे कम तापमान के कारण सापेक्ष आर्द्रता काफी अधिक पाई जाती है। आसमान साधारणतः साफ होता है। कभी कभी पक्षाभ मेघ उत्पन्न हो जाते हैं। प्रभात वेला में धरातलीय व्युत्क्रमण और आर्द्रता वाले क्षेत्रों में कुहरा या कुहासा सामान्य रूप से देखा जाता है। उत्तर पश्चिम भारत में दैनिक तापमान परिसर इन दिनों, लगभग 15–16°C होता है। वायु-गति धीमी या मृदु होती है।

(ii) वास्तविक *c*P—ये हवाएँ कभी कभी सक्रिय पश्चिमी विक्षोभों के पीछे बहती हुई, उत्तरी भारत पर आया करती हैं। इन हवाओं के साथ शीत-तरंग बहने लगती है और रात्रि तापमान सामान्य से कम से कम 6°C नीचे गिर जाता है। वायुगति तेज हो जाती है तथा विक्षोभ मिश्रण के कारण धरातलीय व्युत्क्रमण तथा कुहरे लगभग नहीं उत्पन्न हो पाते। ठंडी हवा परिवर्तित *c*P से अधिक शुष्क होती है और लगभग 5 कि.मी. ऊँचाई तक व्याप्त हो जाती है। ये हवाएँ एक दौर में 3 से 6 दिन तक प्रवाहित होती रहती हैं।

(iii) *c*T—भारतीय प्रायद्वीप के उत्तरी भाग पर सर्दियों में बहने वाली हवा, पूर्णतः थलीय मूल की ऊष्ण कटिबंधी वायु राशि है, जो ऊष्ण कटिबंधीय उच्चदाब क्षेत्र में लम्बी अवधि तक रुद्ध रहने के फलस्वरूप उत्पन्न होती है।

ये अपेक्षाकृत उष्ण वायु राशियाँ हैं, जिनमे रात्रि तापमान काफी कम पाया जाता है। फलत दैनिक तापमान परिसर 20°C के आस-पास पाया जाता है। पश्चिमी विक्षोभो के प्रवाह मे *cT* हवाएँ उत्तरी भारत मे भी फैल जाती है। इन हवाओ मे आर्द्रता परिवर्तित *cP* से कुछ अधिक पाई जाती है। अत स्थायित्व का गुण कम हो जाता है। व्युत्क्रमण तह धरातल पर न होकर कुछ ऊपर उठ जाती है। बहुधा उच्च या मध्यम मेघ, आंशिक रूप से आकाश पर छाये होते हैं किन्तु रात्रि मे आकाश स्वच्छ हो जाता है। हवा धीमी बहती है किन्तु दोपहर के बाद निर्वात के झोके प्राय आ जाते हैं।

(iv) *cT–mT*—जो *cT* हवाएँ बगाल की खाडी से होकर मद्रास तथा आस-पास के दक्षिणी तट पर पहुँचती है, व *cT–mT* के रूप मे परिवर्तित हो जाती हैं। इन हवाओ मे तापमान तो मृदु रहता है पर अधिक आर्द्रता के कारण ऊमस पाई जाती है। प्रभातीय व्युत्क्रमण तह प्राय अनुपस्थित होती है। 2 किमी से नीचे की वायु तह साधारणत सवाहनिक रूप से अस्थायी होती है। अत कपासी तथा कपासी वर्षी मेघ तथा सम्बधित गर्जन बौछार, स्कवाल आदि भी घटनाएँ उत्पन्न होती हैं—विशेषत दोपहर के बाद या शाम को।

(v) *mT*—बगाल की खाडी के दक्षिण भाग मे *mT* वायु राशि उत्पन्न होती है। ऐसी ही वायु राशिया चीन सागर मे उत्पन्न होती हैं। जब उत्तरी-पूर्वी मानसून सक्रिय होता है, या जब निम्नदाब तरगें पूर्व से पश्चिम की ओर दक्षिणी खाडी मे चलती हैं, तो *mT* हवाएँ दक्षिणी प्रायद्वीप पर बहने लगती है।

इन वायु राशियो के प्रभाव मे आसमान प्राय कपासी या स्तरी कपासी मेघो से घिरा रहता है। फलत रात्रि तापमान विशेष रूप से बढ जाता है। 3 किमी या कभी-कभी अधिक ऊँचाई तक भी सवाहनिक आरोही धाराएँ प्रचलित रहती हैं, जिससे पर्याप्त वर्षा प्राप्त होती है।

पूर्व मानसून काल (मार्च-मई)

(i) परिवर्तित *cP* या शीतोष्ण महाद्वीपीय वायु राशि—उत्तरी भारत मे कभी-कभी शीत वाताग्र के पीछे ये हवाएँ कुछ दिनो के लिए बहने लगती हैं, जिससे तापमान काफी गिर जाता है और दैनिक तापमान परिसर बहुत अधिक हो जाता है। स्वच्छ आकाश और मृदु हवाएँ इस वायु राशि की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

(ii) *cT*—इस काल के लिए, ये बगाल और आसाम को छोडकर शेष उत्तरी और मध्य भारत पर बहने वाली मुख्य वायु राशिया हैं, जिनमे स्रोत क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी एशिया के तप्त भू भाग हैं। यह भारत की सर्वाधिक ऊष्ण वायु राशि है, जिसका औसत उच्चतम तापमान मई मे उत्तरी-पश्चिमी भारत पर 45 C तथा बिहार, उडीसा और मध्य भारत मे 40°C से अधिक होता है। रात्रि का तापमान उत्तरी पश्चिमी भारत मे कम होने से यहाँ सर्वाधिक दैनिक तापमान परिसर पाया जाता है। हवा बहुत ही शुष्क होती है किन्तु दोपहर का ह्रास दर बहुत प्रखर होने से शुष्क वायु धाराएँ उठा करती हैं। प्राय दोपहर के बाद स्वच्छ मौसम कपासी मेघ उत्पन्न हो जाया करता है। तीव्र दाब प्रवणता के कारण कभी-कभी धूल भरी आँधियाँ और चलती है।

(iii) cT–mT—बगाल, आसाम, दक्षिणी प्रायद्वीप, उत्तरी बगाल की खाडी तथा अरब सागर पर शुष्क cT हवाएँ निम्न दाब प्रवाहो द्वारा सागर तल के ऊपर से होकर पहुँचती हैं, अत परिवर्तित होकर cT–mT बन जाती हैं। ये हवाएँ निचली तहों मे mT तथा ऊपरी तहो मे cT वायु राशियो की विशेषताएँ रखती हैं। ग्रहण की गई आर्द्रता की मात्रा और उसका ऊर्ध्व वटन इस बात पर निर्भर करता है कि मौलिक cT हवाएँ समुद्र तल पर कितनी लबी और किस गति से यात्रा करती हैं। उत्तरी पश्चिमी भारत के अधिक विकसित ताप निम्नदाब (heat low) के प्रभाव मे cT–mT हवाएँ, कभी-कभी मध्य और उत्तरी भारत मे भी खिच आती हैं।

इनमे उच्चतम तापमान घट जाता है तथा रात्रि-तापमान cT की अपेक्षा, 1–2°C अधिक होता है। निम्न तहों म विक्षोभ प्रवाह और अस्थायित्व के कारण, साधारणत स्वच्छ मौसम कपासी या स्तरी कपासी मेघ उत्पन्न होते हैं। पर्वतीय अनुकूलता मे कपासी वर्षी तक बन सकता है, जिससे गर्जन बौछार प्राप्त हो जाती है।

(iv) mT—ये हवाएँ मध्य और दक्षिणी बगाल की खाडी मे प्रतिचक्रवाती प्रवाह द्वारा उदित होती हैं और पश्चिम की ओर गति करते, निम्न दाब तरंग के प्रभाव मे कभी-कभी दक्षिणी प्रायद्वीप पर छा जाती हैं। स्वाभाविक रूप से अस्थायित्व के कारण, गर्जन मेघ और वर्षा की उत्पत्ति होती है। ये हवाएँ सामान्यत शीतल और अधिक गहराई तक आर्द्र होती हैं।

(v) mE (विषुवत रेखीय महासागरीय)—विषुवत् रेखीय अथवा दक्षिणी गोलार्धीय मूल की हवाएँ, मई के मध्य तक दक्षिणी और पूर्वी बगाल की खाडी तक फैल जाती हैं। इनका उत्तर और पश्चिम की ओर स्थानान्तरण जारी रहता है। अवदाबा तथा चक्रवातों के सम्पर्क मे ये एकाएक भारत की भूमि मे प्रवेश कर जाती हैं और संवाहनिक प्रकार के मेघ तथा तूफानी मौसम उत्पन्न कर देती हैं। सागर के ऊपर ये केवल स्तरी और स्तरी कपासी मेघ तथा हल्की वर्षा उत्पन्न करती हैं।

ग्रीष्म मानसून काल (जून–सितम्बर)

(i) mE—22 अंश उत्तरी अक्षांश के नीचे के भारत पर, इस ऋतु की यह सामान्य वायु राशि है—यही वायु राशि भारतीय सागरो और बर्मा पर भी प्रचलित रहती है और मानसून धाराओ के रूप मे बहती है। यह ठडी, अति आर्द्र तथा संवाहनिक रूप से अस्थायी वायु राशि है, जिसमे आकाश साधारणत स्तरी प्रकार के मेघों से आच्छन्न रहता है। मृदु उच्चतम तापमान, कम तापमान परिसर (5°C), निर्वात युक्त मृदु वायु तथा बार-बार वर्षा या फुहार इसकी मौसम सम्बन्धी विशेषताएँ है।

(ii) परिवर्तित mE—आसाम और बर्मा की पहाडियो से परावर्तित होकर मानसून उत्तरी भारत पर पूर्वी धाराओ के रूप म बहता है। यहाँ mE हवाएँ उष्ण धरातल पर चलने के कारण परिवर्तित हो जाती हैं। इनम उच्च तापमान और दैनिक तापमान परिसर अपेक्षाकृत बढ जाता है। यहा मेघ कुछ अधिक ऊँचाई पर बनते हैं तथा गर्जन क्रियाएँ भी mE की अपेक्षा अधिक उत्पन्न होती है।

मध्य भारत से होकर जब मानसून अवदाव बढ़ते हैं, तो mE और परिवर्तित mE, दोनो वायु राशियाँ अभिसरित होकर इन क्षेत्रो पर सम्मिलित रूप से छा जाती हैं। फलत गजन बौछार और भारी वर्षा प्राय प्राप्त होती है।

(iii) cT—पश्चिमी राजस्थान और उत्तरी पश्चिमी भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों पर पाकिस्तान पर स्थित मौसमी निम्नदाब के प्रवाह म, उष्ण महाद्वीपीय वायु राशि बहती रहती हैं। कभी-कभी मानसून अवदाब या बहुत सक्रिय मानसून धाराएँ, इस महाद्वीपीय वायुराशि को विक्षुब्ध कर देती हैं और परिवर्तित mE हवाएँ अस्थायी तौर पर यहाँ बहने लगती हैं।

cT हवाएँ गर्म और क्रमस भरी होती हैं। धरातलीय हवा तेज और निर्वात युक्त होती है तथा दोपहर को स्वच्छ मौसम कपासी और धूल भरी तेज हवाएँ हो जाया करती हैं।

कमजोर या रुद्ध मानसून की दशाओ मे, उष्ण और शुष्क cT वायु राशि और पूर्व की ओर अग्रसर होकर राजस्थान तथा उत्तर-पश्चिम भारत के अधिकतर भागो पर व्याप्त हो जाती है।

(iv) mE cT—(a) ग्रीष्म मानसून जब उत्तर भारत से हटने लगता है, तो उसके पीछे उत्तरी-पश्चिमी या उत्तरी पूर्वी महाद्वीपीय हवाएँ सेट होती जाती हैं। पूर्वी भारत मे मानसून हवाएँ इस समय भी विद्यमान रहती हैं। अत इन क्षेत्रो पर संक्रमण काल म ऊष्ण कटिब धी महाद्वीपीय तथा विषुवत् रेखीय महासागरीय (mE या मानसून) हवाओ का मिश्रण पाया जाता है। इन दिनो आसाम और बगाल म वर्षा तेजी से घटने लगती है। तापमान दिन मे सामान्य से अधिक तथा रात्रि म कम पाया जाता है। फलत दैनिक तापमान परिसर काफी हो जाता है।

(b) सामान्य मानसून दशाओ मे, दक्षिणी राजस्थान तथा सलग्न गुजरात के क्षेत्रो मे भी mE और cT वायु राशियाँ सयुक्त अवस्था म पाई जाती हैं। निम्न तहो म एक किमी से कम ऊचाई तक mE हवाएँ वतमान रहती हैं, जो वास्तव मे अरब सागर या बगाल की खाडी मे जनित मानसून धारा की शाखाएँ हैं। इन क्षेत्रो मे सामान्य रूप से स्थित निम्न क्षोभ मण्डलीय व्युत्क्रमण तह के कारण ये mE हवाएँ दब कर, 1 किमी से भी कम गहराई म सिमट जाती हैं जबकि पश्चिमी घाट के पास मानसून धाराओ की सामान्य गहराई 6 किमी के लगभग पाई जाती है।

इन mE हवाओ के ऊपर शुष्क cT हवाएँ विद्यमान रहती हैं। परिणामस्वरूप, स्तरी या स्तरी कपासी मेघ ही उत्पन्न हो पाते हैं, जो कभी कभी हल्की वर्षा उत्पन्न कर देते है। दोपहर के बाद बादल समाप्त होन लगते हैं, या स्वच्छ मौसम कपासी मे रूपान्तरित हो जाते है।

मानसून अवदाबो के द्वारा प्रभावित हो जाने पर व्युत्क्रमण तह टूट जाती है और पर्याप्त mE धाराएँ अभिवहित होने लगती हैं। फलत गजन बौछार और तड़ित झंझाएँ भारी वर्षा के साथ उत्पन्न हो जाती हैं।

उत्तर मानसून काल (अक्टूबर-नवम्बर)

(i) परिवर्तित cP—यदा कदा ये हवाएँ पश्चिम विक्षोभ के पीछे उत्तरी-पश्चिमी

भारत पर कुछ दिनो के लिए आ जाती हैं । तापमान मे एकाएक गिरावट, स्वच्छ आकाश तथा जलीय भागो के आस-पास कुहासा या कुहरा इन हवाओं की विशेषताए हैं ।

(ii) *cT*—यह उत्तरी-पश्चिमी भारत, उत्तर प्रदेश और मध्य भारत पर इस ऋतु की मुख्य वायु राशि है, जो नवम्बर तक उत्तरी-पूर्वी और दक्षिणी भारत म भी व्याप्त हो जाती है ।

उत्तरी-पश्चिमी भारत और पाकिस्तान पर स्थापित हुए क्षीण प्रतिचक्रवात से ये ऊष्ण कटिबन्धीय थलीय हवाएं उत्पन्न होती हैं । अभी तक यह प्रतिचक्रवात इतना तीव्र नही हो पाता कि उत्तरी अक्षाशों से ध्रुवीय हवाएं खींच सके ।

इस वायु-राशि के प्रभाव मे दिन ऊष्ण, रात ठण्डी तथा तापमान परिसर 14–18°C के बीच रहता है । धरातलीय हवा मृदु तथा आकाश मुख्यत स्वच्छ होता है ।

(iii) cT–mT—उत्तरी बगाल की खाडी और अरब सागर की महासागरीय वायु *mT* के ऊपर, प्रतिचक्रवाती प्रवाह द्वारा *cT* हवाएँ स्थापित होने लगती हैं । यह मिश्रित प्रकार की वायु राशि अस्थायी होती है, जिसमे स्थानीय रूप से स्तरी तथा स्तरी कपासी मेघ उत्पन्न हो जाते हैं । अधिक रात्रि तापमान तथा स्थायित्व इस वायु राशि की प्रमुख विशेषताएँ हैं ।

(iv) परिवर्तित mE तथा cT—अक्टूबर मे आसाम, बगाल, बर्मा तथा सलग्न सागरी क्षेत्रो से मानसून धाराएँ पूर्णत नही हट पाती । इन्हीं दिनों ऊपरी वायु मण्डल मे *cT* हवाएँ भरने लगती हैं । फलत इन क्षेत्रो पर कुछ दिनो के लिए निचली तहो मे परिवर्तित *mE* तथा उच्चतर तहो मे *cT* वायु राशि सयुक्त रूप से रहती हैं । मुख्यत स्वच्छ आकाश किन्तु दोपहर बाद कपासी मेघ, यदा-कदा गजन बौछार तथा मृदु वायुगति, इन वायु राशियों द्वारा उत्पन्न मौसम की मुख्य विशेषताएँ हैं ।

(v) mE—नीचे की ओर हटती *mE* या मानसून हवाएँ, इस ऋतु मे दक्षिणी बगाल की खाडी तथा दक्षिणी पूर्वी अरब सागर के नीचे ही सीमित रहती हैं । इन क्षेत्रों मे जब चक्रवाती तूफान उत्पन्न होते हैं तो ये *mE* हवाएँ बहुत सक्रिय हो उठती हैं और काफी उत्तरी अक्षाशो तक बढ कर, भारी वर्षा और तूफानी मौसम उत्पन्न करती हैं ।

8 50 वायु राशि का निर्धारण

वायु राशि के मौलिक गुण अपनी यात्रा के दौरान अनेक प्रभावो के अधीन परिवर्तित होते रहते हैं । अत किसी वायु राशि की निश्चित पहचान के लिए एसी विशेषताओं अथवा प्राचलो पर विचार करना चाहिए, जो वायु राशिया के परिवतन में भी अपना मान स्थिर रख सकें या बहुत-थोडी मात्रा मे ही परिवर्तित हो । ऐसी विशेषताएँ सरक्षी (conservative) विशेषताएँ कहलाती हैं, क्योंकि इनमे स्थिर रहने का प्रवृत्ति होती है । इस दृष्टिकोण से कुछ विशेषताओ अथवा प्राचलो पर विचार करें

(1) धरातलीय वायु तापमान

यह बहुत परिवतनशील प्राचल है और अनेक कारणों से प्रभावित होता है । रुद्धोष्म प्रक्रियाओ की अनुत्क्रमता के कारण, यह सरक्षी नही है । अत यह वायु राशि का निर्धारण करने के लिए सामान्यत उपयुक्त प्राचल नही है ।

मध्य भारत से होकर जब मानसून अवदाब बढ़ते हैं, तो दोनों वायु राशियाँ अभिसरित होकर इन क्षेत्रों पर सम्मिलित गर्जन बौछार और भारी वर्षा प्राय प्राप्त होती है।

(iii) cT—पश्चिमी राजस्थान और उत्तरी पश्चिमी पर पाकिस्तान पर स्थित मौसमी निम्नदाब के प्रवाह में, ऊष्ण महा रहती हैं। कभी-कभी मानसून अवदाब या बहुत सक्रिय मानसून वायुराशि को विक्षुब्ध कर देती हैं और परिवर्तित *mE* हवाएँ प्रभाव लगती हैं।

cT हवाएँ गम और क्रमम भरी होती हैं। धरातलीय हवा होती है तथा दोपहर को स्वच्छ मौसम कपासी और धूल भरी करती हैं।

कमजोर या रुद्ध मानसून की दशाओं में, उष्ण और शुष्क *c* की ओर अग्रसर होकर राजस्थान तथा उत्तर-पश्चिम भारत में प्र हो जाती है।

(iv) mE cT—(a) ग्रीष्म मानसून जब उत्तर भारत उसके पीछे उत्तरी-पश्चिमी या उत्तरी पूर्वी महाद्वीपीय हवाएँ सेट भारत में मानसून हवाएँ इस समय भी विद्यमान रहती हैं। अत काल में ऊष्ण कटिबन्धी महाद्वीपीय तथा विषुवत् रेखीय महासागरी हवाओं का मिश्रण पाया जाता है। इन दिनों आसाम और बगाल लगती है। तापमान दिन में सामान्य से अधिक तथा रात्रि में कम दैनिक तापमान परिसर काफी हो जाता है।

(b) सामान्य मानसून दशाओं में, दक्षिणी राजस्थान तथा में भी *mE* और *cT* वायु राशियाँ सयुक्त अवस्था में पाई जाती किमी से कम ऊँचाई तक *mE* हवाएँ वर्तमान रहती हैं, जो वास्तव की खाड़ी में जनित, मानसून धारा की शाखाएँ हैं। इन क्षेत्रों निम्न क्षोभ मण्डलीय व्युत्क्रमण तह के कारण ये *mE* हवाएँ दब गहराई में सिमट जाती हैं, जबकि पश्चिमी घाट के पास मानसून गहराई 6 किमी के लगभग पाई जाती है।

इन *mE* हवाओं के ऊपर शुष्क *cT* हवाएँ विद्यमान रहत स्तरी या स्तरी कपासी मेघ ही उत्पन्न हो पाते हैं, जो कभी कभा देते हैं। दोपहर के बाद बादल समाप्त होने लगते हैं, या रूपान्तरित हो जाते हैं।

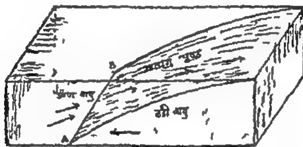
मानसून अवदाबों के द्वारा प्रभावित हो जाने पर व्युत्क्रमण पर्याप्त *mE* धाराएँ अभिवहित होने लगती हैं। फलत गर्जन बौछा भारी वर्षा के साथ उत्पन्न हो जाती हैं।

उत्तर मानसून काल (अक्टूबर-नवम्बर)

(i) परिवर्तित *cP*—यदा-कदा ये हवाएँ पश्चिम विक्षोभ

युक्त वायु-राशियाँ एक-दूसरे से मिलती हैं । यह सम्पर्क निम्नदाब क्षेत्रों में ही साधारणत सम्भव होता है, जहाँ अभिसरण प्रवाह प्रमुखत पाया जाता है ।

जब दो वायु राशिया सम्पर्क में आती हैं, तो वे स्वतन्त्रतापूर्वक एक-दूसरे से मिश्रित नहीं हो पाती, बल्कि एक दूसरे से अलग रहने की प्रवृत्ति रखती हैं । अत दोनो वायु-राशियो के बीच एक पार्थक्य या सीमा पृष्ठ दीवार की तरह बन जाता है । इस पृष्ठ को वाताग्र-पृष्ठ कहते हैं । वाताग्र पृष्ठ वास्तव मे तीक्ष्ण सक्रमण की एक सतह है जो दोनो तरफ की वायु-राशियो की घनत्व भिन्नता के कारण स्वत झुकती जाती है, क्योंकि गर्म हवा हल्की होने से पार्थक्य पृष्ठ पर ऊपर उठने का यत्न करेगी तथा ठंडी हवा पृष्ठ के नीचे से होकर गर्म हवा के नीचे आने की प्रवृत्ति रखती है चित्र (8 5)।



चित्र (8·5)

वाताग्र पृष्ठ और धरातल की प्रतिच्छेद रेखा (AB) वाताग्र कहलाती है । वाताग्रों पर ही मौसम का सहसा परिवर्तन पाया जाता है। एक वाताग्र निम्नांकित विशेषताओं से युक्त होता है ।

(1) तापमान, विभव तापमान या घनत्व की तीव्र क्षैतिज प्रवणता ।
(2) हवा की सङ्गमी (Confluent) गति अर्थात् अभिसरित होती हवाएँ ।
(3) दाब द्रोणिका वाताग्र पर समदाब रेखाओं में असातत्य के कारण चक्रवाती किंक (Kink) आ जाता है ।
(4) ओसाक या विभव आर्द्र बल्ब तापमान मे तीक्ष्ण असातत्य ।
(5) वायु दिशा मे असातत्य ।
(6) मेघाच्छन्नता मे सहसा परिवर्तन ।

8 61 अच्छी तरह विकसित वाताग्र तब बनते हैं, जब तापमान और आर्द्रता में अत्यधिक विभिन्न वायु राशिया एक दूसरे की ओर अभिसरित हो । जब तापमान भिन्नता कम होती है या वायु गति इस प्रकार की हो कि वायु राशियो का अभिसरण अच्छी तरह न हो सके, तो वाताग्र बहुत कमजोर प्रकृति के बन पाते हैं ।

वायुमण्डलीय प्रक्रम, जिसमे वाताग्र अथवा असातत्य पृष्ठ का निर्माण होता है वाताग्र उत्पत्ति (forntogenesis) कहलाता है । इसके लिए निम्नांकित दो परिबन्धो का होना अनिवार्य है —

जब वायुगति बहुत धीमी हो और विलोम मिश्रण अनुपस्थित हो, तो धरातलीय तापमान, विशेषकर तटीय क्षेत्रों में शाम के समय, किसी सीमा तक प्रतिनिधि प्राचल के रूप में लिया जा सकता है।

(2) क्षैतिज तापमान प्रवणता

अपने स्रोत क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि शीतल सतहों पर से गुजरते समय भी, वायु राशियों की यह विशेषता पाई जाती है कि उनमें क्षैतिज तापमान प्रवणता बहुत कम होती है। जब तापमान असातत्य (discontinuity) स्पष्ट न हो, तो क्षैतिज तापमान प्रवणता की असातत्य रेखा, सम और विषम वायु राशियों को अलग करने में सहायक हो सकती है।

(3) सापेक्ष आर्द्रता

यह तापमान, वाष्पीकरण तथा अवक्षेपण के अनुसार अत्यधिक परिवर्तनशील होती है, अतः वायु राशि निर्धारण के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है।

(4) विशिष्ट आर्द्रता और आर्द्रता मिश्रण अनुपात

ये अपेक्षाकृत अधिक स्थिर प्राचल हैं, और रुद्धोष्म या अरुद्धोष्म तापमान परिवर्तनों के प्रति सरक्षी हैं। ये वाष्पीकरण अथवा संघनन से परिवर्तित हो जाते हैं अतः इनमें प्रति सरक्षी नहीं हैं। किन्तु यह परिवर्तन सापेक्ष आर्द्रता की अपेक्षा बहुत धीमा होता है।

(5) ओसांक

जब तक वायुराशि से जलवाष्प की मात्रा में परिवर्तन न किया जाय, यह स्थिर दाब पर तापमान परिवर्तन के लिए सरक्षी रहता है। शुष्क रुद्धोष्म परिवर्तनों के लिए भी यह अर्द्ध सरक्षी है। तापमान की अपेक्षा इसका दैनिक चलन भी बहुत कम होता है। जब धरातलीय तापमान स्थानीय कारणों से अधिक प्रभावित होता है, तो वायुराशि निर्धारण के लिए ओसांक एक उपयुक्त प्राचल है।

(6) विभव तापमान (θ), विभव आर्द्र बल्ब तापमान ((θ_w) तथा तुल्यांक विभव तापमान (θ_e)

जब तक वायु असतृप्त है, θ ऊर्ध्व वायु गति के लिए स्थिर प्राचल है। लेकिन सतृप्त अवस्था के बाद θ का मान, ह्रास दर में परिवर्तन के कारण, बदलता रहता है। इस दशा में θ_w सरक्षी होता है। θ_w और θ_e गिरती बूंदों द्वारा वाष्पीकरण के लिए भी सरक्षी हैं। शुष्क तथा सतृप्त रुद्धोष्म प्रक्रियाओं के प्रति भी ये अर्द्ध सरक्षी प्राचल हैं।

(7) विभव ऊष्म तुल्यांक तापमान (θ_{se}) तथा विभव ऊष्म आर्द्र बल्ब तापमान (θ_{sw})

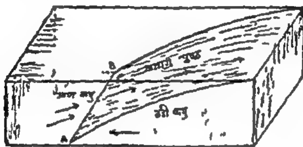
इन दोनों प्राचलों का मान टी फाई ग्राम द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। ये शुष्क और सतृप्त रुद्धोष्म परिवर्तनों के लिए दृढ़ता से सरक्षी विशेषता रखते हैं। गिरती वर्षा द्वारा होने वाले वाष्पीकरण के प्रति भी ये अर्द्ध सरक्षी हैं। अतः वायु राशियों के निर्धारण के लिए θ_{se} और θ_{sw} सर्वोत्तम प्राचल सिद्ध हुए हैं।

8.60 वाताग्र (Front)

वायु राशियों के स्थानान्तरण के परिणामस्वरूप अनेक स्थानों पर विभिन्न गुणों से

युक्त वायु राशियाँ एक-दूसरे से मिलती हैं। यह सम्पर्क निम्नदाब क्षेत्रो मे ही साधारणत सम्भव होता है, जहा अभिसरण प्रवाह प्रमुखत पाया जाता है।

जब दो वायु राशिया सम्पर्क म आती है, तो वे स्वतन्त्रतापूर्वक एक-दूसरे से मिश्रित नही हो पाती, बल्कि एक दूसरे से अलग रहने की प्रवृत्ति रखती हैं। अत दोनो वायु-राशियो के बीच एक पार्थक्य या सीमा पृष्ठ दीवार की तरह बन जाता है। इस पृष्ठ को वाताग्र-पृष्ठ कहते हैं। वाताग्र-पृष्ठ वास्तव मे तीक्ष्ण सक्रमण की एक सतह है जो दोनो तरफ की वायु-राशियो की घनत्व भिन्नता के कारण स्वत झुकती जाती है, क्योकि गर्म हवा हल्की होने से पार्थक्य पृष्ठ पर ऊपर चढने का यत्न करेगी तथा ठडी हवा पृष्ठ के नीचे से होकर गर्म हवा के नीचे आने की प्रवृत्ति रखती है चित्र (8 5)।



चित्र (8 5)

वाताग्र पृष्ठ और धरातल की प्रतिच्छेद रेखा (AB) वाताग्र कहलाती है। वाताग्रो पर ही मौसम का सहसा परिवर्तन पाया जाता है। एक वाताग्र निम्नाकित विशेषताओ स युक्त होता है।

(1) तापमान, विभव तापमान या घनत्व की तीव्र क्षैतिज प्रवणता।

(2) हवा की सङ्गमी (Confluent) गति अर्थात् अभिसरित होती हवाएँ।

(3) दाब द्रोणिका वाताग्र पर समदाब रेखाओ मे असातत्य के कारण चक्रवाती किंक (Kink) आ जाता है।

(4) ओसाक या विभव आर्द्र बल्ब तापमान मे तीक्ष्ण असातत्य।

(5) वायु दिशा म असातत्य।

(6) मेघाच्छन्नता मे सहसा परिवर्तन।

8 61 अच्छी तरह विकसित वाताग्र तब बनते हैं, जब तापमान और आर्द्रता म अत्यधिक विभिन्न वायु राशिया एक दूसरे की ओर अभिसरित हो। जब तापमान भिन्नता कम होती है या वायु गति इस प्रकार की हो कि वायु राशियो का अभिसरण अच्छी तरह न हो सके, तो वाताग्र बहुत कमजोर प्रकृति के बन पाते ह।

वायुमण्डलीय प्रक्रम, जिसम वाताग्र अथवा असातत्य पष्ठ का निर्माण होता है वाताग्र उत्पत्ति (forntogenesis) कहलाता है। इसके लिए निम्नाकित दो प्रतिबन्धो का होना अनिवार्य है —

(1) वाताग्र के दोनों तरफ की वायु राशियो मे तापमान का पर्याप्त विपर्यास। घनत्व मे असातत्य से विभव तापमान का असातत्य स्वत उत्पन्न हो जाएगा।

(2) अभिसरण-युक्त वायु प्रवाह, जो वायु राशियो को एक-दूसरे के सम्पर्क मे लाए।

वाताग्रो का ह्रास होने अथवा समाप्त हो जाने का प्रक्रम वाताग्र विनाश (fronto-lysis) कहलाता है। वाताग्र विनाश निम्नांकित दशाओं मे सामान्यत होता है —

(1) वायु राशियो का कमजोर तापमान विपर्यास।

(2) अभिसरण को उत्साहित न करने वाला वायु प्रवाह।

8 62 वाताग्र व्यावहारिक रूप से एक तीक्ष्ण रेखा न होकर, साधारणत 5 से 100 किमी चौडाई का एक तङ्ग क्षेत्र होता है। इस क्षेत्र मे मौसम तत्त्वो का परिवतन वायु राशियो की अपेक्षा अधिक तेजी से होता है। इस क्षेत्र के दोनो ओर विभिन्न तापमान और आर्द्रता की वायु राशियाँ पाई जाती हैं।



चित्र (8 6)

वाताग्र पृष्ठ पर ऊष्ण हवा ऊपर उठने की प्रवृत्ति रखती है तथा ठण्डी हवा म नीचे से पृष्ठ को उठाकर गम हवा के नीचे प्रवेश करने की प्रवृत्ति होती है। इस दिशा मे ऐसा सोचना स्वाभाविक है कि इन प्रवाहो के कारण वाताग्र पृष्ठ PQ सन्तुलित होने से पूव स्वतन्त्र वायुमण्डल मे क्षैतिज स्थिति P'Q ग्रहण कर लेगा, किन्तु ऐसा होता नही। मुख्यत कोरियालिस बल के कारण ढालवी अवस्था मे ही वाताग्र पृष्ठ सन्तुलित हो जाता है। यह पृष्ठ साधारणत 15–40 किमी /घण्टा की दर से आगे बढता रहता है। गति के दौरान पृष्ठ और अधिक भूमि की ओर झुकता जाता है।

8 63 वाताग्रो का भौगोलिक वटन

वायुराशियो के स्रोत क्षेत्र और गति पर ही वाताग्र क्षेत्रो का विकास निभर करता है। अनुकूल समकालीन परिस्थितियो मे आकस्मिक रूप से किसा क्षेत्र विशेष म वाताग्र विकसित होकर तूफानी मौसम उत्पन्न करते हुए, एक निश्चित दिशा मे बढते जात हैं और अपना कुछ दिनो का जीवन-चक्र पूरा कर स्वत समाप्त हो जाते हैं। इनका विवरण आगे दिया जाएगा। इनके अतिरिक्त धरातल पर कुछ स्थायिवत् वाताग्र क्षेत्र पाये जाने हैं। उत्तरी गोलाद्ध के स्थायिवत् वाताग्र निम्नांकित हैं —

(1) अटलांटिक-ध्रुवीय वाताग्र

सर्दियो मे यह उत्तरी अमेरिका की ठण्डी महाद्वीपीय वायुराशि *mP* तथा संलग्न अटलांटिक महासागर की ऊष्ण वायु राशि *mT* के सम्मिलन से उत्पन्न होता है। यह वाताग्र क्षेत्र साधारणत अटलांटिक तट के समीप ही पाया जाता है, जो उत्तर मे दक्षिणी-पूर्वी कनाडा तक फैला हो सकता है। फ्राटोजेनिसिस के फलस्वरूप न्यूफाउण्डलैण्ड के दक्षिण मे विक्षोभ उत्पन्न होते हैं, जो पश्चिमी प्रवाह के अधीन पूर्व की ओर चलते हुए यूरोप का प्रभावित करते है।

गर्मियो मे वाताग्र क्षेत्र उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर कनाडा की दक्षिणी सीमा के समानान्तर स्थापित हो जाता है और इसकी तीव्रता सर्दियों की अपेक्षा घट जाती है।

(2) अटलांटिक आर्कटिक वाताग्र

सर्दियों मे यह वाताग्र, हिमाच्छदित आर्कटिक सतहो की अतिशीतल वायु राशि तथा उन अपेक्षाकृत ऊष्ण हवाओं (*mP*) के सम्मिलन से बनता है, जो यूरोप के उत्तरी या उत्तरी-पश्चिमी तट के पास अटलांटिक महासागर पर पाई जाती हैं। गर्मियो में भी इसकी स्थिति लगभग यही रहती है, किन्तु तीव्रता काफी घट जाती है। प्राय आर्कटिक वाताग्र गर्मियो मे दक्षिणी अक्षांशों की ओर हट जाता है और साधारणत (62° उ०, 30° प० से 80° उ०, 19°पू०) तक ही फैला होता है।

(3) भूमध्य सागरीय वाताग्र

यह यूरोप की महाद्वीपीय शीतल वायु राशि तथा अफ्रीका भूल की भूमध्य सागर पर स्थित ऊष्ण वायु राशि की सीमा है। तापमान वटन की अनुकूल परिस्थितियो मे, यह वाताग्र अधिक तीव्र हो उठता है। इससे उत्पन्न विक्षोभ प्राय पूर्व की ओर अग्रसर होते हैं। कुछ विक्षोभ, जो थोडा दक्षिणी भाग अपनाते हैं, भारत मे भी पहुँचते हैं। उत्तरी भारत की सर्दियों की वर्षा मुख्यत इन्हीं विक्षोभों के कारण होती है। भारत मे इन्हे **पश्चिमी विक्षोभ** कहा जाता है।

भूमध्य सागरीय क्षेत्रो मे, सर्दियो की पर्याप्त वर्षा के लिए यही वाताग्र उत्तरदायी है। गर्मियो मे वाताग्र लगभग समाप्त हो जाता है, फलत यहाँ ग्रीष्म काल सूखा रह जाता है।

(4) प्रशांत ध्रुवीय वाताग्र

सर्दियो मे प्रशान्त महासागर के ऊपर, उप ऊष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवात प्राय दो कोशिकाओ मे टूट जाता है तथा उनके बीच कॉल (Col) क्षेत्र बन जाता है। इस क्षेत्र मे फ्राटोजेनिसिस के फलस्वरूप, एशियाई तट के पास वाताग्र विकसित होता है, जिसके एक ओर एशिया की शीतल महाद्वीपीय हवा तथा दूसरी ओर उत्तरी प्रशान्त की उप ऊष्ण कटिबन्धी वायु राशि *mT* पाई जाती है। यह वाताग्र दक्षिणी पूर्वी एशिया तट के पास बहुत कम पाया जाता है।

गर्मियो मे दक्षिणी-पूर्वी एशिया के मानसून प्रभाव के कारण प्रशान्त ध्रुवीय वाताग्र उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर साइबेरिया के पूर्वी तट पर स्थापित हो जाता है।

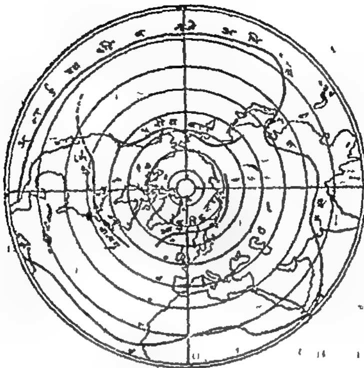
(5) अन्तउष्णकटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र

यह मुख्यत डोलड्रम पेटिका की मध्य स्थिति है, जो दोनो गोलार्द्धों की व्यापारी हवाओ की सीमा बनाती है । यह सीमा साधारणत विसरित (diffused) होती है और अभिसरण क्षेत्र सङ्कीर्ण बैंड मे केन्द्रित न होकर, पर्याप्त चौडाई मे फैल जाता है । यही कारण है कि यह वाताग्र क्षेत्र की परिभाषा को पूर्णत सार्थक नही करता । इसके अलावा दोनो व्यापारी हवाओ की ऊर्ध्व सरचना मे इतना अन्तर नही पाया जाता कि उन्हें वास्तविक रूप से विभिन्न वायु राशियो की सज्ञा दी जा सके । यही कारण है कि इस क्षेत्र को अन्तउष्ण कटिबन्धीय वाताग्र की अपेक्षा अन्तउष्णकटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र (Inter Tropical Convergence Zone या I T C Z) के नाम से जानना अधिक उपयुक्त है ।

सर्दियो मे यह क्षेत्र पूर्णत विषुवत् रेखा के दक्षिण मे सुमात्रा और कोरल सागर (उत्तरी आस्ट्रेलिया) को काटता हुआ स्थित रहता है । किन्तु गर्मियो मे अभिसरण क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध मे पर्याप्त दूरी तक स्थानान्तरित हो जाता है, जहाँ इसकी मध्य स्थिति उत्तरी भारत, दक्षिणी चीन तथा फिलीपाइन द्वीप समूहो से होकर गुजरती है ।



जनवरी
चित्र (8.7)
वाताग्रो का भौगोलिक आवटन



चित्र (8 8)

वाताग्रों का भौगोलिक आवंटन

8 64 वाताग्रों के गुण

(1) वाताग्र ठण्डी और गर्म वायु राशि के बीच तीक्ष्ण संक्रमण की एक पतली तह होती है, जो सामान्यतः दोनों हवाओं में मिश्रण से बनती है। एक विकसित वाताग्र पृष्ठ में तापमान की ऊर्ध्वाधर संरचना चित्र (8 9) की तरह होगी। कमजोर वाताग्रों में तापमान विपर्यास अपेक्षाकृत कम होता है।



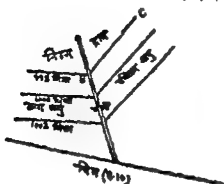
तीव्र तापमान विपर्यास



कमजोर तापमान विपर्यास

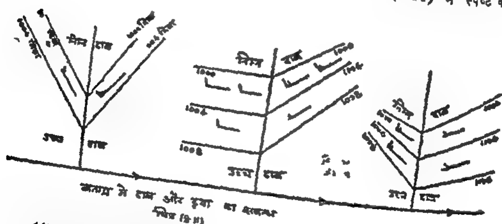
चित्र (8 9)

(2) चूँकि ठण्डी हवा, गर्म हवा से भारी होती है, अतः शीतल वायु राशि की तरफ धरातलीय वायुदाब अधिक होगा। मान लीजिए, कोई समदाब रेखा AB गर्म वायु-राशि से होकर वाताग्र को बिन्दु B पर काटती है। ठण्डी वायु-राशि के क्षेत्र में प्रवेश करते ही एकाएक अधिक दाब हो जाने के कारण, समदाब रेखा एक झिक के साथ BC की ओर आवर्तित हो जाएगी। धरातलीय वाताग्र पर समदाब रेखाओं का प्रतिरूप चित्र (8 10) में स्पष्ट किया गया है।



चित्र (8.10)

(3) धरातलीय हवा समदाब रेखाओं के लगभग समान्तर बहती है, जिसमें निम्न दाब की ओर थोड़ा झुकाव पाया जाता है। अतः स्पष्ट है कि वाताग्र पर हवा में तीक्ष्ण असातत्य स्वाभाविक है। हवा का मोड़ चक्रवाती प्रकृति होता है। हवा की गति में भी दाब प्रवणता के कारण, परिवर्तन आ सकता है। यदि ठण्डी वायु-राशि के क्षेत्र में, दाब प्रवणता अधिक होगी, तो वाताग्र पार करने के बाद वायु गति तीव्र हो जाएगी। विपरीत अवस्था में वायु-गति कम हो जाएगी। ये स्थितियाँ चित्र (8 11) में स्पष्ट की गई हैं।



वाताग्र में दाब और हवा का सम्बन्ध
चित्र (8.11)

(4) वाताग्र पृष्ठ में हवाएँ मूल्यावर्ती आवर्तन से बहुत भिन्न होती हैं। फलतः निम्नदाब की ओर अग्रसर होकर अभिसरण उत्पन्न करती हैं। यही अभिसरण आरोही वायु धाराओं तथा मौसम उत्पन्न करने का कारण बनता है।

8 70 वाताग्रों के प्रकार

मौसम उत्पन्न करने में वाताग्रों की सक्रियता, वायु-राशियों के उर्ध्व प्रवाह पर निर्भर करती है। यदि ऊष्ण भाग की हवा वाताग्र क्षेत्र की अपेक्षा अधिक आरोही गति रखती है, तो वाताग्र सामान्यतः अधिक सक्रिय होते हैं। ऐसे वाताग्र एना-वाताग्र कहलाते

है। जब उष्ण हवा, ठण्डी वायु-राशि की अपेक्षा अवरोह करती पाई जाती है, तो बहुत कमजोर वाताग्र बन पाते हैं। इन्हे केटा वाताग्र कहते हैं।

8 71 विभिन्न गुणो के अनुसार, वाताग्र निम्नांकित प्रकारो मे बाँटे जा सकते हैं

(1) **उष्ण वाताग्र (Warm front)** - यह वह वाताग्र है, जिसमे उष्ण वायु, शीतल वायु को विस्थापित करती है। फलस्वरूप उष्ण वायु ऊपर उठती है, जो मेघ और वर्षा उत्पन्न कर सकती है। उष्ण वायु के वाताग्र पृष्ठ पर चढने के कारण, स्तरी प्रकार के मेघ ही सामान्यत बनते है, जो कई तहो मे स्थित होते हैं। उष्ण वाताग्र स सम्बन्धित मेघो मे पक्षाभ, स्तरी पक्षाभ, मध्य स्तरी तथा कपासी बहुत सामान्य हैं। जब उष्ण वायु अस्थाई होती है तो कपासी और यदा कदा कपासी वर्षी भी उत्पन्न हो सकते है।

उष्ण वाताग्र का झुकाव सामान्यत 1 100 मे 1 400 के बीच पाया जाता है। वाताग्र विक्षोभो की पश्चिम से पूर्व की ओर गति और वाताग्रो के समायोजन के कारणो से, किसी स्थान पर उष्ण वाताग्र पहले पहुँचता है। अत इससे सम्बन्धित मौसम, जैसे हल्की वर्षा या फुहार तथा कुहरे की घटनाएँ किसी स्थान को पहले प्रभावित करती हैं। उष्ण वाताग्र की वर्षा के कारण उत्पन्न नमी, वाताग्र पृष्ठ के नीचे शीतल वायु राशि मे सघनित होकर कुहरा बन जाती है।

उष्ण वाताग्र मे उत्पन्न मौसम की घटनाएँ उष्ण वायु राशि की प्रकृति पर विशेष निर्भर करती हैं। यदि वह वायु-राशि शुष्क और स्थायी है तो कम मेघ बन पाएँगे और वर्षा की सम्भावना बहुत क्षीण रहेगी। किन्तु वायु-राशि यदि आर्द्र तथा प्रतिबन्धी या सवहनिक रूप से अस्थाई है तो तडित झंझा और बौछार की घटनाएँ भी सम्भव हैं।

उष्ण वाताग्र जब किसी स्थान से गुजरता है, तो वहाँ निम्नांकित प्रेक्षण स्पष्ट रूप से पाए जाते हैं (1) हवा का लगभग 45° तक दक्षिणावर्तन (Veering), (2) तापमान और ओसांक की वृद्धि, (3) वाताग्र से पहले दाब का घटना तथा वाताग्र के गुजरने के बाद दाब की धीमी वृद्धि, (4) मौसम का साफ होना।

(2) **शीतल वाताग्र (Cold front)**

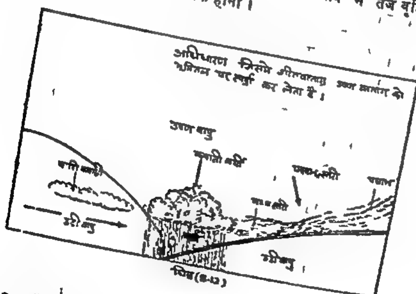
इसमे ठण्डी वायु राशि, उष्ण वायु को विस्थापित करती जाती है, जिससे उष्ण वायु, नीचे से ठण्डी हवा के ड्रिगर द्वारा ऊपर उठने को बाध्य होती है। सामान्यत शीतल-वाताग्र पृष्ठो का झुकाव 1 40 से 1 100 तक पाया जाता है, जो उष्ण वाताग्र के झुकाव-कोण की अपेक्षा बहुत अधिक होता है। इसका कारण यह है कि धरातलीय घर्षण भूमि पर चलती हुई शीतल वायु राशि को पीछे की तरफ खींचता है। अत वाताग्र पृष्ठ पर नीचे से एक खिंचाव बल F पीछे की ओर लगता है, जिससे पृष्ठ का झुकाव-कोण अधिक पाया जाता है।

यदि उष्ण वायु, प्रतिबन्धी या सवहनिक रूप से अस्थायी हो तो वह तीव्रता से ऊपर की ओर अग्रसर होती है और बहुधा कपासी- या मध्य मेघ जनित करती है। फलत शीत वाताग्र से सम्बन्धित मौसम घटनाएँ साधारणत अधिक प्रचण्ड होती हैं— जैसे भारी वर्षा स्वाल ओले तथा भारी हिमपात। वर्षा का प्रभाव क्षेत्र लगभग 100 कि मी धाग तक फैला होता है।

शीत वाताग्र का ऊर्ध्व झुकाव गति की दिशा से विपरीत होता है। अत इसके पहुँचने पर ही मौसम और मेघो का जनन एकाएक हो पाता है। शीत वाताग्र पहुँचने से पूर्व किसी मेघ विशेष का चिन्ह साधारणत नही मिलता। इस वाताग्र की गति, ऊष्ण वाताग्र की अपेक्षा अधिक पायी जाती है। यही कारण है कि शीत वाताग्र गुजरने के बाद प्राय मौसम शीघ्र साफ हो जाता है जबकि वाताग्र किसी कारण विशेष से मंदित न हो जाय। इसका एक कारण यह भी है कि शीत वाताग्र के पीछे अवतलन प्रवाह मुख्य होता है, जो आकाश स्वच्छ करने मे सहायता देता है।

कपासी और कपासी वर्षी शीत वाताग्र से सम्बन्धित मुख्य मेघ हैं, किन्तु स्तरी तथा मध्य स्तरी मेघ भी प्रचुर मात्रा मे बनते हैं। शीत वाताग्र के गुजरते समय किसी स्थान पर निम्नांकित प्रभाव स्पष्ट प्रेक्षित किया जा सकता है

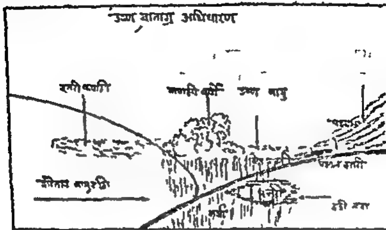
(1) 45 से 180° तक धरातलीय हवा का दक्षिणावर्तन, (2) वाताग्र पहुँचने से पहले हवा का वामावर्तन (Backing), (3) तापमान और ओसांक का अचानक ह्रास, (4) वाताग्र के आगे दाब ह्रास, किन्तु वाताग्र गुजरने के बाद दाब मे तेज वृद्धि, (5) वाताग्र गुजरने के बाद मौसम का तेजी से साफ होना।


चित्र (8-12)

(3) अधिविष्ट वाताग्र (Occluded front)

सामान्यत किसी विक्षोभ मे शीत वाताग्र ऊष्ण वाताग्र की अपेक्षा तेजी से गति करता है। अब यह मान लें आगे बढ़कर ऊष्ण वाताग्र को पकड़ लेता है। इस स्थिति मे शीत और ऊष्ण वाताग्र के बीच की ऊष्ण वायु-राशि ऊपर की ओर विस्थापित हो जायेगी। इस प्रकार ऊष्ण वायु पूरी तरह ऊपर उठ जायगी और धरातल पर शीत और ऊष्ण वाताग्रों के नीचे की ठण्डी हवाएँ एक दूसरे के सम्पर्क मे आ जायेंगी। यह स्थिति अधिग्रहण कहलाती है चित्र (8 12)।

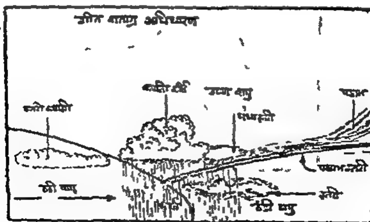
जब आगे बढ़ती हुई ठण्डी हवा, ऊष्ण वाताग्र, पृष्ठ के नीचे की ठण्डी हवा की अपेक्षा गर्म होती है, तो ऊष्ण वाताग्र के उठ जाने के बाद, ऊष्ण वाताग्र प्रकार का अधिधारण बनता है, चित्र (8 13)।



चित्र (8 13)

इस स्थिति मे ऊष्ण वाताग्र पृष्ठ के नीचे की अधिक ठण्डी हवा, ऊष्ण वायु को ऊपर उठा देती है और यह ऊष्ण वायु, उष्ण वाताग्र पृष्ठ पर ऊपर की ओर,-शनै शनै बहने लगती है। इस अधिधारण मे ऊष्ण वाताग्र के प्रकार का ही मौसम उत्पन्न होता है। किन्तु ऊपर शीत वाताग्र से बौछार और गर्जन मेघ की घटनाएँ सम्बन्धित होती हैं।

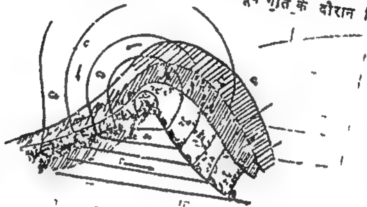
जब शीत वाताग्र पृष्ठ के नीचे की ठण्डी हवा, ऊष्ण वाताग्र पृष्ठ के नीचे की हवा से अधिक शीतल होती है, तो ऊष्ण वाताग्र के उठ जाने के बाद, शीत वाताग्र प्रकार का अधिविष्ट वाताग्र बनता है, जिसकी मुख्य रूप से मौसम सम्बन्धी वही विशेषताएँ हैं, जा एक ऊष्ण वाताग्र मे पाई जाती हैं चित्र (8 14)।



चित्र (8 14)

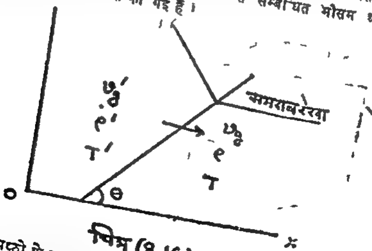
8 72 एक वाताग्र विक्षोभ मे, जिसे इतर ऊष्ण कटिबन्धी (extratropical) साइक्लोन भी कहते है, ऊष्ण और शीत वाताग्र आवश्यक रूप से पाये जाते हैं। ये साइक्लोन मध्य और उच्च अक्षाशो मे वाताग्र सक्रियता के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। साइक्लोन की अधिक विकसित अवस्था मे अधिधारण उत्पन्न हो जाता है।

धरातलीय मौसम चार्ट पर एक पूर्ण विकसित वाताग्र विक्षोभ की सरचना चित्र (8 15) की भाति प्रदर्शित होता है। ऊष्ण और शीत वाताग्र के बीच, ऊष्ण वायु का त्रिभुजाकार भाग ऊष्ण सेक्टर कहलाता है। पश्चिम से पूर्व गति के दौरान किसी स्टेशन



चित्र (8-15)

पर पहले ऊष्ण वाताग्र प्रभावित करता है। फिर ऊष्ण सेक्टर आता है जो तापमान एका एक अधिक कर देता है। अन्त मे शीत वाताग्र स्टेशन पर पहुँचता है, जिसके गुजरने के बाद मौसम प्राय शीघ्र साफ हो जाता है। वाताग्रो से सम्बन्धित मौसम और मेघ की घटनाएँ चित्र (8 16) मे अकित की गई हैं।



चित्र (8 16)

8 73 वाताग्र पृष्ठो के झुकाव कोण मारगुली सूत्र

वाताग्र पृष्ठ दो विभिन्न घनत्व वाली हवाओं का पृथक-कारक पृष्ठ है जिस

सामान्यत धरातल से उठकर क्षैतिज अवस्था में सन्तुलित हो जाना चाहिए। किन्तु पृथ्वी के घूर्णन के कारण, वाताग्र क्षैतिज से कोण Θ बनाते हुए ही सन्तुलन की स्थिति प्राप्त कर लेती है। कोण Θ वाताग्र पृष्ठ का झुकाव कोण कहलाता है। यह झुकाव घनत्व के असमानता और हवा के वेग पर निर्भर करता है।

Θ के मान की गणितीय गणना के लिए मारगुली का निम्नांकित सूत्र प्रयुक्त किया जा सकता है। यह सूत्र चित्र (8 16) द्वारा व्युत्पन्न (derive) किया जा सकता है, जिसमें Y-अक्ष वाताग्र के समान्तर और Z-अक्ष तल वाताग्र पृष्ठ के लम्बवत् लिया गया है।

$$\tan\Theta = \frac{f(\rho vg - \rho' v'g)}{g\,(\rho - \rho')}$$

जहां ρ और ρ' तथा vg और v'g वाताग्र A के दोनों ओर, किनारों के बहुत पास धरातलीय घनत्व और भूध्यावर्ती हवाओं के मान हैं। g गुरुत्व जनित त्वरण तथा f कोरियालिस प्राचल है।

—तापमान के पदों में,

$$\tan\Theta = \frac{f(vgT' - v'gT)}{T' - T}$$

8 80 वाताग्र विक्षोभ–इतर ऊष्ण कटिबन्धी साइक्लोन (Extra tropic cyclone)

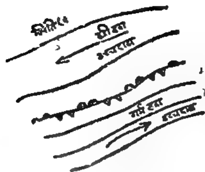
वाताग्र विक्षोभ द्रोणिका, निम्नदाब तथा अवदाब (depression) के रूप में पश्चिम से पूर्व की ओर गति करते हुए मध्य अक्षांशों की जलवायु पर प्रमुख रूप से प्रभावकारी रहते हैं, जहां इन्हें इतर ऊष्ण कटिबन्धी साइक्लोन या साइक्लोन के नाम से जाना जाता है। साइक्लोन अच्छी तरह विकसित वाताग्रों के क्षेत्र में जन्म लेते हैं। मध्य अक्षांशों में ध्रुवीय तथा ऊष्ण कटिबन्धीय वायु राशियों के सम्मिलन से यहां वाताग्रों के बनने की सुविधा अधिक पाई जाती है।

यह विकसित साइक्लोन ऊष्ण वाताग्र, शीत वाताग्र तथा उष्ण सेक्टर से सुसज्जित होता है, जिसकी संरचना धरातलीय मौसम मानचित्र पर चित्र (8 15) द्वारा स्पष्ट की गई है। अधिक विकास की अवस्था में अधिधारण पाया जाता है। अधिधारण की अवस्था में ऊष्ण वाताग्र का चिन्ह धरातलीय मानचित्र पर नहीं मिलता।

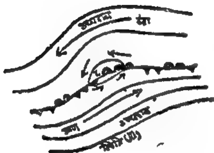
सामान्य दशा में गम्भीर निम्न दाब अथवा अवदाब के रूप में विकसित साइक्लोन में 9–10 किमी ऊँचाई तक, उच्चतर वायु में चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका पाई जाती है। ऐसे साइक्लोन लगभग 1000 किमी व्यास के क्षेत्र पर अपना प्रभाव रखते हैं। उच्च क्षोभ मण्डल में जेट धाराओं के प्रभाव में, सभी साइक्लोन पूर्व की ओर गति करते हैं। गति की दर 20 से 40 किमी प्रति घण्टा तक पाई जाती है, जो सर्दियों में गर्मियों से साधारणत अधिक होती है।

8 81 साइक्लोन के विकास की अवस्थाएं

साइक्लोन का जीवन चक्र एक स्थिर वाताग्र से आरम्भ होता है, जिसके दोनों ओर क्रमश गर्म और ठण्डी हवाएं विद्यमान हों। यह दशा चित्र (8 17) स्थिति (1) में

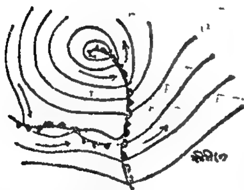


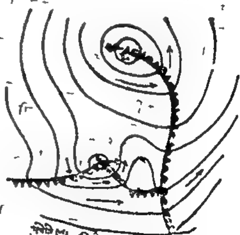






चित्र [illegible]





चित्र [illegible]

दिखाई गई है जिसमें ऊष्ण हवा का प्रवाह पश्चिमी तथा शीतल हवा का प्रवाह पूर्वी है। वायु प्रवाह के समानान्तर होने के कारण वाताग्र AB स्थिर है। इस वाताग्र में आरोही धाराएँ अनुपस्थित होती हैं अतः इनमें मेघ जनन की सम्भावनाएँ बहुत क्षीण हो जाती हैं। चूँकि ठण्डी हवा नीचे आने की प्रवृत्ति रखती है अतः वाताग्र पृष्ठ में एक झुकाव

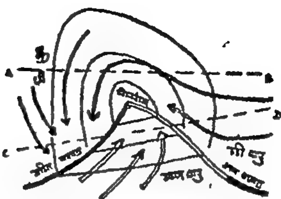
उत्पन्न हो जाएगा। इस पृष्ठ के दोनों ओर धरातलीय हवाएं, एक दूसरे की विपरीत दिशा में प्रवाहित होती हैं, जिससे तीव्र वायु अपरूपण विकसित हो जाता है। पर्याप्त वायु अपरूपण के कारण जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो वाताग्र पृष्ठ में 1 तरंग उत्पन्न हो जाती है और पृथ्वी तल की ऊष्ण हवा, शीतल हवा में एक उभार बना देती है। इस दशा में वाताग्र AB चित्र की स्थिति (ii) का आकार ग्रहण कर लेता है, जिसमें धरातलीय वाताग्र में एक उभार स्पष्ट हो जाता है।

यदि तरंग स्थायी है, तो यह और विकसित नहीं हो सकेगी और इसी अवस्था में गतिमान रहेगी। किन्तु यदि तरंग अस्थायी है तो इसका आयाम और बढ़ेगा। स्थिति (iii) की अवस्था आते आते साइक्लोन का मॉडल स्पष्ट होने लगता है, जिसमें ऊष्ण हवा शीतल वायु के ऊपर चढ़ने तथा शीतल वायु ऊष्ण हवा के नीचे प्रविष्ट होने की चेष्टा करने लगती है। इसके फलस्वरूप, ऊष्ण और शीतल वाताग्र अलग अलग रूप धारण कर लेते हैं। शीर्ष पर निम्नदाब भी उत्पन्न हो जाता है। 600 किमी से छोटी तथा 3000 किमी से बड़ी तरंग दैर्घ्य की तरंगें सामान्यतः स्थाई और साइक्लोन में विकसित नहीं होती। इन सीमाओं के बीच की तरंगें, पर्याप्त वायु अपरूपण अथवा अन्य विक्षोभों या पर्वतीय शृंखलाओं की उपस्थिति में अस्थायी होती हैं तथा साइक्लोन में विकसित होने की क्षमता रखती हैं। इन्हें साइक्लोन तरंगें कहते हैं।

साइक्लोन तरंगों का आयाम जब स्थिति (iii) में और अधिक विकसित होता है है तो शीत वाताग्र को नीचे से उठाकर अधिविष्ट वाताग्र पैदा कर देता है, स्थिति (iv)। इस स्थिति में ऊष्ण सेक्टर के शीर्ष पर समदाब रेखाएँ सिमटती जाती हैं और निम्नदाब गम्भीर होने लगता है और धीरे धीरे अवदाब का रूप ले लेता है।

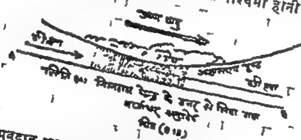
अधिधारित अवदाब में ऊष्ण हवा पूर्णतः ऊपर उठा ली जाती है। अधिधारण बढ़ते रहने से भूमितल की वाताग्र-संरचना विलीन हो जाती है और साइक्लोन उच्चतर वायुमण्डल में चक्रवाती प्रवाह का रूप धारण कर लेते हैं। स्थिति (v) और (vi)।

8.82 एक अधिधारित इतर ऊष्ण कटिबन्धी अवदाब की संरचना तथा सम्बन्धित मौसम शृंखलाएँ चित्र (8.18) में प्रदर्शित की गई हैं। स्थिति (i) धरातलीय मौसम चार्ट पर अवदाब का प्रदर्शन है। अपने पश्चिम से पूर्व की यात्रा के दौरान, इस प्रारूप का ऊष्ण वाताग्र सबसे पहले किसी स्टेशन पर पहुँचता है। स्टेशन पर पहुँचने के एक-दो दिन पहले से ही, पक्षाभ मेघ दिखाई देने लगते हैं। फिर Cs As तथा Sc मेघ शृंखलाबद्ध रूप में स्टेशन को प्रभावित करते हैं। फुहार और हल्की वर्षा की घटनाएँ तथा कुहरे उत्पन्न होने लगते हैं। यदा कदा नमी और अस्थायित्व की अनुकूल परिस्थितियों में यह वाताग्र, कपासी और कपासी वर्षी मेघ भी उत्पन्न कर सकता है। ऊष्ण वाताग्र गुजर जाने के बाद ऊष्ण सेक्टर आता है, जो तापमान बढ़ा देता है तथा मौसम कुछ समय के लिए साफ हो जाता है। फिर शीत वाताग्र का आगमन स्टेशन पर अचानक सा प्रतीत होता है, क्योंकि गति से विपरीत दिशा में झुकाव के कारण, शीत वाताग्र पर जनित मेघ नहीं पहुँच पाते। शीत वाताग्र सामान्य रूप से कपासी तडित मेघ बनाता है, जिससे सम्बन्धित भारी वर्षा, स्क्वाल, ओले, हिमपात आदि घटनाएँ उत्पन्न होती हैं। शीत वाताग्र के गुजरने के बाद उसके पीछे की शीतल हवा शीत तरंगों के रूप में स्टेशन पर से गुजरती है। तापमान गिरने से कुहरे की घटना भी बहुत सामान्य है।



स्थिति (i) अवदाब धरातलीय मानचित्र पर
चित्र (8.18)

स्थिति (ii) अवदाब का वह ऊर्ध्व अनुच्छेद (Vertical cross section), प्रदर्शित करता है, जो निम्न दाब केन्द्र के उत्तर से लिया गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि अधिधारण की स्थिति में ऊष्ण हवा धरातल पर नहीं आती, किन्तु उच्चतर वायुमण्डल में उठी होती है। चूँकि निम्नदाब केन्द्र के उत्तर से ऊष्ण हवा उठाई गई है, अतः धरातलीय ठण्डी हवा की गति पूर्वी तथा ऊपरी ऊष्ण हवा की गति पश्चिमी होनी चाहिए।



स्थिति (ii) निम्नदाब केन्द्र के उत्तर से लिया गया ऊर्ध्वाधर अनुच्छेद
चित्र (8.19)

स्थिति (iii) अवदाब का वह ऊर्ध्व अनुच्छेद है जो निम्नदाब केन्द्र के दक्षिण से लिया गया है। शीतल वायु, किस प्रकार ऊपर उठती है और ऊष्ण वायु में किस प्रकार वेज (wedge) बनाती है, यह इस चित्र से स्पष्ट है।



स्थिति (iii) निम्नदाब के दक्षिण से लिया ऊर्ध्वाधर अनुच्छेद
चित्र (8.20)

8.83 इतर ऊष्ण कटिबंधी साइक्लोनों में ऊर्जा का मुख्य स्रोत दोनों वायु-राशियों में तापमान का विपर्यास ही है। ऊपर उठती हवा द्वारा संघनित जल से निकली गुप्त ऊष्मा भी, विशेषकर जब अपनी यात्रा के दौरान ऊष्ण और आर्द्र महासागरीय हवाओं का आगमन होता हो, पर्याप्त ऊर्जा देती है।

8.84 अधिधारण प्रक्रम के अंत में जब प्रारम्भिक अवदाब लगभग विलीन होने लगता है, तो शीत वाताग्र का कुछ भाग पीछे छूट जाता है, जो पुनः विक्षोभ उत्पन्न करने का आधार बन सकता है। तब प्रारम्भिक अवदाब के दक्षिण-पश्चिम में कभी कभी अनुकूल परिस्थितियों में द्वितीयक अवदाब बन जाते हैं, जो संरचना और प्रकृति में प्रारम्भिक अवदाब के ही समान होते हैं, उसी दिशा में अग्रसर होते हैं और वही जीवन चक्र अपनाते हैं। द्वितीयक अवदाब भी अनुकूल परिस्थितियों में, दूसरे साइक्लोन को प्रेरित कर सकते हैं। इस प्रकार, एक विकसित अवदाब से एक पूरा साइक्लोन परिवार सम्बन्धित होता है, जिसमें प्रत्येक सदस्य अपने जनक से साधारणतः क्षीणतर होता है।

भूमध्य सागर में जनित प्रारम्भिक वाताग्र अवदाबों या निम्न दाबों द्वारा जनित किए गए साइक्लोन परिवार के ही कुछ सदस्य, जो अपेक्षाकृत दक्षिणी भाग पर अग्रसर होते हैं, नवम्बर से मई तक उत्तरी भारत तक पहुँचते हैं और सर्दियों की वर्षा उत्पन्न करते हैं। भारत में इन्हें पश्चिमी विक्षोभ (Western disturbance) कहा जाता है। जो विक्षोभ, प्रारम्भिक साइक्लोन के किन्हीं सदस्यों द्वारा प्रेरित किए गए धरातलीय निम्नदाब के रूप में पहुँचते हैं, उन्हें प्रेरित निम्नदाब (induced low) कहते हैं।

9

उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ, चक्रवाती तूफान और प्रतिचक्रवात

(Tropical Disturbances, Revolving Storms and Anticyclones)

9 10 उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ

सम्पूर्ण पृथ्वी की लगभग आधी सतह उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों से घिरी है, जिसका अधिकांश भाग महासागरीय है। यहां धरातलीय वायु प्रवाह बहुत धीमा होता है। अतः उष्ण कटिबन्धों का बहुत बड़ा भाग विषुवत् रेखीय वायु राशि का विशाल स्रोत क्षेत्र बन जाता है। किसी अन्य वायु राशि की अनुपस्थिति में वाताग्र विक्षोभों की उत्पत्ति इन क्षेत्रों में नहीं हो पाती है।

किन्तु व्यापारी अथवा विषुवत् रेखीय पूर्वी हवाओं के अभिसरण से आरोही धाराएँ उत्पन्न होती है जो इन क्षेत्रों में अत्यधिक मेघ तथा वर्षा उत्पन्न किया करती है। समान गुणों वाली हवाओं का अभिसरण वाताग्र नहीं कहलाता। यही कारण है कि दोनों उष्ण कटिबन्धों की व्यापारी हवाओं का सम्मिलित क्षेत्र 'अन्तरउष्ण कटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र' कहलाता है, न कि अन्तरउष्ण कटिबन्धी वाताग्र।

विषुवत रेखीय अभिसरण क्षेत्र की स्थिति और समय में नियमितता नहीं पाई जाती। अतः इसके द्वारा उत्पन्न विक्षोभों का समकालीन अध्ययन एवं सह-सम्बन्ध ज्ञात करना एक दुरूह समस्या है।

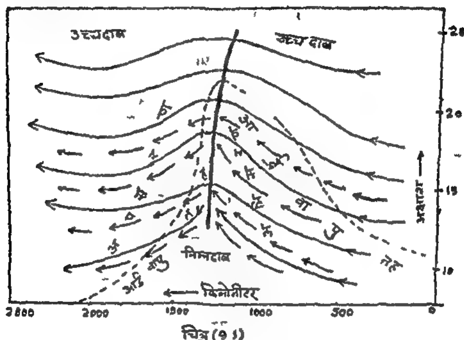
9 11 अधिकांश विषुवत् रेखीय वर्षा कपासी तथा कपासी वर्षी मेघों द्वारा प्राप्त होती है, जिसके लिये नमी के अतिरिक्त ऊर्ध्व धाराओं का उपस्थित होना भी अनिवार्य है। ये ऊर्ध्व धाराएं निम्नांकित कारणों से उत्पन्न हो सकती है —

(1) हवाओं का अभिसरण।
(2) हवाओं का पवनीय उत्थापन।
(3) धरातलीय उष्मन से उत्पन्न अस्थायित्व।

9 12 पूर्वी तरंगे (Easterly Waves)

मध्य प्रशान्त महासागर की व्यापारी हवाओं और विषुवत् रेखीय पूर्वी वायु प्रवाह में एक और प्रकार का विक्षोभ प्रायः गर्मियों में तरंग द्रोणिका के आकार में जनित होता है। द्रोणिका AB धरातलीय मौसम मानचित्र पर पूर्व की ओर झुकी होती है। यह तरंग पूर्वी वायु प्रवाह में पश्चिम की ओर, लगभग 600 किमी प्रतिदिन के वेग से चलती है।

अभिसरण तथा आगे अपसरण प्रमुख होता है। फलत: द्रोणिका रेखा AB के ठीक पीछे गर्जन मेघ और बौछार की घटनाएँ पाई जाती हैं और तापमान एकाएक घट जाता है। रेखा के आगे अपसरण के कारण अवतलन प्रवाह उपस्थित आर्द्रता को ऊपर उठने से रोक देता है। अत: द्रोणिका के आगे साधारणत: स्वच्छ मौसम या प्रकीर्ण कपासी मेघ तथा धरातल पर धुंध उत्पन्न हो सकते हैं।



चित्र (9.1)

व्यापारी हवाओं में इस प्रकार की अनुप्रस्थ विक्षोभ तरंगें, पूर्वी तरंगें कहलाती हैं। तरंग द्रोणिका के विषुवत् रेखीय सिरे के पास प्राय: एक कमजोर निम्नदाब क्षेत्र उपस्थित रहता है जो अनुकूल परिस्थितियों में अवदाब या चक्रवाती तूफान में विकसित हो सकता है।

विशेषकर सर्दियों में जब विषुवत् रेखीय भागों में व्यापारी हवाओं के क्षेत्र में व्युत्क्रमण-तह अनेक स्थानों पर बहुत तीव्र होती है, पूर्वी तरंगें उत्पन्न नहीं हो पाती। गर्मियों में व्युत्क्रमण जिन क्षेत्रों में कमजोर हो जाते हैं, वही तरंगों की उत्पत्ति के लिए सर्वाधिक सुविधा प्राप्त रहती है।

9.13 उष्ण कटिबन्धी विक्षोभ, जो प्राय: विषुवत् रेखीय सागरों के अभिसरण क्षेत्रों में जनित होते हैं तथा अपनी यात्रा के दौरान प्रभावित क्षेत्रों में वर्षा उत्पन्न करते हैं, अनेक दाब प्रणालियों के रूप में पाए जाते हैं। समकालीन मौसम मानचित्रों पर इन प्रणालियों का प्रारूप बढ़ती हुई तीव्रता के क्रम में निम्नांकित है —

(1) द्रोणिका (Trough)

(2) निम्नदाब क्षेत्र—यह बन्द समदाब रेखा से घिरा निम्नदाब क्षेत्र है, जिसमें चक्रवाती वायु प्रवाह प्राय: हल्का (17 नाट) से कम पाया जाता है।

(3) अवदाब (Depression)—केंद्र पर वायुदाब अधिक कम हो जाने से निम्नदाब अवदाब मे सवधित हो जाता है । इस अवस्था म निम्नदाब क्षेत्र दो बन्द समदाब रेखाओ स घिरा होता है । ये समदाब रेखाएँ प्राय दो मिलीवार दाबान्तर पर खींची जाती हैं । दाब प्रवणता बढ जाने से चक्रवाती प्रवाह तीव्र हो जाता है जिसकी सीमा 17 से 27 नाट तक निर्धारित की गई है ।

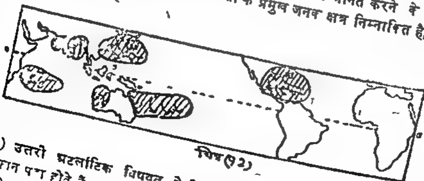
(4) गभीर अवदाब (Deep Depression)—दो या तीन समदाब रेखाओ से घिरा वह निम्नदाब क्षेत्र, जिसम दाब प्रवणता और बढ जाती है, गभीर अवदाब कहलाता है । इसमे वायु प्रवाह की सीमा 28 से 37 नाट निर्धारित की गई है ।

(5) चक्रवाती तूफान (Cyclonic Storm)—गभीर अवदाब और तीव्र होने पर चक्रवाती तूफान बन जाता है । इस अवस्था म अत्यधिक दाब प्रवणता इगित करते हुए मानचित्र पर चार या पाच बद समदाब रेखाएँ पाई जाती हैं तथा चक्रवाती प्रवाह 38–47 'नाट' के बीच रहता है ।

(6) भीषण चक्रवाती तूफान या हरीकेन (Hurricane)—जब चक्रवाती तूफान और अधिक प्रचण्ड रूप धारण कर लेता है, तो भीषण चक्रवाती तूफान कहलाता है । इस दशा मे मौसम मानचित्र, अत्यधिक प्रवणता-युक्त 6 या 6 से अधिक बद समदाब रेखाए प्रदर्शित करता है तथा प्रवाह तीव्रता 48 नाट या अधिक पाई जाती है ।

9 14 उत्पत्ति के क्षेत्र

अधिकतम उष्ण कटिबंधी विक्षोभ, पूर्वी तरगो मे उष्ण महासागरो के उन भागो मे उत्पन्न होते हैं जो अन्तरउष्ण कटिबंधी अभिसरण क्षेत्र के प्रभाव क्षेत्र म पडते है । अभिसरण क्षेत्र के ऋतुनिष्ठ स्थानान्तरण के साथ अवदाबो के जनक क्षेत्र भी स्थानान्तरित होते रहते है दोनो गोलार्द्धों म उष्ण कटिबंधो का सम्पूर्ण महासागरीय भाग, जहाँ तापमान 25°C से अधिक पाया जाता है अवदाब और चक्रवात जनित करने के उपयुक्त है, किन्तु प्रचण्ड रूप के उष्ण कटिब धी चक्रवातो के प्रमुख जनक क्षेत्र निम्नाकित है, जिन्ह चित्र (9 2) म दिया गया है



चित्र (9 2)

(1) उत्तरी अटलांटिक विषुवत रेखीय भाग—यहाँ अगस्त और सितम्बर म चक्रवाती तूफान उत्पन्न होते हैं । पश्चिम या पश्चिम उत्तर पश्चिम की ओर बढते हुए, ये तूफान उत्तरी अमरिका के दक्षिणी पूर्वी तट को प्रभावित करते हैं ।

(2) उत्तरी कैरिबियन सागर—इसमे जून से नवम्बर तक तूफान उत्पन्न होते हैं। मेक्सिको की खाडी मे भी इन्ही दिनो चक्रवात जनित होते हैं। ये सभी सामान्यत उत्तर-पश्चिम की ओर अग्रसर होते हैं।

(3) निम्न अक्षांशीय प्रशान्त महासागर मे, चक्रवातों की उत्पत्ति के कई क्षेत्र हैं। मेक्सिको तट के पास उत्तरी प्रशान्त महासागर मे, जून स नवम्बर तक चक्रवात बनते हैं। फिलीप्पाइन्स और चीन सागर तथा सलग्न प्रशान्त महासागर (170 पूर्वी देशान्तर के पास) मे मई से दिसम्बर तक पर्याप्त सख्या मे चक्रवात उत्पन्न होते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध के चक्रवात प्राय पश्चिम से उत्तर पश्चिम की ओर का मार्ग अपनाते हैं जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध के चक्रवात पश्चिम या दक्षिण की ओर बढते हैं।

(4) बगाल की खाडी मे मई से दिसम्बर तथा अरब सागर मे मई, जून तथा, अक्टूबर से दिसम्बर तक चक्रवात बनते हैं। दक्षिणी हिन्द महासागर मे मेडागास्कर से 90 अश पूर्वी देशान्तर तक का क्षेत्र नवम्बर से मई तक चक्रवातों का प्रजनन करता है।

भारतीय सागर मे अवदाब उन क्षेत्रो मे जनित होते हैं, जहाँ उत्तर-पूर्व या उत्तर-पश्चिम से आती शुष्क थलीय हवाएँ दक्षिण से आती आर्द्र महासागरीय हवाओ से अभिसरित होती हैं। यह क्षेत्र जनवरी तथा फरवरी म विषुवत् रेखा के दक्षिण म स्थित होता है, जो सूर्य के साथ धीरे धीरे उत्तर की ओर स्थानान्तरित होता जाता है, तथा मई के दूसरे या तीसरे सप्ताह तक मध्य बगाल की खाडी तक आ जाता है। अवदाबो का जनन क्षेत्र उत्तर की ओर तब तक बढता रहता है, जब तक कि उत्तर भारत पर मानसून द्रोणिका पूर्णत स्थापित नही हो जाती। यह जून के अन्त या जुलाई के प्रारम्भ तक हो पाता है। इस स्थिति मे अवदाब बगाल की खाडी के शीर्ष स्थल पर उत्पन्न होने लगते हैं। ये मानसून अवदाब कहलाते हैं, जो प्रभावित क्षेत्रो मे मानसून की सक्रियता बहुत बढा देते हैं।

सूर्य के दक्षिण की ओर स्थानान्तरण के साथ, उत्पत्ति क्षेत्र अथवा अभिसरण क्षेत्र पीछे हटने लगते हैं साधारणत दक्षिण पूर्व की ओर। अक्टूबर तक ये क्षेत्र पुन मध्य खाडी तथा दिसम्बर मे विषुवत् रेखा तक पहुच जाते हैं।

अरब सागर मे थलीय और सागरीय हवाओ के विभाजन क्षेत्र स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर नही हो पाते हैं। ग्रीष्म मानसून काल (जून सितम्बर) मे अरब सागर मे साधारणत कोई अवदाब उत्पन्न नही होते। बगाल की खाडी म उत्पन्न हुए अवदाब कदा कदा भारतीय प्रायद्वीप से गुजर कर उत्तरी अरब सागर मे प्रवेश कर जाते हैं। अरब सागर मे अवदाब तथा चक्रवातो की उत्पत्ति मई तथा प्रारम्भिक जून या फिर अक्टूबर नवम्बर मे पाई जाती है। अक्टूबर-नवम्बर के चक्रवात दोनो ही सागरो मे अत्यधिक प्रचण्ड होते ह।

9 15 ऊर्जा स्रोत

उष्ण सागर तलो पर व्यापारी या विषुवत् रेखीय अभिसरण तथा सौर उष्मन के कारण आर्द्र हवाओ म उर्ध्व धाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं। ये हवाएँ कुछ ऊँचाई पर रुद्धोष्म शीतलन के कारण सघनित होती जाती हैं। सघनन द्वारा छोडी गई गुप्त उष्मा ही,

(3) अवदाब (Depression)—केंद्र पर वायुदाब अधिक कम हो जाने से निम्नदाब अवदाब में सर्वधित हो जाता है। इस अवस्था में निम्नदाब क्षेत्र दो बन्द समदाब रेखाओं से घिरा होता है। ये समदाब रेखाएँ प्राय दो मिलीबार दाबान्तर पर खींची जाती हैं। दाब प्रवणता बढ़ जाने से चक्रवाती प्रवाह तीव्र हो जाता है जिसकी सीमा 17 से 27 नाट तक निर्धारित की गई है।

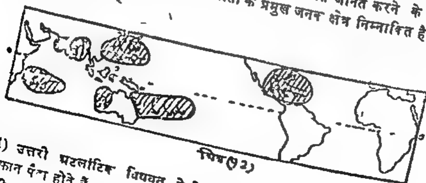
(4) गंभीर अवदाब (Deep Depression)—दो या तीन समदाब रेखाओं से घिरा वह निम्नदाब क्षेत्र, जिसमें दाब प्रवणता और बढ़ जाती है, गंभीर अवदाब कहलाता है। इसमें वायु प्रवाह की सीमा 28 से 37 नाट निर्धारित की गई है।

(5) चक्रवाती तूफान (Cyclonic Storm)—गंभीर अवदाब और तीव्र होने पर चक्रवाती तूफान बन जाता है। इस अवस्था में अत्यधिक दाब प्रवणता इंगित करते हुए मानचित्र पर चार या पांच बंद समदाब रेखाएँ पाई जाती हैं तथा चक्रवाती प्रवाह 38–47 'नाट' के बीच रहता है।

(6) भीषण चक्रवाती तूफान या हरीकेन (Hurricane)—जब चक्रवाती तूफान और अधिक प्रचण्ड रूप धारण कर लेता है, तो भीषण चक्रवाती तूफान कहलाता है। इस दशा में मौसम मानचित्र, अत्यधिक प्रवणता-युक्त 6 या 6 से अधिक बंद समदाब रेखाएँ प्रदर्शित करता है तथा प्रवाह तीव्रता 48 नाट या अधिक पाई जाती है।

9.14 उत्पत्ति के क्षेत्र

अधिकतम उष्ण कटिबंधी विक्षोभ पूर्वी तरंगों में उष्ण महासागरों के उन भागों में उत्पन्न होते हैं, जो अन्तउष्ण कटिबंधी अभिसरण क्षेत्र के प्रभाव क्षेत्र में पड़ते हैं। अभिसरण क्षेत्र के ऋतुनिष्ठ स्थानान्तरण के साथ अवदाबों के जनक क्षेत्र भी स्थानान्तरित होते रहते हैं दोनों गोलार्द्धों में उष्ण कटिबंधों का संपूर्ण महासागरीय भाग, जहाँ तापमान 25°C से अधिक पाया जाता है अवदाब और चक्रवात जनित करने के उपयुक्त है किन्तु प्रचण्ड रूप के उष्ण कटिबंधी चक्रवातों के प्रमुख जनक क्षेत्र निम्नांकित है जिन्हें चित्र (9.2) में दिया गया है



चित्र (9.2)

(1) उत्तरी अटलांटिक विषुवत रेखीय भाग—यहाँ अगस्त और सितम्बर में चक्रवाती तूफान पैदा होते हैं। पश्चिम या पश्चिम उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ते हुए, ये तूफान उत्तरी अमरिका के दक्षिणी पूर्वी तट को प्रभावित करते हैं।

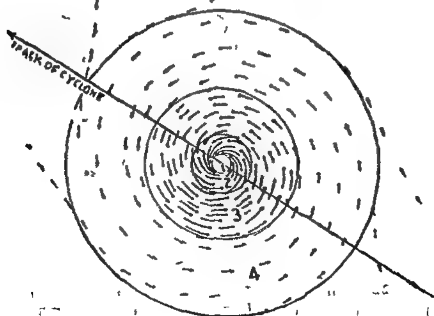
(1) 15 से 30 किमी व्यास का निम्नदाब केन्द्र, जहाँ वायु शान्त या बहुत धीमी बहती है और आसमान मुख्यत साफ रहता है। इसका कारण यही है कि तीव्रता से गति करती अन्तर्मुखी चक्रवाती हवाएँ केन्द्र के चारो ओर तो घूमती हैं परन्तु केन्द्र पर अभिसरित नही हो पाती, ठीक ऐसे, जैसे कोई उपग्रह केन्द्र के प्रति आकर्षित होते हुए भी, वृत्ताकार पथ पर घूमने को बाध्य होता है। इस प्रकार सर्पिलाकार मे घूमती हुई बेलनाकार वायु-राशि का केन्द्र, एक खोखले पाइप की भाँति होता है, जिसमे चक्रवाती हवाएँ प्रवेश नही कर पाती। यह भाग साइक्लोन की आँख (Eye) कहलाता है।

(2) उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन का दूसरा भाग 'आँख' और 50 से 150 किमी व्यास की परिधि के बीच सीमित होता है, जिसमे केन्द्र की ओर दबाव बहुत तेजी से घटता जाता है तथा 100 किमी प्रति घण्टा या अधिक गति की तूफानी हवाएँ बहती हैं। इस भाग मे मूसलाधार वर्षा तथा स्याल की घटनाएँ बहुत अधिकता से होती रहती हैं।

(3) यह साइक्लोन का बाहरी भाग है, जिसमे वायुगति केन्द्र की ओर बढती जाती है, जब तक कि वह भाग (2) की परिधि पर अधिकतम नही हो जाती। इस भाग मे वायु प्रवाह सामान्यत केन्द्र के सममित नही पाया जाता।

(4) यह साइक्लोन के बाहरी भाग से आगे, लगभग 1000 किमी व्यास की परिधि तक बहुत धीमी किन्तु चक्रवाती हवाओ का क्षेत्र है, जहाँ से ये चक्रवाती हवाएँ केन्द्र की ओर अभिसरित होती प्रतीत होती हैं।

एक प्रौढ चक्रवात का धरातलीय व्यवस्थित रेखाचित्र



चित्र (93)

अवदाबों या चक्रवातों के विकसित होने के लिए ऊर्जा प्रदान करती है। इस ऊष्मा के कारण निम्न तहों की हवाएँ और गर्म होने लगती है, जिससे वाष्प भारी हवाओं की आरोही धाराएँ और तीव्र हो जाती हैं। फलतः सागर सतह पर तीव्र अपसरण तथा निम्नदाब पैदा होने लगता है, जिसे भरने के लिए चारों ओर की हवाएँ तेजी से दौड़ने लगती हैं। पृथ्वी के घूर्णन के कारण ये हवाएँ सर्पिल प्रवाह के रूप में निम्नदाब केन्द्र तक पहुंचने का प्रयास करती हैं। चक्रवाती सर्पिल प्रवाह के कारण हवाएँ, केन्द्र तक नहीं पहुंच पाती, क्योंकि वे केन्द्रापसारी बल द्वारा केन्द्र तक पहुंचने के पूर्व ही विक्षेपित कर दी जाती हैं, इस प्रकार —

(1) अभिसरण लगातार बढ़ते रहने से, आरोही प्रवाह तथा संघनन द्वारा उत्पन्न गुप्त ऊष्मा लगातार एवं बढ़ती हुई मात्रा में मिलती रहती है, जिससे सर्पिल प्रवाह और अधिक प्रचण्ड होता जाता है।

(2) केन्द्र बिन्दु तक हवाओं के न पहुंच पाने से वहां निम्नदाब, गंभीरतर होता जाता है। इसके फलस्वरूप निम्नदाब का क्षेत्र, अवदाब और फिर चक्रवाती तूफानों में संवर्धित हो जाता है।

9.20 उष्ण कटिबन्धी चक्रवाती तूफान (*Tropical Revolving strom*) या उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन

उष्ण कटिबन्धी सागरों में उत्पन्न होने वाले चक्रवाती तूफानों के लिए "साइक्लोन" शब्द का प्रयोग सबसे पहले कैप्टन हैनरी पिडिंग्टन ने कलकत्ता में सन् 1848 में किया। यह शब्द लेटिन भाषा के "काइक्लोस" शब्द से बनाया गया है, जिसका अर्थ होता है "सर्प की कुण्डली" कुछ स्थानों पर इन्हीं तूफानों को दूसरे नामों से भी जाना जाता है, अटलांटिक और पूर्वी प्रशान्त में "हरीकेन", पश्चिमी प्रशान्त और चीन सागर में "टाईफून" तथा आस्ट्रेलिया के निकटवर्ती सागरों में "विल्ली विल्ली" (*willy willy*) शब्द उष्ण कटिबन्धी चक्रवाती तूफानों को ही सम्बोधित करते हैं।

एक अच्छी तरह विकसित उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन, सागर तल पर 200 से 800 किमी व्यास तथा 10 से 15 किमी ऊँचाई का प्रचण्ड वायु वातावर्त (*whirlwind*) है, जिसमें निम्नदाब केन्द्र पर खड़ी ऊर्ध्व अक्ष के चारों ओर बेलनाकार त्रिविम (Three dimensional) वायु राशि, तीव्रता से सर्पिल गति करती है। यह गति साधारणतः केन्द्र से 50 से 100 किमी की दूरी पर अधिकतम पाई जाती है, जो 150 किमी/घण्टा तक हो सकती है। निम्न तलों पर वायु सर्पिल गति करती हुई, ऊपर को उठती जाती है। फलस्वरूप आरोही धाराओं के कारण निम्नदाब केन्द्र पर पर्याप्त जलराशि पर्वता की भाँति ऊपर उठ जाती है। यह त्रिविम प्रणाली 300 से 500 किमी प्रतिदिन के वेग से सागर तल पर सन्तुलन की अवस्था में गति करती रहती है।

9.21 प्रौढ़ अवस्था में जब साइक्लोन प्रचण्ड कहलाता है इसकी संरचना निम्नांकित चार भागों से मिलकर बनी होती है। ये चारों भाग सागर तल तथा संलग्न निम्न वायुमण्डलीय तहों से स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं।

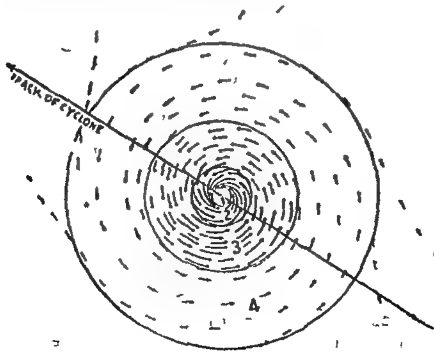
(1) 15 से 30 किमी व्यास का निम्नदाब केन्द्र, जहाँ वायु शान्त या बहुत धीमी बहती है और आसमान मुख्यतः साफ रहता है। इसका कारण यही है कि तीव्रता से गति करती अन्दर की चक्रवाती हवाएँ केन्द्र के चारों ओर तो घूमती हैं परन्तु केन्द्र पर अभिसरित नहीं हो पाती, ठीक ऐसे, जैसे कोई उपग्रह केन्द्र के प्रति आकर्षित होते हुए भी, वृत्ताकार पथ पर घूमने को बाध्य होता है। इस प्रकार सर्पिलाकार में घूमती हुई बेलनाकार वायु-राशि का केन्द्र, एक खोखले पाइप की भाँति होता है, जिसमें चक्रवाती हवाएँ प्रवेश नहीं कर पाती। यह भाग साइक्लोन की आँख (Eye) कहलाता है।

(2) उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन का दूसरा भाग 'आँख' और 50 से 150 किमी व्यास की परिधि के बीच सीमित होता है, जिसमें केन्द्र की ओर दबाव बहुत तेजी से घटता जाता है तथा 100 किमी प्रति घण्टा या अधिक गति की तूफानी हवाएँ बहती हैं। इस भाग में मूसलाधार वर्षा तथा स्याल की घटनाएँ बहुत अधिकता से होती रहती हैं।

(3) यह साइक्लोन का बाहरी भाग है, जिसमें वायुगति केन्द्र की ओर बढ़ती जाती है, जब तक कि वह भाग (2) की परिधि पर अधिकतम नहीं हो जाती। इस भाग में वायु प्रवाह सामान्यतः केन्द्र के सममित नहीं पाया जाता।

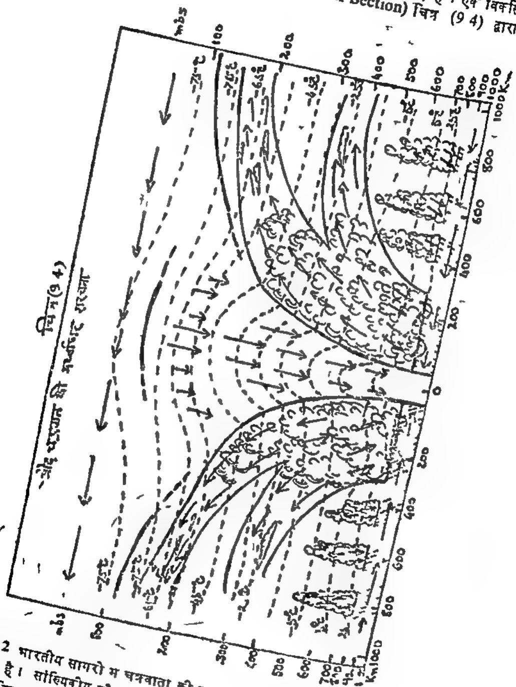
(4) यह साइक्लोन के बाहरी भाग से आगे, लगभग 1000 किमी व्यास की परिधि तक बहुत धीमी किन्तु चक्रवाती हवाओं का क्षेत्र है, जहाँ से ये चक्रवाती हवाएँ केन्द्र की ओर अभिसरित होती प्रतीत होती हैं।

एक प्रौढ़ चक्रवात का धरातलीय व्यवस्थित रेखाचित्र



चित्र (93)

ये चारो भाग व्यवस्थित रूप से चित्र (9 3) मे दिएगए हैं । एक विकसित उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन का ऊर्ध्व काट (Vertical Section) चित्र (9 4) द्वारा प्रदर्शित किया गया है ।


चित्र (9 4) प्रौढ़ चक्रवात की मध्यवर्ती संरचना

9 22 भारतीय सागरो म चक्रवाता की आयु कुछ घण्टो से लेकर दो सप्ताह तक पायी जाती है। सांख्यिकीय औसतीकरण के आधार पर, औसत आयु 6 दिन क लगभग निर्धारित की जा सकती है। इस अवधि म चक्रवात निम्नांकित अवस्थाओ से गुजरता हुआ, अपना जीवन-चक्र पूरा करता है।

निर्माण अवस्था (Formative stage)—इस अवस्था में सागर तल के हजारों वर्ग किमी का क्षेत्र चंचल हो उठता है। स्क्वाल, वर्षा तथा गर्जन की घटनाएँ आरम्भ हो जाती हैं, और दाब शनै शनै घटने लगता है। निम्नदाब बन जाने पर चक्रवाती प्रवाह आरम्भ हो जाता है, जिसमें ताजी हवाएँ केन्द्र की ओर अभिसरित होती जाती हैं। निर्माण-अवस्था में मौसम मानचित्र पर 1000 से 2000 वर्ग किमी का क्षेत्र घेरते हुए बन्द समदाब रेखा से निम्नदाब बन जाता है।

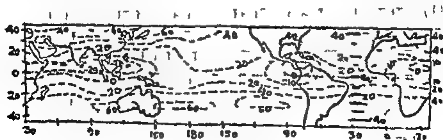
चक्रवातों के निर्माण के लिए अनुकूल परिस्थितियों का उपस्थित होना आवश्यक है। तीन आधारभूत आवश्यकताएँ निम्नांकित हैं —

(1) पर्याप्त सागरीय क्षेत्र, जिसका सतही तापमान अपेक्षाकृत अधिक हो। तापमान इतना अधिक होना चाहिए कि निम्न तहों की वायु ऊर्ध्व धाराओं द्वारा ऊपर उठनी आरम्भ हो जाए। पामेन (1956) के अनुसार, आरोही आर्द्र वायु राशि, 10–12 किमी ऊँचाई तक आस पास के वायुमण्डल की अपेक्षा अधिक उष्ण होनी चाहिए। प्रेक्षणों के आधार पर सागर सतह का तापमान 26–27°C से अधिक होना अनुकूल परिस्थिति है।

(2) पृथ्वी का घूर्णन प्रभाव, अर्थात् कोरियालिस प्राचल (*f*) एक निर्धारित निम्नतम से अधिक होना चाहिए। यही कारण है कि चक्रवात, दोनों उष्ण कटिबन्धों में विषुवत् रेखा से 5–7 अंश अक्षांश से परे ही जनित होते हैं। जो चक्रवात 5° उ० और 5° द० अक्षांश वृत्तों के बीच बनते हैं, वे प्राय प्रौढ़ अवस्था तक विकसित नहीं हो पाते।

(3) मूल धाराओं में कमजोर ऊर्ध्व वायु अपरूपण

विक्षोभ द्वारा जनित कपासी वर्षी मेघ गुप्त ऊष्मा छोड़कर, वायुमण्डल को कुछ गर्म कर देते हैं, जिससे सागर तल पर दाब घट कर निम्नदाब बन जाता है। निम्नदाब क्षेत्र में अभिसरण होने लगता है, जो पुन आरोही वायुगति, तथा कपासी वर्षी उत्पन्न करने का कारण बनता है। फलस्वरूप और अधिक गुप्त ऊष्मा छूटती है और निम्नदाब तीव्रतर होता जाता है। किन्तु इस शृंखला क्रम के लिए यह आवश्यक है कि क्षोभ-मण्डली में ऊर्ध्व वायु बहुत कम हो, ताकि मेघकणों से निकली गुप्त ऊष्मा बहुत छोटे क्षेत्र में सीमित रहकर यथेष्ट प्रभाव पैदा कर सके। उत्तरी हिन्द महासागर तथा दक्षिणी चीन सागर में अप्रैल मई तथा अक्टूबर नवम्बर के संक्रमण काल में चक्रवातों की उत्पत्ति के लिए ऊर्ध्व वायु अपरूपण की भूमिका महत्वपूर्ण है। 85° तथा 200 मिलीबार के बीच, औसत ऊर्ध्व वायु का उष्ण कटिबन्धी बटन अक्टूबर के लिए चित्र (9 5) में दिया गया है।



मंडलीय (ZONAL) ऊर्ध्वायु अपरूपण (850 और 200 मिलीबार)
अक्टूबर (ग्रे, इल्यू एम 1968)
चित्र (9 5)

इस काल में दक्षिणी पूर्वी प्रशान्त तथा दक्षिणी अटलांटिक मे चक्रवात प्राय नहीं पैदा होते, क्योंकि इन क्षेत्रों मे ऊर्ध्व वायु अपरूपण अधिक होता है तथा सागर तल का तापमान भी अपेक्षाकृत कम पाया जाता है।

रहील (1948) के अनुसार, उपयुक्त तीन आवश्यकताओं के अतिरिक्त दो और दशाओं का लागू होना अनिवार्य है —

(1) सागर तल पर पहले से ही निम्न वायुमण्डल मे किसी विक्षोभ की उपस्थिति।

(2) उच्चतर वायुमण्डल मे चक्रवाती प्रवाह से ऊपर अपसरण का होना।

मौसम उपग्रह के प्रेक्षणों से साइक्लोन बनने से कई दिन पहले ही विक्षोभो की उपस्थिति का प्रमाण अब मिलने लगा है। उष्ण कटिबन्ध के उष्ण सागरतलो पर प्रतिवर्ष सैकडो विक्षोभ उत्पन्न होते है किन्तु उनमे से केवल कुछ ही साइक्लोन की अवस्था तक विकसित हो पाते है।

(2) विकासशील अवस्था

इस अवस्था मे दाब निरन्तर घटता है तथा केन्द्र के चारो ओर चक्रवाती प्रवाह तीव्रतर होता जाता है। केन्द्र की ओर अभिसरित होती हुई सर्पिलाकार वायुगति, 25 से 40 किमी प्रति घण्टा के बीच पाई जाती है। मेघाच्छादन और सघन तथा विस्तृत होता जाता है तथा वर्षा और स्क्वाल की तीव्रता मे उत्तरोत्तर वृद्धि होती रहती है। मौसम मानचित्र पर 2 या 3 बन्द समदाब रेखाएँ बन जाती हैं। यह स्थिति साधारणत अवदाब या डिप्रेशन कहलाती है।

डिप्रेशन तथा सम्बन्धित मौसम शृखलाएँ सुसगठित रूप से निश्चित दिशा मे 300 से 500 किमी प्रतिदिन के वेग से सागर तल पर अग्रसर होते रहते हैं। अनेक डिप्रेशन और अधिक वृद्धि नही करते तथा क्षीण होते होते अपना जीवन चक्र समाप्त कर लेते हैं। किन्तु कुछ डिप्रेशन आगे वृद्धि करते जाते हैं और जब सर्पिलाकार वायुगति 60 किमी प्रतिघटा से बढ जाती है तो वे उष्ण कटिबन्धी चक्रवात कहलाने लगते हैं। वायु गति 85 किमी प्रतिघटा से अधिक होने पर, इन्हे प्रचण्ड चक्रवात कहा जाता है।

(3) प्रौढ़ अवस्था

चक्रवात पूर्णत प्रौढ होता है और इस दशा मे चक्रवात के चारो भाग (आँख आन्तरिक और बाह्य वायु घेरा तथा बाहरी मन्द हवाओं का क्षेत्र) स्पष्ट हो जाते हैं।

इस स्थिति का व्यवस्थित रेखाचित्र चित्र (9 4) मे दिया गया है। सम्बन्धित वायु गति तीन भागो मे बँट जाती है

(1) लगभग 80 किमी प्रति घण्टा की क्षैतिज वामावर्त वायुगति, (2) केन्द्र की ओर अन्तमुखी प्रवाह— जिसकी तीव्रता अधिकतम चक्रवाती गति की लगभग आधी होती है तथा (3) लगभग 1 मीटर प्रति सैकण्ड के क्रम की आरोही वायुगति।

सब मिलकर धीरे धीरे ऊपर को उठते हुए सर्पिल प्रवाह होता रहता है जो कुछ ऊँचाई तक सकुचित होता है, किन्तु बाद मे क्षैतिज रूप से फैलने लगता है। चक्रवात की आँख पर अवरोही धाराएँ पाई जाती हैं।

(4) क्षयकारी अवस्था

जब हरीकेन वायुगति का घेरा भूमितल पर आ जाता है, तो चक्रवात प्राय क्षीण होने लगता है। थलीय घर्षण तथा आर्द्रता-पूर्ति के अभाव मे शक्ति का तेजी से ह्रास होता

है, जिससे वायु गति घट जाती है तथा केन्द्र का दाब तेजी से बढना आरम्भ होने लगता है। लेकिन चक्रवात के क्षीण होने पर भी वर्षा एक दो दिन तक जारी रहती है।

9.30 सामान्य विशेषताएँ

(1) वायुगति

एक विकसित चक्रवात मे क्षैतिज वायु गति का क्षेत्र तीव्रता के आधार पर तीन भागो मे बाँटा जा सकता है—पहला क्षेत्र बाहरी परिधि से लेकर हरीकेन वायु की सीमा तक विस्तृत होता है, जिसमे अन्तर्मुखी चक्रवाती हवाएँ अपेक्षाकृत कम वेग से बहती हैं। बाहरी परिधि से केन्द्र की ओर वायु गति निरन्तर बढती जाती है।

दूसरा क्षेत्र अधिकतम वायुगति का क्षेत्र है, जो 'आँख'के चारो ओर 8 से 16 किमी की चौडाई मे स्थित होता है। इस क्षेत्र की सीमा 'आँख' से बादलो की दीवार द्वारा अलग होती है। इस सीमा पर प्रचण्ड संवाहनिक धाराएँ, भारी वर्षा या तूफान सतत उत्पन्न होते रहते हैं। हरीकेन वायुगति के इस क्षेत्र मे 100 150 किमी/घण्टे की तीव्र तूफानी हवाएँ चलती रहती हैं। यदा कदा स्क्वाल भी आते रहते हैं, जिसमे वायुगति सहसा कम से कम 25% बढ जाती है। जब तट पार कर भूमि तल पर चक्रवात का यह भाग पहुँचता है तो जर्जर मकान, पुराने वृक्ष, टेलीफोन और बिजली के खम्भे, आदि टूटने और गिरने लगते हैं तथा छतें उखडने लगती हैं।

तीसरा क्षेत्र चक्रवात का केन्द्रीय भाग 'आँख' है, जिसमें वायु गति तेजी से केन्द्र की ओर घटती जाती है। आँख का व्यास छोटे तूफानो मे 20 किमी से भी कम पाया जाता है, किन्तु बहुत बडे तूफानो मे यह व्यास 50–60 किमी तक भी देखा गया है।

(2) उच्चतम वायुगति

विकसित चक्रवात का उर्ध्व विकास, चक्रवाती प्रवाह के रूप मे प्राय क्षोभ सीमा तक पाया जाता है। उच्चतर वायुमण्डल मे चक्रवाती प्रवाह तीन भागो मे बाटा जा सकता है

पहला, तल मे लगभग तीन किमी की ऊँचाई तक, जिसे अन्तर्वाह (inflow) तह कहते हैं, क्योकि इस तह मे क्षैतिज चक्रवाती प्रवाह–केन्द्र की ओर अभिसरण करता हुआ होता है। कुल अभिसरण का अधिकांश एक किमी की निचली तहो मे ही पाया जाता है।

दूसरी तह जो मध्य तह कहलाती है, लगभग 7 6 किमी ऊँचाई तक विस्तृत होती है।

इस तह मे चक्रवाती प्रवाह लगभग स्पर्श रेखीय (Tangential) होता है। अन्तर्मुखी या बहिर्मुखी त्रिज्य (radial) प्रवाह लगभग नही पाया जाता, अर्थात् इस तह मे अभिसरण या अपसरण की क्रिया अनुपस्थित होती है।

तीसरी तह मे बहिर्मुखी प्रवाह, अर्थात् अपसरण प्रक्रिया प्रमुख होती है। यह तह मध्य तह से चक्रवाती प्रवाह के शिखर तक विस्तृत होती है। निम्न तह के अभिसरण और उच्चतर वायुमण्डल के अपसरण प्रवाह के कारण आरोही धाराएँ पर्याप्त रूप से उत्पन्न होकर बादलो की दीवार तथा अन्य वर्षा बैंड जनित करती है। बहिर्मुखी प्रवाह द्वारा अपसरित हवाएँ, कही दूर जाकर अवतलित होती हैं। इस अवतलन का एक छोटा अंश 'आँख' पर भी पाया जाता है।

(3) तापमान

धरातल पर चक्रवात के गुजरते समय तापमान का कोई परिवर्तन नहीं होता, सिवाय इसके कि भारी वर्षा के कारण वायु तापमान ओसांक की सीमा तक कम हो जाता है। चक्रवात उष्ण क्रोड (Core) का प्रवाह है जिसमें उष्ण वायु ऊपर उठ कर गुप्त ऊष्मा छोड़ती है। उच्चतर वायुमण्डलीय तापमान प्रोफाइल के अध्ययन से पता चलता है कि सर्वाधिक ऊष्मा, चक्रवात के केन्द्रीय भाग के ऊपर उच्चतर क्षोभ मण्डल में होती है। यहाँ तापमान वृद्धि लगभग 10°C के आसपास पाई जाती है। इस ऊष्मा का मूल स्रोत निम्न अक्षांशों में उष्ण सागर तल ही है। जब चक्रवात इन उष्ण क्षेत्रों से दूर, उच्च अक्षांशों के शीतल क्षेत्र के भूमितल पर पहुँच जाते हैं, तो तल से ऊष्मा का अभिवहन समाप्त हो जाता है और धरातलीय वायु, प्रसार के कारण ठंडी होने लगती है। यही शीतलन चक्रवातों के ह्रास का प्रारम्भिक कारण बनती है।

(4) मेघ

चक्रवात के आगमन से थोड़ा पहले पक्षाभ मेघ आने लगते हैं, जो कपासी वर्षी के शिखर भागों से उत्पन्न हुए होते हैं। शीघ्र ही ये पक्षाभ-स्तरी पक्षाभ और फिर मध्यस्तरी के रूप में सघन हो उठते हैं तथा वर्षा आरम्भ हो जाती है। तत्पश्चात् स्तरी कपासी, मध्य कपासी, कपासी तथा कपासी वर्षी मेघ और अन्त में घने मेघों की दीवार, स्टेशन पर छा जाती है। इससे स्क्वाल व लगातार झोंके तथा हिमपात उत्पन्न होते रहते हैं। मेघ प्रणाली की संरचना सर्पिल बैंड के आकार की होती है जिसमें तीव्र आरोही धाराएँ प्रमुख होती हैं। सागर पर मेघ, तल को लगभग छूते रहते हैं, किन्तु धरातल पर निम्नतम मेघों की ऊँचाई सामान्यत 100 मीटर से ऊपर ही पाई जाती है।

(5) वर्षा

चक्रवात में वर्षा के आवंटन की प्रकृति बहुत अस्थिर पाई जाती है। यह बहुत कुछ चक्रवात की स्थिति तथा तीव्रता पर निर्भर करती है। निम्न अक्षांशों में वर्षा बैंड प्राय हर ओर सममित रूप में होती है। किन्तु उच्च अक्षांशों में, विशेषकर जब चक्रवात मुड़ने को होता है, तो भारी वर्षा का प्रमुख क्षेत्र केवल अगले वृत्तपाद (quadrant) में ही सिमट जाता है। अत अधिक क्षेत्र की दिशा में अचानक परिवर्तन चक्रवात के मुड़ने का स्पष्ट संकेत है। जिस स्थान से चक्रवात गुजरता है, वहाँ औसतन 15–25 सेमी वर्षा प्राप्त हो जाती है। अनुकूल पर्वतीय परिस्थितियों में 50–60 सेमी वर्षा भी असामान्य नहीं है।

9 40 उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों का औसत भौगोलिक बंटन

सागर तलों पर प्रेक्षणों की अत्यन्त कमी तथा ऐतिहासिक मौसम रिकार्डों के अधूरेपन के कारण उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों का जलवायु विज्ञान (climatology) स्वाभाविकत अनिश्चित एवं अधूरा है। किन्तु अब उपग्रहों के उद्भव से चक्रवातों की स्थिति और तीव्रता के पर्याप्त और लगभग यथार्थ आँकड़े प्राप्त होने लगे हैं।

मौसम उपग्रहों के प्रयोग में आने से पूर्व अधिकांश सागर तलों पर मौसम बहुत विरल तथा असतत रूप में लिए जाते थे। उपग्रहों के सतत एवं नियमित प्रेक्षणों द्वारा आकलित विभिन्न सागरों में चक्रवातों की औसत संख्या निश्चित ही प्रस्तुत संख्याओं से अधिक होनी चाहिए।

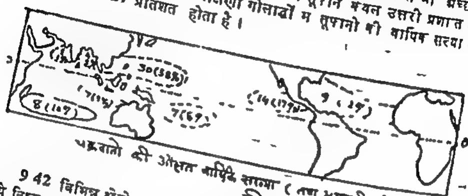
सारणी 9 1
उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों की औसत मासिक तथा वार्षिक संख्या

सागर क्षेत्र	अवधि जिस पर औसत ज्ञात किया गया है	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक
1 उत्तरी अटलांटिक	1941–68	0	0	0	0	0 1	0 5	0 8	2 1	3 5	1 8	0 3	0 1	9 2
2 उत्तरी-पूर्वी प्रशान्त	1965–69	0	0	0	0	0	1 8	2 2	4 2	4 0	1 8	0	0	14 0
3 उत्तरी-पश्चिमी प्रशान्त (दक्षिणी-चीन सागर सहित)	1959–68	0 4	0 6	0 4	0 9	1 5	1 6	5 0	6 8	5 3	4 3	2 4	1 3	30 5
4 दक्षिणी चीन सागर	1961–68	0	0 1	0	0 1	0 5	0 2	0 5	0 6	0 9	0 5	0 5	0 4	4 3
5 दक्षिणी प्रशान्त	1947–61	1 9	1 4	1 6	0 7	0 1	0 1	0	0	0	0	0 1	0 7	6 6
6 बंगाल की खाड़ी	1948–67	0 1	0	0	0 1	0 7	0 1	0 1	0 1	0 4	0 8	0 7	0 5	3 6
7 अरब सागर	1890–1967	0	0	0	0 1	0 2	0 2	0	0	0 1	0 2	0 2	0 1	1 1
8 दक्षिणी पश्चिमी हिन्द महासागर	1931–60	2 3	2 0	1 5	0 7	0	0	0	0	0	0 1	0 3	0 9	7 8
9 दक्षिणी-पूर्वी हिन्द महासागर	1962–67	1 8	1 4	2 0	0 2	0	0	0	0	0	0	0 4	1 2	7 0

सारणी 9 2
उष्ण कटिबन्धी चक्रवातों की औसत मासिक और वार्षिक संख्या

क्षेत्र	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक योग
उत्तरी गोलार्द्ध	0 5	0 6	0 4	1 1	2 5	4 2	8 1	13 2	13 3	8 9	3 6	2 0	58 4
दक्षिणी गोलार्द्ध	6 0	4 8	5 1	1 6	0 1	0 1	0	0	0	0 1	0 8	2 8	21 4
भू मण्डल	6 5	5 4	5 5	2 7	2 6	4 3	8 1	13 2	13 3	9 0	4 4	4 8	79 8

9 41 चित्र 9 6 सारिणी (9 1) के आँकडो पर आधारित है जिसम विभिन्न उष्ण कटिबंधी सागर क्षेत्रो मे चक्रवाती तूफानो, जिनकी अधिकतम वायुगति 33 नाट स अधिक है, की औसत वार्षिक संख्या तथा भू मण्डलीय योग का प्रतिशत भाग प्रदर्शित किया गया है । अमरीकी तथा एशियाई आद्र जलवायु के भागो मे चक्रवातों से भी अच्छी वर्षा हो जाती है । भू मण्डलीय योग (लगभग 80) के आध तूफान अधिक उत्तरी प्रशान्त महासागर मे उत्पन्न होते हैं । उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्धों म तूफानो की वार्षिक संख्या का वटन क्रमश 73 और 27 प्रतिशत होता है ।

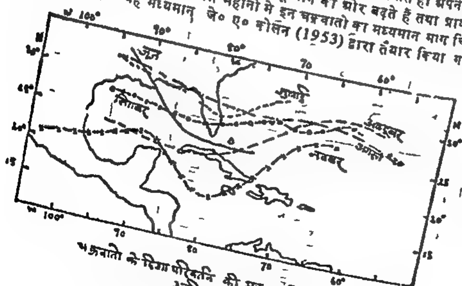


चक्रवातो की औसत वार्षिक संख्या (तथा भूमण्डलीय योग का प्रतिशत)
चित्र (9 6)

9 42 विभिन्न क्षेत्रो म उत्पन्न होन वाले चक्रवातो का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है । ये निष्कर्ष उपलब्ध आँकडो के आधार पर प्राप्त किए गए हैं । कुछ स्थानो के लिए सन 1900 से पूर्व क आँकड भी मिलत हैं किन्तु अधिकाश क्षेत्रों के लिए 1940 के बाद के प्रक्षणो पर ही विश्वसनीय रूप से विचार किया गया है ।

(1) उत्तरी अटलान्टिक महासागर

इस क्षेत्र के 80% के लगभग चक्रवात अगस्त सितम्बर और अक्टूबर क तीन महीनो मे पैदा हो जाते हैं । शेष चक्रवात प्राय जून और जुलाई मे मिल जाते हैं । अन्य महीनो मे चक्रवातो की संभावना बहुत ही क्षीण रहती है । लगभग 62% चक्रवात हरीकेन तीव्रता(जिसमे उच्चतम वायुगति 63 'नाट' से अधिक हो) प्राप्त कर लेते है। अपने स्रोत-क्षेत्रों से ये चक्रवात पश्चिम मे उत्तरी अमेरिका के भू भाग की ओर बढ़ते है तथा प्राय माग मे मुडते हुए तट से टकराते है । विभिन्न महीनो मे इन चक्रवातो का मध्यमान मार्ग चित्र (9 7) म दिया गया है । यह मध्यमान जे० ए० कोलन (1953) द्वारा तैयार किया गया है ।



चक्रवातो के दिशा परिवर्तन की माध्यमासिक स्थिति
उत्तरी अतलांटिक क्षेत्र (कोलन 1953)
चित्र (9 7)

(2) उत्तरी पूर्वी प्रशान्त महासागर

इस क्षेत्र में अधिकांश चक्रवात जून से अक्टूबर के बीच पैदा होते हैं, तथा कुल वार्षिक योग के आधे चक्रवात अगस्त और सितम्बर में होते हैं। किन्तु इन सभी चक्रवातों में केवल एक तिहाई ही हरीकेन तीव्रता को प्राप्त कर पाते हैं।

(3) उत्तरी पश्चिमी प्रशान्त महासागर

केवल यही एक क्षेत्र है, जहाँ वर्ष के प्रत्येक महीने में चक्रवातों की संभावना रहती है। मई से दिसम्बर तक कुल संख्या का 70% चक्रवात उत्पन्न हो जाते हैं, किन्तु जून से अक्टूबर तक चार महीनों में चक्रवातों की संख्या सर्वाधिक होती है। दो तिहाई के लगभग टाइफून अथवा हरीकेन की तीव्रता तक पहुँच जाते हैं। पश्चिमी दिशा से अपनी यात्रा के दौरान चक्रवात प्रायः मार्ग में दिशा परिवर्तन कर लेते हैं। दिशा परिवर्तन विभिन्न महीनों में अलग अलग अक्षांशों पर हुआ करता है। एल० स्टार वर्क 1951 के अनुसार इन अक्षांशों की मध्यमान स्थिति विभिन्न महीनों में इस प्रकार है

सारिणी (9 3)

मास →	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
औसत अक्षांश, जहाँ दिशा परिवर्तन होता है—	13	16	18	21	38	30	25	21.5	18.5	17

जनवरी या फरवरी में उत्पन्न होने वाले चक्रवात या तो दिशा परिवर्तन के पूर्व ही क्षीण हो जाते हैं या उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों से बाहर हो जाते हैं।

(4) दक्षिणी चीन सागर

दक्षिणी चीन में उत्पन्न होने वाले चक्रवातों को औसतीकरण के लिए, उत्तरी-पश्चिमी प्रशान्त के आँकड़ों में सम्मिलित किया गया है किन्तु कुछ विशिष्ट गुणों के कारण इस सागर के चक्रवातों का अलग से अध्ययन करना अधिक उपयोगी है। ये चक्रवात प्रायः उत्तरी-पश्चिमी प्रशान्त के चक्रवातों के मार्ग पर ही गति करते हैं।

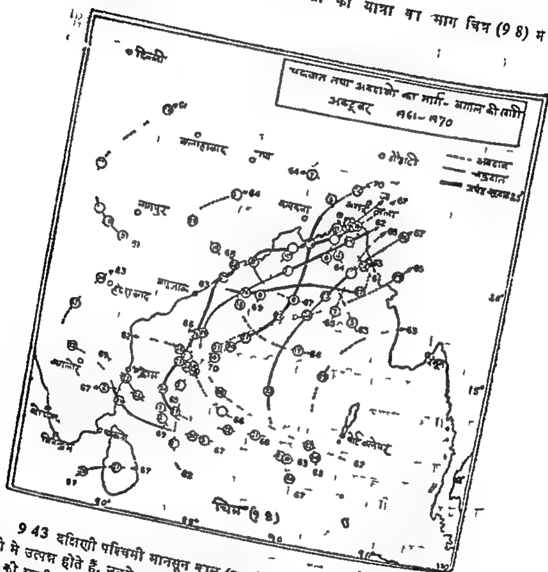
चीन सागर में उत्पन्न चक्रवातों की संख्या वर्ष में दो महीनों मई और सितम्बर में अधिकतम रहती है। जून और आरम्भ जुलाई के बीच इनकी संख्या पर्याप्त घट जाती है।

(5) बंगाल की खाड़ी और अरब सागर

इन भारतीय सागरों में विभिन्न तीव्रता के साइक्लोन अप्रैल से दिसम्बर तक के महीनों में उत्पन्न होते हैं। भारतीय मानसून कालों की संक्रमण अवधि अप्रैल मई तथा अक्टूबर-नवम्बर में, इनकी संख्या सर्वाधिक होती है। इन महीनों में उत्पन्न होने वाले चक्रवातों की तीव्रता भी अधिक प्रखर होती है, जो प्रायः हरीकेन तीव्रता को प्राप्त कर लेती है। चक्रवात अधिकतर 10 से 14 उत्तरी अक्षांशों के बीच जन्म लेते हैं और प्रारम्भ में उत्तरी-पश्चिम की ओर अग्रसर होते हैं। अधिक उत्तरी अक्षांशों तक, पहुँच जाने वाले चक्रवात प्रायः उत्तर या उत्तर-पूर्व की ओर घूम जाते हैं।

अरब सागर मे अपेक्षाकृत कम चक्रवात उदय होते हैं। यह क्षेत्र वस्तुत संसार के सभी साइक्लोन वाले क्षेत्रो मे निम्नतम स्थान रखता है।

इन सागरो मे कुछ प्रमुख चक्रवातो की यात्रा का मार्ग चित्र (9 8) म दिया गया है।



चित्र (9 8)

9 43 दक्षिणी पश्चिमी मानसून मास (जून से सितम्बर) तक जो विक्षोभ भारतीय सागरो मे उत्पन्न होते हैं, उनमे बहुत कम चक्रवात-तीव्रता तक पहुँच पाते है। वे अधिकतर बंगाल की खाड़ी के उत्तरी भागों मे उदय होते हैं तथा पश्चिमी उत्तर-पश्चिमी भाग का अनुसरण करते हुए, उत्तरी भारत पर मानसून की सक्रियता बढाते जाते हैं। ये तूफान मानसून अवदाब कहलाते हैं।

भारतीय सागरो में विभिन्न महीनो मे उत्पन्न होने वाले अवदावो तथा चक्रवातो का संक्षिप्त विवरण सारणी (9 3) तथा (9 4) म दिया गया है।

सारणी (9.3)

बंगाल की खाड़ी मे उत्पन्न होने वाले अवदाब तथा चक्रवात

मास	उत्पत्ति क्षेत्र	विवरण
जनवरी	दक्षिणी-पश्चिमी खाड़ी 86 अंश पूर्वी देशान्तर के पश्चिम मे ।	इनकी संख्या बहुत कम होती है और ये प्राय सागर क्षेत्रो मे ही क्षीण हो जाते हैं तथा तटीय क्षेत्र को प्रभावित नही कर पाते । इनकी गति की दिशा उ प तथा द प के बीच पायी जाती है।
फरवरी, मार्च,		अवदाब या चक्रवात जन्म नही लेते ।
अप्रैल	अण्डमान सागर या खाड़ी के मध्य व दक्षिणी भाग मे, 8 से 14 अंश उत्तरी अक्षांश के बीच ।	इनकी संख्या बहुत कम होती है किन्तु तीव्रता अधिक । ये पहले उत्तर-पश्चिम की ओर बढते हैं, किन्तु बाद मे उत्तर या उत्तर-पूर्व की ओर मुड कर चिटगाग तथा अराकान तट के बीच टकराते हैं ।
मई	महीने के प्रथमार्ध मे 15° उत्तर के दक्षिण मे अण्डमान सागर के आसपास तथा द्वितीयार्ध मे सम्पूर्ण खाड़ी मे ।	इसके अधिकांश चक्रवात हरीकेन तीव्रता के होते हैं जो पहले उत्तरी-पश्चिमी तथा उ पूर्व दिशाओ के बीच चलते है और फिर उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते हैं । सभी तटो पर ये समान रूप से आघात करते हैं ।
जून सितम्बर	प्राय, 16° उ के उत्तर मे अर्थात् शीर्ष खाड़ी मे ।	इन अवदाबो या चक्रवातो की बारम्बारता प्राय अधिक होती है, जिनका औसत प्रतिमास 2 के लगभग आता है, किन्तु इनमे से बहुत कम प्रखर चक्रवातो मे विकसित हो पाते हैं । ये तूफान प्राय उडीसा या बगाल के तटो को पार कर प०उ०प० या उत्तर-पश्चिम की ओर गति करते हैं जो बाद मे कभी-कभी उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाया करते है । कभी-कभी जून मे उत्पन्न हुए अवदाब अराकान तट को भी प्रभावित कर जाते हैं ।
अक्टूबर	ये 8 से 20° उ अक्षांश के बीच उदय होते हैं किन्तु मध्य खाड़ी मे सर्वाधिक ।	अक्टूबर और नवम्बर मे उत्पन्न चक्रवात प्राय प उ प तथा उत्तर-पश्चिम की ओर बढते हैं । इनमे से कुछ आगे चलकर उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते है । प्रभावित तटो मे कारोमण्डल तट प्रमुख है । कुछ चक्रवात बगाल तट

नवम्बर	इनका उदय स्थल 16° उ० अक्षांश से नीचे होता है, जिनमे आधे से अधिक 12° उ अक्षांश के नीचे बनते हैं ।	तथा कुछ मुड जाने के बाद अराकान तट से भी टकराते हैं । इन महीनो मे उत्पन्न होने वाले तूफानों की प्रखरता सर्वाधिक होती है ।
दिसम्बर	अण्डमान और लका के बीच के सागर क्षेत्र ।	इनकी सख्या बहुत कम होती है । य प०उ०प० या पश्चिम की ओर बन्ते हुए कभी-कभी उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते हैं । प्रभावित तटो मे लका के तट तथा मद्रास का कारोमण्डल तट प्रमुख है । जो चक्रवात मुड जात हैं, वे यदा-कदा अराकान तट तक पहुचत हैं ।

सारणी (94)

अरब सागर मे उत्पन्न होने वाले अवदाब तथा चक्रवात

मास	उत्पत्ति क्षेत्र	विवरण
जनवरी	—	इस मास मे अरब सागर मे कोई स्वतन्त्र चक्रवात जन्म नही लेते, किन्तु यदा-कदा दक्षिणी बगाल की खाडी मे उत्पन्न चक्रवात पश्चिम की ओर चलते हुए दक्षिणी प्रायद्वीप या श्रीलका को पार कर अरब सागर में आ जाते हैं ।
फरवरी-मार्च	—	चक्रवात उत्पन्न नही होते ।
अप्रैल	मालदीव द्वीपों के समीप ।	ये चक्रवात प्राय मास के अतिम दिनो मे उत्पन्न होते हैं और पर्याप्त तीव्रता रखते हैं । उत्तर-पश्चिम या पश्चिम की ओर चलते हैं तथा अरब सागर के उत्तरी भागो मे पहुँच कर प्राय उत्तर-पश्चिम या उत्तर पूर्व की ओर मुड जाते हैं ।
मई	9 से 14 अंश उ अक्षाश के बीच ।	इनकी सख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है और ये प्राय तीव्र भी पाये जाते हैं । इनका मार्ग पश्चिम और उत्तर-पश्चिम के बीच होता है ।

जून	67 अंश पूर्वी देशान्तर के पूर्व तथा 12 से 20 अंश उत्तरी अक्षांशों के बीच।	ये चक्रवात प्राय मास के पूर्वार्द्ध मे उत्पन्न होते हैं और इनकी औसत सख्या प्रति चार वर्ष मे एक होती है। ये प्रारम्भ मे उ उ पू की ओर बढते हैं तथा उत्तरी अरब सागर मे पहुँच कर प्राय पश्चिम की ओर मुड जाते हैं। कुछेक चक्रवात उत्तर-पूर्व की ओर भी मुड जाते हैं जो काठियावाड तथा सिंध के तटो को प्रभावित करते हैं।
जुलाई सितम्बर	—	अत्यल्प सख्या।
अक्टूबर	प्राय 18 अंश उत्तरी अक्षांश के नीचे।	इनमे से अधिकाश चक्रवातो का मूल बगाल की खाडी मे होता है, जो दक्षिणी प्रायद्वीप को पार कर अरब सागर मे पहुँचते हैं तथा और अधिक तीव्र हो उठते हैं। ये प्राय उत्तर-पूर्व की ओर बढकर काठियावाड तथा कोकण तटो से टकराते हैं।
नवम्बर	68 अंश पूर्वी देशान्तर से पूर्व तथा 8 से 16 अंश उत्तरी अक्षांशो के बीच।	इस मास मे सर्वाधिक चक्रवात बनते हैं तथा प्राय हरीकेन तीव्रता को प्राप्त कर लेते हैं। इनमें से भी कई चक्रवात बगाल की खाडी मे उत्पन्न हुए रहते हैं जो 16 अंश उत्तरी अक्षांश के दक्षिण के प्रायद्वीप को पारकर अरब सागर मे पहुँचते हैं। इनमे से कुछ पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम की ओर बढते जाते हैं तथा कुछ उत्तर पश्चिम की ओर बढने के बाद 16° उ० अक्षांश के आस-पास उत्तर या उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाते हैं। ये चक्रवात काठियावाड तथा कोकण तटो को प्रभावित करते हैं।
दिसम्बर		चक्रवात प्राय नही उत्पन्न होते।

(6) दक्षिणी प्रशान्त महासागर

135 अंश पूर्वी से 150 अंश पश्चिमी देशान्तर तक विस्तृत इस क्षेत्र के कुल वार्षिक योग के तीन चौथाई चक्रवात जनवरी से मार्च तक उदय होते हैं।

(7) दक्षिणी पश्चिमी हिन्द महासागर

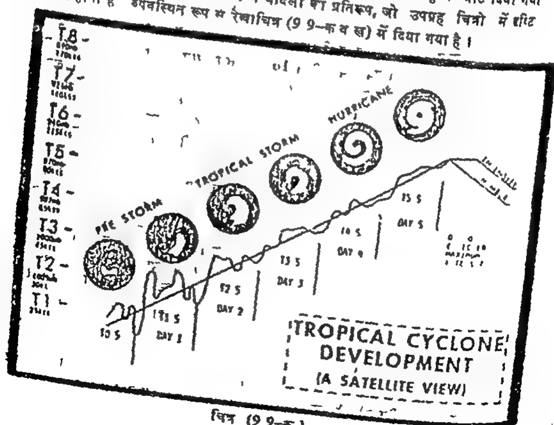
अफ्रीका तट से 100° पू० देशान्तर तक विस्तृत इस क्षेत्र से प्रतिवर्ष 8 चक्रवातों का औसत पाया जाता है। लगभग तीन चौथाई चक्रवात जनवरी से मार्च के बीच उत्पन्न होते हैं। अप्रेल में भी इनकी संख्या पर्याप्त रहती है।

(8) दक्षिणी पूर्वी हिन्द महासागर

यह क्षेत्र 100° पू० से 135° पू० तक विस्तृत है। उपग्रह प्रेक्षणों की उपलब्धि से इन क्षेत्रों में चक्रवातों की संख्या मे काफी बढ़ोत्तरी पाई गई है। आधुनिक प्रेक्षणों के आधार पर इन क्षेत्रों में प्रतिवर्ष 7 चक्रवात उत्पन्न होते हैं जो दिसम्बर से अप्रैल के मध्य प्रभावकारी रहते हैं।

9.50 मौसम उपग्रहों से साइक्लोन का विश्लेषण

साइक्लोन पहचानने तथा उनकी स्थिति सही-सही निर्धारित करने के लिए मौसम उपग्रहों द्वारा प्राप्त मेघ चित्र, अब सर्वाधिक सशक्त माध्यम हैं। प्रारम्भिक विक्षोभ अवस्था से अति प्रखर साइक्लोन तक की अवस्थाओं में मेघों के प्रतिरूप में जो परिवर्तन होता है, वह उपग्रह चित्रों में स्पष्ट परिलक्षित होता जाता है। इन परिवर्तनों के आधार पर उपग्रह चित्रों की सहायता से साइक्लोन का अध्ययन करने के लिए विक्षोभों को तीन अवस्थाओं A, B, C और आठ संवर्ग (Category) $T_1, T_2 \ldots T_8$ में बाँट दिया गया है। इन सभी अवस्थाओं और संवर्गों में बादलों का प्रतिरूप, जो उपग्रह चित्रों में दृष्टिगोचर होता है, अपवर्तित रूप में रेखाचित्र (9.9–क व ख) में दिया गया है।



चित्र (9.9–क)



चित्र (9 9–ख)

दृश्य (visible) और 'इन्फ्रारेड' बिम्बावलियों के प्रयोग से बादलों के प्रकार, मात्रा एवं प्रवाह प्रतिरूप (flow pattern) की जानकारी प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए यदि दृश्य बिम्बावली पर कोई स्थान चमकदार (उच्च ऊर्जा) तथा इन्फ्रारेड बिम्बावली में धूमिल (कम ऊर्जा–निम्न तापमान) का हो तो यह विकसित 'कुमुलस' या कुमुलोनिम्बस बादल हो सकता है। इसी प्रकार दोनों बिम्बावलियों में निम्न ऊर्जा स्थल 'सिरस' बादल इंगित करते हैं।

दोनों चित्रावलियों के संयुक्त विश्लेषण से 'साइक्लोन' की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन किया गया है। इसके आधार पर उष्ण कटिबन्धी साइक्लोन विकास' के माडल तैयार किए गये हैं। 'मॉडल' के कुछ मुख्य विवरण इस प्रकार हैं

1 प्रारम्भिक विकास (T_1 and T_2)

यह अवस्था तब मानी जाती है, जब केन्द्र घने संवाहनिक बादलों के अन्दर या आस-पास हो और कम से कम 12 घण्टे तक रहे। इस तरह के बादलों का वक्र बैंड (curved band) स्पष्टतः दिखाई देना चाहिए। यह अवस्था चक्रवात जनन (cyclogenisis) प्रक्रिया का संकेत है। धीरे धीरे बैंडों की वक्रता बढ़ती है और वे ज्यादा स्पष्ट तथा तीव्र होते हैं। यह प्रक्रिया चक्रवात जनन के पहले दो दिनों में होती है।

2 साइक्लोन की अवस्था ($T_{2.5}$)

इस समय संवाहनिक मेघ लगभग 1° अक्षांश व्यास वाले क्षेत्र पर केन्द्र के चारों ओर वक्र बैंड के रूप में घूमते दिखाई देते हैं तथा आँख (eye) बनने का आभास देते हैं। यह अवस्था प्रारम्भिक विकास के 24 घण्टे बाद से प्रायः दिखाई देती है।

3 हरीकेन अवस्था (T_4 या अधिक)

यह अवस्था प्रायः T 2 से दो दिन बाद आरम्भ होती है। मेघ पैटर्न अधिक कुंडलित (coiled) होते हुए घने होते जाते हैं। 'आँख', स्पष्ट होती है और अधिक विकसित होती जाती है—एक निश्चित गोल काले वृत्त के रूप में। वायु-प्रवाह में 65 'नाट' (T 5 में 90 'नाट', T 6 में 115 नॉट, T 7 में 140 नॉट तथा T 8 में 170 नॉट) की निम्नतम सीमा निर्धारित की गयी है। T 4 में केन्द्रीय दाब 987 मिलीबार तथा T 8 में 890 मिलीबार या उससे कम हो सकता है।

9 60 टोरनेडो (Tornado)

टोरनेडो प्रचण्ड सर्पिल गति करता हुआ एक मेघ स्तम्भ है, जो विशालकाय कपासी वर्षी के आधार तल से निलम्बित होकर भूमितल को प्रायः छूता रहता है। यह स्तम्भ कुछ सौ मीटर के व्यास का खड़ा या कुछ झुका हुआ शंक्वाकार अथवा पतला बेलनाकार होता है, जो हाथी की सूंड या लटके हुए रस्से की तरह दिखाई देता है। चित्र (9 10)



चित्र (9 10)

इसमे केन्द्रीय रेखा के चारो ओर चक्रवाती वायु गति 200 से 500 किमी/घटा के बीच आकलित की गई है। कुछ स्थितियो मे मेघ स्तम्भ भूमितल तक नही पहुँच पाते। ये सामान्यत फनेल मेघ (Funnel cloud) के नाम से जाने जाते है।

टोरनेडो के भीतर वायु-गति इतनी प्रचण्ड और वायुदाब इतना कम होता है कि प्रचलित साधनो से उनका वास्तविक माप सम्भव नही है। इनके द्वारा हुई क्षति के विश्लेषण से तथा दाब और वायुगति के सद्धान्तिक सम्बन्धो के आधार पर, टोरनेडो के केन्द्रीय दाब का आकलन किया गया है। इन आकलनो के अनुसार, केन्द्र बिन्दु पर वायुदाब 100–200 मिलीबार तक गिर जाता है, जिससे टोरनेडो स्तम्भ के भीतर अत्यन्त तीव्र दाब प्रवणता स्थापित हो जाती है। यही प्रवणता प्रचण्ड चक्रवाती प्रवाह उत्पन्न करती है। कुछ आकलनो के अनुसार केन्द्रीय दाब मे ह्रास इससे भी अधिक पाया जाता है।

स्थानीय तौर पर, एक सीमित क्षेत्र के लिए टोरनेडो सर्वाधिक विनाशकारी वायुमण्डलीय घटना है। टोरनेडो मुख्यत मध्य अक्षाशीय महाद्वीपो मे ही उत्पन्न होते है। किन्तु सयुक्त राष्ट्र अमेरिका और आस्ट्रेलिया के अलावा अन्य स्थानो मे ये बहुत कम होते हैं। इन दोनो स्थानो म टोरनेडो की वार्षिक सख्या का औसत क्रमश 145 और 140 है। अमेरिका के टोरनेडो अपेक्षाकृत अधिक प्रचण्ड होते हैं।

उष्ण कटिबन्धों मे टोरनेडो लगभग नही उत्पन्न होते हैं। बङ्गलादेश, आसाम, मेकाङ्ग डेल्टा तथा दक्षिणी वियतनाम अप्रेल या मई मे जब काल वेशाखी के विशाल कपासी वर्षा मेघ उत्पन्न होते हैं, तो इनसे यदा-कदा टोरनेडो के गुणो से मिलते-जुलते फनेल मेघ बिन जाते हैं, पर इनकी प्रचण्डता वास्तविक टोरनेडो से बहुत कम होती है।

9 61 जल सतह के ऊपर उत्पन्न टोरनेडो जल घूर्ण मेघ-स्तम्भ या जल स्पाउट (Water spout) कहलाते हैं। इनकी तीव्रता अपेक्षाकृत कम होती है। जल स्पाउट उष्ण कटिबन्धो मे भी पर्याप्त सख्या मे उत्पन्न होते हैं और साधारणत समूहो मे पाये जाते है तट के समीप पहुँचते पहुँचते जल स्पाउट प्राय क्षीण हो जाते हैं।

9 62 टोरनेडो से सम्बन्धित सामान्य तथ्य

(1) टोरनेडो प्राय गर्मी के महीनो मे अधिक उत्पन्न होते हैं। अमेरिका में इनकी उच्चतम और न्यूनतम सख्या क्रमश मई और दिसम्बर मे पाई जाती है। 80% टोरनेडो अमेरिकन मानक समय के दोपहर और 21 00 बजे के बीच उत्पन्न होते हैं।

(2) शीतकालीन टोरनेडो या जल स्पाउट प्राय वाताग्र प्रणालियो तथा स्क्वाल रेखा से सम्बन्धित रहते हैं जबकि ग्रीष्मकालीन टोरनेडो की उत्पत्ति धरातलीय ताप, आद्रता की बहुलता तथा जेट धाराओ की अनुपस्थिति पर निर्भर करती है। आधुनिकतम शोधो से हरीकेन से सम्बन्धित टोरनेडो की सख्या मे पर्याप्त वृद्धि पाई गई है। चूंकि उष्ण कटिबन्धी चक्रवातो की सरचना हरीकेन के समान ही होती है, अत यह सम्भव है

कि चक्रवातो से प्रभावित उष्ण कटिबन्धी प्रदेशो मे टोरनेडो उत्पन्न होते हो, किन्तु इस परिकल्पना का प्रायोगिक सत्यापन अभी तक नही हुआ है।

(3) टोरनेडो उत्पन्न करने वाली कपासी वर्षी बहुत अधिक ऊँचाई तक विकसित होने के कारण बहुत गहरे रग के दिखाई देते हैं। टोरनेडो उत्पन्न होन से पूर्व कपासी वर्षी के अन्दर बार-बार मैम्मेटस मेघ (स्तन मेघ) दिखाई देते है तथा प्रचण्ड गजन आरम्भ हो जाता है। कभी कभी हरे रग की तडित या बाल (ball) तडित भी देखी जाती हैं। लेकिन कुछ परिस्थितियो मे बिना तडित झझा के भी टोरनेडो की उत्पत्ति प्रेक्षित की गई है। टोरनेडो की उत्पत्ति के एक या दो घण्टे पहले तथा बाद तक भारी वर्षा तथा बडे-बडे ओलो की बौछार सामान्यत देखी गई है।

(4) टोरनेडो स्तभ के बाहर कुछ किलोमीटर के घेरे मे 3 से 10 मिलीबार तक दाब का घटना प्रेक्षित किया गया है। अत टोरनेडो निम्नदाब क्षेत्र से घिरा हुआ होता है।

(5) धरातल तक पहुँचने वाला टोरनेडो, तेज गजन उत्पन्न करता है जो लगभग 30–40 किमी दूर से ही स्पष्ट सुनाई दे जाती है।

(6) टोरनेडो स्तम्भ का अक्ष आरम्भ मे ऊर्ध्वाधर हो सकता है। किन्तु शिखर और भूमि तल पर विभिन्न गतियो के कारण यह अक्ष झुक जाता है। आधार प्राय पीछे रह जाता है, क्योकि धरातलीय घर्षण के कारण भूमितल पर गति अपेक्षाकृत कम हो जाती है। अन्तत टोरनेडो स्तभ कपासी वर्षी मेघ से पूर्णत विच्छिन्न हो जाता है।

(7) टोरनेडो की रेखिक गति मे बहुत भिन्नता पाई जाती है, जो शून्य से 200 किमी/घण्टा से अधिक के बीच आकलित की गई है। औसत गति 54 किमी/घण्टा आती है। टोरनेडो द्वारा तय की गई दूरी का परास कुछ मीटर से लेकर 450 किमी तक देखा गया है, जिसका औसत लगभग 7 किमी होता है। इस प्रकार टोरनेडो का जीवन काल औसतन 15 सैकण्ड से 8 मिनट तक का हो सकता है। चरम अवस्था मे कभी-कभी टोरनेडो कुछ घण्टे तक भी सक्रिय रहते हैं।

सामान्यत वाताग्र जनित टोरनेडो, सवाहनिक कारणो से जनित टोरनेडो की अपेक्षा, अधिक गति और आयु रखने के कारण अधिक दूरी तक प्रभावशाली रहते हैं।

(8) टोरनेडो दो प्रकार से विनाश करता है—(1) स्तभ मे प्रचण्डता से घूर्णन करती अन्तमुखी हवाएँ बहुत तीव्र चूषण (Suction) प्रभाव उत्पन्न कर देती हैं जिससे उनकी सीमा के अन्तर्गत आने वाली भारी वस्तुएँ भी, काफी ऊपर तक उठा ली जाती हैं। भूमितल के पास घर्षण के कारण, चक्रवाती हवाएं अधिक अन्तमुखी प्रवाह रखती हैं। (2) दाब के अचानक गिर जाने तथा परिणामस्वरूप उत्पन्न प्रचण्ड झझा से भूमि के फट जाने तथा इमारतो के टूट जान की घटनाएँ होती है।

धरातलीय तथा आतरिक घर्षण के कारण टोरनेडो मे भयानक भवर तथा विक्षोभ उत्पन्न होते रहते हैं जिनसे विनाशकारी निर्वात के झोके आते रहते हैं। एव

टोरनेडो से अभी तक की अधिकतम जन-हानि का रिकार्ड 689 है। यह टोरनेडो 18 मार्च, 1925 को अमेरिका में उत्पन्न हुआ। एक पूरे दिन की जन-हानि का रिकार्ड भी अमेरिका में ही पाया गया है। 19 फरवरी, 1884 को 1200 व्यक्ति टोरनेडो द्वारा मृत्यु को प्राप्त हुए। इनमे से अधिकांश मौतें उड़ती हुई भारी वस्तुओं के सिरे से टकरा जाने के कारण हुई। एक अनुमान के अनुसार अमेरिका में प्रति वर्ष 11 करोड़ डालर से अधिक सम्पत्ति का विनाश टोरनेडो के कारण होता है।

9 70 प्रतिचक्रवात

प्रतिचक्रवात एक विशाल वायुमण्डलीय भंवर है, जो उच्चदाब केन्द्र के चारो ओर उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिणावर्त (Clockwise) तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में वामावर्त (Anticlockwise) घूर्णन करता है। प्रतिचक्रवात एक उच्चदाब क्षेत्र होता है। चूंकि किसी स्थान का दाब वहाँ के वायुमण्डलीय स्तम्भ की मात्रा को व्यक्त करता है, अत प्रतिचक्रवात के ऊपर वायुमण्डल का भार आस-पास की अपेक्षा अधिक होगा। इसलिए स्पष्ट है कि प्रतिचक्रवात के ऊपर की हवा अधिक घनत्व वाली अर्थात् ठंडी और शुष्क होनी चाहिए। किन्तु व्यावहारिक रूप से सर्वत्र ऐसा नहीं पाया जाता। अनेक प्रतिचक्रवातों पर 3–4 किमी ऊँचाई तक उष्ण वायुराशि छायी रहती है। यह उष्णता सम्भवत उच्चतर वायुमण्डल में अवतलन के कारण उत्पन्न होती है।

जब भी किसी वायुराशि के भीतर धरातलीय दबाव बढ़ता है अर्थात् उच्च दाब क्षेत्र जनित होता है, तो धरातल पर अपसरण की क्रिया शुरू हो जाती है। इसके फलस्वरूप इसमे उच्च स्तरों से निचले स्तरो की ओर वायु का अवतलन आरम्भ हो जाता है। चूंकि किसी क्षेत्र में मौसम की घटना के उत्पन्न होने के लिए आरोही वायु गति की अनिवार्य है, अत उच्चदाब क्षेत्र या प्रतिचक्रवात शुष्क तथा साफ मौसम से सम्बन्धित रहता है। प्रतिचक्रवात के केन्द्र के निकट हवाएँ हल्की तथा बहिर्मुखी होती हैं।

9 71 प्रतिचक्रवातों को दो श्रेणियों में बाटा जा सकता है—(1) शीतल प्रतिचक्रवात (Cold Anticyclone) तथा (2) उष्ण प्रतिचक्रवात (Warm Anticyclone)। शीतल प्रतिचक्रवात में उच्चदाब, धरातल तथा निचले स्तरो पर वायु के कम तापमान तथा अधिक घनत्व के कारण उत्पन्न होता है। उष्ण प्रतिचक्रवात में धरातल तथा निचले स्तरो पर उष्ण व हल्की वायु राशि होती है। इसमे उच्च दाब उच्च स्तरो पर स्थित वायु की अधिकता के कारण होता है। शीतल प्रतिचक्रवातों का ऊर्ध्वाधर विस्तार अधिक नहीं होता है। इनका प्रभाव धरातल से ऊपर लगभग 2500 मीटर तक ही विस्तृत होता है। साइबेरिया के ऊपर शीतकाल में पाये जाने वाला शीतल प्रतिचक्रवात ऊँचाई के साथ कमजोर होता जाता है तथा एक निश्चित ऊँचाई पर इसका स्थान निम्न दाब ग्रहण कर लेती है। इसके विपरीत उष्ण प्रतिचक्रवात ऊँचाई के साथ सशक्त होता जाता है, जैसे उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब पेटिकाएँ। ये उच्चदाब पेटिकाएँ 20° उ० से 40° उ० के मध्य पाई जाती हैं तथा ऋतुओं के बदलने के साथ इनकी स्थिति मे परिवर्तन होता है। सूर्य की स्थिति बदलने के साथ इसकी स्थिति मे भी उत्तर या दक्षिण दिशा में स्थानान्तरण

होता है। ग्रीष्मकाल में ये उच्चदाब पेटिकाएँ अटलांटिक तथा प्रशान्त महासागर के क्षेत्र पर स्थित होती हैं। शीतकाल में ये स्थलीय क्षेत्रों पर भी विस्तृत हो जाती हैं। इन उच्च दाब पेटिकाओं में अवतलन अपेक्षाकृत अधिक तीव्र होता है। अतः शुष्क तथा गर्म अवतलित हवा के कारण यहाँ मौसम साफ तथा सुन्दर होता है तथा दृश्यता भी प्रायः बहुत अच्छी रहती है। ये प्रतिचक्रवाती क्षेत्र उष्ण कटिबन्धी महासागरीय वायु राशियों की, उच्चतर अक्षांश में पहुँचकर मेघ, कुहरा तथा वर्षा उत्पन्न करती हैं।

कुछ प्रतिचक्रवात, स्थायित्व होते हैं। इस प्रकार के प्रतिचक्रवात, किसी क्षेत्र में कई माह अथवा वर्ष भर पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब पेटिकाएँ स्थायी प्रतिचक्रवात की श्रेणी में आते हैं क्योंकि ये लगभग पूरे वर्ष अपने स्थान पर स्थित होती हैं। कभी-कभी ये निम्न वायुदाब प्रणालियों द्वारा विस्थापित भी की जाती हैं। साइबेरिया का उच्चवायु दाब का क्षेत्र भी स्थायित्व प्रतिचक्रवात का उदाहरण है, क्योंकि यह लगभग पूरे शीतकाल में स्थायी रूप से पाया जाता है।

कुछ प्रतिचक्रवात अस्थायी होते हैं तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करते हैं। ये प्रतिचक्रवात अपनी यात्रा के दौरान किसी स्थान को क्षणिक रूप से प्रभावित कर सकते हैं। अस्थायी प्रतिचक्रवात मध्य अक्षांशों में विशेषतः पाए जाते हैं। मध्य अक्षांशों को जब एक के बाद दूसरे वाताग्र अवदाब प्रभावित करते हैं, तो हर दो अवदाबों के मध्य प्रतिचक्रवात होते हैं। ये प्रतिचक्रवात उस अवधि तक स्वच्छ तथा साफ मौसम देते हैं, जब तक कि पिछले अवदाब का उष्ण वाताग्र प्रभावित न करने लगे। इस प्रकार प्रति चक्रवात चार प्रकार के हुए —

(1) स्थायी शीतल प्रतिचक्रवात
(2) अस्थायी शीतल प्रतिचक्रवात
(3) स्थायी उष्ण प्रतिचक्रवात
(4) अस्थायी उष्ण प्रतिचक्रवात

9 72 तिब्बत का पठार भारतीय मानसून प्रवाह पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है, क्योंकि ग्रीष्म के प्रारम्भ में पठार का ऊष्मन उष्ण प्रतिचक्रवात, कोशिका धरातल से लगभग 600–500 मिलीबार तक उत्पन्न करता है। यह प्रतिचक्रवात पठार के दक्षिण में पूर्वी प्रवाह उत्पन्न करता है, जो निश्चित रूप से पश्चिमी जेट धाराओं को क्षीण करता है तथा उत्तरी पूर्वी भारत पर पूर्वी मानसून धाराओं को सशक्त बनाता है।

9 73 कटक

प्रतिचक्रवात से किसी भी दिशा में बाहर की ओर निकले हुए भाग को कटक कहते हैं। यह साधारणतः एक निष्क्रिय प्रणाली है। जब यह दो अवदाबों के बीच स्थित होता है तो इसकी गति अवदाबों की गति द्वारा ही नियन्त्रित होती है। कुछ कटक लगभग स्थिर होते हैं। किन्तु कुछ की गति तेज होती है। कटकों की गति की जानकारी दाब की प्रकृति के अध्ययन से समझी जा सकती है। कटक बढ़ते दाब वाले क्षेत्र की दिशा में तथा घटते दाब वाले क्षेत्र से विपरीत दिशा में गति करते हैं। वाताग्र अवदाबों के पृष्ठ भाग

मे स्थित घटक के क्षेत्र मे, मौसम सामान्यत साफ होता है, जो ध्रुवीय वायु के अवतलन के कारण होता है ।

9 80 काल

काल, अत्यन्त धीमी वायु और अनिश्चित मौसम से युक्त वह क्षेत्र है, जो दो उच्च तथा दो निम्न दाबों से घिरा होता है । इस प्रणाली मे वायु प्रवाह चित्र (2 12) के अनुसार होता है । जैसा कि पहले कहा जा चुका है, चक्रवात तथा प्रतिचक्रवात प्रणालिया मे वायु की गति परिसचारी (circulatory) होती है, किन्तु काल मे ऐसा नही होता । इसमे वायु दो दिशाओ मे काल-क्षेत्र की ओर तथा शेष दो दिशाओ मे इससे दूर गति करती हैं । इस प्रकार काल, चक्रवात तथा प्रतिचक्रवात प्रणालियो से भिन्न है । काल-क्षेत्र मे मौसम कैसा होगा, यह अन्य मौसम परिस्थितियो पर निर्भर है । शीतकाल म काल क्षेत्र मे निम्न मेघ तथा कुहरे की घटनाएँ प्राय घटित होती हैं । ग्रीष्मकाल मे, उपयुक्त उच्च वायुमण्डलीय परिस्थितियो मे कालक्षेत्र मे तडित झझा की प्रबल सम्भावना रहती है । काल, वाताग्र सम्पत्ति के लिए अत्यन्त उपयुक्त क्षेत्र है । यदि धरातल तथा निम्न स्तरो पर मौसम मानचित्र में काल क्षेत्र हो, तो उस क्षेत्र में उच्चतर क्षोभमण्डल मे विक्षोभ (turbulence) की सम्भावना होती है । यह स्थिति विमानों के लिए विशेष घातक है । उच्चतर वायुमण्डलीय विक्षोभ प्राय कपासी या कपासी वर्षी मेघो स सम्बन्धित होते हैं, किन्तु काल क्षेत्रो के ऊपर विक्षोभ, मेघ रहित वायु तहो मे ही उत्पन्न होत हैं, जिन्ह स्वच्छ वायु विक्षोभ (Clear Air Tubulence या CAT) कहा जाता है ।

□□□

10

मौसम विश्लेषण और पूर्वानुमान के प्राथमिक सिद्धान्त

(Rudiments of Weather Analysis and Forecasting)

10 10 विश्लेषण के लिए मौसम आकड़े

दूर सचार तथा प्रतिकृति (Facsimile) रिसीवर की सुविधाओ से युक्त एक मौसम केन्द्र सामान्यत अनेक प्रकार के धरातलीय तथा उच्चतर वायुमण्डलीय मौसम आंकड़े प्राप्त करता है, जिनके अकन और विश्लेषण से मौसम मानचित्र (Weather map) तैयार किया जाता है। प्रतिकृति रिसीवर द्वारा दूसरे केन्द्रो म तैयार किए गए मौसम चार्ट एव अन्य सामग्रियाँ भी, ज्यो-की-त्यो प्राप्त हो जाती है। मौसम उपग्रहों द्वारा प्रेषित मेघ चित्र भी अब नियमित रूप से आने लगे हैं, जिनके लिए भारत म 6 रिसीविंग केन्द्र स्थापित किए जा चुके है।

अत मौसम विश्लेषण के लिए प्राप्त सभी सामग्रियो म से उन आंकडो का चयन करना आवश्यक होता है जो उस क्षेत्र के दैनिक मौसम विश्लेषण एव पूर्वानुमान के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो। एक समय पर लिए गए समकालीन प्रेक्षणो को मानचित्र मे यथास्थान अकित कर दिया जाता है। इस असतत (discrete) प्रेक्षणो की सहायता से पूरे क्षेत्र के मौसम प्राचलो को सतत आलेख रेखाओं द्वारा चित्रित करना समकालीन मौसम विश्लेषण कहलाता है। ये रेखाएँ मौसम प्राचलो की समरेखाएँ (isopleths) कहलाती हैं। समकालीन मौसम विश्लेषण समकालीन पैमाने (कुछ सौ किमी के क्रम का) पर मौसम प्रणालियो का विवरण देता है। इससे सूक्ष्म पैमाने (microscale) पर स्थानीय प्रभाव जैसे विकिरण ऊष्मन या शीतलन, पर्वतीय प्रभाव, जल थल आवटन, सवाहनिक धाराएँ आदि समकालीन विश्लेषण क्षेत्र मे छन जाती है। अत स्थानीय मौसम पूर्वानुमान के लिए जो प्राय 50 से 100 वर्ग किमी क्षेत्र के लिए बनाया जाता है, अलग से विचार करना आवश्यक है। समकालीन विश्लेषण अपेक्षाकृत बड़े पैमाने पर मौसम प्रणालियो की स्थिति तथा गतिशीलता पर प्रकाश डालता है।

10 11 समकालीन विश्लेषण के लिए कुछ प्रमुख प्रेक्षणो का विवेचन अग्राकित है —

(क) धरातलीय प्रेक्षण

(1) दाब

धरातलीय असमतलता के कारण स्टेशन स्तर का दाब मौसम मानचित्र पर प्रतिनिधि प्राचल के रूप में नहीं लिया जा सकता। इसके लिये धरातलीय दाब को माध्य समुद्र तल पर अवतलित करना पड़ता है। किन्तु इस अवतलन के परिणामस्वरूप त्रुटि का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। समुद्र तल के दाब म मानक त्रुटि (standard error), प्रति 300 मीटर स्टेशन की ऊँचाई के लिए 0 5 मिलीबार के लगभग पाई जाती है।

यन्त्र त्रुटि भी दाब के अप्रतिनिधित्व को बढ़ावा देती है। विशेषकर उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो मे, जहाँ वेधशालाएँ सैकड़ों किमी दूरी पर स्थित हैं, तुलना की सुविधा उपयुक्त नही है। विषुवत् रेखा के पास, जहाँ दाब-प्रवणता अत्यन्त क्षीण होती है, थोड़ी यन्त्र त्रुटि भी दाब प्रणाली का केन्द्र निश्चित करने मे पर्याप्त अन्तर ला सकती है। इन कठिनाइयो के कारण उष्ण कटिबन्धो मे दाब विश्लेषण की उपयोगिता बहुत सीमित रह जाती है।

किसी निश्चित अवधि म, दाब-परिवतन नि सन्देह निरपेक्ष दाब की अपेक्षा अधिक यथाथ राशि है। 3 घण्टे या 24 घण्टे का दाब-परिवतन अथवा दाब प्रवृत्ति को अकित कर, उनकी समरेखाओं द्वारा चाट का विश्लेषण करना अनेक स्थितियो मे उपयोगी पाया जाता है। इन समन्वान्तर रखाओ को आइसोलोबार (Isollobar) या समदाब परिवतन रखाएँ कहते हैं।

(2) तापमान तथा ओसाक

उष्ण कटिबन्धो मे तापमान का दैनिक चलन, प्राय समकालीन प्रणालियो के प्रभाव स उत्पन्न, तापमान परिवतन मे अधिक पाया जाता है। इसका कारण यही है कि सूक्ष्म पमाने पर स्थानीय तापमान, आद्र ता, सवाहनिक धाराए मेघाच्छादन तथा वायुगति पर अपेक्षाकृत अधिक निभर करता है। अत समकालीन पैमाने पर इनका विश्लेषण अनुपयुक्त है। वायु तापमान की ही तरह, ओसाक का स्थानीय चलन भी समकालीन परिवतनो पर भारी पड़ता है किन्तु इसका दैनिक परिसर, तापमान की अपेक्षा बहुत कम होता है। सागर तलो पर ओसाक का दैनिक चलन और भी कम होता है, अत वहाँ पर ओसाक विश्लेषण की सहायता से समकालीन प्रभावों का अध्ययन करना अधिक सरल है। ऐसे क्षेत्रो मे ओसाक का समकालीन विश्लेषण करना उपयोगी हो सकता है।

जिन क्षेत्रो मे वाताग्र उत्पन्न होते हैं अथवा जहाँ दो विभिन्न वायुराशियाँ एक साथ प्रभावशील रहती हैं, वहाँ उनके यथाथ निर्धारण के लिए, ओसाक एक महत्वपूर्ण सरक्षी प्राचल है। अत वहाँ ओसाक तथा ओसाक-परिवतन की प्रवृत्ति का विश्लेषण करना विशेष महत्त्वपूर्ण है।

(3) हवा

घर्षण प्रभावो से मुक्त महासागरीय क्षेत्रो के ऊपर, सागरतलीय हवा समकालीन प्रभावो को व्यक्त करने के लिए महत्वपूर्ण प्राचल है। भूमि पर विशेषत उष्ण कटिबन्धी

क्षेत्रों में, जहाँ थलीय भाग बहुत असमतल और पर्वतीय शृंखलाओं से भरपूर है, धरातलीय हवा स्थलाकृति (topography) और विकिरण से प्रभावित होने के कारण, समकालीन मौसम प्रणालियों को बहुत यथार्थ रूप से व्यक्त नहीं कर पाती।

वायु गति और दिशा की मापन विधि में अन्तर होने से भी, हवा के प्रतिनिधित्व का अवमूल्यन होता है। एनीमोमीटर अथवा एनीमोग्राफ द्वारा, वायु मापन में कुछ मिनट के उतार-चढ़ाव का औसत मान ज्ञात किया जाता है। यह अवधि भी हर क्षेत्र के लिए एक समान नहीं होती। यन्त्र की ऊँचाइयों में भिन्नता भी समकालीन उद्देश्यों में हवा का महत्त्व कम करती है।

(4) मेघाच्छन्नता

मौसम उपग्रहों द्वारा प्राप्त मेघ-चित्र यथार्थ एवं अविच्छिन्न प्रकृति के कारण भली भाँति समकालीन प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। इनका विश्लेषण नेफ (Neph) विश्लेषण कहलाता है। किन्तु केवल धरातलीय प्रेक्षणों द्वारा लिए गए मेघों के आँकड़े, जो विच्छिन्न और व्यक्तिगत आकलन पर निर्भर करते हैं समकालीन विश्लेषण के लिए अनुपयुक्त हैं। इनसे मेघाच्छन्नता का यथार्थ रूप स्पष्ट नहीं हो पाता।

(5) अवक्षेपण

किसी निश्चित अवधि (प्रायः 24 घण्टे) की वर्षा के आँकड़े एक मानचित्र पर अंकित कर दिए जाते हैं, जो समकालीन प्रणालियों द्वारा विक्षोभित मौसम की स्थिति और गति का बोध कराते हैं। उष्ण कटिबन्धों में सवाहनिक धाराओं द्वारा स्थानीय स्तर पर, बौछार युक्त वर्षा बहुत सामान्य है। अतः इन क्षेत्रों में वेधशालाओं के बीच की अत्यधिक दूरी के कारण, वर्षा आँकड़ों की प्रतिनिधित्व शक्ति घट जाती है। बौछार प्रायः कपासी समूह के मेघों में तथा दूर-दूर तक समान तीव्रता की वर्षा मध्य स्तरी मेघों में देखी जाती हैं। अतः वर्षा मानचित्रों और नेफ विश्लेषण को एक साथ अध्ययन करने से, समकालीन प्रणालियों की प्रवृत्ति और स्थिति के सम्बन्ध में उपयोगी जानकारी प्राप्त हो सकती है।

(6) दृश्यता

बौछार की तीव्रता, आँधी, कुहरे, धुँध आदि के प्रभाव दृश्यता पर स्पष्ट हैं और इन्हीं के उच्चावच के साथ, दृश्यता परिवर्तित होती रहती है। दृश्यता के प्रतिनिधित्व पर विचार करते समय समकालीन मौसम, मौसम स्थिति, स्टेशन की स्थलाकृति तथा वर्तमान और पिछले मौसम की दशाओं पर ध्यान देना आवश्यक है।

(ख) उच्चतर वायु प्रेक्षण

(1) रेडियो सोन्दे एवं रेडियो वायु मापन

यह यन्त्र गुब्बारे द्वारा उच्चतर वायुमण्डल से गुजरता है, जहाँ से वायु-तापमान, आर्द्रता तथा दाब के आँकड़े रेडियो सकेतों द्वारा प्रेषित करता जाता है। भूमितल पर स्थित उपकरण जो गुब्बारे का दिगंश (azimuth) और उन्नतांश का पाठाङ्क लेते रहते हैं वायुगति और दिशा का बोध कराते हैं। रेडियो सोन्दे प्रायः 25-30 किमी की ऊँचाई तक

के प्रेक्षण देते है। सांख्यिकीय विधियो से इन प्रेक्षणो मे 5 से 15% तक की मानक त्रुटि आकलित की गई है परन्तु साधारणत यह त्रुटि सहन (tolerance) सीमा के अन्दर पाई जाती है।

तापमान और दाब की त्रुटियो के आधार पर स्थिर दाब पृष्ठो (Constant pressure surface) के बीच सम्भावित मोटाई (thickness) मे त्रुटि की गणना की जा सकती है। यदि तापमान (T) की त्रुटि के कारण ऊँचाई (z) की मूल माध्यवग (root mean square) त्रुटि z_t तथा दाब (P) की त्रुटि के कारण ऊचाई की मूल माध्य वग त्रुटि z'_p हो, तो ऊँचाई की कुल त्रुटि

$$z' = \sqrt{z_t^2 + z'^2_p}$$

यदि तापमान और दाब की मूल माध्य वग त्रुटि क्रमश 1°C और 2 मिलीबार मान ली जाए, तो स्थिर दाब पृष्ठ की ऊँचाइयो मे आकलित मूल मध्य वग त्रुटि निम्नाकित सारणी द्वारा व्यक्त की जा सकती है।

सारणी (10 1)

मूल माध्य वग ऊँचाई त्रुटि (मीटर)

दाब स्तर (मिलीबार)	तापमान त्रुटि से (z'_t)	दाब त्रुटि से (z'_p)	कुल त्रुटि (z')
1000	0	0	0
700	10	1	10
500	20	3	20
300	35	7	36
200	47	11	48
100	67	22	71
50	87	9	87

10 12 भारत मे विभिन्न दाब स्तरो की मानक ऊँचाइयाँ इस प्रकार निर्धारित की गई हैं।

सारणी (10 2)

दाब स्तर (मिलीबार)	औसत ऊँचाई (मीटर)	स्तर (मिलीबार)	औसत ऊँचाई (मीटर)
850	1500	250	10600
700	3100	200	12300
500	5800	150	14100
400	7600	100	16600
300	9500		

रेडियो सोन्दे द्वारा प्राप्त समदाब पृष्ठों की ऊँचाइयों में, तापमान और दाब के कारण जो त्रुटियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, उनके कारण कन्टूर विश्लेषण की प्रतिनिधित्व क्षमता, विशेषकर निम्न अक्षांशों में घट जाती है ।

10 13 रेडियो सोन्दे या पायलट गुब्बारों द्वारा लिए गए हवा के प्रेक्षण वायुमंडलीय तहों का औसत सदिश वायु-वेग व्यक्त करते हैं । ये तहें साधारणत विभिन्न मोटाई की हुआ करती हैं । प्रायोगिक तौर पर दिशा में ± 10 अंश तथा वायु गति में ± 10% की त्रुटि सीमा के अन्दर, ये प्रेक्षण सही होते हैं । उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में, जेट धाराओं से प्रभावित क्षेत्रों को छोड़कर, प्राय वायुगति 45 किमी/घण्टा से कम ही पाई जाती है । अनेक क्षेत्रों में मण्डलीय (zonal) (पूर्वी या पश्चिमी) वायु प्रवाह का उत्क्रमण भी प्राय देखा जाता है । ऐसे अवसरों पर वायु के प्रेक्षण में और अधिक यथार्थता अपेक्षित होती है ।

मौसम उपग्रह द्वारा प्रेषित चित्रों से भी वायुवेग का आकलन करने के कुछ तकनीक विकसित किए गए हैं । पक्षाभ मेघों के आवटन और प्रसार से, क्षोभ सीमा के निकट की वायु का बोध हो सकता है । मेघों की प्रसार प्रवृत्ति, सातत्य एवं जलवायु के ज्ञान से वायुवेग आकलित करने के, कुछ नियम निर्धारित कर दिए गए हैं । तुलना करने पर ये आकलन सर्दियों में 300 तथा 200 मिलीबार स्तर पर रेडियो सोन्दे प्रेक्षणों से बहुत निकट पाए गए हैं ।

10 20 मौसम चार्टों के लिए मानचित्र

समकालीन मौसम चार्ट सुविधापूर्वक तैयार करने के लिए ऐसे मानचित्र बनाना आवश्यक है, जिसमें भूमण्डल का गोलकीय प्रारूप एक समतल कागज पर प्रदर्शित किया जा सके । पृथ्वी के पृष्ठ पर स्थित बिन्दुओं का किसी समतल मानचित्र पर यथार्थ प्रदर्शन के लिए पृथ्वी के वक्र पृष्ठ से अक्षांश और देशान्तर रेखाओं के ग्रिड को, मानचित्र के समतल पृष्ठ पर रूपान्तरित कर दिया जाता है इस रूपान्तरण को मानचित्र प्रक्षेपण

(Map-projection) कहते है । प्रक्षेपण कुछ नियमो के अन्तर्गत किया जाता है, जिससे भू मण्डल पर स्थित बिन्दुओ की, मानचित्र के बिन्दुओ से एकैक सगति (one to one correspondence) स्थापित की जा सके ।

मानचित्र तैयार करने के लिए पहले भू पृष्ठ को समतल या ऐसे पृष्ठो पर प्रक्षेपित कर लिया जाता है, जिन्हे खोलकर समतल पृष्ठ का रूप दिया जा सके जैसे–बेलन और शकु । इन्हें बिम्ब पृष्ठ (Image Surface) कहते हैं । फिर बिम्ब पृष्ठ को खोलने के बाद, जो समतल मानचित्र प्राप्त होता है, उसे समुचित पैमाने, उदाहरणार्थ—1 10⁷ पर, सकुचित कर लेते हैं ।

10 21 समकालीन मौसम मानचित्रो के उद्देश्य से सामान्यत अनुकोण (conformal) प्रक्षेपण से चार्ट तैयार किए जाते हैं । इसमे किसी बिन्दु पर मानचित्र का बिम्ब पैमाना हर दिशा में समान होता है । परिभाषा के अनुसार किसी दिशा मे,

$$\text{बिम्ब पैमाना} = \frac{\text{बिम्ब पृष्ठ पर एक बिन्दु और उसके निकटतम बिन्दु के मध्य की दूरी}}{\text{भू–पृष्ठ पर इन्ही के सङ्गत बिन्दुओ के मध्य की वास्तविक दूरी ।}}$$

यदि यह अनुपात हर दिशा मे समान होगा, तो भू-पृष्ठ पर खीची गई किन्ही दो रेखाओ के बीच का कोण वही होगा, जो मानचित्र पर इन रेखाओ के प्रक्षेप के बीच होता है । इसको स्पष्ट करने के लिए निम्नाकित तर्क पर विचार कीजिए

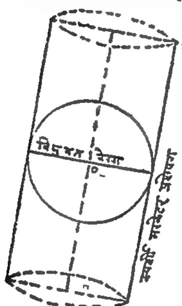
मान लीजिए, P, Q और R तीन बिन्दु, पृथ्वी की सतह पर लिए गए हैं, जिनका मानचित्र पर प्रक्षेप बिन्दु P′ Q′ और R′ हैं । यदि बिन्दु क्रमागत (Consecutive) है, तो △PQR का क्षेत्रफल शून्य हो जाएगा । दोनो त्रिभुजो PQR और P′Q′R′ की सङ्गति भुजाओ का अनुपात समान होगा, क्योकि परिभाषा के अनुसार बिम्ब पैमाना हर दिशा मे समान होगा । इस प्रकार दोनो त्रिभुज समान (Similar) हुए और उनके सङ्गतिकोण एक दूसरे के बराबर । अत प्रक्षेपण मे, रेखाओ के बीच के कोण का मान सरक्षित रहता है । यही कारण है कि अनुकोण प्रक्षेपणो मे छोटे क्षेत्रो का आकार यथावत् रहता है । बडे क्षेत्रों के लिए आकार सरक्षित नही रह पाता, क्योकि सम विन्यास (conformality) की यथार्थता केवल सूक्ष्म दूरियों के लिए ही निश्चित है ।

इसके अतिरिक्त सदिश राशियों, जैसे–वायु वेग का अङ्कन अनुकोणिक प्रक्षेपण के मानचित्रो पर अपेक्षाकृत अधिक सरलता से हो सकता है, क्योकि इन मानचित्रो पर दिशाओ का मान वही रहता है जो पृथ्वी की सतह पर ।

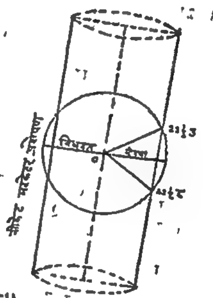
10 [redacted] मौसम मानचित्रो के लिए 3 प्रकार के अनुकोणिक प्रक्षेपण प्रयोग मे लाये जाते हैं ।

(1) मरकेटर प्रक्षेपण—इसको सबसे पहले सन् 1559 मे जी० मरकेटर ने जन्म दिया । इसमे प्रक्षेपण पृष्ठ एक बेलन होता है जिसका अक्ष, पृथ्वी के अक्ष से सपाती (coincident) होता है । बेलन की त्रिज्या अचर होती है, जिसे विभिन्न अक्षाशा पर यथार्थ पैमाने के लिए इच्छानुसार नियोजित किया जा सकता है । यदि पृथ्वी और बेलन की

त्रिज्या बराबर मान ली जाए, तो बेलन पृथ्वी को विषुवत् रेखा पर स्पर्श करेगा। चित्र (10 1) स्थिति (i)। इस स्थिति मे विषुवत् रेखा पर, पैमाना अनुपात या बिम्ब पमाना विषुवत् रेखा पर एक होगा। दूसरे शब्दो मे, पैमाना विषुवत् रेखा पर यथार्थ है। विषुवत् रेखा इस अवस्था मे मानक समानान्तर कहलाती है। यह प्रक्षेपण स्पर्शी मरकेटर प्रक्षेपण कहलाता है। यदि बेलन की त्रिज्या कम हो, तो वह पृथ्वी के गोले को दो अक्षांश वृत्तों पर काटेगा। ये वृत्त विषुवत् रेखा के दोनों ओर सममित रूप से पाए जाएँगे और दोनो ही मानक समानान्तर होंगे। इस अवस्था मे जो प्रक्षेपण बनेगा, वह सीकेंट मरकेटर प्रक्षेपण कहलाता है। चित्र (10 1, स्थिति ii)



(स्थिति i)



चित्र (10-1)

(स्थिति ii)

मरकेटर प्रक्षेपण मे प्रत्येक अक्षांश वृत्त, बेलन पर क्षितिज वृत्त के रूप मे प्रक्षेपित होता है और जब बेलन खोला जाता है, तो ये सभी वृत्त, बेलन की परिधि के बराबर लम्बाई की क्षैतिज रेखाओ के रूप मे आ जाते हैं। इसी प्रकार देशान्तर रेखाओं का प्रक्षेपण अक्षांश रेखाओ के लम्बवत् समान दूरियो पर होता है।

अक्षांश रेखाओ की विषुवत् रेखा से दूरियाँ तेजी से बढती जाती हैं और ध्रुवो पर अनन्त हो जाती हैं। दूसरे शब्दो मे मरकेटर प्रक्षेपण मे ध्रुवो को चित्रित नही किया जा सकता। अत इस प्रक्षेपण द्वारा वे ही मानचित्र अधिक उपयोगी होते हैं जिनमे ध्रुवीय क्षेत्रो की उपस्थिति महत्त्वपूर्ण न हो। ये उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो को प्रदर्शित करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। इसका दूसरा गुण रचना की सरलता है। आप किसी भी आकार के मानचित्र के लिए उपयुक्त पैमाना चुन लीजिए। केन्द्र पर एक सरल रेखा द्वारा विषुवत्

रेखा खींच लीजिए। निम्नांकित सरल समीकरण द्वारा दो देशान्तरों λ और $\lambda+d\lambda$ के बीच की दूरी dx की गणना कर लीजिए

$$dx = a \cos \phi_o \, d\lambda$$

जहाँ a पृथ्वी की त्रिज्या और ϕ_o वह अक्षांश वृत्त है, जहाँ पैमाना यथार्थ है। विषुवत् रेखा को dx की इकाइयों में बाँट कर समान्तर लम्बवत् रेखाएँ खींच लीजिए। ये देशान्तर प्रदर्शित करती हैं।

अब निम्नांकित समीकरण से अक्षांश वृत्तों ϕ की विषुवत् रेखा से दूरी y की गणना कर लीजिए

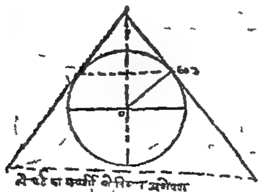
$$y = a \cos \phi_o \; \log \tan \left(\frac{\pi}{4} + \frac{\phi}{2} \right),$$

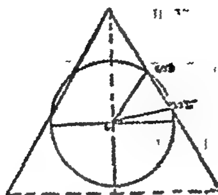
अक्षांश की इन दूरियों को देशान्तर पर अंकित करके विषुवत् रेखा के समान्तर अक्षांश रेखाएँ खींच लीजिए। यह ग्रिड तैयार कर लेने के बाद, मानचित्र के बिन्दु अंकित करना आसान कार्य है।

10 23 लैम्बर्ट का अनुकोणिक शांकव (Conical) प्रक्षेपण

यह नाम इसके आविष्कर्ता, जे० जी० लैम्बर्ट (1972) पर रखा गया है। इसमें बिम्ब पृष्ठ एक शंकु होता है, जिसका अक्ष पृथ्वी के अक्ष से सपाती होता है। मरकेटर प्रक्षेपण की तरह, इसमें भी शंकु पृथ्वी के गोले के किसी मानक समानान्तर पर, या तो स्पर्श करता है या दो मानक समानान्तरों पर काटता है। इन स्थितियों में क्रमश स्पर्शी तथा सीकेंट शांकव प्रक्षेपण प्राप्त होते हैं (चित्र 10 2)। यदि यह शंकु, प्रक्षेपण के बाद जनक रेखा (generator-line) से खोला जाए, तो वृत्त का एक सेक्टर प्राप्त होता है। सारे भू-मण्डल का मानचित्र इस वृत्त पर प्रस्तुत किया जा सकता है।

ध्रुव, शंकु के शीर्ष पर प्रक्षेपित होता है, जो खोलने पर सेक्टर के वृत्त का केन्द्र बन जाता है। वृत्त की त्रिज्याएँ देशान्तर प्रदर्शित करती हैं। अक्षांश वृत्तों का प्रदर्शन सेक्टर पर





लैम्बर्ट का कोनिकल कोनिक्स प्रक्षेपण

चित्र (10 2)

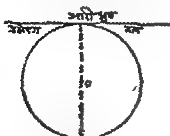
खींचे गए चापो द्वारा किया जा सकता है, जिनमे बीच की दूरियाँ इस प्रकार नियोजित की गई हों कि मानचित्र अनुकोणिक बन जाय ।

ध्रुवों पर मरकेटर प्रक्षेपण की तरह लैम्बर्ट शांकव प्रक्षेपण का पैमाना भी अनन्त हो जाता है किन्तु इसमें ध्रुवो की स्थिति प्रदर्शित की जा सकती है, जबकि मरकेटर प्रक्षेपण मे यह संभव नही । सीकेंट लैम्बर्ट प्रक्षेपण म स्वेच्छा से दोनो मानक समानान्तर चुन जाने की सुविधा रहती है । इससे इच्छित क्षेत्र मे विरूपण (deformation) कम किया जा सकता है ।

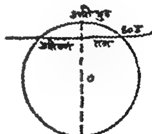
यह प्रक्षेपण मध्य अक्षाशों के लिए सर्वाधिक उपयोगी होता है । यदि मानक समानान्तर निम्न अक्षाशो की ओर चुना जाए तो उष्ण कटिबंधी क्षेत्र का भी उपयुक्त मानचित्र प्राप्त हो सकता है ।

10 24 ध्रुवीय त्रिविम (स्टीरियोग्राफिक) प्रक्षेपण

यह एक सदश (Perspective) प्रक्षेपण है, जिसमे पृथ्वी के अक्ष के लम्बवत् एक समतल पृष्ठ, बिंब पृष्ठ का कार्य करता है । यदि बिंब पृष्ठ ध्रुव पर स्पर्शी है, तो पैमाना स्पर्श बिन्दु के अलावा सर्वत्र एक से अधिक होता है । बिंब पृष्ठ पृथ्वी को किसी अक्षांश पर यदि काटता है तो उस अक्षांश पर पैमाना यथार्थ होगा, अर्थात् वह अक्षांश मानक समानान्तर होगा, (चित्र 10 3) ।



ध्रुवीय स्टीरियोग्राफिक प्रक्षेपण



अध्रुवीय स्टीरियोग्राफिक प्रक्षेपण

चित्र (10 3)

ध्रुवीय त्रिविम प्रक्षेपण मे यदि प्रक्षेपण पृष्ठ से दूर वाले ध्रुव पर, एक प्रकाश-स्रोत रख दिया जाए, तो पृथ्वी के अक्षाश और देशान्तर का जो बिंब प्रक्षेपण पृष्ठ पर चित्रित होगा, वही मान चित्र का ग्रिड बन जाएगा।

इसमे ध्रुव मानचित्र में केन्द्र पर प्रदर्शित होगे। देशान्तर रेखाएँ केन्द्र से निकली सरल रेखाओ के रूप मे चित्रित होगी, जो एक-दूसरे से वही कोण बनाएँगी, जो पृथ्वी के देशान्तर तलो मे होता है। अक्षाश रेखाएँ सम केन्द्रित वृत्तो के रूप मे आएँगी जिनका केन्द्र ध्रुव है।

मानक समानान्तर पर पैमाना इकाई होता है, जो निचले अक्षाशो की ओर बढता जाता है। उच्च अक्षाशो की ओर पैमाना घटता जाता है और उत्तरी ध्रुव पर निम्नतम होता है। ध्रुवीय क्षेत्र के प्रदर्शन के लिए, यह प्रक्षेपण सर्वाधिक उपयोगी मानचित्र प्रस्तुत करता है। ध्रुवो के साथ एक गोलार्द्ध का सम्पूर्ण चित्रण इसमे सरलता से किया जा सकता है।

10 25 अकन और विश्लेषण की त्रुटियाँ कम से कम करने के लिए मानचित्रो मे विरूपण निम्नतम होना चाहिये। इसके लिए यह पाया गया है कि मरकेटर प्रक्षेपण पर, जिसके मानक समान्तर $22\frac{1}{2}°$ उ और $22\frac{1}{2}°$ द लिए गए हैं, $30°$ उ और $30°$ द के बीच का क्षेत्र सर्वोत्कृष्ट ढग से प्रदर्शित करता है, जिसमे विरूपण 8% से भी कम होता है।

विषुवत् रेखा से $50°$ उ अक्षाश के बीच के क्षेत्र के लिए, सर्वोत्तम मानचित्र लैम्बर्ट अनुकोणिक शाकव प्रक्षेपण से मिलता है, जिसके मानक समान्तर $10°$ उ और $40°$ उ अक्षाश लिए गए हो। इसमे विरूपण 7% से कम पाया जाता है। ध्रुवीय त्रिविम प्रक्षेपण मे $60°$ उ या $45°$ उ अक्षाशो को मानक समान्तर लिया जा सकता है, जिससे विरूपण 9% से भी कम आता है।

उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो के लिए मरकेटर प्रक्षेपण द्वारा निर्मित मानचित्र सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इन मानचित्रो के पैमाने वेधशालाओ की सघनता, विश्लेषण का क्षेत्रफल तथा मानचित्र के आकार पर निर्भर करते हैं। पूर्ण गोलार्धीय मानचित्र के लिए $1\ 2\times10^{7}$ या $1\ 4\times10^{7}$ का पैमाना उपयुक्त हो सकता है, जबकि क्षेत्रीय विश्लेषण के लिए $1\ 10^{7}$ का पैमाना सामान्यत लिया जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप के लिए भारत मौसम विभाग $1\ 10^{7}$ पैमाने का धरातलीय चार्ट तैयार करता है।

10 30 मौसम चार्ट का विश्लेषण

(1) धरातलीय चार्ट—साकेतिक रूप से प्रेक्षणो को मानचित्र पर यथास्थान अकित कर लेन के बाद, उनमे विश्लेषण के लिए समदाब रेखाएँ खीची जाती हैं। शीतोष्ण कटिबन्धो मे जहाँ वाताग्र प्रतिक्रियाएँ प्रचुर मात्रा मे हुआ करती हैं, वाताग्रो की स्थिति निर्धारित करना भी एक प्रमुख कार्य है।

समदाब रेखाएँ प्राय 2 या 4 मिलीबार के अन्तराल पर खीची जाती हैं। भारतीय क्षेत्रों मे जहाँ दाब प्रवणता बहुत कम पाई जाती है, दाब प्रणालियो को स्पष्ट करने के लिए एक मिलीबार के अन्तर पर भी समदाब रेखाएँ खीची जा सकती हैं। परन्तु इन नियमो

विभिन्न प्रणालियों को धरातलीय मानचित्र पर कुछ मानक संकेतों द्वारा अङ्कित कर दिया जाता है। ये संकेत चित्र (10 6 a, b और c) में दिए गए हैं।

मौसम प्रणाली के विभिन्न लक्षणों के संकेत जो मौसम मानचित्र पर अंकित किये जाते हैं।

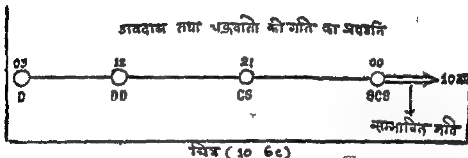
1 धरातलीय शीत वाताग्र
2 शीत वाताग्र उत्पत्ति
3 शीत वाताग्र ह्रास
4 धरातलीय उष्ण वाताग्र
5 उष्ण वाताग्र उत्पत्ति
6 उष्ण वाताग्र ह्रास
7 धरातलीय अधिधारित वाताग्र
8 धरातलीय स्थायीवत् वाताग्र
9 अस्थायित्व रेखा
10 अभिसरण रेखा
11 अन्तर्उष्ण कटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र
12 अन्तर्उष्ण कटिबन्धी असान्तत्य
13 द्रोणिका अक्ष
14 कटक अक्ष

चित्र 10.6 (a)

मौसम मानचित्रों पर दाब प्रणालियों के प्रस्तुतीकरण के संकेत

1	निम्नदाब	L
2	अवदाब	D
3	गंभीर अवदाब	DD
4	चक्रवात	CS
5	प्रचण्ड चक्रवात	SCS
6	अत्यधिक प्रचण्ड चक्रवात, जिसमें वायुगति 64 नाट से अधिक हो।	
7	उच्चदाब	H

चित्र (10 6b)



चित्र (10 6c)

10 32 उच्चतर वायुमण्डल मौसम मानचित्र

वायुमण्डल के त्रिविम आवरण की पूर्ण व्याख्या तथा दाब प्रणालियों के ऊर्ध्वाधर विस्तार का अध्ययन करने के लिए, उच्चतर वायुमण्डलीय चार्ट तैयार करने आवश्यक हैं। वैसे मेघाच्छन्नता, वर्षा आदि की घटनाएँ, धरातलीय चार्ट पर भी अङ्कित रहती हैं, किन्तु उच्चतर हवाओं के दाब, तापमान, आर्द्रता तथा गति की परिवर्तनीय प्रकृति का विस्तृत अध्ययन भी समकालीन स्थितियों के अध्ययन के महत्वपूर्ण भाग हैं।

इसके लिए मौसम केन्द्रों में जो चार्ट सर्वाधिक प्रचलित हैं, वे स्थिर दाब चार्ट (Constant Pressure Chart) या कन्टूर चार्ट (Contour Chart) कहलाते हैं। ये चार्ट कुछ चुने हुए दाब स्तर, जैसे—850, 700, 500, 300, 200 तथा 100 मिलीबार के लिए तैयार किए जाते हैं। रेडियो सोन्दे वेधशालाओं द्वारा प्राप्त इन दाब स्तरों की ऊँचाइयों को (जी० पी० एम० इकाइयों में) तथा तापमान, ओसांक व वायुगति और दिशा सांकेतिक मॉडलों के रूप में अङ्कित कर दिया जाता है।

भारतीय क्षेत्रों में, चूँकि रेडियो सोन्दे वेधशालाओं की संख्या बहुत सीमित (लगभग 20) है, अतः इन स्तरों पर पायलट बैलून के वायुप्रेक्षण भी अङ्कित कर दिए जाते हैं, ताकि

कन्टूर रखाओं का भाग बढ़ाने में इनकी सहायता मिलती रहे। इन मानचित्रों के विश्लेषण में वायु मण्डल की तह-दर-तह समकालीन स्थिति स्पष्ट हो उठती है। धरातलीय और उच्चतर वायु मानचित्रों के एक साथ अध्यारोपण (Superimposition) से, किसी दाब प्रणाली का उच्च विस्तार तथा मौसम विकसित करने की अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थितियाँ आसानी से प्रत्यक्ष हो जाती हैं। विभिन्न तहों के विश्लेषण का एक साथ परखने में उनकी पारस्परिक सङ्गति (Consistency) को ध्यान में रखना सदव आवश्यक है।

उच्च अक्षांशों में 850, 700 और 500 मिलीबार के मानचित्रों में 40 मीटर के अन्तर पर कन्टूर खींचे जाते हैं जबकि भारतीय क्षेत्रों में प्रवणता के ढीलेपन के कारण, 20 मीटर के अन्तराल पर कन्टूर खींचना अधिक उपयोगी पाया जाता है। उच्चतर स्तर 300, 200 और 100 मिलीबार पर ये अन्तराल क्रमशः 80 और 40 मीटर कर दिए जाते हैं। 200 और 100 मिलीबार स्तर पर रेडियो सोंदे द्वारा प्रेषित कन्टूर ऊँचाई बहुत विश्वसनीय नहीं होती। अतः इन स्तरों पर कन्टूर रेखाएँ प्रायः वायु वेग पर आधारित रखना अधिक लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

शीतोष्ण कटिबन्धों में 300–200 मिलीबार तथा उष्ण कटिबन्ध में 200–100 मिलीबार तहों के बीच प्रायः क्षोभ सीमा आ जाती है। अतः 200 तथा 100 मिलीबार के दाब पृष्ठ और क्षोभ सीमा पृष्ठ की अनुच्छेद रेखा का निर्धारण करना भी विश्लेषण का एक उपयोगी भाग है।

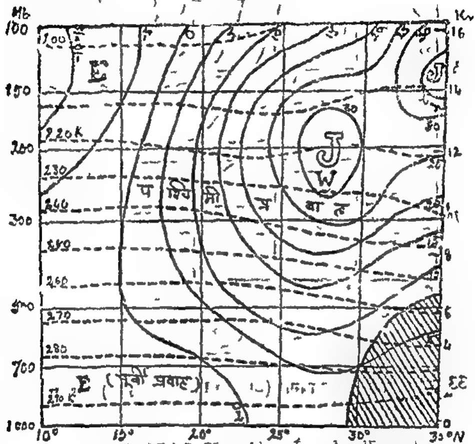
कन्टूर रेखाएँ समदाब रेखाओं की भाँति, चक्रवाती तथा प्रति चक्रवाती वन्द रेखाओं या द्रोणिका तथा कटक की आकृति प्रदर्शित करती हुई स्थित होती हैं। धरातलीय चक्रवात तथा प्रतिचक्रवात, उच्चतर वायुमण्डल में प्रायः द्रोणिका तथा कटक का रूप ग्रहण कर लेते हैं। ये द्रोणिकाएँ तथा कटक, उच्चतर सामान्य वायु प्रवाह की मुख्य विशेषताएँ हैं।

300 से 200 मिलीबार स्तरों पर, पश्चिमी जेट धाराएँ 25 से 35 तथा 50 से 60 अंश उत्तरी अक्षांशों के बीच स्थित होती हैं। विशेषकर सर्दियों में इनकी तीव्रता बहुत अधिक पाई जाती है। इन जेट धाराओं का अक्ष निर्धारित करना तथा 60 नाट से अधिक वायु-गति के लिए 20 नाट के अन्तर पर सम वायुगति रेखाएँ (Isotach) खींचना विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। जेट धाराओं की स्थिति प्रायः 500 मिलीबार स्तर पर अधिकतम तापमान प्रवणता क्षेत्र के ठीक ऊपर 300 या 200 मिलीबार स्तर पर पाई जाती है। जेट की अक्ष एक (Stream line) होती है जो कन्टूर रेखा के समानान्तर खींची जाती है। अक्ष पर सब जगह वायुगति समान नहीं पाई जाती। प्रायः वायुगति के उत्तरोत्तर उच्चतम और निम्नतम पाए जाते हैं। दो उच्चतमों के बीच 10 से 2 ... तर की दूरी हो सकती है।

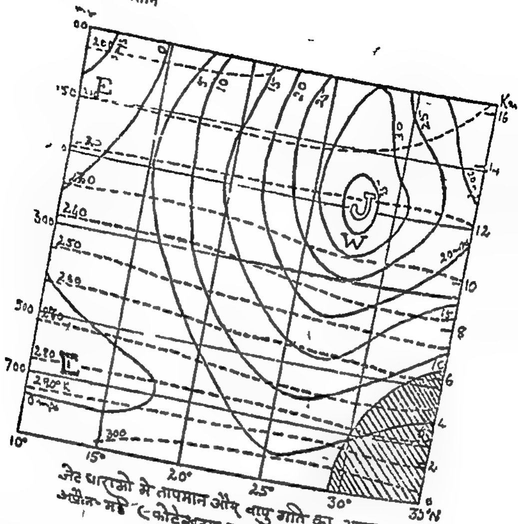
भारत में दो मुख्य जेट धाराएँ प्रभावशी ... — (i) मध्य ... मी
जेट जिसका अक्ष उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी ... तिब्बत,
पर से गुजरता है। यह जेट सर्दियों में ... य क
समान्तर बहने लगती है। गर्मियों में यह हिमा ... हो

(ii) पूर्वी जेट धारा, जो मानसून काल में दक्षिणी चीन, मालाया, भारतीय प्राय-द्वीप तथा अफ्रीका पर 200 से 100 मिलीबार स्तरों के मध्य बहती है।

चित्र (10 7) और (10 8) में अक्टूबर नवम्बर तथा अप्रेल मई में भारतीय क्षेत्रो में जेट धाराओं से सम्बंधित वायु प्रवाह और तापमान दिए गए हैं।



जेट धाराओं में तापमान और वायु गति का आवंटन
अक्टूबर-नवम्बर (कोटेश्वरम् एवं पार्थसारथी 1953)
चित्र (10 7)



जेट धाराओ मे तापमान और वायु गति का आरेखन
अक्षांश मे (कोटेश्वरम तथा पार्थसारथी, 1953)
चित्र (10.8)

10.33 स्ट्रीम लाईन विश्लेषण (Stream Line Analysis) या प्रवाह रेखा विश्लेषण

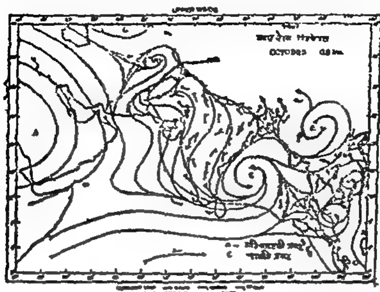
मौसम तत्वो के अभिवहन तथा प्रवाह की ममूता के यथार्थ ज्ञान के लिए स्ट्रीम लाईन विश्लेषण करना आवश्यक है। इसमे विभिन्न स्तरो पर वायुगति और दिशा अंकित करके (free hand) चिकनी रेखाएँ प्रवाह के स्पर्शी के रूप मे खींच दी जाती हैं। इसके मुख्य लक्षण निम्नांकित हैं —

(i) विचित्र बिंदु (Singularities)—ये वो बिंदु है जो प्रवाह के स्रोत अथवा सिंक (Sink) का कार्य करते है जैसे–चक्रवाती या प्रतिचक्रवाती केन्द्र।

(ii) अनन्त स्पर्शी (Asymplote)—ये वे रेखाएँ है जिन पर प्रवाह अभिसरित होता है या अपसरित होता है। स्ट्रीम रेखाओ के संगम (Confluence) तथा हटाव (Difluence) से भी क्रमश अभिसरण तथा अपसरण का बोध होता है।

(iii) उदासीन बिंदु (Neutral point)—दो एसिम्पलोट रेखाओ का कटाव बिंदु उदासीन बिंदु कहलाता है। यह प्राय शांत वायु के क्षेत्र (जमे-शाल) मे सम्बन्धित पाया जाता है।

स्ट्रीम लाईन विश्लेषण का एक उदाहरण चित्र (10 9) में प्रदर्शित किया गया है ।



चित्र (10 9)

10.34 थिकनेस चार्ट (Thickness Chart)

दो मानक दाब स्तरों, जैसे 1000 और 500 मिलीबार के बीच ऊँचाई का अन्तर (थिकनेस) अङ्कित करके एक नया चार्ट तैयार किया जा सकता है, जिस पर थिकनेस की सम रेखाएँ खींची जा सकती हैं । ऊँचाई का अन्तर केवल दोनों तहों के बीच औसत तापमान पर निर्भर करता है । अतः ये सम रेखाएँ तहों के औसत तापमान की रेखाएँ प्रदर्शित करेंगी, जो ताप हवाओं के बटन का चित्र प्रस्तुत करती हैं । इस चार्ट को थिकनेस चार्ट कहा जाता है ।

प्रायोगिक रूप में थिकनेस चार्ट, आलेखीय विधि से ग्रिड तैयार करके बनाया जाता है ।

10.40 मौसम पूर्वानुमान

वायुमण्डल की वर्तमान अवस्था के ज्ञान से, जो हमें धरातलीय तथा उच्चतर वायु-प्रेक्षणों द्वारा प्राप्त होता है, उसके भविष्य की अवस्था की प्रागुक्ति (Prediction) ही मौसम पूर्वानुमान का तात्पर्य है । जिस क्षेत्र के लिए पूर्वानुमान तैयार करना हो, उसके चारों ओर बहुत बड़े क्षेत्र के मानचित्र पर समकालीन प्रेक्षण (वायुदाब, तापमान, हवा, आर्द्रता, मेघाच्छन्नता, दृश्यता, वर्तमान और पिछला मौसम आदि) अङ्कित और विश्लेषित होने के बाद वायुमण्डल की वर्तमान अवस्था का सारांश प्रस्तुत करते हैं जिनसे उच्च और निम्नदाब क्षेत्र, कटक और द्रोणिका अभिसरण और अपसरण के क्षेत्र, वायुमण्डलीय आर्द्रता तथा जेट धाराओं आदि की वर्तमान स्थिति स्पष्ट हो जाती है । ये प्रणालियाँ प्रायः गतिशील होती हैं और समय तथा स्थान के प्रति परिवर्तित होती रहती हैं ।

उत्तरोत्तर समकालीन चार्टों को क्रमबद्ध रूप से अध्ययन करने से पता चलता है कि प्रणालियों के परिवर्तन में कुछ सीमा तक नियमितता है, यद्यपि दो चार्ट कभी भी सर्वत्र सम नहीं होते। किन्हीं क्षेत्र के लिए पूर्वानुमान तैयार करने की साधारण विधि यह है कि उस क्षेत्र के लिए महत्त्वपूर्ण दाब प्रणालियों की पिछली और वर्तमान स्थिति, तीव्रता तथा पिछले चार्टों के आधार पर स्थान व तीव्रता में परिवर्तन की दर निश्चित कर लेते हैं। इसी परिवर्तन दर से भविष्य में किसी निश्चित अवधि के बाद एक दाब प्रणाली की स्थिति और तीव्रता का आकलन कर लेना एक सरल कार्य है।

इस विधि में त्रुटि यही है कि दाब प्रणालियों में परिवर्तन की प्रवृत्ति अनियत होती है, विशेषकर उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों में। अतः मौसम विशेषज्ञ को अपने अनुभव, स्थान विशेष के जलवायु का ज्ञान, सामान्य प्रेक्षण तथा अन्य सहायक साधनों पर भी निर्भर करना पड़ता है। मेघ और वर्षा साधारणतः नम वायु की आरोही गति से उत्पन्न होती है। आरोही गति के लिए उपयुक्त परिस्थिति यह है कि निम्न वायु तहों में अभिसरण तथा उच्चतर तहों में अपसरण प्रवाह प्रमुख है। चार्टों के विश्लेषण में वायुमण्डल की वास्तविक वायु प्रवाह की प्रवृत्ति स्पष्ट हो जानी चाहिए, क्योंकि इन्हीं के प्रति रूपों के आधार पर अभिसरण या अपसरण की मात्रा और क्षेत्र ज्ञात होते हैं। सामान्यतः इन्हीं विधियों से ही प्रणालियों का मूल्यांकन तथा मौसम उत्पन्न होने के संभावित क्षेत्रों को प्रयुक्त किया जाता है।

10.41 मौसम पूर्वानुमान की समस्या मुख्यतः तीन अवस्थाओं में रखी जा सकती है —

(1) समकालीन चार्टों का विश्लेषण।

(2) दाब प्रणालियों का पूर्वानुमान (Prognostication)।

(3) मौसम पूर्वानुमान तैयार करना।

विश्लेषण में दाब प्रणालियों वाताग्रों तथा वायु राशियों की सरचना, स्थिति, भौतिक गुण तथा गति की दिशा और दर का स्पष्ट चित्रण हो जाना चाहिए। इसके लिए उपलब्ध धरातलीय तथा उच्चतर वायुमण्डलीय प्रेक्षणों को अंकित करके निम्नांकित मौसम मानचित्र प्रायः अधिकांश मौसम केन्द्रों में तैयार किए जाते हैं।

(अ) धरातलीय दाब मानचित्र

प्रत्येक समकालीन घड़ी पर यह चार्ट तैयार किया जाता है, जिसमें धरातलीय प्रेक्षण मानक माडल के रूप में अंकित किए जाते हैं। समदाब रेखाओं तथा 24 घण्टे की दाब प्रवृत्ति की समरेखाओं (आइसोलोबार) द्वारा यह मानचित्र विश्लेषित किया जाता है। धरातलीय वाताग्रों की स्थिति निर्धारण भी विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।

(ब) सहायक धरातलीय मानचित्र

इस पर पिछले 24 घण्टों का मौसम तथा मेघाच्छन्नता, तापमान और उसका विचलन तथा ओसांक आदि अलग अलग मानचित्रों पर अंकित किए जाते हैं।

(स) टीफाई ग्राम

स्थानीय तथा निकटवर्ती रेडियो सोन्दे प्रेक्षणों को टीफाईग्राम पर अंकित करके, वायुमण्डल की तह-दर-तह भौतिक अवस्था के बारे मे अनेक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं।

(ह) स्थिर दाब मानचित्र

मानक दाब स्तरो (850, 700, 500, 300, 200 और 100 मिलीबार) के रेडियो सोन्दे प्रेक्षणों को अंकित कर, उनको कन्टूर तथा समताप रेखाओ द्वारा विश्लेषित किया जाता है। विभिन्न तहो मे दाब प्रणालियों की स्थिति के अतिरिक्त मौसम विकास (Baroclinicity) का अध्ययन भी इस मानचित्र से किया जा सकता है। उच्चतर तहो मे जेट धाराओ की स्थिति तथा तीव्रता का ज्ञान यही मानचित्र प्रस्तुत करता है।

(इ) पयालट मानचित्र

रेडियो सोन्दे प्रेक्षणो के अभाव के कारण, उच्चतर वायुमण्डल की अनेक स्तरो के लिए, मानचित्र पर केवल वायुवेग के पायलट बैलून प्रेक्षण अंकित करके उन्ह प्रवाह रेखाओ द्वारा विश्लेषित किया जाता है। द्रोणिकाएँ, चक्रवाती या प्रति-चक्रवाती प्रवाह, कॉल, अभिसरण तथा अपसरण क्षेत्रो की गुणात्मक (qualitative) धारणा, इस मानचित्र से बहुत स्पष्ट हो जाती है।

(फ) इसके अलावा उपग्रहो द्वारा मेघाच्छन्नता के आँकडे तथा राडार के प्रेक्षण भी उपलब्ध है, जो आजकल मौसम पूर्वानुमान तथा विशिष्ट प्रणालियो के यथार्थ आकलन के लिए सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हाते जा रहे है।

10 50 दाब प्रणालियो का वेग निर्धारण

समकालीन चार्टों के विश्लेषण से वायुमण्डल की भौतिक अवस्था का लगभग पूर्ण चित्र उपलब्ध हो जाता है, जो हमारी रूढ (conventional) पूर्वानुमान विधि का आधार बनता है। इस विधि का दूसरा महत्त्वपूर्ण पहलू उच्च दाब, निम्नदाब द्रोणिका, काल वाताग्र तथा वायु राशियो की गति की गणना या आकलन करना है। गणना के लिए त्रिविम निमामक (Three dimensional) प्रणाली मे अनेक सूत्र व्युत्पन्न (derived) किए गए है। यदि X-अक्ष गति की दिशा मे मान लिया जाए, तो एक सामान्य समदाब रेखा (p) की गति (C) निम्न सूत्र द्वारा प्राप्त की जा सकती है —

$$C = -\frac{\partial p}{\partial t} \Big| \frac{\partial p}{\partial x}$$

यदि 2 मिलीबार के अन्तर पर खीचे गए, दो समदाब रेखाओ के बीच की लम्बवत् दूरी d हो तो,

$$\frac{\partial p}{\partial x} = \frac{2}{d}$$

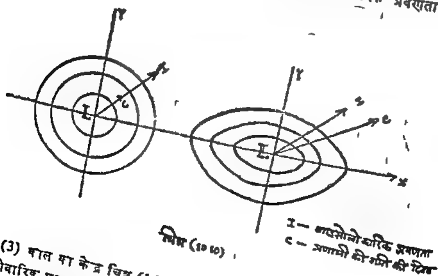
$$C = -\frac{bd}{2}$$

जहाँ $b = \frac{\partial p}{\partial t}$ = दाब प्रवृत्ति ।

अन्य प्रणालियों की गति के लिए सूत्र सरलता से प्राप्त किए जा सकते हैं, किन्तु उन्हें प्रस्तुत पुस्तक में स्थान नहीं दिया जा सका है । प्रायोगिक उपयोगिता के लिए उन सूत्रों के आधार पर कुछ निष्कर्ष निम्नांकित हैं —

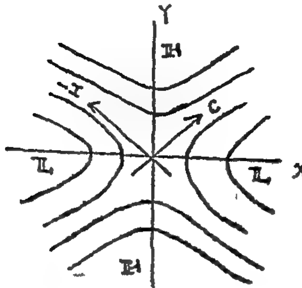
(1) द्रोणिकाएँ आइसोलोबारिक प्रवणता की दिशा में, अर्थात् बढ़ते दाब से घटते दाब की ओर गति करती हैं । कटक इसके विपरीत दिशा में बढ़ते हैं । द्रोणिका (या कटक) की गति अपने आगे और पीछे की दाब प्रवृत्ति के अन्तर के समानुपाती तथा तथा आकृति की वक्रता के व्युत्क्रमानुपाती होती है अर्थात् यदि दाब प्रोफाइल की वक्रता अधिक हो, तो द्रोणिका या कटक की गति धीमी होगी ।

(2) वृत्ताकार निम्नदाब केन्द्र भी आइसोलोबारिक प्रवणता की दिशा में गति करते हैं । उच्चदाब केन्द्र इससे विपरीत दिशा में चलते हैं । इनकी गति प्रवणता के समानुपाती तथा दाब प्रोफाइल की वक्रता के व्युत्क्रमानुपाती होती है । यदि निम्नदाब दीर्घायत (oblong) है, तो इसकी गति की दिशा आइसोलोबारिक प्रवणता से दीर्घ अक्ष की ओर झुक जाएगी ।



चित्र (10 10)

(3) काल या केन्द्र चित्र (10 11) में प्रदर्शित दिशा में बढ़ता है । यह दिशा आइसोलोबारिक प्रवणता से परे X–अक्ष की ओर झुकी होती है ।



चित्र(10.11)

(4) गणितीय सूत्रों के अनुसार उष्ण वाताग्र भू-व्यावर्ती वायु गति के 60 से 90 प्रतिशत की गति से चलते हैं, जबकि शीत वाताग्र इसके 70% से 100% तक की गति रखते हैं। किन्तु बहुत से अवसरों पर वाताग्र भू-व्यावर्ती हवाओं से तीव्र भी चलते हैं। विकसित वाताग्र विक्षोभों का चक्रवाती केन्द्र लगभग उष्ण वाताग्र की गति से ही बढ़ता है। यह गति प्रायः शीत वाताग्रों की गति से थोड़ी कम होती है।

10.51 बहिर्वेशन विधि (Extrapolation Method)

यह विधि, दाब प्रवृत्ति तथा भू-व्यावर्ती वायु की उपर्युक्त विधियों के सम्पूरक के रूप में प्रयुक्त की जा सकती है, जिसमें दाब प्रणाली के पिछले भाग तथा स्थितियों के आधार पर, उसके वेग तथा त्वरण की गणना कर ली जाती है। इसी वेग और त्वरण द्वारा एक निश्चित समय बाद दाब प्रणाली की स्थिति का बहिर्वेशन किया जाता है।

मान लीजिए बिन्दु A, B, C और D किसी दाब केन्द्र की चार स्थितियाँ समान समयान्तर t पर हैं। चित्र (10.12) स्थिति (i), जिसमें जिसम बिन्दु A, B, C, D एक-दूसरे से बराबर दूरी पर स्थित हैं, से स्पष्ट है कि केन्द्र स्थिर गति और दिशा में चल रहा है। अतः वर्तमान स्थिति D से t समय बाद, उसकी स्थिति उसी दिशा में D′ तथा $2t$ समय बाद D″ होगी, जहाँ

$$DD' = CD \text{ और } DD'' = 2CD$$

स्थिति (ii) में केन्द्र की दिशा स्थिर है किन्तु गति घटती जा रही है। स्पष्टतः

$$\text{मन्दन (या त्वरण) गुणक} = \frac{CD}{BC}$$

यदि t समय बाद केन्द्र की स्थिति DD′ है, तो

$$DD' = CD \frac{CD_1}{BC_1}$$

$$= \frac{(CD)^2}{BC}$$

स्थिति (iii) में केन्द्र एक वक्र मार्ग पर घटती गति के साथ चलता है। यहाँ त्वरण का सूत्र, स्थिति (ii) की तरह नहीं प्रयुक्त किया जा सकता है। यदि स्थिति C की अपेक्षा D में आइसोलाबारिक प्रवणता अधिक है, तो मोड़ के बाद गति और बढ़ेगी। प्रवणता की मात्रा के अनुसार केन्द्र की गति में उपयुक्त त्वरण निर्धारण करके D′ की स्थिति बहिर्वेशित की जा सकती है।







(चित्र (10 12)

A—1004 B—1000 C—997 D—995

इस विधि से केन्द्र की तीव्रता का बहिर्वेशन भी सम्भव है। स्थिति (iv) में विभिन्न स्थितियों के साथ केन्द्र पर दाब का मान भी मिलीबार में अंकित है। इन मानों से स्पष्ट है कि केन्द्र निरन्तर गम्भीर (deep) होता जा रहा है, किन्तु गम्भीर होने की दर घटती जा रही है। दाब के पिछले मानों से t समय बाद स्थिति D′ पर केन्द्रक का दाब सामान्य विधि से बहिर्वेशित किया जा सकता है।

यह विधि उस अवस्था में प्रायः असफल रहती है, जब दाब प्रणाली स्थायिवत् प्रति-चक्रवाती क्षेत्रों के मार्ग में गति करती है। ये प्रतिचक्रवात एक रुकावट उत्पन्न करते हैं, जो या तो दाब प्रणाली की गति कम कर देते हैं या दिशा परिवर्तित करने को बाध्य कर देते हैं। यह विधि उच्च और निम्नदाब क्षेत्रों के अतिरिक्त कटक, द्रोणिका तथा बाताग्रों पर भी प्रयुक्त की जा सकती है।

10 52 विश्लेषण के पश्चात् पूर्वानुमान तैयार करने के लिए, मार्गदर्शन के रूप मे निम्नांकित बातें क्रमवार ढग से दी जा रही हैं, जिसकी रूपरेखा मुख्यत पैटरसन ने बनाई है —

(1) पिछले चार्टों का निरीक्षण-मुख्यत 850, 700 और 500 मिलीबार स्तरो पर, नमी तथा दाब प्रणालिया की स्थिति का अध्ययन । टीफाई ग्राम का विश्लेषण तथा ताजे पूर्वानुमान की जानकारी प्राप्त करना ।

(2) चालू (current) मानचित्रो का स्वय विश्लेषण करना । दाब परिवर्तन (Pressure change) मानचित्रो मे आइसोलोबारिक केन्द्रो का बहिर्वेशन ।

(3) मौसम प्रणालियों की सगति (Consistency) का अध्ययन । उपग्रह तथा राडार प्रेक्षणो की सहायता से निम्नदाब केन्द्रो का यथार्थ निर्धारण ।

(4) दाब प्रणालियो तथा वाताग्रो का पूर्वानुमान की अवधि के लिए विस्थापन (displacement) करना ।

(5) प्रणालियो की सभावित तीव्रता का अनुमान करना ।

(6) नई प्रणालियो के अभ्युदय के सम्बन्ध मे धारणा निर्धारित करना ।

(7) मेघाच्छन्नता, आद्रता तथा वायु राशियो के भौतिक गुण निश्चित करना तथा पूर्वानुमान अवधि में उनकी सभावित गति तथा परिवर्तन का अनुमान निश्चित करना ।

(8) स्थानीय प्रभावों, जैसे-पहाड़ियो, जलाशयो, जल थल, समीर आदि का विचार करना ।

(9) स्पष्ट शब्दो मे पूर्वानुमान तैयार करना तथा उसकी यथार्थता की सभावना निश्चित करना ।

10 60 पूर्वानुमानो के प्रकार

मौसम पूर्वानुमान के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व समय है । विभिन्न उपयोगो के लिये अलग अलग अवधि के पूर्वानुमान तयार किए जाते हैं । मौसम प्रणालिया की अनियमितताओ के कारण यह स्वाभाविक है कि पूर्वानुमानो की यथार्थता, अवधि बढने के साथ तेजी से घटती जाती है । अवधि के दृष्टिकोण से पूर्वानुमान निम्नांकित प्रकार के होते हैं –

(1) अल्पावधि (Short Range) पूर्वानुमान—यह तीन से अठारह घण्टा की अवधि के लिए तैयार किया जाता है, जो प्राय वैमानिक सेवाओ के लिये उपयुक्त होता है। इसमे उडानो के लिये घातक मौसम घटनाओं, जैसे-तड़ित झंझा, ओले, पवत-तरगें, आधी, चक्रवात स्कवाल, विक्षोभ आदि के अलावा दृश्यता, उच्चतर वायुगति तथा तापमान और मेघाच्छन्नता का पूर्वानुमान दिया जाता है । अल्पावधि के कारण इनके यथार्थ होने की सम्भावना अधिक होती है ।

(2) दैनिक अवधि पूर्वानुमान—12 से 48 घण्टे की अवधि के लिए पूर्वानुमान प्राय स्थानीय क्षेत्रो के लिये दिया जाता है । इनका उपयोग सर्वसाधारण द्वारा नित्य प्रति

के कार्यों में किया जाता है । इसमें मौसम घटनाओं, मेघाच्छन्नता तथा तापमान को विशेष महत्व दिया जाता है ।

यह आवश्यक है कि इन अल्पावधि पूर्वानुमानों के लिये विश्लेषित मौसम चार्ट, समकालीन प्रेक्षण के बाद कम से कम समय में उपलब्ध हो जाए । यद्यपि पूर्वानुमान तैयार करने में लाभकारी, कुछ नियमावलियाँ नीचे उद्धृत की गई हैं तथापि प्रणालियों की स्थिति, तीव्रता, गति और सम्भावित परिवर्तन के बारे में शीघ्र निर्णय लेने के लिए मौसम विशेषज्ञ का अनुभव और पूर्वाभ्यास अत्यावश्यक तत्व हैं

(अ) उच्चदाब, निम्नदाब, कटक और द्रोणिका की स्थिति और तीव्रता समकालीन चार्ट पर निश्चित करना । उच्च अक्षांशों में वाताग्रों की स्थिति निर्धारण करना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है ।

(ब) वायु राशियाँ निर्धारित करना । उष्ण कटिबन्धों में सुस्पष्ट वायु राशियाँ बहुत कम मिलती हैं फिर भी स्थानीय टेफीग्राम द्वारा वायुमण्डलीय स्थिरता, नमी की अवस्था, आरोही तथा अवरोही गति शीतलन तथा ऊष्मन का अध्ययन किया जा सकता है ।

(स) वर्षा आदि मौसम-घटनाओं का उत्तरोत्तर चार्टों से क्रमबद्ध अध्ययन ।

(द) त्वरण की विधि से निश्चित अवधि के बाद दाब प्रणालियों की स्थिति आकलित करना । प्रणालियों की संरचना और पिछली प्रवृत्ति के आधार पर उनकी तीव्रता का अनुमान लगा लेना भी सरल कार्य है । किन्तु उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों में दाब प्रणालियों की गति बहुत अनियत पाई जाती है, जिससे बहिर्वेशन विधि प्रायः असफल हो जाती है । इन क्षेत्रों की सम्भावित गति साधारणतः उस दिशा में होती है, जहाँ दाब का घटाव अधिक होता है, अर्थात् जिधर अधिकतम आइसोलोबारिक प्रवणता होती है । इसके अलावा प्रणालियों का जलवायु विज्ञान भी, उनका विस्थापन आकलित करने में सहायक हो सकता है । कुछ प्रणालियाँ, जैसे—पश्चिमी विक्षोभों या चक्रवातों के आगमन में पूर्व मेघ या तापमान के निश्चित संकेत मिलने लगते हैं । चक्रवाती तूफानों का मार्ग निर्धारण प्रायः उनके ऐतिहासिक ज्ञान के आधार पर किया जाता है ।

(इ) स्थानीय प्रभावों, जैसे—पर्वत, जलाशय, जल और थल समीर पर अलग से विचार करना आवश्यक है । मौसमविज्ञ को इस सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए ।

10.70 मध्यम अवधि पूर्वानुमान (Medium Range Forecast)

इस पूर्वानुमान की मध्य अवधि 3 से 7 दिन की होती है । दाब प्रणालियों का पूरा जीवन चक्र प्रायः 3–4 दिन का पाया जाता है । स्पष्ट है कि इससे लम्बी अवधि के पूर्वानुमान के लिए उपर्युक्त रूढ़ विधियाँ प्रयोग में नहीं लाई जा सकतीं, क्योंकि वर्तमान दाब प्रणालियाँ इतनी लम्बी अवधि तक प्रभावकारी नहीं रहती हैं और कितने दिन बाद तथा किस स्थान पर नवीन प्रणालियाँ उदय होंगी, इसका अनुमान करना, मौसम विज्ञान की अब तक की प्रगति के आधार पर प्रायः असम्भव ही है । पिछले कुछ वर्षों में, मध्यम

अवधि पूर्वानुमान की आवश्यकता कृषि कार्यों, सैनिक एव आर्थिक योजनाओ तथा हाइड्रोलोजिकल चेतावनियो आदि के लिए निरन्तर बढती गई है, विशेषकर भारत जैसे देश मे, जहाँ की अर्थ-व्यवस्था मौसम की अनुकूलता पर अत्यधिक निभर है ।

इसके लिए मुख्य रूप से साख्यिकीय विधियाँ ही प्रयोग मे लाई जाती हैं । कुछ विधियाँ शुद्ध साख्यिकी हैं जिनमे प्रेडिक्टेन्ट (Predictant) को कुछ उपयुक्त मौसम तत्त्वो के फलन (function) के रूप मे व्यक्त किया जाता है, ये तत्त्व प्रेडिक्टर या प्रागुक्तक कहलाते हैं । भूतकाल के मौसम आँकडो की सहायता से, इस समाश्रयण् (Regression) समीकरण तथा उसके गुणाको का मान आकलित कर लिया जाता है ।

दूसरी विधि मे मौसम प्रणालियो की भौतिक विशेषताओ तथा उनके प्राकृतिक विकास पर विचार करते हैं । इसके लिये प्राय तीन या पाँच दिन के औसत मौसम चाट बनाए जाते हैं । इन औसत मानचित्रो की प्रवृत्ति के बहिर्वेशन से लम्बी अवधि के लिये मौसम परिस्थितियो का आकलन किया जा सकता है ।

भारत मे इस समस्या पर उष्ण कटिबन्धी मौसम विज्ञान शोध सस्थान पूना मे काय हो रहा है । वहाँ अभी तक जो विधि विकसित की गई है, उसमे समकालीन तथा साख्यिकीय सिद्धान्त प्रयुक्त किए गए हैं, जिनकी रूपरेखा इस प्रकार है —

(1) 5 दिवसीय औसत 700 मिलीबार का कन्टूर मानचित्र तैयार करना । राय सरकार एव लाल (1960) के अनुसार, उत्तरी भारत मे वर्षा उत्पन्न करने वाले विक्षोभा की स्थिति निर्धारण के लिये, 700 मिलीबार स्तर का कन्टूर चार्ट सर्वाधिक उपयोगी है ।

(2) मुख्य मौसम तत्त्वो का 5 दिवसीय सामान्य से विचलन का मानचित्र तैयार करना । ये दोनो मानचित्र लगभग 10 वष की अवधि मे प्रत्येक 5 दिन के लिए तैयार कर लिए गए हैं ।

(3) औसत वायु प्रवाह और औसत विचलन में सम्बन्ध स्थापित करना । पन्त (1964) के अनुसार, उत्तरी भारत पर 5 दिवसीय वर्षा का सामान्य से अधिक होना, पाकिस्तान तथा उत्तरी-पश्चिमी भारत पर 700 मिलीबार की 5 दिवसीय माध्य स्थिति से प्राय सम्बन्धित रहती है । सामान्य से अधिक वर्षा इन क्षेत्रो पर तब विस्तृत होती है, जब दक्षिणी प्रायद्वीप पर स्थित, उच्चदाब क्षेत्र कमजोर हो ।

(4) माध्य सामान्य प्रवाह के बहिर्वेशन के लिए उपयुक्त विधि तैयार करना । तथा (3) के सम्बन्ध द्वारा माध्य सामान्य प्रवाह के आधार पर, वर्षा के सामान्य से विचलन का सही आकलन करना । पिछले दशक से कम्प्यूटर तकनीक के विकास के साथ, मध्यम और दीघ अवधि के पूर्वानुमानों के लिए सख्यात्मक (Numerical) विधियो पर भी अब पर्याप्त ध्यान दिया जाता रहा है । इन विधियो की सक्षिप्त रूपरेखा अनुच्छेद (10 80) मे दी गई है ।

10 71 दीर्घावधि पूर्वानुमान (Long Range Forecast)

7 दिन से लम्बे समय के लिए पूर्वानुमान दीर्घावधि पूर्वानुमान कहलाता है। मासिक अथवा ऋतुनिष्ठ पूर्वानुमान कृषि योजनाओं, बाढ या सूखा चेतावनियाँ, दीर्घकालीन सैनिक गतिविधियो आदि के क्षेत्र मे उपयोगी हो सकते हैं।

भारत मे मानसून के अभ्युदय का समय तथा उसकी तीव्रता तथा प्रवृत्ति के विषय मे पूर्वानुमान प्राप्त करने की जिज्ञासा बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है। पहले, बल्कि अभी भी कुछ लोग ज्योतिष वेत्ताओ द्वारा दिए गए पूर्वानुमानो मे विश्वास रखते हैं।

इस सम्बन्ध मे वैज्ञानिक प्रयत्नो का सबसे पहला श्रेय गिलबर्ट वाकर को जाता है, जिन्होने सह-सम्बन्ध (correlation) के सिद्धान्त द्वारा सन् 1914 मे, भारत मे मानसून वर्षा के लिए पूर्वानुमान प्रस्तुत किया। उन्होने विश्व के विभिन्न भागो मे होने वाली मौसम घटनाओ तथा भारतीय मानसून वर्षा मे समाश्रयण समीकरण द्वारा सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया। वाकर के सिद्धान्त के अनुसार, मानसून की वर्षा तथा विषुवत् रेखीय निम्नदाब, दक्षिणी अमेरिका का उच्चदाब, केपटाउन का दाब, उच्च अक्षांशो मे तुषार का सग्रह, डच हावर का तापमान जजीबार एव जावा की वर्षा आदि तत्वो से सम्बन्धित की जा सकती है। इन सम्बन्धो के आधार पर उन्होने 6 समाश्रयण समीकरण तैयार किए तथा उनके सह-सम्बन्ध गुणाको की मानक त्रुटियो की भी गणना की।

यह पाया गया कि ये समीकरण प्राय 5 से 10 वर्ष तक के लिये मान्य रहते हैं, जिसके बाद नए समीकरणो का सेट तैयार करने की आवश्यकता पडती है। वे तत्व जिनसे मानसून वर्षा सम्बन्धित है, प्रागुक्तक कहलाते हैं। यह आवश्यकता भी महसूस की गई कि नए और अधिक प्रभावकारी प्रागुक्तक की खोज से इन समीकरणो को और यथार्थ बनाया जाए। अब तक अनेक नए प्रागुक्तक जोडे गए तथा अनुपयुक्त तत्वो को अलग कर दिया गया। रेडियो सोन्दे तथा उपग्रह प्रेक्षणो के उपयोग से, इन समीकरणो को सशोधित करने के कार्य पर, इस समय मौसम वैज्ञानिक प्रयत्नशील हैं।

दीर्घावधि पूर्वानुमान के लिए दूसरी विधि एनालाग विधि है। इसका सिद्धात यह है कि यदि दो समकालीन परिस्थितिया समान हो, तो मौसम श्रृंखलाओ की पुनरावृत्ति दोनो मे एक ही क्रम से हो सकती है। इस विधि मे भूतकाल की किसी ऐसी अवधि की खोज करनी आवश्यक है, जिसमे मौसम परिस्थितिया वर्तमान परिस्थितियो के समान रही हों। इस अवधि की मौसम श्रृंखलाओ के परिवर्तन के आधार पर ही वर्तमान मौसम प्रणालियो की भविष्य की प्रवृत्ति के बारे मे अनुमान निश्चित किया जाता है किन्तु कठिनाई यह है कि दो मौसम श्रृंखलाएँ कभी भी बिल्कुल समान नही होती। उदाहरण के लिए मान लीजिए किसी महीने के लिए 3 उपयुक्त 'एनालाग प्राप्त हैं जिनमे दाब प्रणालियाँ तथा वायु प्रवाह वर्तमान महीने के समान हैं। यह सम्भव है कि दो एनालाग मे इनकी वर्षा तथा भीतर मे भिन्न तरह की घटनाएँ घटी हैं। ऐसी अवस्थाओ मे पूर्वानुमान करने के सम्बन्ध मे अन्य तत्वो पर भी ध्यान देना आवश्यक है, जैसे-सागर सतह या भूमितल का तापमान आर्द्रता की अवस्था वायु प्रवाह तथा आस-पास के क्षेत्रो मे तुषारपात आदि।

10 72 पूर्वानुमान में जलवायु विज्ञान का महत्त्व

दिन-प्रतिदिन के समकालीन चार्टों के निरीक्षण से यह स्पष्ट हो जाता है कि दाब-प्रणालियों की स्थिति और प्रारूप मे, मौसमी परिवर्तन सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है, जो जल-थल की गुण विभिन्नता तथा सूर्य के स्थानान्तरण के कारण उत्पन्न होती है। किसी स्थान विशेष की भौगोलिक परिस्थितियाँ प्राय अपरिवर्तित रहती हैं। अत वहाँ के जलवायु का प्रमुख चर नियन्त्रक सूर्य है, जो वर्ष भर एक निश्चित मार्ग पर स्थानान्तरित होता रहता है। इसकी स्थिति के अनुसार, हर ऋतु मे स्थान विशेष की मौसमी विशेषताएँ बदलती रहती हैं, जो हर साल उसी क्रम मे बार बार दुहरायी जाती हैं। अत एक ऋतु से दूसरे ऋतु मे परिवर्तित होने वाली सामान्य दाब प्रणालियों तथा वायु प्रवाह का ज्ञान, मौसम पूर्वानुमान के लिये बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है।

इसके लिए मुख्य मौसम तत्त्वों, जैसे—दाब, तापमान तथा वायु-प्रवाह आदि के औसत मासिक मानों की गणना लगभग तीस या पचास वर्ष के आँकड़ों के आधार पर कर ली जाती है। ये मान जलवायुविक सामान्य (Climatological Norms) कहलाते हैं। विभिन्न स्टेशनों के जलवायुविक सामान्यों के आधार पर जलवायुविक मानचित्र तैयार किए जाते हैं। भारतीय क्षेत्र के लिए कुछ जलवायुविक मानचित्र अध्याय 1 मे दिए गए है।

नित्य प्रति के समकालीन चार्टों की मासिक जलवायुविक चार्टों से तुलना करने पर, मौसम परिस्थितियों का सामान्य से विचलन ज्ञात हो जाता है। विशेष असमानता की स्थितियाँ मौसम विशेषज्ञ के लिए महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि इनसे मौसम प्रणालियों की संभावित गति और तीव्रता के बारे मे स्पष्ट संकेत मिलता है।

10 80 संख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति (Numerical Weather Prediction)

जैसाकि नाम से ही स्पष्ट है, इसका तात्पर्य संख्यात्मक विधियों से मौसम की प्रागुक्ति करना है। इसमे वायुमण्डल की भौतिक प्रवृत्ति को नियन्त्रित करने वाले समीकरणों को, वास्तविक रूप से हल किया जाता है। दो प्रकार के हल सम्भव हैं—

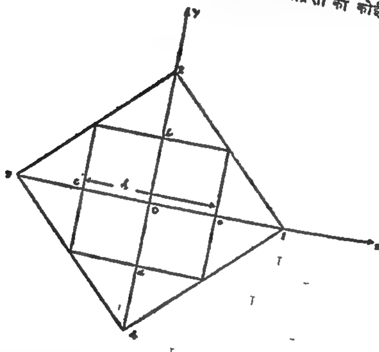
(1) वे हल जो विश्लेषणात्मक (analytic) रूप म प्राप्त हों जैसे—एक घातीय, बहु-घातीय चरघातांकीय फलन (exponential function) या अन्य रूप में।

(2) किसी समीकरण का, अल्पावधि (Δt) के लिए संख्यात्मक विधि से सन्निकट (approximate) हल कर लिया जाय और फिर उस हल को लम्बी अवधि के लिए शृंखलाबद्ध रूप से उत्तरोत्तर विस्तारित कराया जाए, जैसे—श्रान्ति (relaxation) की विधि। इन विधियों के लिए प्राय कम्प्यूटर तकनीक का प्रयोग किया जाता है।

10 81 वायुमण्डलीय अवस्था को व्यक्त करने वाले मौलिक तत्व, जिन्हें आगे वायुमण्डलीय चर (variable) कहा जाएगा, ये हैं —

(1) u X–दिशा मे वायु गति। X–अक्ष प्राय अक्षांश को लिया जाता है।

(2) v Y–दिशा (देशान्तर) मे वायु गति ।
(3) w Z–दिशा (स्थानीय ऊर्ध्वाधर) मे वायु गति ।
(4) p वायुमण्डलीय दाब ।
(5) T या ρ तापमान या वायु घनत्व । गैस नियम, $p = \rho RT$, से सम्बद्ध होने के कारण p, ρ और T मे दो चर ही स्वतन्त्र रूप से लिये जा सकते हैं ।
(6) q विशिष्ट आर्द्रता या वायुमण्डलीय आर्द्रता का कोई अन्य माप ।



चित्र (10 13)

इन चरो के निर्धारण के लिए 6 समीकरण आवश्यक हैं । प्रारम्भिक अवस्था मे q को अचर मान लिया जाता है । इसका तात्पर्य है कि वायुमण्डलीय प्रक्रम, जो मौसम (वर्षा, कुहरा, वज्रपात आदि) उत्पन्न करते हैं के दृष्टिकोण से यह प्रस्ताव बिल्कुल अनुपयुक्त है, किन्तु बड़े पैमाने पर वायुमण्डलीय प्रवाह को प्रागुक्त करने के लिए जो सख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति का प्रारम्भिक कार्य है, आर्द्रता को नगण्य कर देना तर्कसगत है । अब शेष पाँच चरों u, v, w, p, T (या ρ) की व्याख्या करने के लिए, पाँच समीकरणो की आवश्यकता होगी । त्रिविम नियामक प्रणाली मे गति के तीन समीकरण, सातत्य का समीकरण (equation of Continuity) तथा उष्मागतिकी का पहला नियम, हमें पाँच समीकरण प्रदान करते हैं । इन समीकरणो को इस प्रकार लिखा जा सकता है —

$$\frac{du}{dt} = fv - \frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial x} + F_x \quad (i)$$

$$\frac{dv}{dt} = -fu - \frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial y} + F_y \qquad \text{(ii)}$$

$$\frac{dw}{dt} = -\frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial z} - g + F_z \qquad \text{(iii)}$$

ये तीन गति के समीकरण हैं, जहाँ f कोरियालिस प्राचल, F_x F_y तथा F_z घर्षण बल तथा g, ऊर्ध्व दिशा में प्रयुक्त होने वाला गुरुत्वाकर्षण बल है। ये समीकरण अरैखिक (non linear) हैं। चौथा निम्नांकित समीकरण है, जो संहति के संरक्षण के नियम पर आधारित है।

$$\frac{d\rho}{dt} = -\rho\left(\frac{\partial u}{\partial x} + \frac{\partial v}{\partial y} + \frac{\partial w}{\partial z}\right) \qquad \text{(iv)}$$

ऊष्मा गतिकी का पहला नियम यह है,

$$\frac{dQ}{dt} = c_v\frac{dT}{dt} + p\frac{da}{dt},$$

जहाँ, a (विशिष्ट आयतन) $= \frac{1}{\rho}$

इस समीकरण में 'Q' (वायुमण्डल में आगत ऊष्मा की मात्रा) एक अज्ञात राशि है, जिसके मान निर्धारण के लिए एक और समीकरण की आवश्यकता पड़ेगी। किन्तु इस कठिनाई को प्रारम्भ में यह मानकर समाप्त कर दिया जाता है कि पूर्वानुमान की अवधि में वायुमण्डलीय प्रक्रमों की प्रवृत्ति रुद्धोष्म है। अतः $\frac{dQ}{dt} = 0$

इस प्रकार, $c_v\frac{dT}{dt} + p\frac{da}{dt} = 0$

रुद्धोष्म दशाओं में, $p\rho^{-\gamma}$ = स्थिरांक।

$$\frac{1}{d}\frac{dp}{dt} - \frac{\gamma}{\rho}\frac{d\rho}{dt} = 0$$

अतः सातत्य समीकरण की सहायता से,

$$\frac{dp}{dt} = -\gamma p\left(\frac{\partial u}{\partial x} + \frac{\partial v}{\partial y} + \frac{\partial w}{\partial z}\right) \qquad \text{(v)}$$

यह पाँचवा अभीष्ट समीकरण है।

10.82 इन समीकरणो को वास्तविक रूप से हल करने मे निम्नांकित कठिनाइयाँ हैं—

(1) ये समीकरण रेखिक नही हैं। $u\frac{\partial u}{\partial x}$, $v\frac{\partial v}{\partial y}$ आदि पद द्वि घातीय प्रवृत्ति रखते हैं। अरेखिक आंशिक डिफरेंशियल समीकरणो का हल प्राय क्लिष्ट होता है।

(2) जिन राशियो का मान इन समीकरणो से ज्ञात करना है, उनके परिमाण प्राय बहुत छोटे हैं, जिन्हे दो बडी राशियो के अन्तर से प्राप्त किया जाता है। उदाहरण के लिए, समीकरण

$$\frac{dv}{dt} + fu = -\frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial y},$$

म $\frac{dv}{dt}$ का मान (छोटा) $\left|-\frac{1}{\rho}\frac{\partial p}{\partial y}\right|$ से $|fu|$ को घटाने से प्राप्त होगा। ये दोनो राशियाँ अपेक्षाकृत बडे परिमाणो की ओर एक-दूसरे से लगभग बराबर हैं। इनका अन्तर स्पष्ट रूप से एक क्रम (order) छोटा होगा। अत इन बडी राशियो के माप, या आकलन म कोई त्रुटि होती है, तो $\frac{dv}{dt}$ के मान मे वह त्रुटि कम से कम 10 गुना होकर सम्मिलित होगी। अत बडी राशियो का परिमाण निर्धारित करने मे, अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता है, जो अगणित वायुमण्डलीय उच्चावचो तथा यान्त्रिक त्रुटियो के होत हुए प्राय सम्भव नही।

(3) उपर्युक्त समीकरणो की प्रकृति अत्यन्त व्यापक है। अत अन्य बहुत से विक्षोभ, जैसे ध्वनि तरंगें आदि भी, जो मौसम प्रणालियो पर कोई सार्थक प्रभाव उत्पन्न नही करते, इन समीकरणो के अन्तगत कम्प्यूटर द्वारा समाकलित हो जाते हैं। फलस्वरूप गणना के परिणाम वास्तविकता से बहुत अधिक विचलित हो जाते हैं। यह स्थिति परिकलनी (Computational) अस्थिरता कहलाती है। इस प्रभाव को दूर करने के लिए समीकरणो को इस प्रकार सशोधित करते है कि तीव्रगामी तरगें छन (filter-out) जाए। यह विधि फिल्टर प्रक्रम कहलाती है।

10.84 सख्यात्मक मौसम प्रागुक्ति का सरलतम उदाहरण

यह वह स्थिति है, जिसमे चरों की सख्या घटा कर न्यूनतम एक या दो कर दी जाए। इस स्थिति म भी चूँकि समीकरण की अरेखिकता विद्यमान रहती है, अत कम्प्यूटर तकनीक का उपयोग आवश्यक है।

इसके लिए भ्रमिलता समीकरण (vorticity equation) के सरलतम रूप पर विचार करते हैं, जो निम्नांकित है —

$$\frac{dZ_A}{dt} = 0\,,$$

अर्थात्, निरपेक्ष भ्रमिलता (Z_A) = स्थिरांक।

या $$\frac{\partial Z_A}{\partial t} + u\frac{\partial Z_A}{\partial x} + v\frac{\partial Z_A}{\partial y} = 0\,, \qquad (i)$$

जिसमे भ्रमिलता का ऊर्ध्वाधर पद छोड दिया गया है।

स्वाभाविकत वायु वेग के अवयव भू-व्यावर्ती अवयवों के समान लिए जा सकते हैं—

$$u = -\frac{g}{f}\frac{\partial z}{\partial y} \quad \text{तथा} \quad v = \frac{g}{f}\frac{\partial z}{\partial x} \qquad (ii)$$

अब $Z_A = Z + f$, जहाँ Z सापेक्षिक भ्रमिलता तथा f कोरियालिस प्राचल है।

$$Z_A = \frac{\partial v}{\partial x} - \frac{\partial u}{\partial y} + f = \frac{g}{f}\nabla^2 z + f$$

जहाँ, $$\Delta^2 = \frac{\partial^2}{\partial x^2} + \frac{\partial^2}{\partial y^2}$$

$$\frac{\partial Z_A}{\partial t} = \frac{g}{f}\nabla^2\left(\frac{\partial z}{\partial t}\right) \qquad (iii)$$

अत समीकरण (i) को निम्नांकित रूप मे लिखा जा सकता है

$$\nabla^2\frac{\partial z}{\partial t} = -J\,(z,\, g f^{-1}\nabla^2 z + f) \qquad (iv)$$

जहाँ, $$J\,(F_1, F_2) = \frac{\partial F_1}{\partial x}\frac{\partial F_2}{\partial y} - \frac{\partial F_1}{\partial y}\frac{\partial F_2}{\partial x}$$

समीकरण (iv) मे केवल एक अचर z (कंटूर-तुंगता) है। यदि तुंगता प्रवृत्ति $\frac{\partial z}{\partial t}$ को I तथा समीकरण के दाएँ पक्ष को $F(x, y)$ से प्रदर्शित करें तो

$$\Delta^2 I = F(x,\ y) \qquad (v)$$

जहाँ F (x, y) एक ज्ञात फलन है, क्योंकि प्रेक्षणों की सहायता से इसकी गणना की जा सकती है। समीकरण (v) प्वायसन का मानक समीकरण $\nabla^2 I$ के मानों के लिए किसी क्षेत्र पर I का मान श्रान्ति विधि से निर्धारित किया जा सकता है, किन्तु इसके लिए आवश्यक है कि क्षेत्र की सीमाओं पर I का प्रारम्भिक मान पहले से ज्ञात हो।

10 85 संख्यात्मक हल के लिए $\nabla^2 I$ को पहले अन्तर (difference) समीकरण के रूप में रखते हैं। इसके लिए बिन्दु 0 के चारों ओर चित्र (10 13) के ग्रिड पर विचार कीजिए।

$$\text{बिन्दु 0 पर, } \frac{\partial^2 I}{\partial x^2} = \frac{\left(\frac{\partial I}{\partial x}\right)_a - \left(\frac{\partial I}{\partial x}\right)_c}{h}$$

$$= \frac{1}{h}\left[\frac{I_1 - I_0}{h} - \frac{I_0 - I_3}{h}\right]$$

$$= \frac{I_1 + I_3 - 2I_0}{h^2}$$

$$\text{इसी प्रकार बिन्दु 0 पर, } \frac{\partial^2 I}{\partial y^2} = \frac{I_2 + I_4 - 2I_0}{h^2}$$

$$\nabla^2 I = \frac{\partial^2 I}{\partial x^2} + \frac{\partial^2 I}{\partial y^2} = \frac{I_1 + I_3 + I_2 + I_4 - 4I_0}{h^2}$$

$$= \frac{4(\bar{I} - I_0)}{h^2}$$

जहाँ, $\bar{I} = \frac{I_1 + I_2 + I_3 + I_4}{4}$

10 86 समीकरण (v) को व्यवस्थित रूप से हल करने के लिए निम्नांकित विधि अपनाना उपयुक्त है

(1) एक विश्लेषित कन्टूर मानचित्र में समान दूरी पर स्थित बिन्दुओं का ग्रिड बना लीजिए। प्राय 500 मिलीबार का दाब पृष्ठ इसके लिए अधिक उपयुक्त होता है। किन्तु अन्य दाब स्तर पर भी यदि वहाँ अपसरण क्षेत्र नगण्य हो यह विधि लागू की जा सकती है। कन्टूर तुंगता के मानों (z) द्वारा परिमित अन्तर (finite difference) सूत्र $\nabla^2 z = \frac{4(\bar{z} - z)}{h}$ द्वारा $\nabla^2 z$ के मान की गणना कर लीजिए।

(2) निरपेक्ष भ्रमिलता Z_A की गणना सूत्र, $Z_A = \frac{g}{f}\nabla^2 z + f$, की सहायता कर लीजिए। विभिन्न ग्रिड बिन्दुओं पर Z_A का मान अंकित करके सम रेखाओं द्वारा उसका विश्लेषण कर लीजिए।

(3) भ्रमिलता प्रवृत्ति $\frac{\partial Z}{\partial t}$ का मान ज्ञात करने के लिए Z_A की सम-रेखाओं को भू-व्यावर्ती गति से कन्टूर रेखाओं की दिशा में उतनी दूर तक अभिवहित कीजिए, जितनी दूरी, ($\triangle t$) (मान लीजिए 3 घण्टे) समय में वायु कण तय करेंगे। इस प्रकार हमें प्रागुक्त Z_A का क्षेत्र प्राप्त हो जाएगा। उपर्युक्त विधि को गणितीय सूत्र

$$\frac{\partial Z}{\partial t} = -\left(u\frac{\partial Z_A}{\partial x} + v\frac{\partial Z_A}{\partial y} \right) = -\vec{V}\ \nabla Z_A$$

द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

(4) प्रागुक्त और प्रारम्भिक Z_A क्षेत्र के अन्तर से सापेक्ष भ्रमिलता का परिवर्तन $\triangle Z$ की गुणना प्रत्येक ग्रिड बिन्दु के लिए की जा सकती है।

Z_A के मानों को $\frac{f}{g}$ से गुणा करने पर $\nabla^2 \frac{\partial z}{\partial t}$ या $\nabla^2 I$ का मान ज्ञात हो जाएगा।

(5) $\nabla^2 I$ के क्षेत्र से I का मान ज्ञात करने के लिए, सख्यात्मक समाकलन की अनेक विधियाँ प्रयुक्त की जा सकती हैं। एक विधि श्रान्ति की है, जो प्रायः प्रयोग में लाई जाती है।

(6) I के मान द्वारा किसी समयान्तर ∂t के लिए ऊँचाई का परिवर्तन ∂z ज्ञात किया जा सकता है। प्रारम्भिक कन्टूर ऊँचाइयों में प्रत्येक ग्रिड बिन्दु पर ∂z का मान जोड़ने से, नया कन्टूर प्रतिरूप, अर्थात् प्रागुक्त प्रतिरूप मिल जाता है। इससे भी आगे $2\delta t$ समय के लिए प्रागुक्त प्रतिरूप ज्ञात करने के लिए δt समय के उपरान्त प्राप्त प्रतिरूप को प्रारम्भिक क्षेत्र मान लिया जाता है और उपर्युक्त प्रक्रम पुनः दोहराया जाता है। उत्तरोत्तर समाकलन की यह विधि तब तक दुहराते रहते हैं जब तक कि पूर्वानुमान की अवधि के अन्त का कन्टूर-प्रति रूप न प्राप्त हो जाए।

10 90 व्यवहारिक उदाहरण के लिए भारतीय क्षेत्रों को प्रभावित करने वाली कुछ विशिष्ट मौसम घटनाओं का विवरण समकालीन चार्टों की सहायता से नीचे दिया गया है —

10 91 पश्चिमी विक्षोभ–एक स्थिति अध्ययन

नवम्बर से मई तक के महीनों में कुछ निम्नदाब क्षेत्र एक शृंखलाबद्ध रूप में अपने पश्चिम से पूर्व की ओर यात्रा के दौरान उत्तर और मध्य भारत को प्रभावित करते हैं।

यही निम्नदाब इन क्षेत्रों में सर्दियों की वर्षा के प्रमुख कारण हैं। ये निम्नदाब भू मध्य तथा केस्पियन सागरों में उत्पन्न वाताग्र अवदाबों या उनके द्वितीयकों द्वारा प्रेरित होते हैं जो अपेक्षाकृत दक्षिणी पथ का अनुसरण करते हुए उत्तरी पश्चिमी सीमा से भारत में प्रवेश करते हैं। सांख्यिकी माध्य के अनुसार इसकी मासिक संख्या नवम्बर से मई तक के महीनों में क्रमश 2 4,5,5,5,5 तथा 2 है। ये प्रणालियाँ भारत में पश्चिमी विक्षोभ कहलाती हैं।

पश्चिमी विक्षोभ वाताग्र प्रकृति की प्रणाली होती है जिसमें उष्ण वाताग्र प्राय अधिधारित होता है और धरातलीय मौसम चार्ट पर अंकित नहीं हो पाता। भारतीय क्षेत्र पर ये विक्षोभ निम्नांकित दाब प्रणालियों के रूप में प्राय देखे जाते हैं —

(1) धरातलीय अवदाब या निम्नदाब–जिससे पर्याप्त ऊँचाई तक उच्चतर चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका सम्बन्धित होती है।

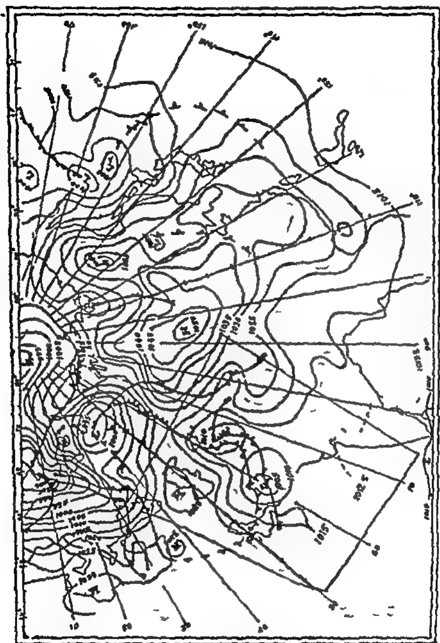
(2) धरातलीय निम्नदाब–जिससे उच्चतर वायु द्रोणिका सम्बन्धित नहीं होती।

(3) उच्चतर वायु चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका।

इन विक्षोभों से वर्षा या तुषार प्राय पहले जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश को प्राप्त होती है। तत्पश्चात् शृंखलाबद्ध रूप में पंजाब, हरियाणा पूर्वी राजस्थान तथा पश्चिमी उत्तर-प्रदेश प्रभावित होते हैं। इसके बाद यदि विक्षोभ की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक दक्षिण में है तो मध्य-प्रदेश में वर्षा आरम्भ हो जाती है अन्यथा वर्षा की पेटिका क्रमश पूर्वी उत्तर-प्रदेश बिहार, उड़ीसा पश्चिमी बंगाल तथा आसाम पर से गुजरती जाती है। इन क्षेत्रों का कितना भाग किसी विक्षोभ से प्रभावित होता है, यह प्राय विक्षोभ की तीव्रता तथा गति की दिशा पर निर्भर करती है। जो विक्षोभ केवल उच्चतर वायु द्रोणिका के रूप में प्रवेश करते हैं तथा उत्तर पूर्व की ओर बढते हैं प्राय जम्मू-कश्मीर में हल्की वर्षा या तुषार उत्पन्न करने के बाद हिमालय की शृंखलाओं में खो जाते हैं।

उदाहरण—उपर्युक्त व्याख्या के स्पष्टीकरण के लिए पश्चिमी विक्षोभ की एक वास्तविक स्थिति का अध्ययन निम्नांकित है। यह विक्षोभ न से बाहर एक अवदाब के रूप में विकसित हुआ और 1967 के में भारतीय उपमहाद्वीप के ऊपर सक्रिय रहा।

23 दिसम्बर को 40° पूर्व
पश्चिमी प्रवाह में अत्यन्त गम्भीर द्रो 5
धरातलीय चार्ट पर
प्रणाली की पूर्वी दिशा
अवदाब 24 घंटों तक
एक प्रेरित निम्नदाब



चित्र (10.14)
25 दिसम्बर 1967

यही निम्नदाब इन क्षेत्रों में सर्दियों की वर्षा के प्रमुख कारण हैं। ये निम्नदाब भू मध्य तथा केस्पियन सागरों में उत्पन्न वाताग्र अवदाबों या उनके द्वितीयकों द्वारा प्रेरित होते हैं, जो अपेक्षाकृत दक्षिणी पथ का अनुसरण करते हुए उत्तरी पश्चिमी सीमा से भारत में प्रवेश करते हैं। सांख्यिकी माध्य के अनुसार इसकी मासिक संख्या नवम्बर से मई तक के महीनों में क्रमशः 2 4,5,5,5,5 तथा 2 है। ये प्रणालियाँ भारत में पश्चिमी विक्षोभ कहलाती हैं।

पश्चिमी विक्षोभ वाताग्र प्रकृति की प्रणाली होती है, जिसमें उष्ण वाताग्र प्रायः अधिधारित होता है और धरातलीय मौसम चार्ट पर अंकित नहीं हो पाता। भारतीय क्षेत्र पर ये विक्षोभ निम्नांकित दाब प्रणालियों के रूप में प्रायः देखे जाते हैं —

(1) धरातलीय अवदाब या निम्नदाब–जिससे पर्याप्त ऊँचाई तक उच्चतर चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका सम्बन्धित होती है।

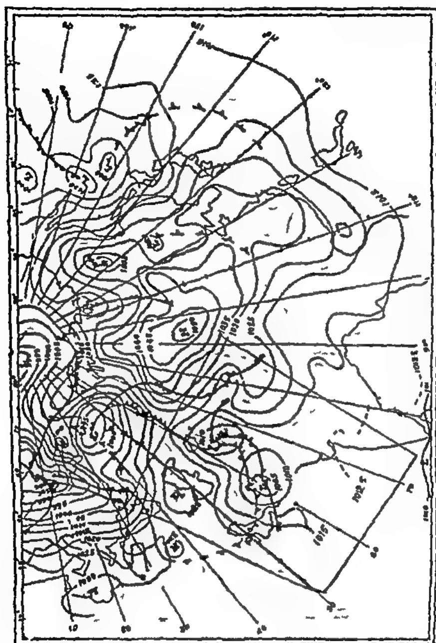
(2) धरातलीय निम्नदाब–जिससे उच्चतर वायु द्रोणिका सम्बन्धित नहीं होती।

(3) उच्चतर वायु चक्रवाती प्रवाह या द्रोणिका।

इन विक्षोभों से, वर्षा या तुषार, प्रायः पहले जम्मू और कश्मीर तथा हिमाचल प्रदेश को प्राप्त होती है। तत्पश्चात् श्रृंखलाबद्ध रूप में पंजाब, हरियाणा, पूर्वी राजस्थान तथा पश्चिमी उत्तर-प्रदेश प्रभावित होते हैं। इसके बाद यदि विक्षोभ की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक दक्षिण में है, तो मध्य-प्रदेश में वर्षा आरम्भ हो जाती है अन्यथा वर्षा की पेटिका क्रमशः पूर्वी उत्तर-प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल तथा आसाम पर से गुजरती जाती है। इन क्षेत्रों का कितना भाग किसी विक्षोभ से प्रभावित होता है, यह प्रायः विक्षोभ की तीव्रता तथा गति की दिशा पर निर्भर करती है। जो विक्षोभ केवल उच्चतर वायु द्रोणिका के रूप में प्रवेश करते हैं तथा उत्तर-पूर्व की ओर बढ़ते हैं प्रायः जम्मू-कश्मीर में हल्की वर्षा या तुषार उत्पन्न करने के बाद हिमालय की श्रृंखलाओं में खो जाते हैं।

उदाहरण—उपर्युक्त व्याख्या के स्पष्टीकरण के लिए, पश्चिमी विक्षोभ की एक वास्तविक स्थिति का अध्ययन निम्नांकित है। यह विक्षोभ भारतीय क्षेत्र से बाहर एक अवदाब के रूप में विकसित हुआ और दिसम्बर, 1967 के अंतिम सप्ताह में भारतीय उपमहाद्वीप के ऊपर सक्रिय रहा।

23 दिसम्बर को 40° पूर्वी देशान्तर के आस-पास रूस से दक्षिणी टर्की तक, उच्चतर पश्चिमी प्रवाह में अत्यन्त गम्भीर द्रोणिका विस्तृत थी। 45° से 55° पूर्वी देशान्तर के बीच धरातलीय चार्ट पर वाताग्र विक्षोभ द्रोणिका के अग्र भाग में उपस्थित था। फलतः इस प्रणाली की पूर्वी दिशा में गति के बीच पूर्वी ईरान पर एक अवदाब विकसित हुआ। यह अवदाब 24 घंटों तक स्थिर रहा। इससे 25 दिसम्बर के सुबह मेक्रान सिंध तट के पास एक प्रेरित निम्नदाब अभ्युदित हुआ। यह स्थिति चित्र (10 15) में दिखाई गई है।



चित्र (10 14)
25 दिसम्बर 1967



चित्र (नं 15)
23 दिसम्बर 1967

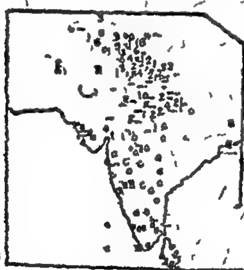


चित्र [10-18(a)]

26 दिसम्बर, 1967 प्रात 08 30 भारतीय मानक समय

26 की सुबह ईरान का अवदाब पाकिस्तान तथा सम्बद्ध राजस्थान तक पहुँच गया। 03 जी० एम० टी० के धरातलीय चार्ट में इसका केन्द्र सक्खरपुर के पास निर्धारित किया गया, चित्र (10 16a)। प्रेरित निम्नदाब अवदाब में विलीन हो गया, जिसके फलस्वरूप अवदाब का द्रोणिका गुजरात तक विस्तृत हो गई। केन्द्रीय दाब 1002 मिलीबार आकलित किया गया, जो सामान्य से 17 मिलीबार कम था। सम्बद्ध उच्चतर वायु-चक्रवाती प्रवाह तथा वायु द्रोणिका 200 मिलीबार स्तर तक विस्तृत पाए गए।

इस स्थिति में पाकिस्तान, उत्तर पश्चिमी भारत, गुजरात तथा कच्छ में दूर-दूर तक वर्षा उत्पन्न हुई, जिसका विवरण चित्र (10 16b) में दिया गया है। अगले 24 घण्टों में वर्षा पेटिका 83° पूर्वी देशान्तर तक फैल गई। पश्चिमी हिमालय की पहाड़ियों में भारी वर्षा हुई तथा दक्षिण में बम्बई तक भी हल्की वर्षा रिकार्ड की गई। अधिकतम वर्षा बनिहाल में 18 सेमी हुई। अवदाब प्रायः स्थिर रहा और 27 दिसम्बर से तेजी से क्षीण होना आरम्भ हो गया। यह विक्षोभ धरातलीय और उच्चतर वायुमण्डल में अत्यन्त प्रभावशाली रूप से विकसित था, जिससे व्यापक रूप से प्रभावित क्षेत्रों में वर्षा हुई, किन्तु इसका एक स्थान पर स्थिर होना और एकाएक क्षीण होने लगना एक असामान्य घटना थी। ऐसी विकसित प्रणालियाँ, पूर्व की ओर बढ़ती हुई प्रायः असम तक अच्छी वर्षा उत्पन्न करती हैं।



चित्र (10 16b)
अवदाब से सम्बद्ध वर्षा का आवंटन

पश्चिमी विक्षोभ के आगमन से पूर्व दाब का गिरना, पक्षाभ मेघों का अभ्युदय तथा रात्रि तापमान और ओसांक में वृद्धि का संकेत स्पष्ट मिलता है। कभी कभी एक से अधिक निम्नदाब क्षेत्र धरातलीय चार्ट पर बन जाते हैं, किन्तु ऐसे निम्नदाब प्रायः क्षीण होते हैं और अपने प्रभाव क्षेत्र में बहुत थोड़ा मौसम उत्पन्न कर पाते हैं।

10 92 काल वैशाखी या नारवेस्टर (Norwester)

भारत मे पूव मानसून काल (मार्च, अप्रैल और मई) मे उत्तरी-पूर्वी भारत, मुख्यत असम, बगाल और मेघालय तथा बगलादेश मे प्रचण्ड तडित झझा की घटनाएँ होती हैं जो सामान्यत वर्षा, स्क्वाल तथा ओलो से सबधित रहती हैं। झझाएँ प्राय, दोपहर के बाद और शाम के समय आती हैं, किन्तु असम मे इनका आक्रमण रात्रि मे भी पर्याप्त होता है। ये घटनाएँ काल वैशाखी या नारवेस्टर कहलाती है। नारवेस्टर कहलाने का कारण यह है कि अधिकाश झझाएँ प्रभावित स्थान पर उत्तर पश्चिम से पहुँचती हुई पाई जाती हैं। प्रति वष काल वैशाखी से उत्तर-पूव भारत तथा बगलादेश को पर्याप्त जन धन की हानि उठानी पडती है।

बगाल मे मार्च, अप्रैल तथा मई के लिये औसत काल वैशाखी की सख्या क्रमश 4, 8 और 12 है। दक्षिण पूर्व की ओर इनकी सख्या और तीव्रता दोनो बढती हैं।

तडित झझा की सरचना विशाल कपासी वर्षी से बनती है, जिसकी ऊँचाई प्राय 14 से 20 किमी तथा आधार 4 से 10 वग किमी पाया जाता है। यह प्रणाली पश्चिम से पूव की ओर गति करती है। यह गति 3 से 6 कि मी ऊँचाई के बीच की उच्चतर हवाओ द्वारा नियन्त्रित की जाती है। औसत गति 50 से 60 किमी प्रति घण्टे की आकलित की गई है। किसी स्टेशन पर तडित मेघ पहुँचने से पूव उसके द्वारा जनित स्क्वाल स्टेशन को प्रभावित करते हैं। स्क्वाल पहुँचने की गति प्राय 120 से 150 किमी प्रति घटा तथा कभी-कभी 200 किमी प्रति घण्टा पाई गई है। एक नारवेस्टर की स्थानीय प्रभावकारी अवधि 2 से 3 घण्टे के बीच होती है। आसाम और बगलादेश मे यह अवधि 4 से 5 घण्टे की पाई जाती है।

कपासी वर्षी मेघ के बीच विशालकाय मेघ राशियाँ रोल करती हुई ऊर्ध्वाधर दिशा मे विकसित होती हैं। विकासशील अवस्था मे ही तडित झझा तथा मूसलाधार वर्षा और कभी-कभी ओले भी उत्पन्न होते हैं। मानसून के अभ्युदय (जून) के बाद हिमाक स्तर बहुत ऊँचा उठ जाता है जिससे ओलो का बनना बहुत कम हो जाता है। मानसून अच्छी तरह स्थापित हो जाने के बाद काल वशाखी की घटनाएँ शनै-शनै समाप्त हो जाती हैं।

अधिकाश काल वैशाखिया छोटा नागपुर पठार मे विकसित होती ह। मध्य भारत पर स्थित निम्नदाब की द्रोणिका यहाँ सक्रिय रहती है, जिसके दक्षिणी प्रवाह मे बगाल की खाडी से आर्द्रता अभिवहित होकर बगाल के वायुमण्डल मे भरती जाती है। जब कभी भी उच्चदाब कोशिका उत्तरी बगाल की खाडी तथा तटवर्ती प्रदेशो पर विस्तृत होती है, तो आर्द्रता अभिवहित करने वाला प्रवाह और अधिक सक्रिय हो उठता है। यह आर्द्रता 2 किमी से निचले वायुमण्डल मे भरती जाती है, क्योकि इस स्तर से ऊपर स्थित निम्न क्षोभ मडलीय व्युत्क्रमण तहें, इसे और ऊपर उठने से रोकती हैं। कभी कभी गगा के मैदान से

गुजरने वाले पश्चिमी विक्षोभ भी आर्द्रता का अन्तर्वाह (Inflow) त्वरित करने मे सहायक होते हैं । छोटा नागपुर पठार मे पर्वतीय परिस्थितियाँ ट्रिगर क्रिया द्वारा आर्द्र हवाओं को अतिरिक्त आरोही गति प्रदान करती हैं, जो व्युत्क्रमण तह को तोडकर तेजी से विकसित होती हैं और कपासी वर्षा मेघ उत्पन्न कर देती हैं ।

झंझाओं के विकास के लिये, निम्न क्षोभ मण्डलीय व्युत्क्रमण का टूटना आवश्यक है । पर्वतीयकरणो के अलावा इसके लिये अन्य अनुकूल क्रियाविधियाँ निम्नांकित हैं —

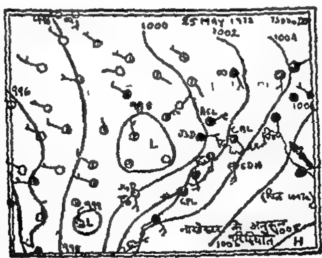
(1) किसी पश्चिमी विक्षोभ का आगमन—इस स्थिति मे कपासी वर्षा मेघ किसी भी समय जनित हो सकते हैं ।

(2) सौर ऊष्मन—चूँकि सौर-ऊष्मन दोपहर बाद अधिकतम होता है, अत इस क्रियाविधि द्वारा दोपहर या शाम को ही झंझा उत्पन्न होती है ।

(3) अवरोही वायु प्रवाह—आसाम तथा सलग्न पूर्वी भागो मे ट्रिगर क्रिया विधि उन अवरोही हवाओ द्वारा प्रदान की जाती है जो उत्तर तथा उत्तर पूर्व मे स्थित पहाडियो पर रात्रि तथा प्रभात वेला मे बहती हैं । ये हवाएँ आर्द्रता को व्युत्क्रमण तोडने के लिए यथेष्ट उत्थापन प्रदान करने की क्षमता रखती हैं ।

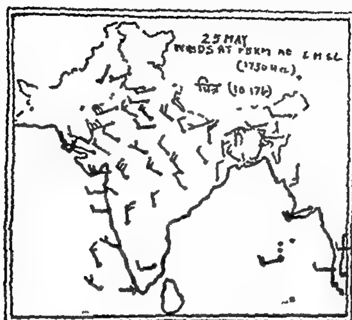
(4) कभी कभी, बिना किसी बाहरी यान्त्रिकत्व के आर्द्रता अभिवहन की अधिकता के कारण उत्पन्न यथेष्ट दवाव, व्युत्क्रमण तह को तोडने मे सफल हो जाता है ।

उदाहरण—25 मई, 1972 के दिन विकसित हुए एक प्रारूपिक (Typical) काल वैशाखी से सम्बन्धित समकालीन स्थितियाँ चित्र (10 17 a) मे दिखाई गई हैं । उत्तरी



धरातलीय चार्ट
चित्र (10 17 a)

पूर्वी मध्य प्रदेश पर स्थित निम्नदाब तथा उसके पूर्वी भागों में द्रोणिका से सम्बन्धित प्रवाह में आर्द्रता का तीव्र अभिवहन स्पष्ट है। इस दिन पश्चिमी बंगाल के मैदानी भागो मे



चित्र (10 17 b)

व्यापक रूप से तड़ित झंझा की घटनाएँ हुई, जो बाद मे बंगलादेश तथा अन्य पूर्वी-प्रदेशो मे अग्रसर होती गई।

10 93 शीत तरंग (Cold Wave)

सर्दी के महीनो मे पश्चिमी विक्षोभो के ठीक पीछे अर्थात् शीत वाताग्र के पृष्ठ भाग मे बहती अत्यन्त शीतल हवाएँ उत्तरी भारत पर शीत तरंग के रूप मे प्रवाहित होती है। मौसम वैज्ञानिक धारणा के अनुसार "शीत तरंग" शब्द तब प्रयुक्त होता है, जब सर्दियो मे निम्नतम तापमान, सामान्य से कम से कम 6°C नीचे आ जाए। विचलन 8°C या अधिक होने पर शीत तरंग प्रखर (severe) कहलाती है। शीत तरंग उत्पन्न होने का एक अनिवार्य प्रतिबन्ध यह है कि पश्चिमी विक्षोभ के पृष्ठ भाग मे कोई अन्य विक्षोभ उपस्थित न हो, क्योकि इस स्थिति मे पृष्ठ भाग के विक्षोभ के उष्ण सेक्टर मे बहती गर्म हवाएँ, तापमान ह्रास को बहुत कम कर देती हैं। जम्मू कश्मीर तथा पश्चिमी हिमालय की पहाडियो मे होने वाले व्यापक तुषारपात भी उत्तरी रेखांशिक (मिरीडियानल) प्रवाह के अन्तर्गत शीत-तरगें जनित कर देती हैं।

22 जनवरी से 29 जनवरी 1964 के मध्य समूचा उत्तरी भारत, विशेषत उत्तरी-पश्चिमी भाग शीत तरगों तथा प्रखर शीत तरगो से प्रभावित रहा। क्षेत्रो के अनुसार इनका दैनिक विवरण निम्नांकित सारणी मे दिया गया है —

दिनांक (जनवरी) 64 / क्षेत्र	22	23	24	25	26	27	28	29
पश्चिमी राजस्थान	सा	प्र	सा	सा	सा/प्र	—	—	—
पूर्वी राजस्थान	—	सा	सा	—	सा/प्र	सा	सा	सा
गुजरात और सौराष्ट्र	—	सा/प्र	प्र	सा/प्र	सा/प्र	—	—	—
पंजाब और हरियाणा	—	सा	सा	सा	सा	सा/प्र	सा	सा
पश्चिमी मध्य प्रदेश	—	—	—	—	सा	सा/प्र	सा	सा
उत्तर प्रदेश	—	—	—	—	सा	सा/प्र	—	—
बिहार और बंगाल	—	—	—	—	—	सा	—	—

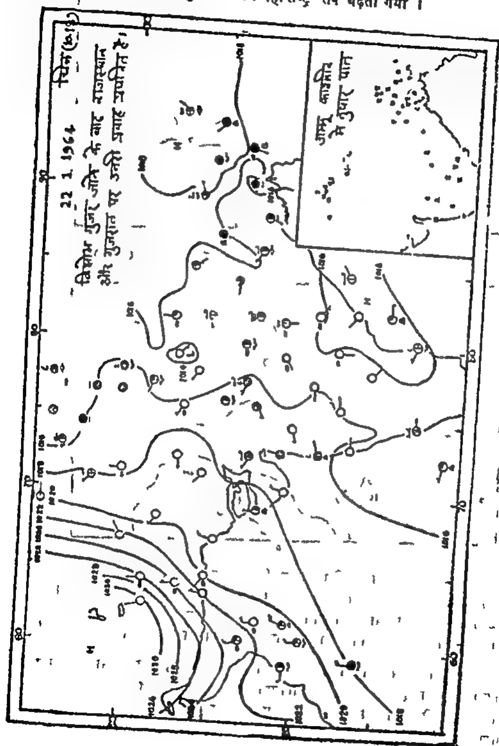
सा = साधारण शीत तरंग तथा प्र = प्रखर शीत तरंग

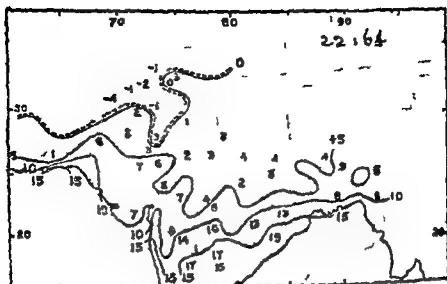
21 जनवरी को पंजाब पर एक पश्चिमी विक्षोभ स्थिर था, जिसके प्रभाव में राजस्थान पर एक प्रेरित निम्नदाब क्षेत्र भी उत्पन्न हो गया था। 22 तारीख तक विक्षोभ पश्चिमी हिमालय तथा प्रेरित निम्न दाब दक्षिणी पश्चिमी उत्तर प्रदेश की ओर बढ़ गया। फलस्वरूप पश्चिमी हिमालय की पहाड़ियों में व्यापक तुषारपात और वर्षा हुई। दाब प्रणालियों के हट जाने से राजस्थान और गुजरात पर उत्तरी पश्चिमी प्रवाह स्थापित हो



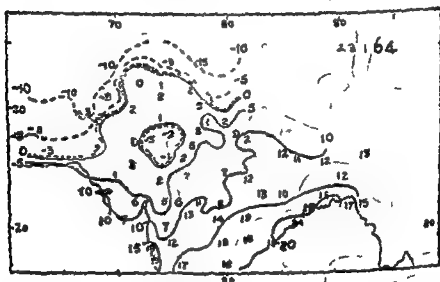
चित्र (10 19)

गया, चित्र (10 18)। इस प्रवाह के अधीन सम्पूर्ण राजस्थान पर शीत तरंगें छा गई, जिनका फैलाव शीघ्र ही गुजरात और महाराष्ट्र तक बढ़ता गया।



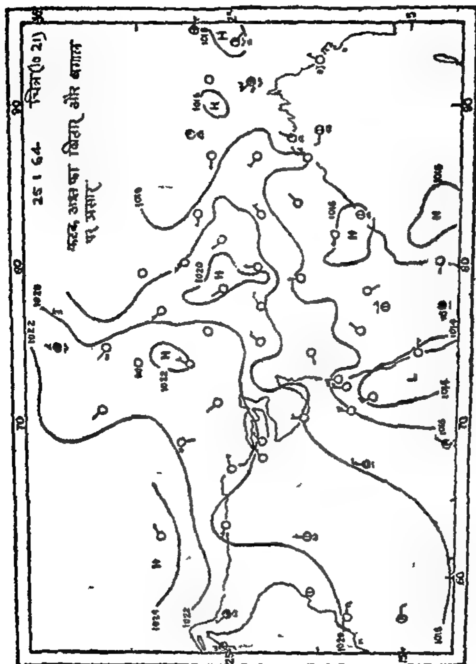


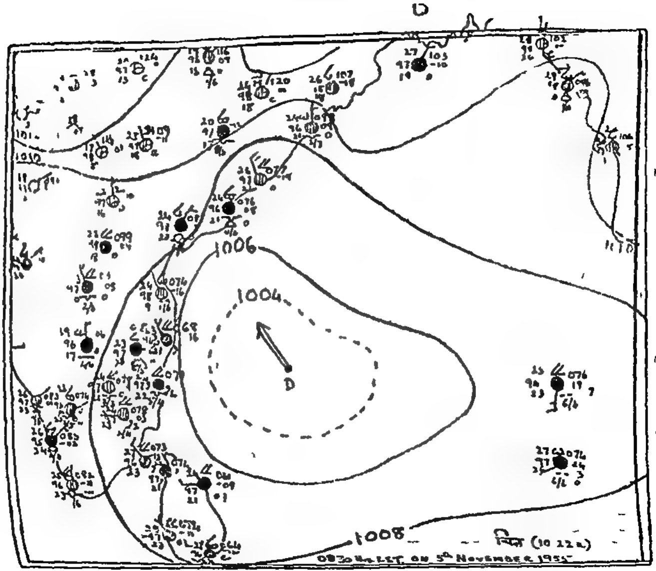
निम्नतम तापमान का आकलन चित्र (10 20)



पश्चिमी उत्तर प्रदेश पर स्थित कूटक, जिसके प्रभाव मे शीत तरगें बह रही थीं, 25 जनवरी तक बिहार और पश्चिमी बगाल (ridge) तक स्थापित हो गया चित्र (10 21)। इससे ठण्डी हवाओं का अभिवहन उत्तर-प्रदेश तथा और पूर्वी भागो तक बढ़ता गया। इन क्षेत्रो पर अगले तीन दिनो तक तापमान का गिरना जारी रहा।

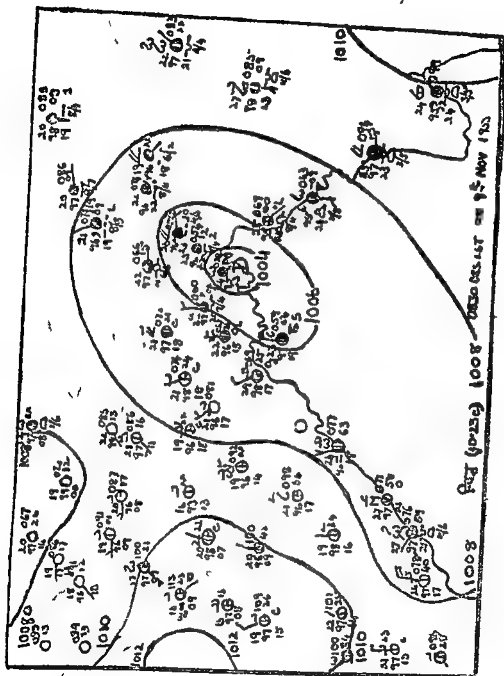
चूँकि कोई अन्य प्रभावशाली दाब प्रणाली अनुपस्थित थी, अत रेखाशिक प्रवाह कई दिनो तक यथावत् रहा। फलस्वरूप तापमान की पुन वृद्धि बहुत धीमी गति से हो पाई। 27 जनवरी के बाद ही शीत तरगों का प्रभाव उत्तरी-पश्चिमी भारत और गुजरात मे क्षीण होना आरम्भ हो सका।

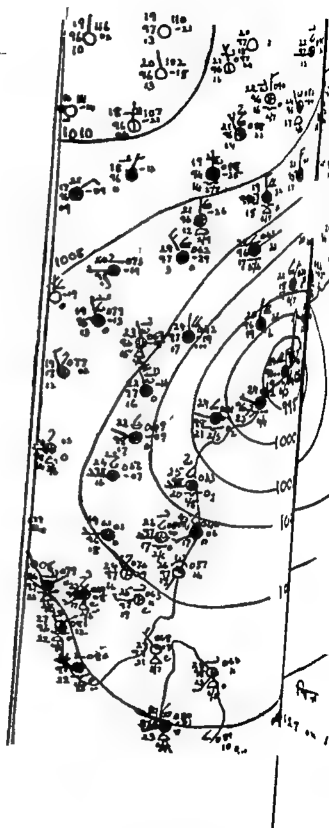

चित्र (10 21)
25 1 64
H
L
1024
1022
1020
1016
1014
1018
70
80
90
60



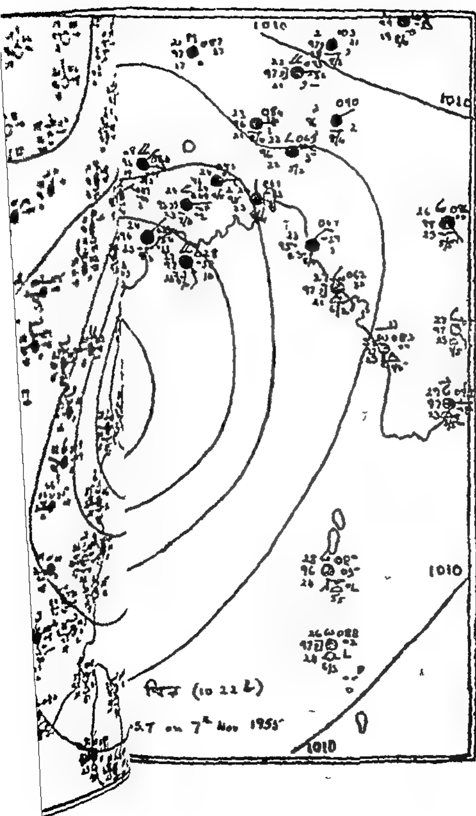
चित्र (10.22 a)

0830 hrs IST on 5th November 1955


1010
1008
1006
1004
1012



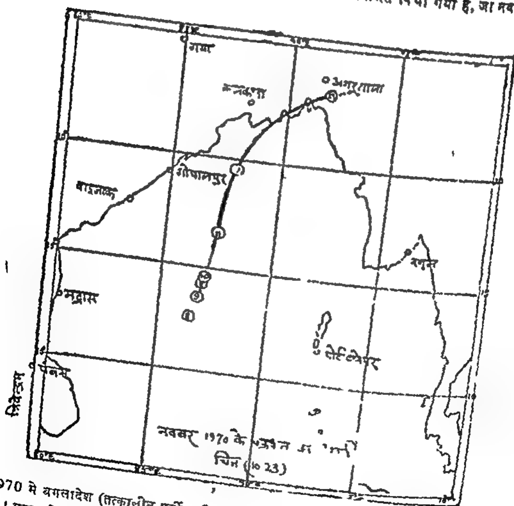
1010
1005


1010
1010
1010
1010
चित्र (10 22 b)
S.T on 7th Nov 1955

10 94 उत्तर मानसून काल का चक्रवाती तूफान

3 नवम्बर, 1955 को दक्षिणी-पश्चिमी खाड़ी में एक निम्नदाब क्षेत्र विकसित हुआ, जो पश्चिम की ओर अपनी गति के दौरान 5 नवम्बर की सुबह अवदाब और उसके तुरन्त बाद तीव्रता के चक्रवात म संवर्धित हो गया । तत्पश्चात् उत्तरी दिशा की ओर गति करता हुआ 7 नवम्बर की सुबह चक्रवात विशाखापट्टनम म तट से टकरा गया और फिर उत्तर पूर्व की ओर मुड़ कर तटीय रेखा के समान्तर चलता हुआ, 9 नवम्बर, को बंगला देश के दक्षिणी भागो पर केन्द्रित हुआ । इस मार्ग परिवर्तन के कारण, उच्चतर वायु मण्डल मे बहती पश्चिमी प्रवाह का अपरूपण प्रभाव (Shearty effect) निर्धारित किया गया । चक्रवात की कुछ मुख्य स्थितियाँ चित्र (10 22 (a, b, c) म दिए गए समकालीन धरातलीय चार्टों मे प्रदर्शित की गई है ।

चित्र (10 23) म उस प्रचण्ड चक्रवात का मार्ग प्रदर्शित किया गया है, जो नवम्बर,



चित्र (10 23)

1970 मे बंगलादेश (तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान) म अभूतपूर्व विनाश का कारण बन गया था । सरकारी अनुमानो के अनुसार, 2 लाख नागरिको के प्राण गए । इस चक्रवात का आरम्भ

5 नवम्बर 1970 को दक्षिणी खाड़ी मे एक निम्नदाब के रूप मे हुआ, जो 7 नवम्बर को मद्रास से 800 किमी दक्षिण-पूर्व मे एक अवदाब के रूप मे केन्द्रित था। 10 नवम्बर को यह प्रचण्ड चक्रवात बनकर उत्तर-पूर्व की ओर मुड गया। 12 नवम्बर को चक्रवात कलकत्ता से ठीक 300 किमी दक्षिण मे स्थित था। तत्पश्चात् चक्रवात उत्तर-पूर्व के मार्ग पर बढ़ता हुआ, उसी रात्रि मे चिटगाग तट से टकराया। तट पार करने के बाद चक्रवात बहुत तेजी से क्षीण होता गया तथा अगले 24 घण्टों मे ही गौण हो गया। बगला देश मे 15 छोटे-छोटे द्वीपो की आबादी टाइडल प्रवाह मे पूर्णतया बह गई।

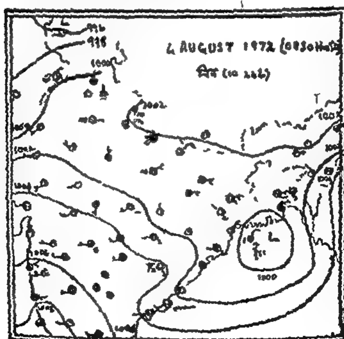
10.95 मानसून अवदाब

31 जुलाई, 1972 की शाम को समकालीन धरातलीय चार्ट पर उत्तरी-पश्चिमी खाड़ी मे एक निम्न दाब की द्रोणिका उत्पन्न हुई। इसी समय, पूर्वी बर्मा पर एक निम्न-दाब क्षेत्र पश्चिम की ओर अग्रसर हो रहा था। इसके प्रभाव मे 4 अगस्त की सुबह द्रोणिका एक सुस्पष्ट निम्नदाब म सवर्धित हो गई। यह निम्नदाब प्राय उत्तर की ओर अग्रसर हुआ तथा भूमि पर आ जाने के बाद 5 अगस्त की शाम को अवदाब बन गया। यह उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ता और सवर्धित होता रहा। 8 अगस्त के सायकालीन धरातलीय चार्ट पर यह गम्भीर अवदाब के रूप मे दक्षिण उत्तर प्रदेश तथा 9 अगस्त के प्रात काल पूर्वी राजस्थान की पूर्वी सीमा पर केन्द्रित था। यहाँ से यह उत्तर की ओर मुडा और बहुत धीमी गति से बढ़ता हुआ क्षीण होता गया तथा 13 अगस्त की शाम का मौसमी निम्नदाब मे विलीन होकर समाप्त हो गया।

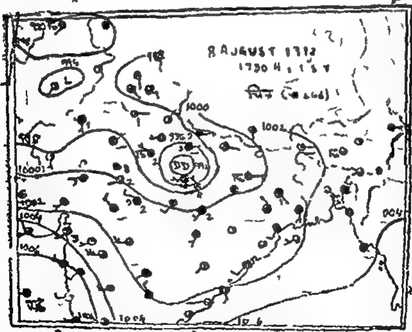
इस अवदाब स उत्तरी भारत तथा राजस्थान म व्यापक रूप से भारी वर्षा हुई और दक्षिणी-पश्चिमी मानसून, जो पर्याप्त समय से अवरुद्ध था, पुन त्वरित हो उठा।

इस अवदाब प्रणाली से प्राय 7 किमी ऊँचाई तक उच्चतर चक्रवाती प्रवाह सम्बद्ध था। विभिन्न स्थितियो के मौसम मानचित्र चित्र (10.24 a, b, c, d, e) मे दिए गए हैं।


31 July 1972

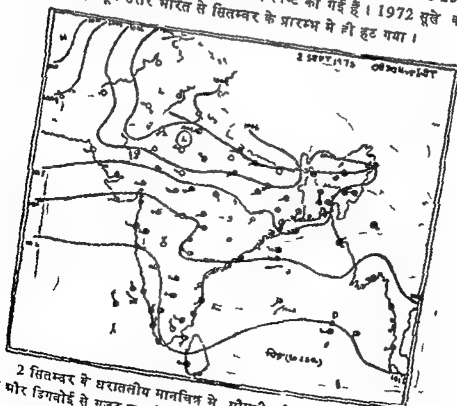

4 AUGUST 1972


6 AUGUST 1972
1730 Hrs I.S.T
चित्र (10.24a)
1000

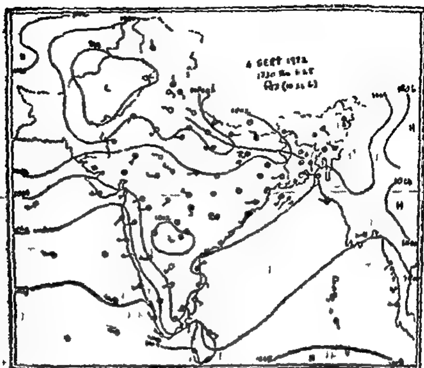

8 AUGUST 1972
1730 Hrs I.S.T
चित्र (10.24b)
1000
DD

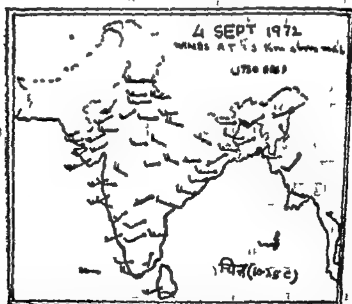


10 96 रुद्ध मानसून परिस्थितियों का एक उदाहरण—(चित्र 10 25) मे दिए गए समकालीन मानचित्रो मे ये परिस्थितिया स्पष्ट की गई हैं। 1972 सूखे का वर्ष था, जिसमे मानसून पूरे उत्तर भारत से सितम्बर के प्रारम्भ मे ही हट गया।



2 सितम्बर के धरातलीय मानचित्र मे मौसमी द्रोणिका का अक्ष श्रीगंगानगर, रुड़की और डिगबोई से गुजर रहा है। स्पष्टत यह अब हिमालय की शृंखलाओं के समांतर





स्थित है। 4 सितम्बर के मानचित्र में यह अक्ष नीचे की ओर झुक गया है। यह झुकाव मानसून की अनुकूलता का परिचायक है, किन्तु इसी दिन के 850 मिलीबार का वायु प्रवाह, जिसमें द्रोणिका अत्यधिक क्षीण है, मानसून विकास के लिए बहुत प्रतिकूल परिस्थिति है। इन दिनों उत्तरी भारत पर कुछ पश्चाम मेघों के अलावा कोई मौसम नहीं रिकार्ड किया गया।

11

जलवायु के तत्त्व

(Element of Climate)

11 10 मौसम और जलवायु के तत्त्व

एक स्थान पर किसी समय की वायुमण्डलीय अवस्था अर्थात् मौसम की व्याख्या अनेक तत्त्वो के संयुक्त प्रभावो द्वारा की जाती है। मुख्य प्रारम्भिक तत्त्व ये हैं —(1) वायुदाब, (2) तापमान, (3) आर्द्रता तथा वर्षा और (4) सौर प्रकाश की अवधि। ये मौसम और जलवायु के तत्त्व कहलाते हैं। इनका तात्कालिक संयुक्त प्रभाव मौसम कहलाता है, जबकि किसी स्थान की जलवायु वहां के दिन प्रतिदिन की मौसम दशाओ का संयुक्त (Composiae) रूप है, जो एक लम्बी अवधि के जलवायु तत्त्वो के औसतीकरण से निश्चित किया जाता है।

मौसम और जलवायु के तत्त्वो का स्थान के साथ परिवर्तन, मुख्य रूप से भौगोलिक और वायुमण्डल के भौतिक कारणो पर निर्भर करता है। ये कारण ही इन तत्त्वो को नियन्त्रित करते हैं अत जलवायु के नियन्त्रक कहलाते हैं। जलवायु के प्रमुख नियन्त्रक निम्नांकित हैं —

(1) सूर्य या अक्षांश
(2) तुङ्गता (Altitude)
(3) स्थायिवत् निम्न और उच्चदाब पेटियाँ (Semi permanent low and high pressure belts)
(4) हवाएँ
(5) वायु राशियाँ
(6) जल और थल का आवंटन
(7) पर्वत शृङ्खलाएँ
(8) महासागरीय धाराएँ
(9) अवदाब और तूफान (Depressions and storms)

11 11 किसी स्थान का अक्षांश उसकी ऊँचाई तथा स्थानीय प्रभाव मिलकर, उस स्थान को प्राप्त होने वाली सौर ऊष्मा व प्रकाश की तीव्रता तथा अवधि निर्धारित करते हैं, प्राप्त ऊष्मा की मात्रा पर मेघाच्छन्नता तथा वायु राशियो द्वारा अभिवहन का भी प्रभाव पड़ता है। किन्तु मेघाच्छन्नता तथा वायु प्रवाह की अनिश्चितता के कारण इनके प्रभावो को नियमबद्ध नहीं किया जा सकता।

एक क्षण के लिए यदि वायुमण्डल को अनुपस्थित मान लिया जाए, तो पृथ्वीतल के किसी भाग द्वारा प्राप्त की गई सौर ऊर्जा निम्नांकित दो बातो पर निर्भर करती है —

(1) सौर विकिरण की तीव्रता या वह कोण जिस पर सौर विकिरण पृथ्वी की सतह पर पहुँचता है और (2) सौर विकिरण की अवधि अथवा दिन की लम्बाई । ये दोनो बातें स्थान विशेष के अक्षांश पर निर्भर करती हैं । सौर विकिरण की तीव्रता अधिकतम उस अक्षांश पर होती है, जिस पर सूर्य की किरणें लम्बवत् पडती हैं । इसके दो कारण हैं—एक तो किरणो का पुन्ज कम बिखरने के कारण न्यूनतम क्षेत्र पर पडता है, तथा दूसरे, लम्बवत् किरणें सबसे छोटे भाग पर चलने के कारण, वायुमण्डल की सबसे कम मोटी तह पार कर सतह तक पहुँच जाती हैं जिससे उनका अवशोषण, प्रकीर्णन तथा परावर्तन निम्नतम होता है । सर्दियो में जब सूर्य दूसरे गोलार्द्ध मे होता है, तो उसकी किरणें बहुत तिर्यक पडती हैं । यही कारण है कि सर्दियो मे सौर ऊष्मा की तीव्रता बहुत कम पाई जाती है ।

दिन की अवधि, गर्मियो मे अक्षांश के साथ बढती और सर्दियो मे घटती जाती है । अत गर्मियो मे उच्च अक्षांशों मे निम्न उन्नतांश के कारण, विकिरण प्राप्ति की कमी की पूर्ति, दिन की अपेक्षाकृत लम्बी अवधि, आंशिक रूप से करती है । कुछ उच्च अक्षांश के क्षेत्रो, जैसे कनाडा मे, कमजोर सौर प्रकाश के लम्बे दिनो के कारण, उन स्थानो की अपेक्षा बढिया फसल होती है, जहाँ तीव्र सौर किरणो से युक्त छोटे दिन होते हैं ।

11 12 विषुवत् रेखा पर आपाती सौर विकिरण का मान, वर्ष भर मे बहुत थोडा परिवर्तित होता है, क्योकि यहाँ दिन की अवधि प्राय 12 घण्टे की होती है तथा सूर्य ऊर्ध्वाधर से कभी भी बहुत अधिक विचलित नही होता है । अधिकतम विचलन $23\frac{1}{2}°$ का, अयनान्त दिवस (22 जून और 22 दिसम्बर) को पाया जाता है । विषुवो (equinoxes) पर जब सूर्य विषुवत् रेखा पर लम्बवत् पडता है सौर विकिरण का हल्का-सा उच्चतम पाया जाता है । अयनान्तो के दिन विषुवत् रेखा पर विकिरण निम्नतम होता है ।

उष्ण कटिबन्धो मे भी सौर विकिरण की उच्च मात्रा पाई जाती है, जिसका मौसमी चलन बहुत कम होता है । इस क्षेत्र के प्रत्येक स्थान पर सूर्य दो बार लम्बवत् गुजरता है, जिसके कारण विकिरण का वक्र वर्ष मे दो उच्चतम और दो निम्नतम प्रदर्शित करता है । उष्ण कटिबन्धो के उच्च तापमान का कारण सौर विकिरण की अधिक मात्रा ही है ।

शीतोष्ण कटिबन्धो मे विकिरण वक्र एक उच्चतम-ग्रीष्म अयनान्त के दिन और एक निम्नतम शीत अयनान्त के दिन, प्रस्तुत करता है । वास्तव मे एक उच्चतम और एक निम्नतम विकिरण की मात्रा मे अत्यधिक मौसमी चलन पाया जाता है, जो इन भागो के तापमान की प्रमुख विशेषता है ।

शीतोष्ण कटिबन्ध की भाँति ध्रुवीय अक्षांशो मे विकिरण वक्र वर्ष मे एक उच्चतम (ग्रीष्म अयनान्त के दिन) और एक निम्नतम (शीत अयनान्त के दिन) प्रदर्शित करता है, किन्तु इन अक्षांशो में वर्ष के कुछ समय मे सूर्य प्रकाश बिल्कुल अनुपस्थित हो जाता है ।

इस काल में आपतित सौर विकिरण की मात्रा शून्य रहती है। शून्य विकिरण की अवधि अक्षांशों के साथ बढ़ती जाती है, जो ध्रुवों पर अधिकतम (6 महिने की) होती है। ध्रुवों की ओर दिन की अवधि बढ़ती जाती है, जो ग्रीष्म ऋतु में कम उन्नतांश के प्रभाव को पराजित कर देती है। परिणामस्वरूप ग्रीष्म अयनान्त के दिन (21 जून) सौर विकिरण की मात्रा अक्षांशों के साथ बढ़ती जाती है और लगभग 44 अंश उत्तरी अक्षांश पर उच्च तम होती है। इससे पर 62° उत्तरी अक्षांश तक विकिरण की मात्रा कुछ घटती जाती है, क्योंकि दोनो प्रभावों का सापेक्ष मान विपरीत हो जाता है। फिर आर्कटिक वृत्त तक जहाँ दिन 24 घण्ट का होता है, और फिर उससे उच्च अक्षांशों पर दिन की अवधि का प्रभाव, निम्न उन्नतांश के प्रभाव पर पुनः भारी पड़ने लगता है, जिससे विकिरण का वक्र अक्षांशों के साथ पुनः बढ़ता है और ध्रुवों पर उच्चतम मान प्रदर्शित करता है, जो प्रायः विषुवत उच्चतमों से अधिक होता है। शीत अयनान्त के दिन ध्रुवों पर आपाती सौर विकिरण का मान शून्य होता है।

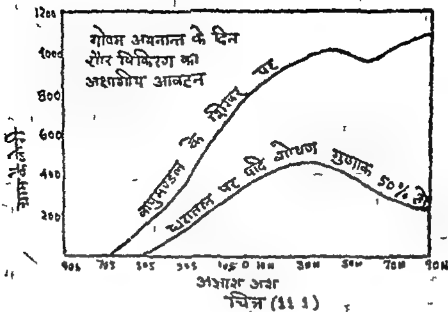
11.13 वायुमण्डल का प्रभाव

वायुमण्डल कुल आपतित विकिरण के एक बड़े भाग को शोषित, परावर्तित तथा प्रकीर्ण कर देता है जिसके कारण विकिरण की काफी कम मात्रा पृथ्वी की सतह तक आ पाती है। यह मात्रा दो बातों पर निर्भर करती है —

(1) वायु तह की मोटाई, जिससे होकर विकिरण सतह तक पहुँचता है। यह मोटाई उच्च अक्षांशो के लिए अधिक होती है क्योंकि उच्च अक्षांशीय वायुमण्डल से सौर किरणें बहुत तिर्यक अवस्था में गुजरती हैं। किसी स्थान के लिए वायुमण्डल के अन्दर किरणों द्वारा तय की गई यथार्थ दूरी की गणना की जा सकती है।

(2) वायु की पारदर्शकता (transparency) जो मेघाच्छन्नता, धूल, आर्द्रता आदि के अनुसार बदलती रहती है। स्वच्छ मौसम वाले ग्रीष्म अयनान्त के दिन जब सचरण गुणांक (Coefficient of Transmission) 0.5 के बराबर लिया जाता है, कुल आपतित सौर विकिरण का केवल 18% ही ध्रुवीय सतह पर पहुँच पाता है। इस स्थिति में अन्य अक्षांशों पर सतहों द्वारा प्राप्त सौर ऊष्मा की मात्रा चित्र (11.1) के निचले वक्र से प्रदर्शित की गई है, मेघाच्छन्न दिनों में शोषण की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाती है। यही कारण है कि विषुवत् रेखीय तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के चक्रवाती क्षत्रों में यह वक्र निम्नतम प्रदर्शित करता है।

11.14 कुल मिलाकर सौर विकिरण का जलवायु पर नियन्त्रण सर्वाधिक महत्व पूर्ण है जो वायुमण्डलीय प्रभाव के बावजूद मुख्यतः अक्षांशों के आधार पर ही आवर्तित होते हैं। विभिन्न जलवायु प्रकारों का अक्षांशों के आधार पर विभाजन इस प्रभाव की प्रमुखता का प्रमाण है। ये प्रकार कुछ सीमा तक ऊँचाई, जलीय आवंटन तथा अन्य भौतिक परिस्थितियों के कारण भी संशोधित होते रहते हैं।



चित्र (11 1)

11 15 वायुमण्डल का ऊष्मन तथा शीतलन

जैसा कि अध्याय 3 म स्पष्ट किया जा चुका है वायुमण्डल, लघु तरंगीय सौर विकिरणो के लिए अपेक्षाकृत पारदर्शी है। इस विकिरण का केवल 14% ही वायुमण्डलीय वाष्प कणो द्वारा शोषित हो पाता है। वाष्प कणो की सान्द्रता के कारण इस शोषण का आधा भाग 2 किमी से निम्न वायु तहो मे ही होता है। किन्तु यह ऊष्मा स्वत धरातलीय वायु तापमान स्थिर रखने के लिए बिल्कुल अपर्याप्त है। पृथ्वी की सतह, वायुमण्डल की अपेक्षा सौर विकिरण का अधिक शोषण करती है। सीधा विकिरण और प्रकीर्ण विकिरण दोनो मिलाकर वायुमण्डल के शीर्ष पर कुल आपतीत सौर विकिरण का लगभग 51% पृथ्वी द्वारा आत्मसात् कर लिया जाता है। फलस्वरूप दिन मे पृथ्वी की सतह सलग्न वायु तहो की अपेक्षा ऊष्ण होती है। सलग्न वायु तह सचालन द्वारा पृथ्वी स ऊष्मा प्राप्त कर गर्म हो जाती हैं। किन्तु हवा की कुचालकता के कारण यह ऊष्मा, ऊँचे तहो को अत्यन्त धीमी गति से ही स्थानान्तरित हो पाती है। जब वायु राशियो की क्षतिज तथा आरोही गति तीव्र हो, तो नई वायु राशियां तप्त सतह के सम्पर्क मे आकर ऊष्मा प्राप्त कर सकती हैं। इस प्रकार संचालन द्वारा वायुमण्डल का ऊष्मन, ग्रीष्म ऋतु के दिन के समय का प्रक्रम है, जो वायुमण्डलीय ऊष्मा सचार प्रक्रमों मे बहुत छोटी भूमिका निभाता है।

इसी प्रकार सर्दी की रातो मे विशेषत जब वायु धीमी और आकाश स्वच्छ हो, सचालन द्वारा धरातल के सम्पर्क मे वायु तहें शीतल होती जाती हैं, यह प्रभाव नमी की अनुकूल परिस्थितियो मे कुहरा, ओस तथा पाला उत्पन्न कर सकता है।

वायुमण्डल की ऊष्मा का मुख्य स्रोत, पृथ्वी द्वारा दीर्घ तरंगो मे किया गया विकिरण है। यह विकिरण मुख्यत वाष्प कणो द्वारा शोषित कर लिया जाता है। यही कारण

है कि मेघाच्छन्न रातें गर्म, तथा रेगिस्तानों की मेघ रहित रातें, प्राय शीतल होती हैं। वायुमण्डल द्वारा शोषण के बावजूद भू विकिरण का लगभग 20% भाग, वायुमण्डल से बाहर चला जाता है। विकिरण के शोषण के पश्चात् वायुमण्डलीय कण, स्वत दीर्घ तरंगों के रूप मे विकिरण जनित करते हैं, जिसका एक भाग अतरिक्ष में खो जाता है और दूसरा भाग वायुमण्डल की विभिन्न तहों तथा धरातल द्वारा शोषित कर लिया जाता है। शोषण और विकिरण का यह प्रक्रम, शृंखलाबद्ध रूप मे जारी रहता है, जिससे विकिरण धाराओं के अनन्त प्रवाह उत्पन्न हो जाते हैं। इसके सम्मिलित परिणामस्वरूप पृथ्वी की ऊष्मा शनैः शनैः घटती जाती है।

रात्रि मे जब सौर ऊष्मा अनुपस्थित होती है, पृथ्वी की सतह विकिरण द्वारा निरन्तर ऊष्मा खोती जाती है। इसे धरातल और फलस्वरूप सलग्न वायु तहों का तापमान गिरने लगता है। अपेक्षाकृत अधिक विकिरण होने के कारण धरातल सलग्न वायु तहों से अधिक ठंडा होता है। अत वायु उन्हें ठंड धरातल तथा ऊपर—दोनों ओर ऊष्मा का विकिरण करती हैं। यह प्रक्रम सर्दियों की लम्बी और स्वच्छ आकाश की रात्रि में विशेष प्रभावकारी होता है।

मेघाच्छन्न दिनों मे सम्पूर्ण भू-विकिरण मेघों के आधार तल द्वारा शोषित कर लिया जाता है। इन मेघों द्वारा पुन पृथ्वी की ओर विभिन्न तरंग दैर्घ्यों मे विकिरण प्रारम्भ हो जाता है, जिनमे वे तरंग दैर्घ्य भी शामिल होते हैं जो स्वच्छ आकाश में सामान्य वायुकणों से छन कर वायुमण्डल से बाहर चले गए होते हैं। फलत निम्न तहों में रात्रि शीतलन का प्रभाव बहुत कम हो जाता है।

इसके अतिरिक्त वायुमण्डलीय ऊष्मन अथवा शीतलन मे निम्नांकित प्रक्रम भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं —

(1) वायुराशि के प्रसार से शीतलन तथा सकुचन से ऊष्मन होता है। यह प्रसार या सकुचन ऊर्ध्वाधर गति के कारण हो सकता है। यह प्रक्रम रुद्धोष्म होता है।

(2) जल कणों के सघनन से उत्पन्न गुप्त ऊष्मा द्वारा, वायुमण्डल का ऊष्मन होता है। बड़े पैमाने पर सघनन वायुमडलीय ऊष्मा के लिए एक महत्त्वपूर्ण स्रोत बन सकता है क्योंकि यह ऊष्मा वास्तव में पृथ्वी तल के तीन चौथाई भाग मे स्थित सागर तलों पर पड़ने वाली सौर ऊष्मा है जो वाष्पीकरण द्वारा जलकणों मे निहित होकर वायुमडल को प्राप्त होती है।

(3) वायु राशियों के ऊर्ध्वाधर या क्षैतिज गति द्वारा, ऊष्मा का एक स्थान से दूसरे स्थान को स्थानान्तरण तथा अभिवहन। धरातलीय ऊष्मन के कारण गर्म वायु राशि, सवाहनिक धाराओं द्वारा ऊपर उठ जाती है तथा अपेक्षाकृत शीतल वायु राशि इसके स्थान पर आकर ऊष्मा प्राप्त करती है, जो स्वय गर्म होने के बाद उठ जाती है। इस प्रक्रम द्वारा वायुमडल को ऊष्मा प्राप्त होती रहती है।

वायु राशियाँ अपनी क्षतिज गति मे तापमान का अभिवहन करती हैं। उष्ण कटिबन्धीय वायु राशियाँ दक्षिणी प्रवाह के साथ उच्च अक्षांशों मे उच्च तापमान तथा ध्रुवीय हवाएं उत्तरी प्रवाह द्वारा निम्न अक्षांशों मे निम्न तापमान का अभिवहन करती हैं।

11 20 वायु तापमान

वायु तापमान, जलवायु का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व माना जाता है, जो उपयुक्त कारणो द्वारा नियन्त्रित होता है। किसी समय के तापमान का तात्पय उस वायु तापमान से है जिसका माप मानक दशाओं म सूय या अन्य उष्ण पदाथ के विकिरण द्वारा जनित त्रुटियो के लिए सावधानी रख कर लिया जाए। माध्य दैनिक तापमान वास्तव मे हर घण्टे पर लिए गए 24 तापमानो का औसत है, किन्तु सरलता के लिए 3 और 12 घडी जी एम टी (क्रमश 8 30 और 17 30 घडी भाई एस टी) पर लिए गये तापमानो या दैनिक उच्चतम तथा निम्नतम का औसत, माध्य दैनिक तापमान के रूप मे लिया जा सकता है। माध्य मासिक तापमान महीने भर के माध्य दैनिक तापमानो का साधारण औसत है तथा माध्य वार्षिक तापमान 365 दिनो के माध्य दैनिक तापमानो का साधारण औसत है। किन्तु सरलता के दृष्टिकोण से 12 महीनो क माध्य तापमान के औसत को ही माध्य वार्षिक तापमान मान लिया जाता है, जो लगभग वही परिणाम देता है। उष्णतम तथा शीतलतम महीनो के माध्य तापमानो का अन्तर, माध्य वार्षिक तापमान परिसर कहलाता है। किसी महीने के लिए माध्य उच्चतम तथा माध्य निम्नतम का अन्तर, माध्य दैनिक परिसर कहलाता है।

तापमान का भौगोलिक आवटन समताप रेखाओ (isotherms) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि उच्च स्थलो पर स्थित स्टेशनो के तापमानो को तुलनात्मक बनाने के लिए, उन्हे माध्य समुद्र तल पर वायु दाब की भांति अवतरित कर लिया जाए। समताप रेखाएँ अक्षांशीय तथा जल-थल आवटन के प्रभाव का सयुक्त रूप से निरूपण करती हैं।

किसी स्थान का औसत वायु तापमान जिन कारको पर निभर करता है, उनम ऊँचाई अक्षांश, समुद्र तट की दूरी, समुद्र का तापमान तथा स्थान का उद्भासन (exposure) मुख्य है। प्रति किमी ऊँचाई बढने पर तापमान मे लगभग 5 5°C का ह्रास होता है, जबकि प्रति अंश अक्षांश बढने पर तापमान ह्रास लगभग 0 75°C पाया जाता है। यद्यपि ये आकडे विभिन्न ऋतुओं तथा ससार के विभिन्न भागो के लिए बहुत परिवर्तनशील है, किन्तु इनस तापमान पर ऊँचाई क प्रभाव की प्रमुखता स्पष्ट है।

11 30 अन्य जलवायु तत्त्वो का सक्षिप्त विवरण निम्नांकित है —

11 30 वायुमण्डलीय आर्द्रता

यह वायुमडल मे उपस्थित जल वाष्प की मात्रा व्यक्त करती है। शुष्क और आर्द्र बल्ब तापमानो का अन्तर इसका एक मुख्य माप है। आर्द्रता की मात्रा वायु गति और तापमान के उच्चावच से अत्यधिक प्रभावित होती है। अत जलवायु विज्ञान के अध्ययन मे सापेक्ष आर्द्रता का मानचित्र बहुत ही कम प्रयुक्त होता है, इसके स्थान पर इसके परिणामी तत्त्वो, जैसे मेघाच्छन्नता तथा वर्षा का अध्ययन करना अधिक लाभप्रद पाया गया है।

जलवायु के लिए जलवाष्प का महत्त्व निम्नांकित कारणों से स्पष्ट है —

(1) यह वर्षा तथा अन्य वायुमण्डलीय घटनाओं का आधारभूत तत्व है। (2) भू विकिरण के अवशोषण के कारण तापमान नियन्त्रण में मुख्य भूमिका निभाता है। (3) वाष्प कणों में गुप्त ऊष्मा संग्रहीत रहती है, जो संघनन प्रक्रमों में प्रकट हो जाती है। यही ऊष्मा तूफानों, चक्रवातों तथा वायुमण्डल के अस्थायित्व का कारण बनती है। (4) यह सदैव तापमान पर प्रभाव डालती है तथा वायुमण्डल की आरामदायकता नियन्त्रित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

जल वाष्प का प्रमुख स्रोत सागरों से होने वाला वाष्पीकरण है। कुछ वाष्प नम भूमि तथा जलाशयों के वाष्पीकरण तथा वनस्पतियों के वाष्पोत्सर्जन से भी प्राप्त होती है। सामान्यतः महासागरों से होने वाला वाष्पीकरण महाद्वीपों के वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन से अधिक होता है, किन्तु 10°उ से 10°द अक्षांशों के बीच अधिक वर्षा तथा वनस्पतियों की सघनता के कारण महाद्वीपों से अधिक जल वाष्प वायुमण्डल को प्राप्त होता है।

प्राकृतिक हवा को ओसांक तक शीतल करने से संघनन (द्रव-रूप) तथा उससे और निम्न तापमान तक शीतल करने से उर्ध्वपातन (ठोस रूप) होता है। संघनन शीतलन की मात्रा तथा सापेक्ष आर्द्रता पर निर्भर करता है। भूमि तल के पास संघनन ओस, पाला तथा कुहरा जनित करते हैं, जबकि उच्चतर वायु तहों में रुद्धोष्म शीतलन के कारण संघनित जलकण, मेघ उत्पन्न करते हैं। कपासी समूह के मेघ प्रायः धरातलीय ऊष्मन के कारण जनित होते हैं। फलतः वे दोपहर बाद ही अधिकतम हो पाते हैं जबकि स्तरीय समूह के मेघों के लिए वायुमण्डल का स्थायित्व एक अनुकूल परिस्थिति है, जिससे उनका अधिकतम प्रभात में तथा निम्नतम दोपहर को पाया जाना स्वाभाविक है।

मेघाच्छन्नता की मात्रा साधारणतः वर्षा पटिका के समान्तर ही पृथ्वी पर आवर्तित रहती है।

11.32 वर्षा

तापमान के बाद दूसरा महत्त्वपूर्ण जलवायुविक तत्व वर्षा है, क्योंकि कृषि और वनस्पतियाँ, जो जीवन यापन के मूलभूत साधन हैं, वर्षा पर ही प्रमुख रूप से आश्रित पाई जाती हैं। जलवायुविक उद्देश्यों के लिए वर्षा के मासिक तथा वार्षिक आँकडों के अतिरिक्त (1) वर्षा युक्त दिनों की संख्या (वह दिन जब कुल वर्षा 2.5 मिमी से अधिक हुई हो), (2) प्रतिदिन, प्रति घण्टे तथा और अल्प समयों के लिए उच्चतम वर्षा की दर तथा (3) प्रतिदिन की औसत वर्षा (माध्य वार्षिक वर्षा / वर्षा-युक्त दिनों की संख्या) के आँकड़े भी महत्त्वपूर्ण हैं। इनसे वर्षा तीव्रता (Precipitation intensity) का माप प्राप्त होता है।

निम्न अक्षांशों में अपेक्षाकृत अल्पावधि की, किन्तु अधिक मूसलाधार वर्षा पाई जाती हैं, जबकि मध्य अक्षांशों में वर्षा की तीव्रता कम होती है। वर्षा की तीव्रता अपवाह और वाष्पीकरण को प्रभावित करती है, अतः प्रभावकारी वर्षा (effective rainfalls), जो हमारे कार्यों में वास्तविक रूप से प्रयुक्त होती है, की धारणा महत्त्वपूर्ण है। अधिक तीव्रता-युक्त अल्पावधि की वर्षा कृषि के लिए उतनी उपयुक्त नहीं, जितनी मन्द तीव्रता की सम तथा

दीर्घावधि वर्षा होती है । प्रभावकारी वर्षा वाष्पीकरण और अपवाह के कारण वास्तविक वर्षा से बहुत भिन्न होती है । यह वर्षा के समय और उपयोगिता पर भी निर्भर करती है । उदाहरण के लिए, बम्बई मानसून महीनों मे 200 सेमी के लगभग वर्षा प्राप्त करता है, जिसका अधिकांश भाग अनुपयोगिता के कारण व्यर्थ चला जाता है । वर्ष के अन्य महीनों मे यह क्षेत्र प्राय सूखा ही रहता है । पश्चिमी आस्ट्रेलिया म उचित समय पर 25 सेमी की वर्षा म ही गेहूँ की अच्छी फसल तैयार हो जाती है, जबकि इससे बहुत अधिक वर्षा वाले क्षेत्रो मे, वर्षाकाल की अनुपयुक्तता के कारण, फसल ठीक नही हो पाती ।

11 33 इकाई क्षेत्र पर खड़े वायु स्तम्भ म स्थित कुल वाष्प की मात्रा, अवक्षेपीय जल (*Precipitable water-w*) कहलाती है । कम तापमान पर वायुमण्डल के वाष्प-संग्रह करने की क्षमता घट जाने से w का मान साधारणत उच्च अक्षांशो की ओर घटता जाता है । प्राय निम्न अवक्षेपीय जल कम वर्षा का परिचायक होता है, किन्तु कुछ शुष्क क्षेत्रों में उच्च w के बावजूद बहुत कम वर्षा उत्पन्न होती है । यह सम्भवत उन क्षेत्रों पर प्रचलित अवतलन प्रवाह के कारण होता है जो वर्षा उत्पन्न करने की क्रियाविधि को क्षीण बना देता है । इसके विपरीत, वाताग्र प्रक्रियाओं के कारण मध्य अक्षांशों के वायुमण्डल मे कम अवक्षेपीय-जल रहते हुए भी अच्छी वर्षा हो जाती है, क्योंकि ये प्रक्रियाएँ वाष्प संघनित करने की क्रियाविधि बहुत सशक्त बना देती हैं ।

माध्य दैनिक अवक्षेपण तथा औसत अवक्षेपीय जल का अनुपात अवक्षेपण क्षमता कहलाती है, जो साधारणत प्रतिशत म व्यक्त की जाती है । यह क्षमता 0 से 10° उ अक्षांश म अभिसरण क्षेत्र तथा मध्य अक्षांशों मे वाताग्र प्रक्रियाओं के कारण अधिकतम पाई जाती है ।

11 40 महासागरीय ड्रिफ्ट और धाराएँ (*Ocean Drifts and Currents*)

वायु राशियो की भाँति महासागरो मे जल राशियाँ ड्रिफ्ट तथा धाराओं के साथ प्रवाहित होते हुए, अपने साथ तापमान आर्द्रता आदि जलवायुविक तत्त्वों को एक स्थान से दूसरे स्थान को अभिवहित करती है, जो तटीय क्षेत्रों की जलवायु को पर्याप्त मात्रा मे प्रभावित करते हैं । जल राशियों का सतही प्रवाह, जो प्राय वायु तापमान आर्द्रता आदि जलवायु तत्त्वों के विपर्यास से ही जनित होता है, ड्रिफ्ट कहलाता है । अपेक्षाकृत तीव्र गति से काफी गहराई के अन्दर बहने वाली उष्ण या शीतल जल राशियाँ धाराएँ कहलाती हैं । महासागरीय जल राशियो की गति के मुख्य दो कारण हैं—(*1*) वायु गति का जल सतह पर घर्षण प्रभाव, जिसके कारण प्रचलित वायु दिशा मे सतही जल राशि मन्द गति से बहने लगती हैं । (2) तापमान और लवणता (Salinity) की विभिन्नता के कारण जल-राशियो के अन्दर उत्पन्न घनत्व विपर्यास, जो साधारणत गहराई की तहो म क्षैतिज तथा ऊर्ध्वाधर गति जनित कर देता है । तापमान का प्रभाव लवणता की अपेक्षा बहुत अधिक पाया जाता है ।

उच्च अक्षांशो का महासागरीय जल, ठण्डा होने के कारण अधिक घनत्व का होता है । अत ध्रुवीय क्षेत्रों तथा निम्न अक्षांशो के बीच जल-राशियों का निरन्तर विनिमय हुआ करता है । इस ताप जनित प्रवाह मे लवणता विपर्यास के कारण और जटिलता आ जाती है ।

उपोष्ण कटिबंधी प्रतिचक्रवात से प्रवाहित सागरो मे, जहाँ वर्षा कम तथा वाष्पीकरण अधिक होता है प्राय लवणता अधिक पाई जाती है, जिससे वहाँ जल राशि का घनत्व कुछ बढ जाता है । फलत सतही जल का निम्नतर जल तहो मे अवतलन पाया जाता है ।

निम्न अक्षाशो से ध्रुवा की ओर बहने वाली जल राशियाँ अपेक्षाकृत गम तथा ध्रुवा से निम्न अक्षाशो की ओर बहने वाली धाराएँ आस-पास की जल-राशियो से ठण्डी होती हैं । 40 अश अक्षाश से विपुवत् रेखा तक के क्षेत्र मे उष्ण जल धाराएँ प्राय महाद्वीपो के पूर्वी तटो तथा ठण्डी धाराएँ पश्चिमी तटो के समानान्तर बहती हैं । इसस परे के अक्षाशो म धाराओ का विपरीत प्रवाह तटो के समानान्तर पाया जाता है ।

दोनो उष्ण कटिबधा की व्यापारी हवाएँ सागरो मे ड्रिफ्ट उत्पन्न करती हैं, जो विपुवत् रेखा के पास अभिसरित होकर उत्तरी और दक्षिणी विपुवत् रेखीय धाराओ के रूप म पश्चिम की ओर गति करती हैं । दोनो धाराएँ पूरे क्षेत्र मे एक-दूसरे से लघु विपरीत धाराओ (Minor Counter Currents) द्वारा अलग रहती हैं, जो महासागरो के पूर्वी भागो के विपुवत् रेखीय क्षेत्रो मे उत्पन्न होती है । स्रोत क्षेत्रो की विशेषताओ के कारण, महासागरो के पूर्वी भागो मे धाराएँ अपेक्षाकृत ठण्डी होती हैं तथा पश्चिमी गति के दौरान व प्राय अधिक तापमान लाभ करती चलती हैं । महासागरो के पश्चिम मे तट के समीप, उत्तरी विपुवत् रेखीय धारा उत्तर की ओर तथा दक्षिणी धारा दक्षिण की ओर मुड जाती है । चूँकि अब इनकी गति उष्ण से शीतल क्षेत्रो की ओर होती है अत ये आस पास की जल राशियो की अपेक्षा गम रहती हैं । लगभग 40 अश उत्तरी और दक्षिणी अक्षाशो के पास प्रचलित पश्चिमी वायु प्रवाह के सम्पर्क मे, ये धाराएँ पूव की ओर मुड जाती हैं । यही धाराएँ पुन व्यापारी हवाओ के प्रवाह मे आगे चलकर दक्षिण की ओर गति करने लगती हैं ।

उत्तरी अटलाटिक मे फ्लोरिडा तट से पूर्वोत्तर की ओर मुडने वाली विपुवत् रेखीय धारा, तट रेखा की सरचना के कारण तीव्र रूप से विकसित होती है क्योकि इसम दक्षिणी विपुवत् रेखीय धारा भी ब्राजील तट स मुड कर अशत सम्मिलित हो जाती है । यही फ्लोरिडा धारा आगे चलकर विख्यात गल्फस्ट्रीम नामक उष्ण धारा के रूप म नार्वे तथा उत्तरी रूस के तटो तक पहुँचती है । उत्तरी पश्चिमी यूरोप की सर्दियाँ इसी धारा के प्रभाव म अपेक्षाकृत गम रहती हैं । पश्चिमी प्रवाह के अन्तगत इस धारा द्वारा पर्याप्त उष्ण जल राशि यूरोप के आन्तरिक प्रदेशो मे पहुँचती है ।

दोनो गोलार्द्धों म विपुवत् रेखीय धाराएँ, उनका देशान्तरिक प्रवाह, पश्चिमी वायु प्रवाह के क्षेत्र म उनका पूव की ओर प्रसार तथा पुन दक्षिणी की ओर गति मिलकर धाराओ का प्रतिचक्रवाती वहद् कोशिका बनाते हैं । पश्चिमी वायु प्रवाह क्षेत्रो स पर दोनों गोलार्द्धों म सागरीय धाराएँ छोटी और चक्रवाती भवरा के रूप म जनित होती हैं, ये सेमोहोर धाराएँ कहलाती हैं ।

निम्न अक्षाशो म उन पश्चिमी तटा (पेरू, दक्षिणी कलिफोर्निया, दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका उत्तरी चिली आदि) म जो उपोष्ण कटिबधी प्रतिचक्रवाता के पूर्वी सिर पर स्थित हैं धाराएँ विपुवत् रेखा की ओर बहती हैं । कारियालिस बल के कारण इन धाराओ

की, तट से दूर विचलित होने की प्रवत्ति पाई जाती है। सतही जल के इस अपसरण के फलस्वरूप नीचे से ठण्डी तथा ताजी जल राशियाँ तट के पास उठती रहती हैं। इसे अपवेलिंग (upwelling) कहते हैं। यह प्रक्रिया तटीय क्षेत्र का तापमान घटाने तथा आद्रता बढाने मे सहयोग देती है।

11 41 एशिया को प्रभावित करने वाली धाराएँ

सम्पूर्ण एशिया का एक बहुत छोटा भाग ही सीधे तौर पर महासागरीय प्रवाह से प्रभावित हो पाता है। फिलीपाइन द्वीप समूहो के पास उत्तरी विषुवत् रेखीय धारा उत्तर-पूर्व की ओर मुड जाती है और तटीय क्षेत्रो के पास अत्यन्त उष्ण जल राशि अभिवहित करती है। फलस्वरूप सागर सतह का तापमान बढ जाता है। यही वह क्षत्र है, जहा अधिकतम सख्या मे चक्रवात जनित होते हैं। दक्षिणी विषुवत् रेखीय धाराएँ न्यूगिनी तट के पास दक्षिण की ओर मुडती हैं। इस स्थान पर जल सतह का तापमान वर्ष भर प्राय 28°C के आस-पास पाया जाता है। उत्तरी पूर्वी प्रशान्त महासागर मे, क्यूराशियो नामक उष्ण धारा प्रवाहित होती है जो फारमोसा के पास उत्तरी विषुवत् रेखीय धाराओ के सम्बद्ध होकर मुडने से जनित होती है तथा वहाँ से उत्तर को ओर बढते हुए जापान के समीप से पूव की ओर मुड जाती है। यह धारा 40° उत्तरी अक्षाश के लगभग समान्तर उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट तक पहुँचती है। इस धारा की एक शाखा जापान सागर मे प्रवेश करती है, जो पश्चिमी तटो पर अत्यधिक उष्ण जल राशि का आघात करती है, जिसके कारण वहाँ की सर्दियाँ मृदु बन जाती हैं। यह धारा शीतकालीन स्थायी वायु राशि को भी सशोधित करने की चेष्टा करती है।

ओयाशियो, जो एल्यूशियन नामक सद धाराओं की एक शाखा है, पूर्वी एशिया के तटो के पास उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है, जो सर्दियो मे वियतनाम तक ठण्डी जल राशियाँ अभिवहित करती रहती हैं। 40 अश उत्तरी अक्षाश के पास ओयाशियो दो भागो मे विभक्त हो जाती है। पहला भाग उत्तरी जापान के पास क्यूरोशियो मे जाकर मिल जाता है, जिससे वहाँ तीव्र तापमान प्रवणता जनित होती है। दूसरा भाग तट रेखा के समान्तर दक्षिण की ओर बहता रहता है। एशिया के पूर्वी तटो पर विशेषत निम्न अक्षाशो मे, सर्दियो मे व्यापक रूप से कुहरा उत्पन्न करने मे इन धाराओ का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

भारतीय सागरो पर वायु प्रवाह चूँकि सर्दियो और गर्मियो मे एक-दूसरे से ठीक विपरीत होता है (सर्दियो मे उत्तरी-पूर्वी तथा गर्मियो मे दक्षिणी-पश्चिमी), अत सागरीय ड्रिफ्ट मे भी सगत ऋतुनिष्ठ (seasonal) परिवर्तन पाया जाता है। सर्दियो मे सागर सतह का तापमान दक्षिण की ओर बढता जाता है। गर्मियो मे बगाल की खाडी तथा अरब सागर के अधिकाश क्षेत्रो मे यह तापमान 27°C से अधिक रहता है। तापमान निम्नतम अदन की खाडी के आस-पास अपवलिंग के कारण पाया जाता है।

11 42 महासागरीय धाराओं का जलवायु पर प्रभाव

(1) उष्ण तथा उपोष्ण कटिब धी महाद्वीपो के पश्चिमी तट, ठण्डी जल-राशियो के प्रभाव क्षेत्र मे आने के कारण अपेक्षाकृत ठण्डे होते हैं तथा उनका दैनिक एव वार्षिक तापमान

परिसर भी नम पाया जाता है। शीतलता के कारण कुहरे उत्पन्न हो सकते हैं, यद्यपि ये क्षेत्र प्राय शुष्क होते हैं।

(2) शीतोष्ण कटिबन्धो तथा उच्च अक्षांशो के पश्चिमी तट, उष्ण जलधाराओ के प्रभाव क्षेत्र म है। अत वहा नम महासागरीय जलवायु प्रमुख रहता है। मृदु सर्दिया, ठण्डी गर्मिया, तथा अधिक वर्षा इस जलवायु की विशेषताएँ हैं।

(3) उष्ण तथा उपोष्ण कटिबन्धो के पूर्वी तटो के समान्तर उष्ण धाराए बहती हैं, जो वहाँ की जलवायु उष्ण तथा भारी वर्षा युक्त बनाने म सहायक होती हैं। इन्ही धाराओ के कारण प्राय उपोष्ण कटिबन्धी प्रति चक्रवातो के पश्चिमी सिरे अस्थायी होते है।

(4) मध्य अक्षाशो का दक्षिणी पूर्वी तट जो पवत शृखलाओ के अनुवर्ती भागो मे पडता है उष्ण धाराओ के निकट स बहने पर भी महाद्वीपीय जलवायु से प्रभावित रहता है। अत वहा ठण्डी सर्दिया तथा तप्त गर्मियाँ पाई जाती हैं।

(5) उच्च अक्षांशो के पूर्वी तटो पर ठण्डी जलधाराओ के कारण ग्रीष्म ऋतु प्राय ठण्डी पाई जाती है।

(6) कुछ धाराएँ वाताग्र विक्षोभ उत्पन्न करने म सहायक होकर, परोक्ष रूप मे जलवायु पर प्रभाव डालती है। उत्तरी अमरिका और एशिया के पूर्वी तटो के समान्तर उत्तर की ओर बहने वाली उष्ण धाराएँ मध्य अक्षाशो मे गम जल राशिया अभिवहित करती हैं। इनसे उत्पन्न ऊर्जा वाताग्र विकास म योग देती ह। चूँकि पश्चिमी किनारे सामान्यत निम्न अक्षाशो की ओर बहती शीतल जल धाराओ के सम्पक म रहती हैं, अत महाद्वीपो पर तीव्रताप विपर्यास क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। इस विपर्यास क्षेत्र म वाताग्र विक्षोभ जनित होने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ पाई जाती है।

11 50 वायु राशियाँ एव हवाएँ—भूमिका

लगभग 75 वष पूव मौसम पूर्वानुमान के लिए वायुमण्डलीय अध्ययन का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया गया। तब से इस दिशा म निरन्तर प्रगति होती गई। किन्तु मौसम विज्ञान क अन्य शाखाओ म वैज्ञानिक दृष्टिकोण अभी भी बिल्कुल प्रारम्भिक अवस्था म है। जलवायु विज्ञान, वतमान स्थिति म मुख्यत मौसम आकडो का सांख्यिकीय अध्ययन है जिसम भौतिक कारणो क अध्ययन का समावेश नही किया गया है। वायुमण्डल के भौतिक तथा गतिशील अवस्था का जलवायु पर महत्वपूर्ण प्रभाव को आंशिक रूप से मिलर, हाविज एव आस्टिन तथा केन्ड्रयू ने पहचाना तथा जलवायु विज्ञान की अपनी पाठ्य-पुस्तको म वायु राशिया के सन्दभ मे अनेक जलवायु तत्वो की व्याख्या की। वायु राशि की धारणा बजरान (1930) द्वारा विकसित की गई जिसके अनुसार भूमि या सागर के विस्तृत सम सतहो पर जहाँ वायु गति मन्द हो, वायु क्षैतिज रूप से सम होने की प्रवृत्ति रखती है। स्रोत क्षेत्रो पर पर्याप्त समय तक स्थिर रहने के उपरान्त जब ये वायु राशियाँ दूसरे धरातलो पर गति करती हैं तो वहाँ के मौसम को प्रभावित करने के साथ साथ स्वय संशोधित होती रहती हैं। सन् 1940 मे पेटरसन ने वायु राशियो की तापीय संरचना का अध्ययन किया तथा ग्रीष्म और शीतकाल मे उत्तरी गोलार्ध की विभिन्न वायु राशियों का भौतिक मानचित्र तैयार किया।

वायुराशियों की व्यापक परिभाषा का अभाव, वाताग्र मौसमों के अध्ययन तथा ऊर्ध्वाधर गति के आकलन में यथार्थ विधियों की क्लिष्टता के कारण वायुराशि की धारणा का जलवायु विज्ञान में उपयोग प्रायः कठिन होता है। समकालीन मौसम विज्ञान (synoptic meteorology) की विधियों द्वारा विश्लेषित मानचित्रों से वायु राशि धारणा का कुछ लाभप्रद उपयोग हो सकता है। जलवायुविक दीर्घकालिक परिवर्तनों के भौतिक कारणों की व्याख्या करना तथा दीर्घावधि मौसम पूर्वानुमान विधियों में सक्रिय योगदान देना जलवायु विज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। किन्तु वर्तमान जलवायु विज्ञान की क्रियाविधि तथा अनुसंधानों में यह क्षमता अभी नगण्य है।

11.51 स्थायीवत् दाब प्रणालियाँ और वायु प्रवाह

दाब, यद्यपि सीधे रूप में जलवायु का तत्त्व नहीं है तथापि मौसम तथा वायु प्रवाह उत्पन्न करने में यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसका विवरण पिछले अध्यायों में दिया जा चुका है। वायु प्रवाह संवेद तापमान को कम करता है तथा वाष्पीकरण को बढ़ाने की प्रवृत्ति रखता है। सागर तलों पर वायु प्रवाह अधिक अपरिवर्ती (steady) और तीव्र होता है जबकि भूमि तल पर घर्षण प्रभाव के कारण हवा की विश्वसनीयता (Reliability) बहुत घट जाती है।

थल और जल भाग के ऊष्मन विपर्यास के कारण, दाब प्रणालियाँ जनित होती हैं, जिनके प्रभाव से ग्रीष्म और शीत मानसून धाराएँ बहा करती हैं। लेकिन मानसून धाराएँ उन्हीं क्षेत्रों पर उभर पाती हैं, जहाँ जल और थल का विपर्यास इतना तीव्र हो कि उनके द्वारा उत्पन्न हवाएँ व्यापक भू मण्डलीय प्रवाह को विच्छिन्न कर सकें। भारतीय मानसून इसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है, जिसका विवरण अध्याय 14 में किया गया है।

वायु राशियाँ अपनी गति के दौरान विविध मौसम तत्त्वों का अभिवहन करते हुए, उस स्थान के जलवायु को प्रभावित करती हैं, जहाँ से वे गुजरती हैं। इस बीच प्रतिक्रिया के फलस्वरूप वे स्वयं संशोधित होती रहती हैं। भू मण्डल पर धरातलीय वायु प्रवाह, अनेक कारणों से प्रभावित होने के कारण, अत्यन्त क्लिष्ट प्रणाली प्रस्तुत करता है किन्तु जनवरी और जुलाई के मध्य दाब स्थितियों तथा परिणामी माध्य प्रवाह में जो नियमितता पायी जाती है, उसके फलस्वरूप निम्नांकित वायु पेटिकाएँ प्रमुख हैं —

(1) व्यापारी हवाएँ—दोनों गोलार्द्धों के उपोष्ण कटिबन्धी चक्रवातों से पूर्व की ओर बहने वाली ये हवाएँ विषुवत् रेखा पर अभिसरित होती प्रतीत होती हैं। सागरीय क्षेत्रों पर गति और दिशा में व्यापारी हवाएँ, संसार का सबसे अपरिवर्ती प्रवाह है। दक्षिणी गोलार्द्ध के महासागरों में 75% अवसरों पर यह द द पू, द पू या पू द पू दिशा और 15 से 30 किमी प्रति घण्टा की गति से बहती हुई पाई जाती है।

(2) मध्य अक्षांशीय पश्चिमी प्रवाह—उपोष्ण कटिबन्धीय प्रतिचक्रवातों से उप-ध्रुवीय स्थायीवत् निम्नदाब की ओर ये हवाएँ अपेक्षाकृत तेजी से प्रवाहित होती हैं, जिनका प्रमुख अवयव प्रायः पश्चिमी पाया जाता है। उप ध्रुवीय निम्न दाबों की क्षीणता तथा स्थान परिवर्तन के कारण यह प्रवाह बहुत परिवर्तनशील रहता है। उत्तरी गोलार्द्ध में पश्चिमी प्रवाह

गर्मियो मे अपेक्षाकृत अधिक अपरिवर्ती पाया जाता है क्योकि इस ऋतु मे उप ध्रुवीय निम्न दाब निश्चित पेटिका के रूप मे दृढता से स्थापित हो जाता है । सर्दियो म जब महाद्वीपो पर उच्चदाब क्षेत्र तथा सागर म ग्राइस लैडिक और एल्यूशियन निम्नदाब प्रमुख होत हैं, ता पश्चिमी प्रवाह कई कोशिकाओ मे टूट कर विच्छिन्न हो जाता है । इसी ऋतु म जनित होने वाले वाताग्र विक्षोभ भी पश्चिमी प्रवाह को विक्षोभित करने म सहायक होते हैं ।

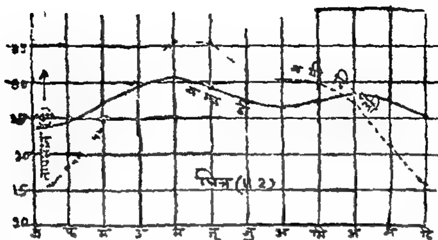
दक्षिणी गोलार्द्ध मे थल भागो का अवरोध न होने के कारण, पश्चिमी प्रवाह नियमित और तीव्र होता है । तीव्र प्रवाह के कारण ही 40° द० अक्षाश गजता चालीसा कहलाता है ।

(3) ध्रुवीय पूर्वी हवाएँ—ध्रुवीय प्रतिचक्रवातो से उपध्रुवीय निम्नदाबो तक पूर्वी अवयव से वहता हुआ, यह एक तुच्छ (shallow) प्रवाह है । आर्कटिक सागर के चारो ओर थल भागो के अवरोध के कारण ध्रुवीय हवाओ का बहिर्वाह बहुत उलझाव-पूर्ण हो जाता है ।

11 52 जल और थल का आवंटन

दाब और वायु प्रवाह के प्रमुख नियन्त्रक के रूप मे, जल और थल आवटन का विवरण पहले दिया जा चुका है । अत जलवायु पर इनका महत्वपूर्ण प्रभाव स्पष्ट है । भौतिक गुणो के कारण जल, थल की अपेक्षा ऊष्मा के लिए अधिक सरक्षी है, जिसके फल स्वरूप जल राशियाँ थल की अपेक्षा दूनी गति से गम और ठण्डी होती है । तापमान का यह मृदुकारक (माडरेटिंग) प्रभाव प्रचलित वायु प्रवाह द्वारा आन्तरिक भागो तक ले जाया जा सकता है । महासागरीय क्षेत्रो के तटीय भू भागो मे वर्षा, तापमान, दाब और वायु प्रवाह जलीय वायु राशियो से प्रभावित होकर, आन्तरिक भागो के जलवायु से पर्याप्त विपर्यास पैदा कर देती है । महाद्वीपीय क्षेत्र, तटीय क्षेत्रो की अपेक्षा अधिक वार्षिक तापमान परिसर रखते हैं । वे तटीय क्षेत्र अधिकतम वर्षा और आर्द्रता प्राप्त करते हैं, जहाँ वायु प्रवाह महासागरो से सीधा तट की ओर रहता है । महासागरीय जलवायु की वर्षा पर्वतीय अनुकूलता पर भी निर्भर करती है । अनुकूल परिस्थितियो मे वर्षा प्राय वर्ष भर होती रहती है । आन्तरिक भागो की ओर तटीय वर्षा मे एकाएक कमी आ जाती है । महाद्वीपो की वर्षा अधिकतर ग्रीष्मकालीन होती है ।

तापमान का दैनिक चलन, सागर सतह पर नगण्य होता है । वार्षिक परिसर भी कम होता है, जो उष्ण कटिबन्धो म 7°C तथा मध्य अक्षाशो मे 15°C से कम पाया जाता है । इससे अधिक परिसर उन्ही क्षेत्रो मे देखा जाता है, जहाँ महासागरीय धाराओ की सीमा का उतार चढाव पाया जाता है । अत जल सतह के ऊपर वायु तहो म तापमान का चलन बहुत कम होता है । महाद्वीपीय क्षेत्रो म भी यह चलन कम होता है । तटो पर दैनिक और वार्षिक तापमान उच्चतम तथा न्यूनतम अपेक्षाकृत दर म स्थापित हो पाता है । दिल्ली (आतरिक महाद्वीप) तथा बम्बई (तटीय) स्टेशनो के मासिक तापमान चित्र (11 2) म अकित किए गए हैं जिनसे तापमान पर महासागरीय और महाद्वीपीय प्रभावों का विपर्यास स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है ।



11 60 स्थानीय प्रभाव

झील तथा अन्य छोटे जलाशय भी समीप के जलवायु को मृदु बनाने का सानुपातिक प्रयास करते हैं। उत्तरी अमेरिका की बड़ी झीलें जनवरी में पर्याप्त ऊष्मा प्रदान करती हैं, जिनसे शीत तरंगों की प्रखरता बहुत कम हो जाती है तथा पाले रहित ऋतु की अवधि अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। कैस्पीयन और विक्टोरिया झील क्षेत्रों में दैनिक जल तथा थल समीर का प्रवाह पर्याप्त रूप से प्रभावकारी होता है। इन क्षेत्रों में इस प्रभाव के कारण आर्द्रता और वर्षा में भी यथार्थ वृद्धि पाई गई है।

उच्च अक्षांशों में, जहाँ जलाशय और झीलें प्राय जमे हुए अवस्था में होते हैं, जलीय प्रभाव कम हो जाता है। इन प्रदेशों में सर्दियाँ लम्बी हो जाती हैं तथा बसंत ऋतु देर से आती है। तुषार से ढके क्षेत्रों में वार्षिक तापमान परिसर बहुत अधिक पाया जाता है।

11 61 स्थानीय जलवायु पर स्थलाकृति तथा अन्य छोटे लक्षण (feature) भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। इन लक्षणों के कारण स्थानीय प्रवाह, जगह जगह विभिन्न विशेषताएँ उत्पन्न कर देता है। पर्वतों से सम्बन्धित वायु धाराओं का विवरण पहले दिया जा चुका है। घाटियों तथा बेसिन में, जहाँ वायु राशि पर्याप्त समय तक रुद्ध हो जाती है, आधार तल के गुण, ग्रहण कर लेती है। आमूर बेसिन और साइबेरिया में पर्वतों के बीच अत्यन्त शीतल हवा पर्याप्त समय तक रहती है, जो 44° उत्तरी अक्षांश पर हिमांक से कई अंश नीचे तक का जनवरी तापमान प्रदर्शित करती है।

11 62 अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण जलवायु नियन्त्रकों में भूमि की संरचना और प्रकृति का नाम लिया जा सकता है। गहरे रंग की मिट्टी हल्के रंग की मिट्टी से अधिक ऊष्मा शोषित करती है, अत भिन्न में अपेक्षाकृत गर्म रहती है। यह विभिन्नता वायु प्रवाह पर भी प्रभाव डालती है। शुष्क मिट्टी और रेत, विशिष्ट ऊष्मा कम होने के कारण अधिक तापमान परिवर्तन प्रदर्शित करती है, जबकि नम मिट्टी ऊष्मन और शीतलन के लिये अधिक सरक्षी होती है, मिट्टी की उर्वरकता भी परोक्ष रूप में जलवायु को प्रभावित करती है। घास के

मैदान तथा वनस्पतियाँ सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र के तापमान, वायु, वर्षा तथा आर्द्रता पर महत्व पूर्ण प्रभाव डालती हैं, जिसका विवरण इसी अध्याय में अन्यत्र दिया गया है।

11 63 यों तो जलवायु पर ही वनस्पतियों का प्रकार और सघनता निर्भर करती है, किन्तु विस्तृत वन क्षेत्र भी स्थानीय जलवायु पर महत्वपूर्ण नियन्त्रण रखते हैं। ये वाष्पोत्सर्जन द्वारा आर्द्रता अथवा वर्षा की क्षमता में वृद्धि उत्पन्न कर सकते हैं। तापमान पर मृदुलता (moderating) तथा वायु गति पर अवरोध प्रभाव भी स्थानीय पैमाने पर यथार्थ रूप में पाया जाता है।

11 70 ऊँचाई

किसी स्थान की समुद्र तल से ऊँचाई तथा उसका उद्भासन (exposure) वहाँ का जलवायु निर्धारित करने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में भी ऊँचाई तथा उद्भासन के कारण भिन्न भिन्न मौसम परिस्थितियाँ पाई जाती हैं। घाटी या पठार की जलवायु शिखर की जलवायु से भिन्न होगी। एक ही पर्वत का पवनाभिमुखी ढाल अनुवर्ती भागों से, वर्षा तथा तापमान की दशाओं में बहुत असमानता होती है। ये परिस्थितियाँ अलग अलग अक्षांशों पर भी भिन्न भिन्न होती हैं।

(1) ऊँचाई के साथ दाब का तेजी से गिरना, उच्च स्थानों पर जीवन यापन की कठिनाइयाँ बढ़ा देता है। यों तिब्बत तथा बोलिवियन एन्डीज पर लोग लगभग 5 किमी की ऊँचाई पर रहते हैं किन्तु 3 किमी से अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में अनेक बीमारियाँ, कमजोरी, थकान तथा कार्य करने की असमर्थता बहुत सामान्य है।

(2) जल वाष्प, धूल तथा मेघ आदि शोषक व परावर्तक तत्वों की अनुपस्थिति के कारण सौर ऊष्मा की तीव्रता, पर्वतीय ढाल पर ऊँचाई के साथ बढ़ती जाती है। एक अनुमान के अनुसार, ग्रीष्म अयनान्त के दिन तिब्बत के पठार को, संलग्न भारतीय क्षेत्रों की अपेक्षा डेढ़ गुना ऊष्मा प्राप्त होती है। अधिक ऊँचाइयों पर अल्ट्रा वायलेट किरणें भी समानुपातिक मात्रा में अधिक गिरती हैं। पर्वतीय ढालों पर भूमि का तापमान दिन और रात दोनों में संलग्न वायु तहों के तापमान से अधिक होता है।

(3) सौर विकिरण की बढ़ती तीव्रता के बावजूद, पहाड़ी ढालों पर तापमान का ऊँचाई के साथ घटना (लगभग $-6°C/100$ मीटर) तथा तीव्र ताप प्रवणता, ऊँचाइयों की एक महत्वपूर्ण जलवायुविक विशेषता है। पहाड़ों की विरल और शुष्क हवाएँ, दिन में तीव्र सौर ऊष्मा के आगमन तथा रात्रि में भू-विकिरण के तीव्र ह्रास की सुविधा देती हैं। फलत दैनिक परिसर का उच्च होना स्वाभाविक है। किन्तु तापमान के औसत मानों में अधिक अन्तर न आने के कारण, मौसमी परिसर साधारणत कम ही पाया जाता है।

(4) घाटियों में तापमान व्युत्क्रमण उच्च तापमान परिसर तथा कुहरा की घटनाएँ बहुत सामान्य होती हैं विशेषकर शीतोष्ण कटिबन्धों में।

(5) चूँकि पर्वतों के दोनों भागों में स्थित वायु राशियों के बीच रुकावट के कारण सम्मिलन सामान्यत नहीं हो पाता है, अत संक्रमण क्षेत्र में उच्च क्षतिज प्रवणता स्वाभाविक

रूप से पाई जाती है । वायु राशियों की गति में रुकावट के कारण प्राय पवनाभिमुखी और अनुवर्ती भागो के जलवायु म पर्याप्त अन्तर हो जाता है ।

(6) दिन को आरोही तथा रात्रि को अवरोही प्रवाह, पर्वतीय ढालो की सामान्य विशेषता है, जिसका विवरण अध्याय 6 म दिया जा चुका है । फोहन हवा जो गर्म तथा शुष्क होने के कारण शीतोष्ण कटिबन्धो में (मुख्यत आल्पस के उत्तरी ढाल के नीचे स्थित यूरोपीय भागो मे) प्राय आरामदेह मौसम उत्पन्न करती है, प्रभावित क्षेत्रो की जलवायु परिवर्तन करने का कारण बनती है ।

(7) दिन म आरोही हवाएँ कुछ नमी ऊपर ले जाती है जिनसे स्तरी कपासी या कपासी प्रकृति के मेघ बन जाते हैं । किन्तु रात्रि म मिलकर पर्याप्त शुष्क तथा आसमान साफ रहता है । रात्रि म नमी के नीचे की ओर स्थानान्तरण के कारण घाटियों मे कुहरे जनित हो सकते हैं । मेघाच्छन्नता की मात्रा प्राय गर्मियो में अधिकतम पाई जाती है ।

11 71 अवक्षेपण और ऊँचाई

अवक्षेपण की ऊँचाई के साथ निर्भरता का अध्ययन करना इसलिए और महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि पर्वतों पर प्राप्त अवक्षेपण आस पास के क्षेत्रो के लिए विभव जल शक्ति (Potential water power) का काम करता है, क्योकि यह अवक्षेपण, जल या पिघलते तुषार के रूप म ऊँचाइयो से निम्न तलो की ओर बहता है । जल शक्ति, अवक्षेपण की मात्रा तथा ऊँचाई दोनो पर निर्भर करती है । यद्यपि वाष्पीकरण और भू शोषण के कारण सम्पूर्ण प्राप्त अवक्षेपण शक्ति म नही बदला जा सकता, तथापि अवक्षेपण की मात्रा क्षेत्रीय जल शक्ति क्षमता के आकलन मे महत्त्वपूर्ण है ।

नम हवाओं के यान्त्रिक आरोहण के कारण पवनाभिमुखी भाग स्पष्टतया अधिक वर्षा प्राप्त करता है । अनुवर्ती ढाल वर्षा पटिका की छाया म पड जाने से शुष्क रह जाते हैं । यह शुष्कता कही-कही इतनी अधिक होती है कि मरुस्थल तक विकसित हो सकता है ।

अवक्षेपण की मात्रा ऊँचाई के साथ साधारणत घटती जाती है । लेकिन उष्ण कटिबन्धो मे कुछ तक यह मात्रा पहले बढती है, क्योंकि इन तहो म सघनित जल वाष्प की मात्रा ऊँचाई के साथ अधिक होती है । एक कारण यह भी है कि अधिक ऊँचाइयो तक शिखरों के बीच खाली स्थान आ जाने के कारण, नम हवाओं की आरोही गति विच्छिन्न हो जाती है । वी कोनराद (1942) के अनुसार, उष्ण कटिबन्धो मे वर्षा और ऊँचाई का सम्बन्ध निम्नांकित सारणी मे स्पष्ट किया गया है—

ऊँचाई (फीट)	—	6925	8235	10105
वर्षा (इंच)	—	105 1	118 1	83 9

ढाल पर अवक्षेपण की वृद्धि एक निश्चित ऊँचाई तक ही हो पाती है । उसके बाद वृद्धि दर प्राय शून्य या ऋणात्मक पाई जाती है । उच्चतम वर्षा का क्षेत्र स्थान के प्रति भी परिवर्तित होती है । उष्ण कटिबन्धो मे उच्चतम वर्षा, शीतोष्ण कटिबन्धो से कम ऊंचाई पर पाई जाती है । नम जलवायु के स्थानो मे भी उच्चतम वर्षा, निम्नतर तहो में हो जाती है ।

जावा में यह ऊँचाई एक किलोमीटर, पश्चिमी घाट 1 5 किमी तथा आल्पस पर 2 l किमी आकलित की गई है।

11 80 सूक्ष्म जलवायु विज्ञान (Microclimatology)

धरातल से एक-दो मीटर ऊँचाई तक की वायु तहों के जलवायु तत्वों का अध्ययन सूक्ष्म जलवायु विज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। इन्ही तहों में वनस्पतियाँ विकसित होती हैं। वनस्पति विज्ञान, कृषि, भवन निर्माण, तथा अनेक उद्योगों में धरातल से संलग्न वायु तहों की मौसम परिस्थितियों की जानकारी उपयोगी होती है। इस अध्ययन के लिए निम्न तम तहों के तापमान, आर्द्रता तथा वायु वेग सर्वाधिक मुख्य तत्व हैं। भूमि आर्द्रता और तापमान तथा कार्बन डाई आक्साइड के आवटन का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है।

चूँकि वायुमण्डलीय ऊष्मा का स्रोत भू-विकिरण ही है, अतः धरातल की प्रकृति और स्थलाकृति, सूक्ष्म जलवायु के नियन्त्रण में मुख्य भूमिका निभाते हैं। इनका प्रभाव निम्नांकित रूप में पड़ता है—

(1) अलबिडो (धवलता), धरातल की प्रकृति पर निर्भर करता है। शुष्क भूमि, वनस्पति से ढकी भूमि की अपेक्षा अधिक धवलता रखती है। मिट्टी के रंग पर भी धवलता की मात्रा निर्भर करती है और इसी मात्रा पर धरातल की सौर ऊष्मा की शोषण क्षमता निर्धारित होती है।

(2) पृथ्वी का घनत्व -विभिन्न घनत्वों वाली सतह का ऊष्मन विभिन्न मात्रा में होता है। अधिक घनत्व वाली मिट्टी में ऊष्मा की अधिक मात्रा संचारित होती है।

(3) धरातल की स्थिति (अक्षांश) और ऊँचाई तथा प्रकृति तापमान, वर्षा तथा वायु को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। इसका वर्णन पिछले अध्यायों में किया जा चुका है। सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र में भी स्थलाकृति तापमान, वायु और वर्षा पर प्रभाव डालती है।

11 81 उत्तर-दक्षिण ढाल आपतित सौर ऊष्मा पर वही प्रभाव डालता है, जो अक्षांशों का परिवर्तन। इससे औसत तथा चरम तापमानों का मान बदलता जाता है। पूर्वी पश्चिमी ढाल दैनिक सौर प्रकाश की अवधि परिवर्तित कर देते हैं, किन्तु तापमानों की मात्रा में कोई विशेष अन्तर नहीं आ पाता। स्वाभाविक्त पूर्वी ढाल दोपहर से पहले अपेक्षाकृत अधिक सौर ऊष्मा प्राप्त कर सकेगा और पश्चिमी ढाल दोपहर के बाद। किन्तु, चूँकि सौर ऊष्मा की तीव्रता दोपहर तक अपेक्षाकृत कम होती है, अतः पूर्वी ढाल पश्चिमी ढाल से कुछ ठण्डे पाए जाते हैं। इसका दूसरा कारण यह है कि प्रातःकाल आर्द्रता अधिक पाई जाती है। इस प्रकार, पूर्वी ढाल पर विकिरण का एक भाग वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा के रूप में प्रयुक्त हो जाता है जबकि दोपहर बाद हवा सूखी होने के कारण बहुत कम सौर ऊष्मा वाष्पीकरण में लगती है। रात्रि में धरातल और फलस्वरूप संलग्न वायु तह भू विकिरण के कारण शीतल होती रहती है। यही शीतल हवा ढाल के नीचे बहती है। सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र में यह रुद्धोष्म प्रक्रम से गर्म नहीं हो पाती और ढाल के तल में एकत्र होती है। इस प्रकार ढाल का तल समतल क्षेत्र की अपेक्षा अधिक ठंडा और शीर्ष अधिक गर्म होते हैं।

स्थलाकृति का वायु और अवक्षेपण पर प्रभाव—वृहद् जलवायु क्षेत्र मे किसी पर्वतीय क्षेत्र का पवनाभिमुखी भाग अधिक वर्षा तथा अनुवर्ती भाग साधारणत कम वर्षा प्राप्त करता है। पर्वत शृंखलाएँ वायु प्रवाह म पर्वत तरंगें जनित करती हैं।

सूक्ष्म जलवायु क्षेत्र मे यदि ढाल वायुगति के समान्तर है, जो अनन प्रभाव तथा यदि लम्बवत् है तो अवरोध प्रभाव उत्पन्न होता है। अवरोध प्रभाव मे ढाल के दोनो तरफ वायु-गति कम हो जाती है। यह कमी अनुवर्ती भाग म अपेक्षाकृत अधिक होती है, जिसके फलस्वरूप अनुवर्ती ढाल पर छोटी भवरें या द्रोणिकाएँ जनित हो जाया करती हैं। ये द्रोणिकाएँ सामान्यत अनुवर्ती भाग मे अवक्षेपण की मात्रा बढा देती हैं। यही कारण है कि किसी चट्टान, वृक्ष या भवन के अनुवर्ती भाग म तुषारपात का जमाव अपेक्षाकृत अधिक देखा जाता है।

(4) भूमि रुक्षता (Roughness)—रुक्ष भूमि, घर्षण अधिक होने के कारण वायु तहो में विक्षोभ और मिश्रण का प्रभाव जनित करती है। इससे तापमान के चरम मानो मे कमी आती है।

(5) भूमि की आर्द्रता—यह सूक्ष्म जलवायु मे वाष्पीकरण प्रक्रम को प्रभावित करती है। इसी प्रभाव से निम्नतम वायु तहो मे जल वाष्प का आवटन निश्चित किया जा सकता है। दिन मे सौर ऊर्जा का एक भाग, वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा के रूप मे प्रयुक्त हो जाता है। नम और अनाच्छादित भूमि पर अधिकाश सौर ऊर्जा वाष्पीकरण म लग जाती है, जिससे सतह सूखी होने लगती है। यह वाष्पीकरण, निम्नतम तहो के आर्द्रता और तापमान बटन दोनो पर प्रभाव डालता है।

11 82 सूक्ष्म जलवायु पर वनस्पतियो का प्रभाव

वनस्पतियाँ सूक्ष्म जलवायु को प्रभावित करती हैं, जिनके कारण निम्नलिखित हैं

(1) वनस्पतियो से आच्छादित सतह का ज्यामितीय आकार तथा भौतिक गुण अनाच्छादित सतह से भिन्न होते हैं। अनाच्छादित सतह अपेक्षाकृत अधिक लघु तरंगीय सौर ऊष्मा का शोषण करती है जबकि दीर्घ तरंगीय भू विकिरण के लिये इसकी शोषण और उत्सर्जन (emission) क्षमता, नगी जमीन से कम पाई जाती है।

(2) वनस्पति-युक्त क्षेत्र मे टहनी तथा पत्ते आदि असख्य छोटे-छोटे सतह बनाते हैं, जो ऊष्मा के शोषण और उत्सर्जन मे भाग लेते हैं। यह स्थिति अनाच्छादित भूमि से भिन्न है। ऊँचे वृक्ष निचले तहों का तापमान अधिक बढने मे आशिक रूप से रुकावट डालते हैं।

(3) वनस्पतियो में वाष्पोत्सर्जन के कारण आच्छादित क्षेत्रो के सूक्ष्म जलवायु मे आर्द्रता अधिक पाई जाती है। इससे गुप्त ऊष्मा के रूप मे कुछ सौर विकिरण का ह्रास तो होता है किन्तु यह उस ऊष्मा लाभ को निष्क्रिय नही कर पाता जो अधिक अवशोषण करने के कारण वनस्पतियो को प्राप्त होती है।

11 83 (अ) वायु वेग पर प्रभाव

वनस्पतियाँ अपने शिखर की ऊँचाई तक की वायु तहो मे हवा की गति कम कर देती हैं। शिखर स ऊपर एकाएक वायु गति में पर्याप्त तेजी पाई जाती है। शिखर से भूमि-तल तक मदन की मात्रा निरन्तर बढती जाती है।

(ब) तापमान पर प्रभाव

विशेष तथा मिश्रित प्रकार की वनों के कारण पौधों की विकास सीमा तक, तापमान-परिवर्तन अपेक्षाकृत तीव्र होता है। आच्छादन सतह के ऊपर परिवर्तन धीमा हो जाता है और तापमान सामान्य दर से घटता जाता है। सघन वनस्पतियों में अधिकांश और ऊष्मा वनस्पति सतहों द्वारा शोषित करली जाती है और बहुत कम विकिरण भूमि तक पहुँच पाता है। अतः तापमान उच्चतम (temperature maximum) ऊपर की ओर स्थानान्तरित हो जाता है तथा भूमि एवं वनस्पति के बीच स्थिर होता है। जब पौधे छोटे और विरल होते हैं तो तापमान प्रावटन में अनाच्छादित भूमि से बहुत कम भिन्नता पाई जाती है। छोटी वनस्पतियों में रात्रि का निम्नतम तापमान अनाच्छादित भूमि की तरह सतह के पास ही पाया जाता है। किन्तु जब पौधे ऊँचे और सघन होते हैं तो निम्नतम तापमान की स्थिति ऊपर की उठ जाती है और प्रायः शिखर से थोड़ा नीचे पाई जाती है। इसके कारण निम्नांकित हैं—

(1) वनस्पति सतह के विषम होने के कारण कुछ बहिर्गामी विकिरण ऊपर से तथा कुछ शिखरों तक ही होता है। इस तरह विकिरण द्वारा रात्रि में शिखर से कुछ नीचे तक की तह में होता रहता है।

(2) शिखर से पास की हवा ठंडी होकर नीचे प्रवाहित होती है। किन्तु धरातल पर वनस्पतियों की सघनता प्रायः अधिक होने के कारण भूमि तल तक नहीं पहुँच पाती।

सघन वनों में दिन का उच्चतम तापमान शिखर पर पाया जाता है, जहाँ से तापमान भूमि तल की ओर घटता जाता है। रात्रि में वन भूमि प्रायः आसपास के खुले क्षेत्र से अधिक उष्ण होती है। तापमान का यह अन्तर कभी कभी एक कमजोर-सा वायुप्रवाह जनित कर देता है, जो वन और वन समीर के नाम से जाने जा सकते हैं। इस प्रवाह के अन्तर्गत दिन में वन से, जिसका तापमान कम होता है हवा अनाच्छादित भूमि की ओर बहती है। रात्रि में प्रवाह इसके विपरीत होता है।

(स) आर्द्रता तथा वाष्पीकरण पर प्रभाव

स्वाभाविकतः वनस्पति युक्त भूमि से वाष्पीकरण अनाच्छादित भूमि की अपेक्षा अधिक होता है। यही वाष्पीकरण वनों में दिन का तापमान मृदु बनाता है। इसका कारण यह है कि वनस्पतियाँ वाष्पोत्सर्जन प्रक्रम द्वारा सदा वायुमण्डल में वाष्प जनित करती हैं जबकि अनाच्छादित भूमि के शुष्क हो जाने के बाद वाष्पीकरण बन्द हो जाता है। प्रत्येक पत्ती वाष्पोत्सर्जन की एक सतह होती है, अतः अनाच्छादित क्षेत्रों में वाष्पीकरण के सतह का क्षेत्रफल भी अधिक होता है। वनों की अधिक आर्द्रता का एक कारण यह भी है कि वायु गति में अवरोध उत्पन्न हो जाने से हवा स्थित नमी भी रुक जाती है।

□□□

12

जलवायु का वर्गीकरण

(Classisifation of Climate)

12 10 मौसम और जलवायु (Weather and Climate)

एक निश्चित समय पर किसी स्थान या क्षेत्र मे वायु दाब, तापमान, आर्द्रता, हवा, वर्षा और मेघाच्छन्नता (cloudiness) आदि तत्वो का संयुक्त प्रभाव उस स्थान का मौसम कहलाता है। ज्ञात या अज्ञात कारणों से मौसम मे परिवर्तन होते रहते हैं, जो बहुधा अनियमित होते हैं। इन परिवर्तनो का अध्ययन समकालीन मौसम विज्ञान (Synoptic Meteorology) मे किया जाता है।

अनियमित मौसम परिवर्तनो के बावजूद, किसी स्थान के लिए एक सामान्य मौसम दशा (Average weather condition) निर्धारित की जा सकती है। यह सामान्य दशा एक लम्बी अवधि (साधारणत 20 से 50 वर्ष) के मौसम तत्वो के औसतीकरण द्वारा निश्चित की जाती है, इसे उस स्थान का जलवायु कहते है।

जलवायु निर्धारण मे अत्यधिक लम्बी अवधि के मौसम आँकडो का औसतीकरण भी अनुपयुक्त है, क्योंकि किसी स्थान का जलवायु सदा स्थिर रहने वाली अवस्था नही है। इसमें समय के साथ उच्चावच (fluctuation) होते रहते हैं।

किसी एक तत्व के माध्य (average) द्वारा ही जलवायु निर्धारण पूरा नही हो जाता, बल्कि सभी मौसम तत्वो के मध्यमानो का संयुक्तीकरण ही जलवायु निर्धारण पूरी तरह निश्चित करता है। उदाहरण के लिए, यदि केवल तापमान पर ही विचार किया जाए, तो बोस्टन और एडिनबरा जो क्रमश 9 3°C और 8 8°C का औसत वार्षिक तापमान रखते है, समान जलवायु वाले क्षेत्र प्रतीत होते हैं। किन्तु वास्तव मे बोस्टन अधिक गर्मी (सबसे गर्म महीने का तापमान = 28°C) और अधिक सर्दी (सबसे ठंडे महीने का तापमान – 2 7°C) का क्षेत्र है, जबकि एडिनबरा इसकी अपेक्षा सम शीतोष्ण है, जहाँ सबसे गर्म महीने का तापमान 15°C तथा सबसे ठण्डे महीने का तापमान 4°C पाया जाता है। अत तापमान समान होते हुए भी तापमान परिसर (range) मे भिन्नता के कारण दोनो स्थानो के जलवायु मे बहुत अन्तर हो गया।

एक उदाहरण और देखिए सारणी (12 1) मे काहिरा (मिश्र) और गैलवेस्टन (टक्सास) के तापमान तथा तापमान परिसर मे इतनी समता होते हुए भी वार्षिक वर्षा के

(ब) तापमान पर प्रभाव

विक्षोभ तथा मिश्रण प्रभाव की कमी के कारण पौधों की विकास सीमा तक, तापमान परिवर्तन अपेक्षाकृत तीव्र होता है। आच्छादन सतह के ऊपर परिवर्तन धीमा हो जाता है और तापमान सामान्य दर से घटने लगता है। सघन वनस्पतियों में अधिकांश सौर ऊष्मा वनस्पति सतहों द्वारा शोषित करली जाती है और बहुत कम विकिरण भूमि तक पहुँच पाता है। अतः तापमान उच्चतम (temperature maximum) ऊपर की ओर स्थानान्तरित हो जाता है तथा भूमि एवं वनस्पति के बीच स्थित होता है। जब पौधे छोटे और विरल होते हैं तो तापमान वितरण में अनाच्छादित भूमि से बहुत कम भिन्नता पाई जाती है। छोटी वनस्पतियों में रात्रि का निम्नतम तापमान अनाच्छादित भूमि की तरह सतह के पास ही पाया जाता है। किन्तु जब पौधे ऊँचे और सघन होते हैं, तो निम्नतम तापमान की स्थिति ऊपर को उठ जाती है और प्राय शिखर से थोड़ा नीचे पाई जाती है। इसके कारण निम्नांकित हैं—

(1) वनस्पति सतह के विषम होने के कारण कुछ बहिर्गामी विकिरण ऊपर से तथा कुछ निम्नतर तहों से होता है। इस तरह विकिरण ह्रास रात्रि में शिखर से कुछ नीचे तक की तहों से होता रहता है।

(2) शिखर के पास की हवा ठंडी होकर नीचे अवतलित होती है। किन्तु धरातल पर वनस्पतियों की सघनता प्राय अधिक होने के कारण भूमि तल तक नहीं पहुँच पाती।

सघन वनों में दिन का उच्चतम तापमान शिखर पर पाया जाता है, जहाँ से तापमान भूमि तल की ओर घटता जाता है। रात्रि में वन भूमि प्राय आसपास के खुले क्षेत्र से अधिक उष्ण होती है। तापमान का यह अन्तर कभी कभी एक कमजोर सा वायुप्रवाह जनित कर देता है, जो थल और वन समीर के नाम से जाने जा सकते हैं। इस प्रवाह के अन्तर्गत दिन में वन से, जिसका तापमान कम होता है हवा अनाच्छादित भूमि की ओर बहती है। रात्रि में प्रवाह इसके विपरीत होता है।

(स) आर्द्रता तथा वाष्पीकरण पर प्रभाव

स्वाभाविक्त वनस्पति युक्त भूमि से वाष्पीकरण अनाच्छादित भूमि की अपेक्षा अधिक होता है। यही वाष्पीकरण वनों में दिन का तापमान मृदु बनाता है। इसका कारण यह है कि वनस्पतियाँ वाष्पोत्सर्जन प्रक्रम द्वारा सदा वायुमण्डल में वाष्प जनित करती हैं जबकि अनाच्छादित भूमि के शुष्क हो जाने के बाद वाष्पीकरण बन्द हो जाता है। प्रत्येक पत्ती वाष्पोत्सर्जन की एक सतह होती है अतः अनाच्छादित क्षेत्रों में वाष्पीकरण के सतह का क्षेत्रफल भी अधिक होता है। वनों की अधिक आर्द्रता का एक कारण यह भी है कि वायुगति में अवरोध उत्पन्न हो जाने से हवा स्थित नमी भी रुक जाती है।

□□□

12

जलवायु का वर्गीकरण

(Classisifation of Climate)

12 10 मौसम और जलवायु (Weather and Climate)

एक निश्चत समय पर किसी स्थान या क्षेत्र म वायु दाब, तापमान, आद्र ता, हवा, वर्षा और मेघाच्छन्नता (cloudiness) आदि तत्वो का सयुक्त प्रभाव उस स्थान का मौसम कहलाता है। नाना या अज्ञात कारणो मे मौसम म परिवतन होते रहते हैं, जो बहुधा अनियमित होते हैं। इन परिवतनों का अध्ययन समकालीन मौसम विज्ञान (Synoptic Meteorology) मे किया जाता है।

अनियमित मौसम परिवतनो क बावजूद, किसी स्थान के लिए एक सामान्य मौसम दशा (Average weather condition) निर्धारित की जा सकती है। यह सामान्य दशा एक लम्बी अवधि (साधारणत 20 से 50 वष) के मौसम तत्वा के औसतीकरण द्वारा निश्चित की जाती है, इसे उस स्थान का जलवायु कहत हैं।

जलवायु निर्धारण मे अत्यधिक लम्बी अवधि के मौसम आंकडो का औसतीकरण भी अनुपयुक्त है, क्योकि किसी स्थान का जलवायु सदा स्थिर रहने वाली अवस्था नही है। इसमे समय के साथ उच्चावच (fluctuation) होते रहते हैं।

किसी एक तत्व क माध्य (average) द्वारा ही जलवायु निर्धारण पूरा नही हो जाता, बल्कि सभी मौसम तत्वा के मध्यमानों का सयुक्तीकरण ही जलवायु निर्धारण पूरी तरह निश्चत करता है। उदाहरण के लिए, यदि केवल तापमान पर ही विचार किया जाए, तो बोस्टन और एडिनबग जो क्रमश 9 3°C और 8 8°C का औसत वार्षिक तापमान रखत हैं, समान जलवायु वाले क्षेत्र प्रतीत होते हैं। किन्तु वास्तव मे बोस्टन अधिक गर्मी (सबसे गम महीने का तापमान = 28°C) और अधिक सर्दी (सबसे ठडे महीने का तापमान – 2 7°C) का क्षेत्र है, जबकि एडिनबग इसकी अपेक्षा सम शीतोष्ण है, जहां सबसे गम महीने का तापमान 15°C तथा सबसे ठण्डे महीने का तापमान 4°C पाया जाता है। अत तापमान समान होते हुए भी तापमान परिसर (range) मे भिन्नता के कारण दोनो स्थानो के जलवायु मे बहुत अन्तर हो गया।

एक उदाहरण और देखिए सारणी (12 1) म काहिरा (मिश्र) और गैलवेस्टन (टेक्सास) के तापमान तथा तापमान परिसर म इतनी समता होते हुए भी वार्षिक वर्षा के

आँकड़ों में इतना अन्तर है कि दोनों नगरों के जलवायु में बहुत भिन्नता आ जाती है। काहिरा शुष्क (arid) तथा गैलवेस्टन नम (humid) जलवायु की श्रेणी में आता है।

सारणी 12.1

स्थान	तापमान °C						वार्षिक वर्षा (सेमी)
	जनवरी	अप्रैल	जुलाई	अक्टूबर	वार्षिक	परिसर	
काहिरा	11.5	19.8	27.2	22.1	20.1	15.7	3.3
गैलवेस्टन	12.0	20.3	28.3	22.3	20.8	16.3	117.1

12.11 किसी स्थान के जलवायु के निर्धारण में अनेक तत्व सम्मिलित किये जाते हैं, जिनकी प्रकृति अत्यधिक चर (variable) होती है। अतः किन्हीं दो स्थानों के जलवायु का पूर्ण रूप से सर्वसम (identical) होना असम्भव है।

विभिन्न जलवायु प्रकारों की इस भारी संख्या को देखते हुए अध्ययन की सुविधा के लिए, इनका लगभग समान समूहों में वर्गीकरण करना आवश्यक हो जाता है।

12.20 जलवायु का ज्योतिषीय (Astronomical) वर्गीकरण

क्योंकि पृथ्वी पर पड़ने वाली सौर विकिरणों की मात्रा अक्षांशों के साथ बदलती है और तापमान बहुत कुछ इन विकिरणों पर निर्भर करता है, अतः ज्योतिषीय आधार पर जलवायु विभाजन के सर्वोचित कारण हैं। इस आधार पर पूरी पृथ्वी 5 जलवायु क्षेत्रों में बाँटी गई है।

(1) उष्ण कटिबन्ध या टॉरिड (Torrid) क्षेत्र

यह क्षेत्र $23\frac{1}{2}°$ उ से $23\frac{1}{2}°$ द के मध्य का भू भाग है। इन्हीं अक्षांशों के मध्य सूर्य वर्ष भर भ्रमण करता है। 21 मार्च को विषुवत् रेखा पार कर गर्मियों में सूर्य उत्तर की ओर बढ़ता जाता है तथा 23 जून को $23\frac{1}{2}°$ उ पर सीधा चमकता है, जो उत्तरी गोलार्द्ध में विषुवत् रेखा से सूर्य की अधिकतम दूरी की स्थिति है। तत्पश्चात् सूर्य लौटता है और 21 सितम्बर को विषुवत् रेखा पार कर दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थानान्तरित हो जाता है। इस गोलार्द्ध में यह $23\frac{1}{2}°$ द तक की यात्रा 21 दिसम्बर को पूरी करने के बाद पुनः वापिस आता है। इस प्रकार विषुवत् रेखा से सूर्य की अधिकतम दूरियों के बीच का क्षेत्र उष्ण कटिबन्ध है।

इस क्षेत्र के प्रत्येक स्थान पर सूर्य वर्ष में दो बार दोपहर को लम्बवत् अर्थात् शून्य दिक्पात (declination) पर चमकता है। कहीं भी दोपहर के समय सूर्य की ऊँचाई 43°

आँकड़ों में इतना अन्तर है कि दोनों नगरों के जलवायु में बहुत भिन्नता आ जाती है। काहिरा शुष्क (arid) तथा गलवेस्टन नम (humid) जलवायु की श्रेणी में आता है।

सारणी 12.1

स्थान	तापमान °C						वार्षिक वर्षा (सेमी)
	जनवरी	अप्रैल	जुलाई	अक्टूबर	वार्षिक	परिसर	
काहिरा	11.5	19.8	27.2	22.1	20.1	15.7	3.3
गैलवेस्टन	12.0	20.3	28.3	22.3	20.8	16.3	117.1

12.11 किसी स्थान के जलवायु के निर्धारण में अनेक तत्व सम्मिलित किये जाते हैं, जिनकी प्रकृति अत्यधिक चर (variable) होती है। अतः किन्हीं दो स्थानों के जलवायु का पूर्ण रूप से सर्वसम (identical) होना असम्भव है।

विभिन्न जलवायु प्रकारों की इस भारी संख्या को देखते हुए अध्ययन की सुविधा के लिए, इनका लगभग समान समूहों में वर्गीकरण करना आवश्यक हो जाता है।

12.20 जलवायु का ज्योतिषीय (Astronomical) वर्गीकरण

क्योंकि पृथ्वी पर पड़ने वाली सौर विकिरणों की मात्रा अक्षांशों के साथ बदलती है और तापमान बहुत कुछ इन विकिरणों पर निर्भर करता है, अतः ज्योतिषीय आधार पर जलवायु विभाजन के तर्कोचित कारण है। इस आधार पर पूरी पृथ्वी 5 जलवायु क्षेत्रों में बाँटी गई है।

(1) उष्ण कटिबन्ध या टारिड (Torrid) क्षेत्र

यह क्षेत्र $23\frac{1}{2}°$ उ से $23\frac{1}{2}°$ द के मध्य का भू भाग है। इन्हीं अक्षांशों के मध्य सूर्य वर्ष भर भ्रमण करता है। 21 मार्च को विषुवत् रेखा पार कर गर्मियों में सूर्य उत्तर की ओर बढ़ता जाता है तथा 23 जून को $23\frac{1}{2}°$ उ पर सीधा चमकता है जो उत्तरी गोलार्द्ध में विषुवत् रेखा से सूर्य की अधिकतम दूरी की स्थिति है। तत्पश्चात् सूर्य लौटता है और 21 सितम्बर को विषुवत् रेखा पार कर दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थानान्तरित हो जाता है। इस गोलार्द्ध में यह $23\frac{1}{2}°$ द तक की यात्रा 21 दिसम्बर को पूरी करने के बाद पुनः वापिस आता है। इस प्रकार विषुवत् रेखा से सूर्य की अधिकतम दूरियों के बीच का क्षेत्र उष्ण कटिबन्ध है।

इस क्षेत्र के प्रत्येक स्थान पर सूर्य वर्ष में दो बार दोपहर को लम्बवत् अर्थात् शून्य दिक्पात (declination) पर चमकता है। कहीं भी दोपहर के समय सूर्य की ऊँचाई 43°

से कम नही होती तथा प्रकाश की अवधि $10\frac{1}{2}$ घण्टे से कम नही होती । फलस्वरूप तापमान की ऋतु विभिन्नता बहुत कम हो जाती है और तापमान वर्ष भर मे दो उच्चतम और दो निम्नतम स्थापित करने की प्रवृत्ति रखता है ।

($0 - 23\frac{1}{2}°$ उ) भाग उत्तरी उष्ण कटिबन्ध तथा ($0 - 23\frac{1}{2}°$ द) भाग दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध कहलाता है ।

(2) मध्य क्षेत्र या शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone)

कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}°$ उ) से आर्कटिक अक्षांश ($66\frac{1}{2}°$ उ) तथा मकर रेखा ($23\frac{1}{2}°$ द) से एन्टार्कटिक अक्षांश ($66\frac{1}{2}$ द) के बीच के भू-भाग क्रमश उत्तरी और दक्षिणी शीतोष्ण क्षेत्र कहलाते हैं ।

शीतोष्ण क्षेत्रो की सीमाओ को अर्थात् आर्कटिक और एन्टार्कटिक अक्षांशो पर सबसे छोटे दिन को सूर्य क्षितिज पर केवल कुछ क्षणो के लिए दिखाई देता है ।

(3) ध्रुवीय क्षेत्र (Polar Zone)

शीतोष्ण क्षेत्र की सीमाओं के आगे वे क्षेत्र आते हैं जहाँ सूर्य प्रतिदिन नही चमकता । 24 घंटे से ज्यादा अवधि के दिन और रात आरम्भ हो जाते हैं । यह अवधि अक्षांशों के साथ बढती जाती है । ये क्षेत्र क्रमश उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र कहलाते हैं ।

इस क्षेत्र को इतनी कम ऊष्मा मिलती है कि जो वनस्पतियो के लिए बहुधा अपर्याप्त होती है ।

12 21 ज्योतिपीय वर्गीकरण का आधार केवल एक तत्त्व, अक्षांश (या सूर्य की ऊँचाई) है । अन्य आवश्यक तत्त्वो के समावेश से जलवायु सम्बन्धी जो तथ्य प्रकट होते हैं, उनसे यह आवश्यक हो जाता है कि ज्योतिपीय ऋतुओ और जलवायु वर्गीकरण की विचारधारा को संशोधित किया जाए तथा विभिन्न जलवायु क्षेत्रो की सीमाओ मे भी तथ्यो के अनुरूप परिवर्तन किया जाए । जलवायु उत्पन्न करने वाले भौतिक कारणो को आधार मानकर जलवायु का वर्गीकरण किया जा सकता है, किन्तु इसमे मौसम तत्त्वो की समानता पर भी ध्यान देना आवश्यक होगा । बिना मौसम तत्त्वो के समावेश के, वर्गीकरण पूर्णत जननिक (जेनेटिकल) होगा, जिसमे यह सम्भावना रहेगी कि एक ही समूह म विभिन्न जलवायु क्षेत्र शामिल हो जाएँ । जैसे–यदि मानसून उत्पत्ति के भौतिक कारणो के आधार पर एक वर्ग बनाया जाए, तो उसम भारत के बहुत से भाग के साथ, एशियाई द्वीपो के अन्य पूर्वी तट भी आ जाएँगे जबकि कारणो से समानता होते हुए भी इन क्षेत्रो की वास्तविक जलवायु परस्पर भिन्न हैं ।

जलवायु वर्गीकरण मे तापमान और वर्षा सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं । वनस्पतियो की उत्पत्ति और वृद्धि, जो ससार भर की अर्थ-व्यवस्था का आधार है, इन्ही पर निर्भर करती है । इसके अलावा सम्पूर्ण कार्बनिक और अकार्बनिक जगत पर तापमान और जल प्रमुख (डोमिनेटिंग) प्रभाव रखते हैं ।

से कम नही होती तथा प्रकाश की अवधि $10\frac{1}{2}$ घण्टे से कम नही होती। फलस्वरूप तापमान की ऋतु विभिन्नता बहुत कम हो जाती है और तापमान वर्ष भर में दो उच्चतम और दो निम्नतम स्थापित करने की प्रवृत्ति रखता है।

($0-23\frac{1}{2}°$ उ) भाग उत्तरी उष्ण कटिबन्ध तथा ($0-23\frac{1}{2}°$ द) भाग दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध कहलाता है।

(2) मध्य क्षेत्र या शीतोष्ण कटिबन्ध (Temperate Zone)

कर्क रेखा ($23\frac{1}{2}°$ उ) से आर्कटिक अक्षांश ($66\frac{1}{2}°$ उ) तथा मकर रेखा ($23\frac{1}{2}°$ द) से एन्टार्कटिक अक्षांश ($66\frac{1}{2}$ द) के बीच के भू-भाग क्रमश उत्तरी और दक्षिणी शीतोष्ण क्षेत्र कहलाते हैं।

शीतोष्ण क्षेत्रो की सीमाओ को अर्थात् आर्कटिक और एन्टार्कटिक अक्षांशों पर सबसे छोटे दिन को सूर्य क्षितिज पर केवल कुछ क्षणो के लिए दिखाई देता है।

(3) ध्रुवीय क्षेत्र (Polar Zone)

शीतोष्ण क्षेत्र की सीमाओं के आगे वे क्षेत्र आते हैं जहाँ सूर्य प्रतिदिन नही चमकता। 24 घटे से ज्यादा अवधि के दिन और रात आरम्भ हो जाते हैं। यह अवधि अक्षांशों के साथ बढती जाती है। ये क्षेत्र क्रमश उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र कहलाते हैं।

इस क्षेत्र को इतनी कम ऊष्मा मिलती है कि जो वनस्पतियों के लिए बहुधा अपर्याप्त होती है।

12 21 ज्योतिषीय वर्गीकरण का आधार केवल एक तत्त्व, अक्षांश (या सूर्य की ऊँचाई) है। अन्य आवश्यक तत्त्वो के समावेश से जलवायु सम्बन्धी जो तथ्य प्रकट होते हैं, उनसे यह आवश्यक हो जाता है कि ज्योतिषीय ऋतुओ और जलवायु वर्गीकरण की विचारधारा को सशोधित किया जाए तथा विभिन्न जलवायु क्षेत्रो की सीमाओ मे भी तथ्यो के अनुरूप परिवर्तन किया जाए। जलवायु उत्पन्न करने वाले भौतिक कारणो को आधार मानकर, जलवायु का वर्गीकरण किया जा सकता है, किन्तु इसमे मौसम तत्त्वों की समानता पर भी ध्यान देना आवश्यक होगा। बिना मौसम तत्त्वों के समावेश के, वर्गीकरण पूर्णत जननिक (जेनेटिकल) होगा, जिसमे यह सम्भावना रहेगी कि एक ही समूह मे विभिन्न जलवायु क्षेत्र शामिल हो जाएँ। जैसे–यदि मानसून उत्पत्ति के भौतिक कारणो के आधार पर एक वर्ग बनाया जाए, तो उसमे भारत के बहुत से भाग के साथ, एशियाई द्वीपो व अन्य पूर्वी तट भी आ जाएँगे जबकि कारणो से समानता होते हुए भी इन क्षेत्रो की वास्तविक जलवायु परस्पर भिन्न हैं।

जलवायु वर्गीकरण मे तापमान और वर्षा सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। वनस्पतियो की उत्पत्ति और वृद्धि, जो ससार भर की अर्थ-व्यवस्था का आधार है पर निर्भर करती है। इसके अलावा सम्पूर्ण कार्बनिक और अकार्बनिक जगत मान और जल प्रमुख (डोमिनेटिंग) प्रभाव रखते हैं।

12 22 सी डब्ल्यू थार्नथवेट के शब्दो मे "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारो का वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो के सदर्भ मे सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है। वर्गीकरण की स्कीम न सिर्फ इन प्रकारो की भिन्नता दर्शित करे बल्कि जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रकारो के आपसी सम्बन्ध भी स्पष्ट करदे। स्कीम स्वय इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे ससार के जलवायु को अकित (point-out) करने म समर्थ हो।"

वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है। एक कृषि विशेषज्ञ की प्रणाली तापमान और वर्षा के आकडो पर आधारित हो सकती है, जबकि वमानिक (aviation) आवश्यकताओ के लिए किए गए वर्गीकरण मे वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं।

12 30 कोपेन का वर्गीकरण

जर्मन जीव वज्ञानिक ब्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकाश जीवन जलवायु के अध्ययन म बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के सम्बन्धो के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की। इसके लिए उसने फ्रासीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी०, कन्डोल द्वारा तैयार किए गए भू वनस्पति मानचित्र के जरिये सन् 1900 मे अपनी स्कीम प्रस्तुत की जिसे तापमान और वर्षा के महत्त्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 मे स्वय सशोधित किया। तब से अनेक जलवायु वैज्ञानिको और भूगोलशास्त्रियो ने आवश्यकतानुसार इसम अनेक सशोधन किए हैं। विशेषकर जर्मन जलवायु विशेषज्ञ आर० जीजर ने कोपेन के साथ मिलकर इसम मूलभूत परिवर्तन तथा परिवर्धन किया।

12 31 कोपेन ने सारे ससार को 5 जलवायु समूहो, A B, C, D, और E मे बाँटा है, जिनका तात्पर्य निम्नाकित है—

A—उष्ण कटिबन्ध नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12 32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमे से प्रत्येक समूह मे जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित हैं, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रो मे वर्षा, वर्ष भर होती है, कुछ मे सर्दियाँ सूखी रहती हैं और कुछ मे गर्मियाँ। इस प्रकार A, C और D मे प्रत्येक समूह निम्नाकित तीन प्रकारो मे बाँटा गया है—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो (वर्ष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो (जहाँ वर्षा केवल सर्दियो मे हो)

12 22 सी डब्ल्यू थान्थवेट के शब्दों मे "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारो का वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो के सन्दभ मे सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है। वर्गीकरण की स्कीम न सिफ इन प्रकारो की भिन्नता दर्शित करे बल्कि जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रकारो मे आपसी सम्बन्ध भी स्पष्ट करदे। स्कीम स्वय इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे ससार मे जलवायु को अकित (point out) करने मे समथ हो।'

वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो का चुनाव इस बात पर निभर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है। एक कृषि विशेषज्ञ की प्रणाली तापमान और वर्षा के आकडो पर आधारित हो सकती है, जबकि वैमानिक (aviation) आवश्यकताओ के लिए किए गए वर्गीकरण मे वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं।

12 30 कोपेन का वर्गीकरण

जमन जीव वैज्ञानिक व्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकाश जीवन जलवायु के अध्ययन मे बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के सम्बन्धो के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की। इसके लिए उसने फ्रासीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी० कडोल द्वारा तैयार किए गए भू-वनस्पति मानचित्र के जरिये सन् 1900 मे अपनी स्कीम प्रस्तुत की, जिसे तापमान और वर्षा के महत्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 म स्वय सशोधित किया। तब से अनेक जलवायु वैज्ञानिको और भूगोलशास्त्रियो ने आवश्यकतानुसार इसम अनेक सशोधन किए हैं। विशेषकर जमन जलवायु विशेषज्ञ आर० जीजर ने कोपेन के साथ मिलकर इसमे मूलभूत परिवतन तथा परिवधन किया।

12 31 कोपेन ने सारे ससार को 5 जलवायु समूहो, A B, C, D, और E मे बाँटा है, जिनका तात्पर्य निम्नाकित है—

A—उष्ण कटिबन्ध नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12 32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमे से प्रत्येक समूह मे जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित हैं, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रो मे वर्षा, वष भर होती है, कुछ मे सर्दियाँ सखी रहती हैं और कुछ मे गर्मियाँ। इस प्रकार A, C और D मे प्रत्येक समूह निम्नाकित तीन प्रकारो मे बाँटा गया है—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो (वर्ष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो (जहाँ वर्षा केवल सर्दियो मे हो)

12 22 सी डब्ल्यू थान्थवेट के शब्दो मे "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारो का वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो के सन्दभ मे सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है । वर्गीकरण की स्कीम न सिफ इन प्रकारो की भिन्नता दर्शित करे बल्कि जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रकारो के आपसी सम्बन्ध भी स्पष्ट करदे । स्कीम स्वय इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे ससार के जलवायु को अकित (point-out) करने मे समथ हो ।'

वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो का चुनाव इस बात पर निभर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है । एक कृषि विशेषज्ञ की प्रणाली तापमान और वर्षा के आंकडो पर आधारित हो सकती है, जबकि वैमानिक (aviation) आवश्यकताओ के लिए किए गए वर्गीकरण मे वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं ।

12 30 कोपेन का वर्गीकरण

जमन जीव वैज्ञानिक ब्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकाश जीवन जलवायु के अध्ययन म बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के सम्बन्धो के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की । इसके लिए उसने फासीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी० कडोल द्वारा तैयार किए गए भू वनस्पति मानचित्र के जरिय सन् 1900 मे अपनी स्कीम प्रस्तुत की, जिसे तापमान और वर्षा के महत्त्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 मे स्वय सशोधित किया । तब से अनेक जलवायु वैज्ञानिको और भूगोलशास्त्रियो ने आवश्यकतानुसार इनम अनेक सशोधन किए हैं । विशपकर जमन जलवायु विशेषज्ञ आर० जीजर ने कोपेन के साथ मिलकर इसम मूलभूत परिवतन तथा परिवधन किया ।

12 31 कोपेन ने सारे ससार को 5 जलवायु समूहो, A, B, C, D, और E म बाँटा है, जिनका तात्पर्य निम्नाकित है—

A—उष्ण कटिबन्ध नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12 32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमे से प्रत्येक समूह म जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित हैं, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रो म वर्षा, वर्ष भर होती है, कुछ मे सर्दियाँ सूखी रहती हैं और कुछ म गर्मियाँ । इस प्रकार A, C और D मे प्रत्येक समूह निम्नाकित तीन प्रकारो मे *बाँटा गया है*—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो (वष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो (जहाँ वर्षा केवल सर्दियो मे हो)

12 22 सी डब्ल्यू थान्थवेट के शब्दो मे "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारो का वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो के सन्दर्भ मे सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है। वर्गीकरण की स्कीम न सिर्फ इन प्रकारो की भिन्नता दर्शित करे बल्कि जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रकारो के आपसी सम्बन्ध भी स्पष्ट करदे। स्कीम स्वय इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे ससार के जलवायु को अंकित (point out) करने मे समर्थ हो।'

वास्तविक क्रियाशील तत्त्वो का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है। एक कृषि विशेषज्ञ की प्रणाली तापमान और वर्षा के आकडो पर आधारित हो सकती है जबकि वैमानिक (aviation) आवश्यकताओ के लिए किए गए वर्गीकरण मे वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं।

12 30 कोपेन का वर्गीकरण

जर्मन जीव वैज्ञानिक ब्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकाश जीवन जलवायु के अध्ययन मे बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के सम्बन्धो के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की। इसके लिए उसने फ्रासीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी० कडोल द्वारा तैयार किए गए भू वनस्पति मानचित्र के जरिय सन् 1900 मे अपनी स्कीम प्रस्तुत की, जिस तापमान और वर्षा के महत्त्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 में स्वयं सशोधित किया। तब से अनेक जलवायु वैज्ञानिको और भूगोलशास्त्रियो ने आवश्यकतानुसार इनमे अनेक सशोधन किए हैं। विशेषकर जर्मन जलवायु विशेषज्ञ आर० जीजर ने, कोपेन के साथ मिलकर इसमे मूलभूत परिवर्तन तथा परिवर्धन किया।

12 31 कोपेन ने सारे ससार को 5 जलवायु समूहो, A B, C, D, और E मे बाँटा है, जिनका तात्पर्य निम्नाकित है—

A—उष्ण कटिबन्ध नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12 32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमे से प्रत्येक समूह मे जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित हैं, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रो मे वर्षा, वर्ष भर होती है, कुछ मे सर्दियाँ सूखी रहती हैं और कुछ मे गर्मियाँ। इस प्रकार A, C और D मे प्रत्येक समूह निम्नांकित तीन प्रकारो मे बाँटा गया है—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो (वर्ष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो (जहाँ वर्षा केवल सर्दियो मे हो)

12 22 सी डब्ल्यू था यवेट के शब्दो मे "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारो का वास्तविक क्रियाशील तत्वो के सदर्भ मे सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है। वर्गीकरण की स्कीम न सिर्फ इन प्रकारो की भिन्नता दर्शित करे बल्कि जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रकारो के आपसी सम्बन्ध भी स्पष्ट करदे। स्कीम स्वय इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे ससार के जलवायु को अकित (point-out) करने म समर्थ हो।"

वास्तविक क्रियाशील तत्वो का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है। एक कृषि विशेषज्ञ को प्रणाली तापमान और वर्षा क आकडो पर आधारित हो सकती है, जबकि वमानिक (aviation) आवश्यकताओ के लिए किए गए वर्गीकरण मे वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व हैं।

12 30 कोपेन का वर्गीकरण

जमन जीव वैज्ञानिक ब्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकाश जीवन जलवायु के अध्ययन म बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के सम्बन्धो के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की। इसके लिए उसने फ्रासीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी॰ कडोल द्वारा तैयार किए गए भू-वनस्पति मानचित्र के जरिय सन् 1900 मे अपनी स्कीम प्रस्तुत की जिसे तापमान और वर्षा के महत्त्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 मे स्वयं सशोधित किया। तब से अनेक जलवायु वज्ञानिको और भूगोलशास्त्रियो ने आवश्यकतानुसार इनम अनेक सशोधन किए हैं। विशेषकर जमन जलवायु विशेषज्ञ आर॰ जीजर ने कापेन के साथ मिलकर इसम मूलभूत परिवतन तथा परिवधन किया।

12 31 कोपेन ने सारे ससार को 5 जलवायु समूहो, *A, B, C, D,* और *E* म बाँटा है, जिनका तात्पर्य निम्नाकित है—

A—उष्ण कटिबन्ध नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12 32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमे से प्रत्येक समूह मे जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित हैं, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रो मे वर्षा, वष भर होती है, कुछ मे सर्दियाँ सूखी रहती हैं और कुछ मे गर्मियाँ। इस प्रकार A, C और D म प्रत्येक समूह निम्नाकित तीन प्रकारो मे बाँटा गया है—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो (वष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हो (जहाँ वर्षा केवल सर्दियो म हो)

12 22 सी डब्ल्यू थार्नथवेट के शब्दों में "जलवायु वर्गीकरण का उद्देश्य विभिन्न जलवायु प्रकारों का वास्तविक क्रियाशील तत्त्वों के सन्दर्भ में सुस्पष्ट विवरण प्रदान करता है। वर्गीकरण की स्कीम न सिर्फ इन प्रकारों की भिन्नता दर्शित करे बल्कि जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रकारों के आपसी सम्बन्ध भी स्पष्ट कर दे। स्कीम स्वयं इतनी पर्याप्त हो कि वह सारे संसार के जलवायु को अंकित (point-out) करने में समर्थ हो।"

वास्तविक क्रियाशील तत्त्वों का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि वर्गीकरण किस प्रयोजन से किया जा रहा है। एक कृषि विशेषज्ञ की प्रणाली तापमान और वर्षा के आंकड़ों पर आधारित हो सकती है, जबकि वैमानिक (aviation) आवश्यकताओं के लिए किए गए वर्गीकरण में वायुप्रवाह, बादल और दृश्यता (visibility) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं।

12 30 कोपेन का वर्गीकरण

जर्मन जीव वैज्ञानिक व्लादीमीर कोपेन (1846–1940), जिसने अपना अधिकांश जीवन जलवायु के अध्ययन में बिताया, ने जलवायु और वनस्पति के सम्बन्धों के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की योजना तैयार की। इसके लिए उसने फ्रांसीसी वनस्पति वैज्ञानिक डी०, कन्डोल द्वारा तैयार किए गए भू वनस्पति मानचित्र के जरिये सन् 1900 में अपनी स्कीम प्रस्तुत की, जिसे तापमान और वर्षा के महत्व पर और अधिक बल देकर सन् 1918 में स्वयं संशोधित किया। तब से अनेक जलवायु वैज्ञानिकों और भूगोलशास्त्रियों ने आवश्यकतानुसार इसमें अनेक संशोधन किए हैं। विशेषकर जर्मन जलवायु विशेषज्ञ आर० जीजर ने कोपेन के साथ मिलकर इसमें मूलभूत परिवर्तन तथा परिवर्धन किया।

12 31 कोपेन ने सारे संसार को 5 जलवायु समूहों, A B, C D, और E में बाँटा है, जिनका तात्पर्य निम्नांकित है—

A—उष्ण कटिबन्ध नम (या वन) जलवायु

B—शुष्क जलवायु

C—शीतोष्ण नम जलवायु

D—तुषार वन जलवायु

E—ध्रुवीय या तुषार जलवायु

12 32 नम जलवायु (Humid Climate)

इनमें से प्रत्येक समूह में जलवायु के कई प्रकार सम्मिलित हैं, जैसे—नम जलवायु समूह A, C और D के कुछ क्षेत्रों में वर्षा, वर्ष भर होती है, कुछ में सर्दियाँ सूखी रहती हैं और कुछ में गर्मियाँ। इस प्रकार A, C और D में प्रत्येक समूह निम्नांकित तीन प्रकारों में बाँटा गया है—

f—वे भाग जहाँ शुष्क काल अनुपस्थित हो (वर्ष भर वर्षा वाले क्षेत्र)

s—वे भाग जहाँ गर्मियाँ शुष्क हों (जहाँ वर्षा केवल सर्दियों में हो)

w—वे भाग, जहाँ सर्दियाँ शुष्क हों (जहाँ वर्षा केवल गर्मियों में हो)

इस तरह 9 जलवायु प्रकार प्राप्त हुए—*Af*, *As*, *Aw*, *Cf*, *Cs*, *Cw*, *Df*, *Ds*, *Dw* जहाँ *Af* *Cf* और *Df* क्रमश उष्ण कटिबंध (A), मध्य अक्षांशों (C) और तुषार वन जलवायु (D) के उन भागों को व्यक्त करते हैं, जहाँ वर्ष का कोई भी काल शुष्क नहीं है अर्थात् जो वर्ष भर वर्षा प्राप्त करते हैं।

इसी प्रकार *As*, *Cs* और *Ds*, क्रमश A, C और D जलवायु क्षेत्रों के वे भाग हैं जहाँ गर्मियाँ शुष्क हों और सारी वर्षा सर्दियों में ही होती हो। सैद्धान्तिक रूप से कोपेन ने इन तीन प्रकारों को वर्गीकरण की श्रेणी में रखा है, किन्तु वास्तविकता यह है कि *As* और *Ds* प्रकार की जलवायु के क्षेत्र पृथ्वी पर नगण्य हैं। उष्ण कटिबंधों और उच्च अक्षांशों में अधिक तापमान के कारण, गर्मियों में ही नमी अधिक होती है। अत इन क्षेत्रों में वर्षा अगर होती है तो गर्मियों में ही।

Aw, *Cw* और *Dw* क्रमश A C और D जलवायु क्षेत्रों के वे स्थान हैं, जहाँ सर्दियाँ सूखी और गर्मियाँ काफी नम रहती हैं।

उपर्युक्त सभी जलवायु प्रकार, वर्ष भर में यथेष्ट अवक्षेपण प्राप्त करते हैं और वनस्पति तथा वनों से भरपूर हैं A C और D को वृक्ष जलवायु (tree climate) से भी सम्बोधित किया जा सकता है, क्योंकि इन्ही जलवायुओं में ऊँचे वृक्षों को उगने और बढ़ने के लिए पर्याप्त सुविधा प्राप्त होती है।

12 33 शुष्क जलवायु समूह (B) को, शुष्कता की मात्रा के आधार पर दो प्रकारों में बाँटा गया है—S और W

S—उस जलवायु को व्यक्त करता है, जहाँ कम से कम इतनी वर्षा हो जाती है कि घास या स्टेपी (steppe) वनस्पतियाँ उग सकें।

W—बिल्कुल रेगिस्तानी जलवायु को व्यक्त करता हुआ, जहाँ वर्षा का नितान्त अभाव रहता है।

इस तरह जलवायु प्रकार BS और BW क्रमश अर्द्ध-शुष्क या स्टेपी और रेगिस्तानी जलवायु के संकेत हैं।

12 34 ध्रुवीय जलवायु (Polar Climate)

ध्रुवीय शीत जलवायु (E) T और F प्रकारों में बाँटा गया है, जो क्रमश टुन्ड्रा वनस्पति तथा स्थायी तुषार (frost) युक्त जलवायु व्यक्त करते हैं। ET जलवायु वाले क्षेत्रों में टुन्ड्रा वनस्पतियाँ उगने योग्य सुविधा प्राप्त करती हैं, जबकि EF जलवायु वाले क्षेत्र वर्ष भर घने तुषार के नीचे दबे रहते हैं।

12 35 A से E तक 5 वर्गों में जलवायु को बाँटने की धारणा ज्योतिषीय वर्गीकरण से ही ली गई प्रतीत होती है। इन वर्गों में पड़ने वाले क्षेत्र भी ज्योतिषीय वर्गीकरण के क्षेत्रों से बहुत कुछ क्षमता रखते हैं। अन्तर केवल यह है कि कोपेन का वर्गीकरण

तापमान और वर्षा—दोनो तत्त्वो पर आधारित है, जबकि ज्योतिषीय वर्गीकरण मे केवल तापमान को आधार माना गया है। इसके अलावा कोपेन का वर्गीकरण विशेष महत्त्वपूर्ण इसलिए है कि इसमे तापमान और वर्षा के आंकिक मानो द्वारा विभिन्न जलवायु समूहो की निश्चित सीमा निर्धारित कर दी गई है। ये मान मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर करते हैं कि ये दोनों मौसम तत्त्व वनस्पतियो के विकास को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

12 40 जलवायु समूहो का सीमांकन

(1) उष्ण कटिबन्धी वन जलवायु (A)

जलवायु प्रकार A तीन समूहों मे विभक्त हैं—Af, As और Aw।

इन तीनो के लिए तापमान की सीमा यह है कि सबसे सर्द महीने का औसत तापमान 18°C या इससे अधिक हो।

इसके साथ यदि शुष्कतम महीने की वर्षा कम से कम 6 सेमी हो, तो जलवायु *Af* (वर्ष भर वर्षा वाले उष्ण कटिबन्धीय वन जलवायु) होगी। यदि ऐसा नही है, तो जलवायु A*s* या A*w* होगा। A*s* वह जलवायु है, जिसमे शुष्क महीने (6 सेमी से कम वर्षा वाले) गर्मियो में हो तथा A*w* वह जलवायु है, जिसमें शुष्क महीने सर्दियो मे पड़ते हो, A*s* (शुष्क गर्मियां वाली उष्ण कटिबन्धीय वन जलवायु) ससार के बहुत ही कम क्षेत्रो मे मिलती है, क्योकि दोनो ही गोलार्द्धो मे उष्ण कटिबन्ध के प्राय सभी क्षेत्र गर्मी मे अपनी अधिकतम वर्षा प्राप्त करते हैं।

अत स्पष्ट है कि यदि शुष्कतम महीने की वर्षा 6 सेमी से कम है, तो जलवायु प्राय A*w* होगी।

12 41 उष्ण कटिबन्धो मे कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ वर्ष का एक बड़ा भाग शुष्क रहता है या बहुत कम वर्षा प्राप्त करता है। लेकिन कुछ महीने, जिन्हें मानसून ऋतु कहते हैं इतनी अधिक वर्षा देते हैं कि वनो के विकास के लिए पृथ्वी की सतह को शुष्क महीनो मे भी पर्याप्त नमी मिलती रहती है। 6 सेमी की सीमा सन्तुष्ट न करने के कारण, ये क्षेत्र A*f* जलवायु मे नही आते। इसके अलावा नमी के दृष्टिकोण से इनकी स्थिति A*w* जलवायु से अच्छी रहती है। वास्तव मे इन क्षेत्रो की जलवायु A*f* और A*w* के मध्य की स्थिति रखती है। अत इसे एक नया नाम उष्ण कटिबन्धीय मानसून जलवायु (A*m*) दिया गया है।

A*m* और A*w* के बीच आंकिक सीमा निम्नांकित प्रकार से दी गई है —

यदि शुष्कतम महीने की वर्षा 6 सेमी से कम किन्तु $\left(10-\frac{r}{25}\right)$ सेमी के बराबर या अधिक हो, तो जलवायु A*m* होगा। यदि शुष्कतम महीने की वर्षा $\left(10-\frac{r}{25}\right)$ सेमी से कम हो तो जलवायु A*w* होगा। यहाँ *r* सेमी म औसत वार्षिक वर्षा का मान है।

उदाहरण के लिए, यदि किसी स्थान की वार्षिक वर्षा 175 सेमी हो तो, $10-\frac{r}{25}=3$ यदि उस स्थान के शुष्कतम महीने की वर्षा 3 सेमी या अधिक (किन्तु 6 सेमी से कम) है तो जलवायु A*m* होगा। यदि शुष्कतम महीने की वर्षा 3 सेमी से कम है, तो जलवायु A*w* होगा।

12 42 संक्षिप्त-विवरण

संकेत		सीमा
(i)	(ii)	
A		सबसे सर्द महीने का औसत तापमान $>18°C$
	f	शुष्कतम महीने की वर्षा (*a* सेमी) >6
	m	$10-r/25\leqslant a<6$
	w	$a<-10\frac{r}{25}$

(2) शुष्क जलवायु (B)

वनस्पतियों के लिए प्रभावकारी नमी की मात्रा केवल वर्षा की मात्रा पर ही नहीं, बल्कि उस स्थान के वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन पर भी निर्भर करती है। वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन के आंकड़े अभी बहुत कम उपलब्ध हैं। लेकिन तापमान और अवक्षेपण के समुचित सन्तुलन से इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि कितने तापमान पर वर्षा की कितनी मात्रा वनस्पतियों के लिए आवश्यक होगी। इसी सन्तुलन के आधार पर कोपेन ने शुष्क और वन जलवायु के बीच सीमांकन करने के लिए समीकरण स्थापित किया है। यह समीकरण इस प्रकार है —

$$r=2(t+7) \qquad (i)$$

जहां, *r* औसत वार्षिक वर्षा (सेमी) और *t* औसत वार्षिक तापमान (t°C) है।

यदि किसी स्थान की वास्तविक वार्षिक वर्षा (r_a), समीकरण द्वारा प्राप्त की गई मात्रा *r* अर्थात् $2(t+7)$ से कम है, तो उस स्थान का जलवायु शुष्क (B) कहलाएगा।

यदि $r_a>r$, तो जलवायु नम जलवायु (A, C या D) होगा। कोपेन के अनुसार, वास्तविक वर्षा r_a यदि *r* से कम हो जाए, तो यह वनों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त नहीं होगी और वनस्पतियां स्टेपी प्रकार की होने लगेंगी।

समीकरण (i) से स्पष्ट है कि गर्म स्थानों पर नम जलवायु होने के लिए अधिक वर्षा की आवश्यकता होगी।

यहां यह नोट कर लेना आवश्यक है कि यह समीकरण तभी सही है जब वर्ष भर वर्षा लगभग समान रूप से वितरित हो। कोपेन के अनुसार यह समीकरण उन्हीं स्थानों के

लिए लागू हो सकेगा, जहाँ 6 गम (अप्रैल सितम्बर, उत्तरी गोलार्द्ध मे) तथा 6 सद (अक्टूबर से मार्च, उत्तरी गोलार्द्ध मे) महीनो की वर्षा, कुल वार्षिक वर्षा के 70% से अधिक न हो।

यदि गर्मियों की वर्षा अधिक होगी तो वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन भी अधिक होगा। अत नम और शुष्क जलवायु मे बीच वर्षा की सीमा बढ़ जाएगी। सर्दियो मे अधिक वर्षा प्राप्त करने वाले क्षेत्रो मे अपेक्षाकृत वाष्पीकरण-वाष्पोत्सजन द्वारा कम जल ह्रास होता है। अत इन स्थानों के लिए सीमा घट जाएगी।

इन दोनो स्थितियो के लिए कोपेन ने अलग अलग समीकरण दिए हैं

(1) यदि 70% से अधिक वर्षा 6 गर्मियो के महीने मे होती है तो

$$r = 2\,(t + 14) \qquad \text{(ii)}$$

अर्थात् यदि वास्तविक वर्षा, 2 (t + 14) सेमी से कम है, तो जलवायु शुष्क होग ।

(2) यदि 70% से अधिक वर्षा 6 सर्दियो के महीनो में होती है, तो

$$r = 2\,(t + 1) \qquad \text{(iii)}$$

अर्थात् यदि वास्तविक वार्षिक वर्षा, 2 (t + 1) सेमी से कम है, तो उस स्थान का जलवायु शुष्क कहलाएगा।

समीकरण (1) और (2) से स्पष्ट है कि गर्मियों मे अधिकतम वर्षा वाले क्षेत्रो मे जलवायु शुष्क न होने के लिए, सम वर्षा वितरण वाले क्षेत्रो की अपेक्षा 14 सेमी वर्षा की आवश्यकता अधिक होगी। इसी प्रकार, समीकरण (i) और (ii) से सर्दियो मे अधिक वर्षा वाले क्षेत्रो में जलवायु शुष्क न होने के लिए सम वर्षा वितरण वाले क्षेत्रो की अपेक्षा 12 सेमी वर्षा कम चाहिए।

12 43 शुष्क जलवायु को दो समूहों मे बाँटा गया है, BS (स्टैपीजलवायु) और BW (रेगिस्तानी जलवायु)। BS वह जलवायु है, जिसमे वार्षिक वर्षा r से कम हो किन्तु $\frac{r}{2}$ से अधिक हो। BW, वह जलवायु है, जिसमे वार्षिक वर्षा $\frac{r}{2}$ या उससे कम हो। यहाँ r परिस्थितियो के अनुसार (i) (ii) या (iii) द्वारा ज्ञात किया गया मान है।

12 44 उदाहरण किसी स्थान की औसत वार्षिक वर्षा यदि 25 सेमी और औसत वार्षिक तापमान 20°C हो, तो उसका जलवायु निर्धारित कीजिए—

(1) यदि वर्षा वर्ष भर समान रूप से वितरित हो, तो

$$\begin{aligned} r &= 2\,(t + 7) \\ &= 2\,(20 + 7) \\ &= 54 \end{aligned}$$

$$\frac{r}{2} = 27$$

स्पष्ट है कि $r_a < \frac{r}{2}$

अतः उस स्थान का जलवायु 'BW' है।

(2) यदि स्थान की अधिकतम वर्षा गर्मियों में हो, तो

$$r = 2\,(t + 14)$$
$$= 2\,(20 + 14) = 68$$

$$\frac{r}{2} = 34$$

पुनः $r_a < \frac{r}{2}$

अतः जलवायु 'BW' है।

(3) यदि अधिकतम वर्षा सर्दियों में होती हो तो

$$r = 2\,(t + 1)$$
$$= 2\,(20 + 1) = 42$$

$$\frac{r}{2} = 21$$

स्पष्टतः $r_a > \frac{r}{2}$ तथा $r_a < r$

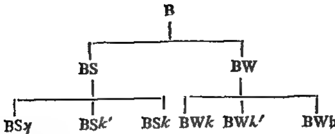
अतः इस स्थिति में जलवायु 'BS' हुआ।

12.45 सशोधित कोपन-वर्गीकरण में तापमान के दृष्टिकोण से भी शुष्क जलवायु को दो भागों में बाँटा गया है :—

(1) शीत शुष्क जलवायु—जिसमें औसत वार्षिक तापमान 18°C से कम हो। इसे संकेत k द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। यदि शुष्क जलवायु ऐसा हो कि सबसे गर्म महीने का तापमान भी 18°C से कम हो, तो उसके लिए संकेत k' लिखा जाता है।

(2) उष्ण शुष्क जलवायु—जिसमें औसत वार्षिक तापमान 18°C से अधिक हो। इसे साधारणतः संकेत h द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

इस प्रकार शुष्क जलवायु को इन समूहों में बाँटा गया है :—



12.46 संक्षिप्त विवरण

संकेत (i)	संकेत (ii)	संकेत (iii)	सीमांकन
B			(i) $r_a < 2(t+7)$, यदि गर्म 6 और सर्द 6 महीनों की कुल वार्षिक वर्षा के 70% से कम हो। (ii) $r_a < 2(t+14)$, यदि गर्म 6 महीनों की वर्षा 70% से अधिक हो। (iii) $r_a < 2(t+1)$, यदि शीतकालीन 6 महीनों की वर्षा 70% से अधिक हो।
	W		यदि वार्षिक वर्षा शुष्क जलवायु की ऊपरी सीमा के आधे के बराबर या कम हो।
	S		वार्षिक वर्षा ऊपरी सीमा से कम हो लेकिन उसके आधे से अधिक हो।
		h	$t > 18$ C
		k	$t < 18$°C
		k'	सबसे गर्म महीने का तापमान < 18°C

(3) मध्य अक्षांशीय उष्ण नम जलवायु (C)

नम जलवायु 'C' अन्य नम जलवायु A और D से सबसे सर्द महीने के औसत तापमान द्वारा पहचाना जाता है। जलवायु 'C' में यह तापमान 18°C से कम लेकिन −3°C के बराबर या अधिक होता है। कोपन के अध्ययन के अनुसार −3°C के औसत तापमान पर धरती पर्याप्त समय तक हिम तहों से ढकी रह सकती है यह सीमा उन्होंने C और D जलवायु के लिए निर्धारित की है। इसके अलावा यह आवश्यक है कि C जलवायु में उष्णतम महीने का तापमान 10°C से अधिक हो। यह सीमा C और D जलवायु को E से अलग करने के लिए निश्चित की गई है।

जैसाकि उद्धृत किया जा चुका है वर्ष के शुष्क अवधि के आधार पर जलवायु 'C' को तीन भागों में बाँटा गया है —

(i) Cs—जहाँ गर्मियाँ शुष्क हों, और अधिकांश वर्षा सर्दियों में होती हो।
(ii) Cw—जहाँ सर्दियाँ शुष्क हों और अधिकांश वर्षा गर्मियों में होती हो।
(iii) Cf वह जलवायु जिसमें वर्ष का कोई भी भाग शुष्क न हो।

इन तीनो को अलग करने के लिए A जलवायु म निर्धारित 6 सेमी वर्षा की सीमा उपयुक्त नही है । A जलवायु वाले क्षेत्रो (निम्न अक्षांशो) म सभी ऋतुओ म तापमान परिसर (रेंज) बहुत कम होने क कारण नगण्य समझा जा सकता है, किन्तु मध्य अक्षांशो म जहाँ C जलवायु प्रभावकारी है, यह परिसर इतना अधिक है कि C जलवायु को शुष्क जलवायु से अलग रखने के लिए विभिन्न ऋतुओ के लिए अलग-अलग सीमा निर्धारित करने की आवश्यकता है । ये सीमायें इस प्रकार दी गई हैं —

(1) Cs—वह जलवायु है जिसम शुष्कतम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा सर्वाधिक नम महीने (सर्दियो म) की वर्षा के एक तिहाई से कम हो । इस शुष्कतम महीने की वर्षा की मात्रा भी 3 सेमी या कम होनी चाहिए । Cs जलवायु के लिए 3 सेमी की सीमा की आवश्यकता इसलिए पडी कि उत्तरी और दक्षिणी अमरिका के मध्य अक्षांशो म पडने वाले पश्चिमी तट क कुछ स्थान, सर्दियो म अधिकतम वर्षा तो प्राप्त करते हैं लेकिन यहाँ गर्मियाँ भी इतनी शुष्क नहीं होती कि उन्हें Cs जलवायु क अन्तगत रखा जा सके । अत गर्मियो के शुष्कतम महीने के लिए 3 सेमी वर्षा की एक अतिरिक्त सीमा निर्धारित की गई है ।

(2) Cw—इसम शुष्कतम महीने (सर्दियो में) की वर्षा, सर्वाधिक नम महीने (गर्मियो म) की वर्षा के 1/10 से कम होनी चाहिये ।

(3) Cf यदि चरम महीनो की वर्षा का अन्तर उपयुक्त सीमाओ स कम है, तो जलवायु Cf होगा ।

(4) मध्य अक्षांशीय अमरिका के पश्चिमी तट के ऐसे स्थान जहाँ शुष्क गर्मियो म सबसे सूखे महीने की वर्षा 3 सेमी से अधिक हो, किन्तु सबसे नम महीने की वर्षा के एक तिहाई स कम होती हो, जिस जलवायु के अन्तगत आते हैं उसे Cfs का नाम दिया गया है । इसका तात्पय यह है कि इन स्थानो पर गर्मियाँ शुष्क तो हैं पर अपेक्षाकृत अधिक शुष्क नही ।

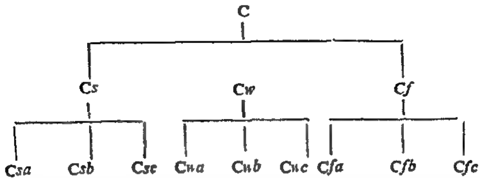
12 47 'C जलवायु के उपयुक्त उपवग वर्षा क आधार पर किए गए हैं । तापमान के आधार पर भी इस जलवायु को कई समूहो म विभक्त किया जा सकता है । सबसे गम और सबसे सद महीनो के औसत तापमान की सीमाएँ निर्धारित करके कोपेन न जलवायु 'C को पुन तीन समूहो a b, और c म विभक्त किया है जो इस प्रकार है —

(i) a—उष्ण गर्मियो का जलवायु, जिसम सबसे गम महीने का तापमान 22°C या इससे अधिक हो ।

(ii) b—सबस गम महीने का तापमान 22°C से कम हो किन्तु कम से कम 4 गम महीनो का तापमान 10°C या इससे अधिक हो ।

(iii) c—सबसे गम महीन का तापमान 22°C से कम हो और 4 स कम ऐसे महीने हो जिनका तापमान 10°C या इससे अधिक हो ।

इस प्रकार जलवायु 'C' निम्नांकित समूहों में बाँटा गया है —



इनमे से जलवायु Csc (वे मध्य अक्षांशीय नम जलवायु जहाँ गर्मियाँ शुष्क हों, सबसे गर्म महीने का तापमान 23°C से कम तथा चार से कम महीनों का तापमान 10°C या अधिक हो) और Cwc (वे मध्य अक्षांशीय नम जलवायु जहाँ सर्दियाँ शुष्क हों, सबसे गर्म महीने का तापमान 22°C तथा चार से कम महीनों का तापमान 10°C या अधिक हो) पृथ्वी पर वास्तविक रूप से लगभग नहीं पाये जाते।

1 48 संक्षिप्त विवरण

संकेत			सीमांकन
(i)	(ii)	(iii)	
C			सबसे गर्म महीने का औसत तापमान >10°C तथा सबसे सर्द महीने का औसत तापमान 18°C तथा −3°C के मध्य हो।
	s		शुष्कतम महीने (गर्मियों में) की वर्षा सबसे नम महीने (सर्दियों में) की वर्षा के एक तिहाई से कम हो तथा 3 सेमी से कम हो।
	w		शुष्कतम महीने (सर्दियों में) की वर्षा सबसे नम महीने (गर्मियों में) की वर्षा के 1/10 से कम हो।
	f		वर्षा s और w की सीमाओं में न पड़े।
		a	उष्णतम महीने का तापमान 22°C या अधिक।
		b	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C से कम तथा चार या अधिक महीने का तापमान 10°C या अधिक हो।
		c	उष्णतम महीने का तापमान 22°C से कम तथा चार से कम महीनों का तापमान 10°C या अधिक हो।

(4) तुषार-वन जलवायु (D)

यह नम जलवायु अन्य नम जलवायु वर्गों A और C से इस बात में भिन्न है कि इसमे सर्दियों का महीना हिम से ढका होता है। इस समय वनस्पतियाँ सुप्तावस्था में होती

है। लेकिन गर्मियों में इतना जल, वर्षा और तुषारपात द्वारा प्राप्त हो जाता है, जो अधिकतर वृक्षों और अन्य वनस्पतियों के लिए पर्याप्त रहता है। अन्य नम जलवायु वर्गों से इसका सीमांकन तापमान के आधार पर किया गया है।

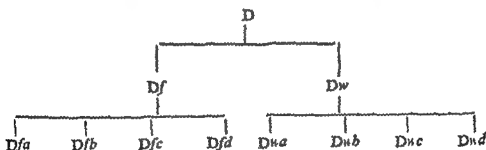
'D' जलवायु में उष्णतम महीने का तापमान 10°C से अधिक तथा सबसे ठंडे महीने का तापमान − 3°C या इससे कम होना चाहिये।

A और C की तरह D को भी तीन जलवायु समूहों *Df*, *Ds* तथा *Dw* में बाँटा जा सकता है। जलवायु '*Ds*' अर्थात् शुष्क गर्मियों वाला तुषार वन जलवायु पृथ्वी पर वास्तविक रूप से लगभग नहीं पाया जाता। इन क्षेत्रों में अधिकांश अवक्षेपण उच्च तापमान के कारण गर्मियों में होता है। सर्दियों का तापमान इतना कम होता है कि पृथ्वी अधिकतर बर्फ से ढकी होती है। अतः इन दिनों अवक्षेपण की सम्भावना बहुत कम हो जाती है।

Df, *Ds* और *Dw* के लिए अवक्षेपण की वही सीमाएँ निर्धारित की गई हैं, जो *Cf* *Cs* और *Cw* के लिए हैं।

तापमान के आधार पर जलवायु D को चार उप-समूहों *a*, *b*, *c*, और *d* में बाँटा गया है। *a*, *b* और *c* के लिए वही सीमाएँ लागू होती हैं, जो जलवायु 'C' में इनके लिए निर्धारित हैं। संकेत '*d*' अत्यधिक ठंडे सर्दियों वाले जलवायु को व्यक्त करने के लिए उपयोग में लाया गया है। इसके लिए सबसे ठंडे महीने का औसत तापमान −38°C से भी कम होना चाहिये।

'D' जलवायु-समूहों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है



12 49 सक्षिप्त परिचय

सकेत			सीमांकन
(i)	(ii)	(iii)	
D			उच्चतम महीने का औसत तापमान $>10°C$ तथा सबसे सद महीने का औसत तापमाम $\leqslant -3°C$
	s		शुष्कतम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा सबसे नम महीने (सर्दियों मे) की वर्षा के एक तिहाई स कम हो तथा 3 सेमी से कम हो।
	w		शुष्कतम महीने (सर्दियो मे) की वर्षा सबसे नम महीने (गर्मियो मे) की वर्षा के 1/10 से कम हो।
	f		वर्षा *s* और *w* की सीमा मे न पडे।
		a	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C या अधिक हो।
		b	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C से कम हो तथा चार या अधिक महीनो का तापमान 10°C या अधिक हो।
		c	उष्णतम महीने का औसत तापमान 22°C से कम हो तथा चार से कम महीनो का तापमान 10°C या अधिक हो।
		d	जब सबसे सद महीने का औसत तापमान – 38°C से कम हो, तो *a*, *b* और *c* के स्थान पर *d* सकेत लागू हो जाता है।

(5) ध्रुवीय जलवायु (E)

ध्रवीय प्रदेशो के वे भाग, जहाँ उष्णतम महीने का तापमाम 10°C से कम पाया जाए, 'E' जलवायु मे आते हैं।

ध्रुवीय क्षेत्रो के बाहर ऊँचाइयो पर स्थित कुछ स्थान भी तापमान की इस सीमा पर खरे उतरते हैं। ऐसे क्षेत्रों को H जलवायु से सम्बोधित किया गया है।

E जलवायु को दो समूहो मे बाँटा गया है —

(1) ET—जिसमे उष्णतम महीने का तापमान 0°C से ऊपर आ जाता है। इन क्षेत्रों मे टुड्रा वनस्पतियाँ पाई जाती हैं।

(2) EF—जिसमे उष्णतम महीने का तापमान 0°C से भी नीचे रहता है। ये क्षेत्र स्थायी तौर पर बर्फ की मोटी तहों से ढके रहते हैं।

12 50 पृथ्वी का सर्वाधिक क्षेत्र 'A' जलवायु घेरता है, जो पृथ्वी के कुल क्षेत्रफल के एक तिहाई से अधिक है। सबसे कम क्षेत्र (कुल क्षेत्रफल के 1/10 से कम)

'D' जलवायु का है। जलवायु 'B' इससे कुछ ही अधिक क्षेत्र घेर पाता है। पृथ्वी पर विभिन्न जलवायु समूहों द्वारा प्रभावित भागों का प्रतिशत क्षेत्रफल सारणी (12.2) में दिया गया है —

सारणी 12.2
जलवायुविक भागों का प्रतिशत क्षेत्रफल

जलवायु समूह	महाद्वीप	महासागर	सम्पूर्ण पृथ्वी
Af	9.4	28.6	23.0
Aw	10.5	14.1	13.0
A	19.9	42.7	36.1
BS	14.3	3.6	6.7
BW	12.0	0.6	3.9
B	26.3	4.2	10.6
Cw	7.6	0.4	2.5
Cs	1.7	2.9	2.6
Cf	6.2	28.6	22.1
C	15.5	31.9	27.2
Dw	4.8	0.2	1.5
Df	16.5	1.5	5.8
D	21.3	1.7	7.3
ET	6.9	16.0	13.4
EF	10.0	3.5	5.4
E	17.0	19.5	18.8

'B' और D मुख्यत: महाद्वीपीय जलवायु है। अत: महासागरो के ऊपर इनका क्षेत्र फल बहुत कम है, जबकि महाद्वीपो मे शुष्क जलवायु का भाग 25% से अधिक है। 'D' जलवायु का भाग भी महाद्वीपो मे कुल क्षेत्रफल के 1/5 से अधिक है। अन्य जलवायु वर्गों के लिए महासागरीय और महाद्वीपीय भागो का आपेक्षिक महत्त्व लगभग समान है।

12 51 कोपेन के जलवायु वर्गों का वास्तविक भौगोलिक बटन महाद्वीपों पर इस प्रकार है —

A—विषुवत् रेखीय क्षेत्रों तथा निम्न अक्षाशो मे।

B—उप-उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपो के पश्चिमी भाग।

C—उप-उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपो के पूर्वी भाग तथा मध्य अक्षाशीय महाद्वीपो के पश्चिमी भाग।

D—मध्य अक्षाशीय महाद्वीपो के पूर्वी भाग।

E—ध्रुवीय क्षेत्र।

12 60 कोपेन वर्गीकरण के गुण और दोष

सम्पूर्ण पृथ्वी के विभिन्न जलवायु क्षेत्रा को मूलभूत तत्त्वो के आधार पर एक सम-प्रणाली द्वारा अलग अलग सफलतापूर्वक वर्गीकृत करने का सबसे पहला प्रयास कोपेन ने किया, जिसका जलवायु विज्ञान के क्षेत्र मे स्वागत हुआ।

जल और ऊष्मा सारे कार्बनिक और अकार्बनिक जगत के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। इन्ही दो तत्त्वा के मौसमी प्रतिरूपो–वर्षा और तापमान के आधार पर कोपेन ने विभिन्न जलवायु प्रकारो के लिए यथार्थ और सरल सीमाएँ निर्धारित की। स्वाभाविक रूप से इन जलवायु तत्त्वो की प्रधानता के कारण स्थानों की भौगोलिक स्थिति को कोई महत्त्व नही दिया जा सका है।

वर्षा और तापमान के औसत वार्षिक मानो के अतिरिक्त, इनकी मौसमी प्रवृत्ति का समावेश भी अनेक स्थलो पर बडी सजगता से किया गया है।

जलवायु समूहा के साकेतिक नामकरण से वर्गीकरण और-अधिक ग्राह्य हो गया है। इस विधि से विभिन्न जलवायु समूहो की एक दृष्टि मे तुलना सरल हो जाती है।

इन विशेषताओ के साथ ही इस वर्गीकरण के कुछ दोष भी हैं, जो निम्नाकित हैं—

(1) कोपेन का वर्गीकरण स्वभावत आनुभाविक (इम्पीरिकल) है जननिक नही।

(2) वर्षा और-तापमान की सीमाएँ, कोपेन ने अपने निजी, अनुभव के आधार पर जो उचित समझा, निर्धारित कर दी हैं। इसके लिए कोई दृढ गणितीय आधार या तक नही दिया गया है।

(3) दो जलवायु समूहो के बीच सीमा रेखा बिल्कुल यथार्थ होने से कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। जलवायु परिवर्तन साधारणत शनै शनै होता है। ऐसा नही होता कि एक जलवायु, सीमा रेखा पर आकर एकाएक अपनी विशेषताएँ समाप्त करले और रेखा के दूसरी

ओर, दूसरा जलवायु प्रकार एकाएक ही आरम्भ हो जाए। एक जलवायु क्षेत्र का कुछ भाग सीमा रेखा के दूसरी ओर पड जाना बहुत स्वाभाविक है।

(4) वर्गीकरण मे अन्य जलवायु तत्त्वो पर विचार नही किया गया है। या यह तक पहले दिया जा चुका है कि वनस्पतियो पर प्रभाव के दृष्टिकोण से वर्षा और तापमान सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं और अन्य तत्त्वो का प्रभाव भी किसी हद तक इन तत्त्वो मे निहित है फिर भी अन्य तत्त्वो को सर्वथा नगण्य कर देना इस वर्गीकरण की कमी ही मानी जाएगी। विशेषकर वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन वनस्पति जगत् के लिए तापमान और वर्षा से कम महत्त्व नही रखते। इस का विचार थार्न्थवेट तथा अन्य विद्वानो ने अपने वर्गीकरण मे किया है।

(5) निम्न भूमि तलो के लिए जो सीमाएँ निर्धारित की गई हैं, ऊँचाई पर स्थित क्षेत्रो के लिए भी उन्ही को लागू करना अनुपयुक्त है।

12 61 कोपेन वर्गीकरण के पूरक उप-विभाजन की संकेतावली

11 प्रमुख जलवायु समूहो *Af*, *Aw*, *BS*, *BW*, *Cf* *Cw*, *Cs*, *Df*, *Dw*, *ET* तथा *EF* के तीसरे स्थान पर *h*, *k*, *k'*, *a*, *b*, *c* और *d* संकेत लिख कर अनेक उप समूह बनाये गये हैं जिनका विवरण ऊपर के अनुच्छेदो मे दिया गया है। इसके अतिरिक्त कुछ और संकेत विशेष जलवायु क्षेत्रो के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है —

संकेत	विवरण
i	—वार्षिक तापमान परिसर 5°C से कम हो।
l	—सम शीतोष्ण जलवायु, जिसमे हर महीने का औसत तापमान 10°C और 22°C के मध्य हो।
n	—अधिक कुहरे वाला जलवायु।
n'	—अधिक आर्द्रता किन्तु कम कुहरा, कम वर्षा, उष्णतम महीने का तापमान 22°C से कम हो।
p	—*n* की दशाएँ किन्तु उष्णतम महीने का तापमान 22°C तथा 28°C के बीच।
u	—उष्ण अयनान्त के बाद सर्दी।
v	—पतझड के बाद सर्दी।
w'	—पतझड के बाद वर्षा ऋतु।

12 62 कोपेन के जलवायु वर्गीकरण का संशोधन

(1) रसल (कलीफोर्निया, विश्वविद्यालय) ने कोपेन के जलवायु सीमाकन मे कुछ मामूली संशोधन प्रस्तावित किया है। वे C और D के बीच सबसे सर्द महीने के तापमान की सीमा 0°C उपयुक्त बतलाते हैं, जबकि कोपेन ने यह सीमा –3°C निर्धारित की है।

(2) रसल के अनुसार सबसे सर्द महीने के 0°C तापमान का यही सीमा उष्ण (*h*) और शीतल (*k*) जलवायु के बीच रखनी चाहिए। कोपन ने यह सीमा औसत वार्षिक तापमान –18°C, निर्धारित की है। रसल का तर्क यह है कि जलवायु के दृष्टिकोण स

उष्ण और शीत क्षेत्रो को अलग करने के लिए सबसे सद महीने का तापमान, वार्षिक तापमान की अपेक्षा अधिक महत्त्व रखता है ।

(3) कोपेन वर्गीकरण मे तापमान तथा वर्षा की सीमाओ मे विषमता के कारण कुछ स्थानो के जलवायु निर्धारित म सशय आ जाता है । उदाहरण के लिए, फाकलैण्ड द्वीप मे स्थित केप पेम्ब्रोक नामक स्थान के आँकडे देखिए ।

तापमान (°C)	ज	फ	मा	अप्रै	मई	जून	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक
	7 1	9 3	8 6	6 5	4 6	3 1	2 6	3 0	4 1	5 4	6 6	7.9	6 0
वर्षा (समी)	7 1	6 6	5 9	6 1	6 3	5 3	5 1	5 1	2 8	4 1	5 9	7 1	67 5

तापमान के आधार पर यह स्थान E T जलवायु के अन्तर्गत आता है क्योंकि उष्णतम महीने (जनवरी) का तापमान 10°C से कम है तथा सबस सद महीने (जुलाई) का तापमान 0°C से अधिक है । अवक्षेपण के आँकडो के अनुसार, यह स्थान C या D जलवायु मे आ सकता है । अत केवल तापमान के कारण इसे E T मे रखना उचित नहीं है ।

ऐसी परिस्थितियों के लिए शीतल ग्रीष्म तथा मदु (Mild) शीत वाले नम जलवायु का अलग समूहो की रचना करनी चाहिए, जिसे 'E T' जलवायु से अलग किया जा सके ।

(4) निम्न ऊँचाइयो के 'C' जलवायु क्षेत्रो वे विषुवत् रेखा के पास अधिक ऊँचाइयो पर स्थित स्टेशनो से, जो 'C' जलवायु की सीमा मे आते हैं, अलग करने के लिए कसौटी (Criterion) बनाने चाहिए ।

(5) त्रिवार्था, *Cs Cf*, और *Cw* का वर्गीकरण उपयुक्त नही मानत क्योंकि ये समूह मिट्टी, वनस्पति तथा सस्कृति की सही तस्वीर परावर्तित नही करत । वे *Cs*, *Ca* और *Cb* जलवायु समूहो का प्रस्ताव करते हैं, इस प्रकार *Cs*—उप उष्ण कटिबन्धीय जलवायु, जिसमें उच्च दाब (प्रतिचक्रवात) पेटिका के कारण गर्मियाँ शुष्क रहती हैं तथा सीमाग्र चक्रवातो व पछुवा वायु प्रवाह के कारण सर्दियो मे अच्छी वर्षा होती है ।

Ca—उप उष्ण कटिबन्धीय नम जलवायु जहाँ वायुमण्डल के अस्थायित्व के कारण गर्मियो मे प्रतिचक्रवात खण्डित हो जाता है और वर्षा होती है । *Cs* मे दिए गए कारणों से ही ये स्थान सर्दियो मे भी वर्षा प्राप्त करते हैं ।

Cb—मध्य अक्षांशों के शीतल ग्रीष्म वाले वे क्षेत्र जो महाद्वीपो के पवनाभिमुखी भागो मे पडते हैं और वर्ष भर चक्रवाती प्रक्रमो से प्रभावित रहत हैं ।

Ca और *Cb* जलवायु वर्गों के त्रिवार्था ने पुन *f* और *w* उप विभागो मे बाँटने का प्रस्ताव किया ।

12 70 थार्न्थवेट का वर्गीकरण (1931)

कोपेन की ही तरह वनस्पति विकास के आधार पर अमेरिकन जलवायु विशेषज्ञ थार्न्थवेट (1899–1963) ने 1931 मे एक नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया, जिसे पहले

उत्तरी अमरिका तथा इसके बाद सन् 1933 मे पूरे संसार के जलवायु वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त किया गया। इस वर्गीकरण मे भी जलवायु समूहों को संकेतावलियों द्वारा प्रदर्शित किया गया है तथा उनकी सीमाएँ परिमाणात्मक रूप से निर्धारित की गई हैं।

थार्नथ्वेट वर्गीकरण की विशेषता और कोपेन के वर्गीकरण से उसका मुख्य अन्तर यह है कि इसको वाष्पीकरण के प्रभाव पर विचार करके वनस्पतियों के लिए प्रभावकारी वर्षा तथा प्रभावकारी तापमान के आधार पर जलवायु को विभक्त किया गया है, न कि वर्षा और तापमान के वास्तविक आँकडो के आधार पर। इस विचारधारा से कोपेन वर्गीकरण की एक महत्वपूर्ण कमी दूर हो जाती है।

12 71 प्रभावकारी वर्षा के परिमाणात्मक मूल्यांकन के लिए थार्नथ्वेट ने अवक्षेपण प्रभावकारिता के अनुपात या P E (Precipitation Efficiency) अनुपात की धारणा प्रस्तुत की और उसकी गणना के लिए निम्नांकित सूत्र दिया —

$$\text{मासिक P E अनुपात} = \frac{\text{कुल मासिक अवक्षेपण (P)}}{\text{कुल मासिक वाष्पीकरण (E)}} \qquad (i)$$

वर्ष के 12 मास के P–E अनुपातों का योग P–E सूचक (Index) कहलाता है। इसलिए—

$$\text{P–E सूचक } (I) = \sum_{i=1}^{12} \frac{P_i}{E_i} \qquad (ii)$$

जहाँ P_i और E_i क्रमश ith महीने का अवक्षेपण और वाष्पीकरण हैं।

12 72 लेकिन संसार के किसी भी भाग मे वाष्पीकरण के आँकडे पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध नहीं हैं, अत अधिक स्टेशनो पर P–E सूचकों की, सूत्र (2) म सीधी गणना करना सम्भव नहीं है। केवल कुछेक स्थानो पर, जहाँ वाष्पीकरण के प्रेक्षण अनेक वर्षों स लिए जा रहे हैं, P–E सूचक इस सूत्र द्वारा ज्ञात किये जा सकते हैं। किन्तु इन कुछ सूचकों के आधार पर वर्गीकरण ग्राह्य नहीं हो सकता।

पश्चिमी यू० एस० ए० के 21 स्टेशनो पर 4 से 12 वर्ष तक के अप्रैल से सितम्बर तक के लिए, वाष्पीकरण के आकडे उपलब्ध थे। इनके आधार पर थार्नथ्वेट ने अवक्षेपण, (P) वाष्पीकरण (E) तथा तापमान (T) के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन करके निम्नांकित आनुभविक सूत्र स्थापित किया —

$$\text{P–E अनुपात} = \frac{P}{E} = 115\left(\frac{P}{T-10}\right)^{\frac{10}{9}} \qquad (iii)$$

जहाँ P, इन्चो मे औसत मासिक वर्षा तथा T, अंश फ़ैरनहाइट मे औसत मासिक तापमान है।

12 73 समीकरण (iii) से हर स्टेशन के लिए वर्षा और तापमान के आकडो से P–E अनुपात की गणना करने की सुविधा मिल गई। लेकिन यह सम्बन्ध पश्चिम यू० एस० ए० के केवल 21 स्टेशनो के ग्रीष्म ऋतु के प्रेक्षणो पर ही आधारित है अत इसे सभी क्षेत्रों और ऋतुओं के लिए लागू करने मे स्वाभाविक तौर पर गम्भीर आलोचना की गुंजाइश है।

वर्षा, हिमांक के नीचे, तापमान पर वनस्पतियों के लिए कोई सीधा उपयोग नहीं रखती। प्रानुभाविक अध्ययन से यह साबित हुआ है कि निम्नतम औसत मासिक तापमान के −2°C (28 4°F) या इससे कम हो जाने पर, वनस्पतियों के लिए वर्षा प्रभावकारी नहीं रह जाती। अतः इससे कम तापमान हो जाने पर भी सूत्र (iii) मे P/E की गणना के लिए T = 284 ही रखना चाहिए।

12 74 I = वर्ष के 12 मासिक व्यन्जकों $115\left(\frac{P}{T-10}\right)^{\frac{10}{9}}$ का योग, I की गणना और ससार के विभिन्न वनस्पति प्रदेशो से उनकी तुलना के आधार पर, थार्नवेट ने पृथ्वी के जलवायु को मुख्य वनस्पतियो के अनुसार, 5 आर्द्रता वर्गों, जिन्हें आर्द्रता प्रदेश (Humidity Province) कहते हैं, मे बाँटा है। इस प्रकार

आर्द्रता प्रदेश	वनस्पतियो के प्रकार	सूचकाक (I)
A, वन प्रदेश (wet)	घने वन	128 या अधिक
B, आर्द्र (humid)	वन	64–127
C, अल्पार्द्र (sub humid)	घास के मैदान	32–63
D, अर्द्ध शुष्क (semi-arid)	स्टेपी वनस्पतियाँ	16–31
E, शुष्क (arid)	मरुस्थल	15 या कम

12 75 वर्षा के मौसमी वितरण को महत्त्व देने के लिए प्रत्येक आर्द्रता प्रदेशो मे 4 उप-विभाजन करते हैं। यह विभाजन सर्वाधिक वर्षा वाली ऋतु के P–E सूचक के मान पर आधारित किया गया है। उप विभाजन मे है :—

r सभी ऋतुओं मे अधिक वर्षा हो,
s गर्मियो में वर्षा कम हो,
w सर्दियो मे वर्षा कम हो,
और *d* सभी ऋतुओ म कम वर्षा हो।

यह स्पष्ट है कि प्रत्येक आर्द्रता प्रदेश मे वास्तविक रूप मे चारो उप विभाजन नहीं पाये जा सकते।

12 76 पौधो के विकास के लिए प्रभावकारी तापमान की गणना के लिए थार्नथ्वेट ने तापमान क्षमता (Temperature Efficiency) या T–E अनुपात तथा T–E सूचक (I′) की धारणा दी। मासिक अनुपात $T\text{–}E = \frac{T-32}{4}$

BB′w CB′r, DB′s,
BB′s, CB′w, DB′d,
BC′r CB′s, DC′d
BC′s, CB′d
CC′r
CC′s
CC′d

उन क्षेत्रों मे, जहाँ तापमान-क्षमता की सीमा पौधों के विकास के लिए पर्याप्त है, जलवायु निर्धारण के लिए, P–E सूचकांको का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के प्रदेश A, B, C, D और E हैं। अन्य प्रदेशो के लिए तापमान क्षमता ही जलवायु निर्धारण के लिऐ प्रमुख तत्त्व मानी जाती है। प्रदेश D′, E′ और F′ मे जलवायु समूहो की सीमाएँ मुख्यत T–E सूचकांको द्वारा निर्धारित की जाती है।

12 79 इसमे सन्देह नही कि सैद्धान्तिक रूप से थार्न्थवेट का वर्गीकरण वाष्पीकरण के समावेश के कारण वास्तविकता के अधिक निकट है, किन्तु P–E सूचकांको की गणना के लिए जो आनुभविक सूत्र दिया गया है, एक क्षेत्र के थोडे से आकडा पर आधारित होने के कारण उसकी सवत्र उपयोगिता सन्देहपूर्ण है।

कोपेन की तरह सरल सकेतावलियो के उपयोग से थार्न्थवेट ने पृथ्वी को 32 जलवायु क्षेत्रो मे विभाजित किया तथा उनकी परिमाणात्मक सीमाएँ निर्धारित की। कोपेन के वर्गीकरण म केवल मुख्य जलवायु समूह ही ज्ञात हैं।

P–E सूचकाक नम जलवायु क्षेत्रो (A B, C) के आर्द्रता मानो को भी परिमाणात्मक रूप से अलग कर देते हैं, जबकि कोपेन ने केवल शुष्क और नम जलवायु के बीच अवक्षेपण की एक सीमा निर्धारित कर दी है। यह थार्न्थवेट वर्गीकरण की एक अतिरिक्त विशेषता है जबकि सूत्रो की गणना अपेक्षाकृत कठिन होना इसका एक दोष है।

कोपेन और थार्न्थवेट के जलवायु क्षेत्र, एक-दूसरे से सपाती नहीं होते। उदाहरण के लिए, थार्न्थवेट वर्गीकरण मे उष्ण कटिबन्धीय वर्षा के घने वनो वाले जलवायु का क्षेत्र कोपेन की अपेक्षा बहुत कम है।

12 80 थार्न्थवेट का वर्गीकरण (1948)

सन् 1948 मे थार्न्थवेट ने विभव वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन (Potential Evapotranspiration) की एक नई धारणा प्रस्तुत की। प्राकृतिक सतहो से वाष्पीकरण-वाष्पोत्सर्जन द्वारा जल वाष्प का ह्रास साधारणत. सीधे तौर पर नही मापा जा सकता। अत इसके आकलन के लिए कई अप्रत्यक्ष विधियाँ दी गई हैं। एक विधि आर्द्रता सन्तुलन समीकरण,

वर्षा = अपवाह (Runoff) + वाष्पीकरण – वाष्पोत्सर्जन + भूमि आर्द्रता सग्रह (Soil moisture storage)

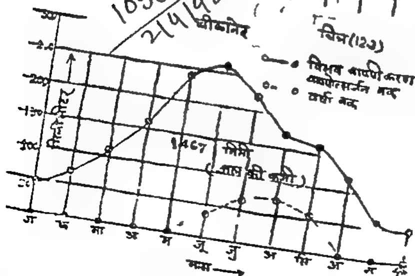
पर आधारित है। इस विधि को वास्तविक रूप से प्रयुक्त करने के लिए छोटी वनस्पतियो युक्त एक भू खण्ड निर्धारित कर लेना चाहिए, जिस पर वर्षा, अपवाह तथा तौल मे अन्तर द्वारा भूमि आर्द्रता का माप लिया जा सके। इस तकनीक से दैनिक वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन का मान आकलित किया जा सकता है।

यदि इस भू खण्ड की जल द्वारा नियमित सिंचाई होती रहे, तो वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन द्वारा जल का ह्रास अधिकतम सभावित मात्रा मे होगा। यही अधिकतम-

वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन, विभव वाष्पीकरण–वाष्पोत्सजन कहलाता है। अत किसी स्थान पर विभव वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन, जल ह्रास की अधिकतम सभावित मात्रा है, जो उस स्थान पर वाष्पीकरण-वाष्पोत्सजन द्वारा उस अवस्था मे होती है, जब वहा की भूमि को इस काय के लिए हमेशा पर्याप्त जल मिलता रहे। भूमि आर्द्रता सग्रह का मान अचर मानकर, कुल वर्षा मे अत श्रवण (Percolation) की मात्रा घटा देने से विभव-वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन का आकलन किया जा सकता है।

अर्द्ध शुष्क जलवायु क्षेत्र जयपुर (राजस्थान) तथा शुष्क जलवायु क्षेत्र बीकानेर (राजस्थान) का वार्षिक आर्द्रता बजट चित्र (12 1 और 12 2) म प्रदर्शित किया गया है। यह बजट थार्नथवेट विधि पर तयार किया गया है। बीकानेर मे वष का प्रत्येक भाग जल की अत्यधिक कमी महसूस करता है, जबकि जयपुर मे जुलाई स अगस्त के तीसरे सप्ताह तक वर्षा का वक्र, विभव वाष्पीकरण वाष्पोत्सजन वक्र से ऊपर है। निश्चित रूप से इस अवधि म जल आधिक्तम रहता है। इस आधिक्य का एक भाग भूमि आर्द्रता के रूप मे सग्रह हो जाता है, तथा शेष भाग अपवाह के रूप म बह जाता है। इनकी मात्राएँ चित्र मे दी गई हैं।





12.81 थार्नथ्वेट ने विभव वाष्पीकरण-वाष्पोत्सजन तथा आर्द्रता बजट के आधार पर, जलवायु वर्गीकरण की एक योजना प्रस्तुत की। थार्नथ्वेट के अनुसार, मासिक विभव वाष्पीकरण-वाष्पोत्सजन (PET) का मान सभी मौसम वेधशालाओं के लिए माध्य मासिक तापमान (t °C) के आधार पर, निम्नांकित सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है —

$$PET = 1.6 \left(\frac{10t}{I} \right)^{a}$$

जहाँ I एक ऊष्मा सूचकांक (heat index) है, जो एक स्थान विशेष के लिए अचर होता है। इसका मान ज्ञात करने के लिए निम्नांकित सूत्र दिया गया है —

$$I = \sum_{j=1}^{12} \left(\frac{t_j}{5} \right)^{1.514}$$

जहा t_j वर्ष के j th महीने का मासिक तापमान (°C) है। घातांक a का मान अनुभविक विधियों से ज्ञात किया जाता है, जो I के त्रिघातीय फलन के रूप मे आता है। इन गुणकों का मान आसानी से ज्ञात करने के लिए सारणियाँ तैयार की हुई हैं।

उपर्युक्त सूत्र द्वारा PET का मान (सेमी मे) उस मानक परिस्थिति मे आता है, जब दिन का मान 12 घण्टे और महीने का मान 30 दिन लिया जाए। वास्तविक दिन की अवधि के इससे विचलन के लिए PET के मानों का सामंजस्य करना आवश्यक है। इसके लिए भी सारणी उपलब्ध है।

मासिक जल आधिक्य (water-surplus) S तथा जल की कमी D का मान, आर्द्रता द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। भूमि आर्द्रता संग्रह की मात्रा भी इस गणना मे सम्मिलित करनी आवश्यक है।

PET, S और D के मान पर आधारित निम्नांकित आर्द्रता सूचकांक (I_m) की परिभाषा थार्नथ्वेट ने दी, जो जलवायु वर्गीकरण की संख्यात्मक सीमाएँ निर्धारित करती है

$$I_m = \frac{100\,S - 60\,D}{PET}$$

इस परिभाषा मे गुणक 100 और 60 क्रमश S और D के भार (weight) के रूप मे प्रयुक्त किये गए हैं। जलाधिक्य (S) को अधिक भार देने का कारण यह है कि इसका एक भाग भूमि आर्द्रता के रूप मे संग्रहीत हो जाता है, जो शुष्क अवधि मे जड़ों द्वारा वाष्पोत्सजन के रूप म पुन बाहर आ जाता है।

12.82 इस सूचकांक के आधार पर जलवायु प्रकारों का निम्नलिखित वर्गीकरण किया गया —

सूचकाक (I_m)	जलवायु प्रकार
− 40 से−60	शुष्क
− 20 से−40	अर्द्ध-शुष्क
+20 से−20	अल्पार्द्र
+20 से−अधिक	आर्द्र

12 83 सन् 1955 मे भार गुणको को इस अनुभव के बाद हटा दिया गया कि जल की कमी की अवस्था तभी आरम्भ होती है, जब भूमि आर्द्रता का वाष्पीकरण होने लगता है। इस सशोधन मे भी यह धारणा अक्षुण्ण रखी गई है कि भूमि-आर्द्रता सग्रह की मात्रा चर होती है, जो मिट्टी और वनस्पतियो के प्रकार पर निर्भर करती है तथ वाष्पीकरण की दर भी परिवर्तनशील रहती है।

अत $$I_m = \frac{100\,(S - D)}{PET}$$

या $$I_m = 100\left(\frac{r}{PET} - 1\right)$$

जहाँ, r वार्षिक वर्षा (सेमी) है।

नई धारणा के अनुसार, PET के मानो से ऊष्मा-क्षमता की व्युत्पत्ति होती है, क्योकि यह स्वयमेव तापमान का फलन है। अत I_m तथाPET के आधार पर निम्नांकित जलवायु प्रकार प्रस्तुत किए गए

$I_m = 100\left(\frac{r}{PET} - 1\right)$	जलवायु प्रकार	PET (सेमी)	जलवायु प्रकार
100 से अधिक	अधिकार्द्र (Perhumid)—A	114 से अधिक	अधितापीय (Megathermal)—A
20 से 100	आर्द्र—B_1, B_2 B_3, B_4	57 से 114	मध्यतापीय (Mesothermal) — B'_1 B'_2, B'_3 और B'_4
0 से 20	नम अल्पार्द्र— C_2	28 5 स 57	अल्पतापीय (Microthermal) C'_1 और C'_2
−33 से 0	शुष्क अल्पार्द्र —C_1		
−67 से −33	अर्द्ध शुष्क—D	14 2 से 28 5	टुड्रा—D′
−100 से −67	शुष्क—E	14 2 स कम	तुषार (Frost)—E′

12 84 ये प्रणालियाँ अनेक क्षेत्रो के जलवायु वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त की जा चुकी हैं। किन्तु अभी तक इस विषय पर कोई भू-मण्डलीय मानचित्र नही प्रकाशित किया जा सका है। यह विधि वनस्पतियो की, सीमाओ और प्रकारो पर विचार नही करती, जैसा कि कोपेन या थार्नथवेट (1931) के वर्गीकरण मे किया जा रहा है।

12 85 एम० आई० बुदिकोव ने तापमान के स्थान पर नेट विकिरण का प्रयोग करके इस विधि को और मौलिक रूप देने का प्रयास किया। उन्होने शुष्कता के विकिरण-सूचकाक की परिभाषा इस प्रकार दी —

$$\text{शुष्कता का विकिरण सूचकाक} = \frac{Rn}{Lr}$$

जहाँ, Rn = नम भूमि से वाष्पीकरण के लिए उपलब्ध नेट विकिरण।
L = वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा तथा r = वार्षिक अवक्षेपण।
अत Lr = वार्षिक अवक्षेपण के वाष्पीकरण के लिए आवश्यक ऊष्मा।

विभिन्न जलवायु के लिए इस सूचकाक का मान इस प्रकार आता है—

जलवायु प्रकार	Rn / Lr
मरुस्थल	3 0 से अधिक
अर्द्ध मरुस्थल	2 0 से 3 0
स्टेपी वनस्पति	1 0 से 2 0
वन	0 33 से 1 0
टुंड्रा	0 33 से कम

12 90 कोपेन के विभिन्न जलवायु प्रकारो के उदाहरण

(क) उष्ण कटिबन्धी वन जलवायु (A)

सर्वाधिक सद महीने (साधारणत उत्तरी गोलार्द्ध मे जनवरी और दक्षिणी गोलार्द्ध मे जुलाई) की 18°C समताप रेखाएँ 30 अश अक्षाशो के थोडा ऊपर-नीचे चलती हैं। महाद्वीपीय भागो मे ये रेखाएँ निम्न अक्षाशों पर आ जाती हैं तथा महासागरीय क्षेत्र मे 30 अश से उच्च अक्षाशो मे उठ जाती हैं। इन्ही दोनो रेखाओ के बीच कोपन का 'A' जलवायु क्षेत्र सीमित है। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि 20 से 25 अश अक्षाशो के बीच दोनो गोलार्द्धों के महाद्वीपीय भागो (साधारणत पश्चिमी भाग) मे उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब के अन्तगत शुष्क जलवायु 'B' के प्रमुख क्षेत्र भी पडते हैं। 'A' जलवायु क्षेत्र मे औसत वार्षिक तापमान 21 से 27°C के बीच पाया जाता है। वग A को पुन उप विभाजित करने के लिए निम्नलिखित विशेषताओ को ध्यान मे रखना लाभप्रद है —

(1) उष्ण कटिबन्धी क्षेत्र का एक बड़ा भाग, विशेषकर 15 अंश अक्षांशों के बीच का भाग, 5°C से कम वार्षिक तापमान परिसर रखता है। अतः इनके लिए संकेत *i* उपयुक्त होगा। इस कम तापमान परिसर का कारण यही है कि इन क्षेत्रों पर दिन की लम्बाई और सूर्य की ऊँचाई में चलन (Variation) अपेक्षाकृत बहुत कम होता है।

(2) सूर्य के वार्षिक स्थानान्तरण के कारण, विषुवत् रेखीय क्षेत्रों (10° उ और द के बीच) में तापमान के दो उच्चतम मिलते हैं, जो बहुधा वर्षा के दुहरे उच्चतम का कारण बनते हैं। वर्षा के उच्चतम सूर्य के विषुवत् रेखा पर आने के थोड़े दिनों बाद, अर्थात् अप्रैल व नवम्बर में पाए जाते हैं। अक्सर पहला उच्चतम (मार्च, अप्रैल और मई) दूसरे से ज्यादा प्रभावशाली होता है।

(3) विषुवत् रेखीय पेटिका में सबसे भारी वर्षा (125 से 200 सेमी) होती है। कुछेक स्थानों में 500 सेमी से अधिक वर्षा भी रिकार्ड की जाती है। इन क्षेत्रों में या तो वर्ष में कोई शुष्क मौसम होता ही नहीं या उसका काल बहुत संक्षिप्त होता है। अतः इस पेटिका में *Af* या *Am* जलवायु की प्रधानता है। *Af* जलवायु के अन्तर्गत ईस्ट इण्डीज, अफ्रीका के गुयना तट, कांगो घाटी, तथा दक्षिणी अमरीका के अमेजन घाटी के क्षेत्र आते हैं।

(4) विषुवत् रेखीय पटिका से परे उष्ण कटिबन्धी क्षेत्र *Aw*, *Am* और *B* जलवायुओं में विभक्त किए जा सकते हैं। *Af* जलवायु के क्षेत्रों से उच्च अक्षांशों में शीतकाल काफी सबद्ध हो जाता है, जो साधारणतः शुष्क रहता है। ये भाग *Aw* जलवायु में आते हैं। उत्तरी आस्ट्रेलिया, सूडान, दक्षिणी अफ्रीका, ब्राजील, कोलम्बिया व वेनेजुएला की घाटी आदि इसके अन्तर्गत आते हैं। भारत, बर्मा, लंका तथा चीन के कुछ भाग, मानसून धाराओं के प्रभाव में A_m जलवायु के अन्तर्गत आते हैं तथा कुछ *Aw* के।

(5) विषुवत् रेखा से दूरी के परिणामस्वरूप *Aw* जलवायु में तापमान परिसर *Af* से अधिक तथा वार्षिक वर्षा कम होती है। ये क्षेत्र बहुधा वर्ष में तापमान और वर्षा का एक उच्चतम प्रदर्शित करते हैं।

12.91 विषुवत् रेखीय जलवायु के लिए महासागर आइलैण्ड (1° द 170 पू), पोन्टियानक (0°,109° पू) सिंगापुर (1° उ 104° पू) इक्वीटस (4° द 73° प) तथा कुछ अन्य स्टेशनों के तापमान और वर्षा के मासिक आँकड़ों को सारणी (12.3) में प्रस्तुत किया गया है।

प्रथम 4 स्टेशनों में

(1) सबसे सर्द महीने का तापमान 18°C से अधिक है,

(2) *Af* जलवायु क्षेत्रों में शुष्कतम महीने की वर्षा 6 सेमी से अधिक है, तथा

(3) वार्षिक तापमान परिसर 5°C से कम है।

अतः ये स्टेशन *Afi* जलवायु रखते हैं।

किन्तु विषुवत रेखीय क्षेत्र के सभी स्टेशन इस तरह की जलवायु नही रखते। मोम्बासा (4° द 40°पू) की जलवायु देखिए। यह कोपेन की सीमाओ के अनुसार Aw समूह मे रखा जा सकता है, सारणी (12 4)।

उष्ण कटिबन्धी मानसून जलवायु वाले स्टेशनो के कुछ उदाहरण सारणी (1 23) मे दिए गए हैं, जो कोपेन की सीमाओ का पूर्ण रूप से अनुसरण करते हैं। विषुवत् रेखीय वर्षा पेटिका के अलावा भी उष्ण कटिबन्ध मे *Af* जलवायु क्षेत्र मिलते हैं। जैसे—ब्राजील (*Afi*), जूपिटर पला (*Afw*) तथा मेडागास्कर (*Af*)। इन समूहो तथा शुष्क पेटिका के अतिरिक्त उष्ण कटिबन्धी के अन्य क्षेत्र साधारणत *Aw* जलवायु के अन्तगत रखे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण सारणी (12 5) मे दिए गए हैं।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उष्ण कटिबन्धो मे शुष्ककाल प्राय सर्दियो मे ही होता है, अत *As* जलवायु के क्षेत्र लगभग नही मिलते हैं। लेकिन मद्रास, 13° उ 80° पू) तथा नायरग (12° उ 109° पू) उत्तरी-पूर्वी मानसून के पवनाभिमुखी भाग मे होने के कारण, सर्दियो मे अच्छी वर्षा प्राप्त करते हैं तथा पवतीय कारणो से ही गर्मियो मे प्राय शुष्क रहते हैं। कोपेन के सूत्रो के अनुसार, ये *As* जलवायु के प्रतिबन्धो पर खरे उतरते हैं।

□□□

सारणी (12.3)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	Af जलवायु															
1	महासागरीय आइसलैंड (1°S, 170°E)	तापमान (°C)	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	0 0
		वर्षा (सेमी)	29 2	22 6	21 8	20 6	14 2	12 9	17 3	9 9	13 2	14 2	14 5	22 6	213 1	
2	इक्वित्रटास, पेरु (4°, 73°W)	तापमान (°C)	25 6	25 6	24 6	26 1	24 6	23 4	23 4	24 6	24 6	25 6	25 6	25 6	25 1	2 2
		वर्षा (सेमी)	25 9	24 9	31 0	15 5	[illegible]	18 8	16 8	11 7	22 1	18 3	21 3	29 2	216 9	
3	पोंटियानक (0°, 109°E)	तापमान (°C)	25 7	26 2	26 2	25 2	26 8	26 8	26 8	26 2	26 2	26 2	25 7	25 7	26 2	1 1
		वर्षा (सेमी)	25 6	20 1	24 9	26 6	25 6	22 0	16 0	22 6	21 3	37 6	39 9	33 5	319 8	
4	सिंगापुर (1°N, 104°E)	तापमान (°C)	26 8	26 8	27 3	27 9	27 9	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	27 3	26 8	27 3	1 1
		वर्षा (सेमी)	25 1	16 8	18 8	19 3	17 0	17 3	17 3	20 1	17 3	20 6	25 1	25 5	241 5	

सारणी (12 3) *Contd*

	Am जलवायु															
5	कालीकट (भारत) 11°N, 76°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	25 5 0 5	26 6 1 5	27 5 8 1	28 6 24 1	28 4 88 9	25 8 75 7	24 8 38 9	25 2 21 3	25 7 26 2	26 2 12 4	26 4 2 8	25 7 2 5		3 8 —
6	कोलम्बो (श्रीलंका) 7°15, 80°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	26 7 8 1	26 7 4 8	27 8 10 9	28 3 24 6	28 3 27 7	27 8 18 5	27 2 11 2	27 2 8 1	27 2 14 2	27 2 34 0	26 7 30 0	26 7 12 9	27 2 203 2	1 6 —
7	जकार्ता	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	25 6 33 0	25 6 32 5	26 1 19 8	26 7 12 9	26 7 10 2	26 1 9 4	26 1 6 6	26 1 4 3	26 7 7 4	26 7 11 4	26 1 14 0	26 1 21 6	26 1 183 1	1 1 —

सारणी (12 4)

क्रमांक	स्टेशन का नाम और स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
1.	मोम्बासा (4°S, 40°E)	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	26 8 2 0	26 8 2 3	27 9 5 8	27 3 19 8	25 7 34 8	25 1 9 1	24 0 8 9	24 6 5 6	25 1 4 8	25 7 8 6	26 2 12 7	26 8 5 6	26 2 120 1	3 6 —

सारणी (125)

उष्ण कटिबन्धी शुष्क एवं नम (Aw) जलवायु

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
1	सगोन 10°N, 107°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	26.1 2.3	27.2 0.3	28.9 0.8	30.0 4.3	28.9 21.1	27.8 32.0	27.8 28.2	27.8 27.9	27.8 33.8	27.2 28.2	6.7 9.4	26.1 7.9	27.6 196.1	3.9 —
2	बम्बई 19°N, 73°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	24.4 0.3	24.4 0.3	26.7 —	28.3 —	30.0 1.8	28.9 50.0	27.2 61.0	27.2 36.8	27.2 26.9	27.8 4.8	27.2 1.0	25.0 —	27.2 183.9	5.6 —
3	डारविन 12°S, 131°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	28.9 40.4	28.3 32.8	28.9 25.7	28.9 10.4	27.8 1.8	26.1 0.3	25.0 0.3	26.1 0.3	28.3 1.3	29.4 5.6	30.0 12.2	29.4 26.2	28.3 157.0	5.0 —

सारणी (12 6)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	As जलवायु															
1	मद्रास (13°N, 80°E)	तापमान (°C)	24 4	25 6	27 2	29 4	32 2	32 2	31 1	30 0	29 4	27 8	26 1	25 0	28 4	7 8
		वर्षा (सेमी)	2 8	0 8	0 8	1 5	4 6	5 1	9 7	11 4	12 2	28 2	34 5	13 5	125 0	—
2	नाथरग (12°N, 109°E)	तापमान (°C)	23 9	25 0	26 1	27 8	28 3	28 9	28 9	28 9	27 8	26 7	25 6	24 4	26 7	5 0
		वर्षा (सेमी)	6 1	2 8	2 3	2 3	6 1	5 6	5 1	3 8	17 5	26 9	35 3	24 4	138 2	—

(ख) शुष्क जलवायु 'B'

विभिन्न अक्षांशों में प्राय विस्तृत क्षेत्रों पर, शुष्क जलवायु पाई जाती है। इन क्षेत्रों का वार्षिक तापमान परिसर उसी अक्षांश के अन्य जलवायु क्षेत्रों से अधिक होता है। इसका कारण यही है कि शुष्क जलवायु, महाद्वीपों के भीतरी भागों में, विशेषकर पर्वत मालाओं के अनुवर्ती तरफ स्थित हैं, जिससे उन तक महासागरीय हवाएँ (जो तापान्तर को कम करने की क्षमता रखती हैं) नहीं पहुँच पातीं। मेघ-रहित आसमान तथा निम्न आर्द्रता के कारण, शुष्क क्षेत्रों में दैनिक तापमान परिसर भी अधिक है। इसका एक कारण यह भी है कि भूमि प्राय बंजर होने से, दिन का तापमान वनस्पति-युक्त भूमि में तापमान की अपेक्षा अधिक होता है। कोपेन ने तापमान के अनुसार शुष्क क्षेत्रों को उष्ण (*h*), शीत (*k*) और अतिशीत (*k'*) शुष्क जलवायुओं में बाँटा है।

शुष्क क्षेत्र मुख्यत दोनों गोलार्द्धों के उप-उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब पेटिकाओं के अन्तर्गत पाए जाते हैं। इसके उच्च अक्षांशों में पश्चिमी-अमरिका तथा एशिया के आन्तरिक भू-भाग भी शुष्क या अर्द्ध शुष्क जलवायु रखते हैं। सहारा तथा आस-पास के नखलिस्तान, अरब का रेगिस्तान, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान उत्तरी-पश्चिमी भारत, राजस्थान, पश्चिमी चीन मंगोलिया, एशिया की सीमा के पास सोवियत रूस का दक्षिणी भाग तथा मेक्सिको के भीतरी भाग, उत्तरी गोलार्द्ध के मुख्य शुष्क क्षेत्र हैं। दक्षिणी अमरिका का पश्चिमी तट, 20° द से नीचे का अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया का बहुत-सा भाग शुष्क जलवायु रखते हैं।

उप-उष्ण कटिबन्धीय शुष्क क्षेत्र प्राय उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय वायुराशि के प्रभाव में रहते हैं तथा कोपेन की सीमा के अनुसार BW*h* या BS*h* जलवायु में आते हैं, जबकि उच्च अक्षांशों के शुष्क क्षेत्र BS*k*, BW*k*, BW*k'* तथा BW*k'* जलवायु रखते हैं। इनकी शुष्कता बड़े महाद्वीपों के अत्यधिक भीतरी भागों में इनकी स्थिति के कारण है, जहाँ तक महासागरीय वायु धाराएँ पहुँचने से पहले ही अपनी सारी नमी खो देती हैं। पर्वत शृंखलाएँ इन क्षेत्रों की शुष्कता बढ़ाने में काफी सहयोग देती हैं। B*k* जलवायु क्षेत्र सर्दियों में ध्रुवीय वायु राशियों तथा गर्मियों में उष्ण कटिबन्धी महाद्वीपीय वायु राशियों के प्रभाव में रहते हैं, अत इनमें तापमान का मौसमी चलन बहुत अधिक होता है। शुष्क जलवायु के कुछ उदाहरण सारणी (12 7) में दिए गए हैं।

सारणी (12.7)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान
	शुष्क (BS) जलवायु															
1	जयपुर 27°N, 76°E	तापमान (°C)	16 1	18 3	23 9	29 4	33 3	33 9	30 0	28 9	28 9	26 7	21 1	17 2	25 6	17 8
		वर्षा (सेमी)	1 0	0 8	1 0	0 5	1 5	6 6	21 1	18 5	8 1	0 8	0 3	0 8	60 1	—
2	तहरान 36°N, 51°E	तापमान (°C)	1 1	5 6	8 9	16 1	21 7	26 7	29 4	28 3	25 0	18 9	10 6	5 6	16 7	28 3
		वर्षा (सेमी)	4 1	2 5	4 8	3 5	1 3	0 3	0 5	—	0 3	0 8	2 5	3 3	23 6	—
3	किमबर्ले 28°S, 25°E	तापमान (°C)	24 4	23 3	21 1	17 2	12 8	9 4	9 4	12 2	16 1	19 4	21 7	23 9	17 6	15 0
		वर्षा (सेमी)	7 1	7 9	7 6	3 3	2 3	0 8	1 0	1 0	1 8	2 5	4 3	6 1	45 7	—

सारणी (12 7) Contd

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	(BW) जलवायु															
1	काहिरा 30°N, 31°E	तापमान (°C)	12 8	13 9	17 2	21 1	24 4	26 7	27 8	27 8	25 6	23 3	18 3	14 4	21 1	15 0
		वर्षा (सेमी)	1 0	0 5	0 5	0 5	—	—	—	—	—	—	0 3	0 5	3 3	—
2	बगदाद 33°N, 44°E	तापमान (°C)	9 4	12 2	16 1	21 7	27 2	32 2	35 0	34 4	31 1	26 7	17 2	11 7	22 8	25 6
		वर्षा (सेमी)	3 0	3 3	3 3	2 3	0	—	—	—	—	0 3	2 0	3 0	17 8	—
3	करांची 25°N, 67°E	तापमान (°C)	18 3	20 0	23 9	27 2	29 4	30 6	28 9	27 8	27 8	26 7	23 3	19 4	25 6	12 3
		वर्षा (सेमी)	1 3	1 3	1 0	0 5	0 3	2 3	7 4	3 8	1 3	—	0 3	0 3	19 3	—

(ग) आर्द्र मध्य-तापीय जलवायु (C)

मध्य अक्षांशीय प्रदेश, उष्ण कटिबंधी तीव्र ऊष्मा तथा ध्रुवीय तुषार के बीच मध्य तापमान के निश्चित मौसमी परिवर्तन युक्त जलवायु क्षेत्र हैं। इस संक्रमण क्षेत्र में मुख्यत जलवायु प्रकार C और D पाए जाते हैं। कुछ भाग H जलवायु के अंतर्गत भी आते हैं। C जलवायु क्षेत्र अपेक्षाकृत निचले अक्षांशों में, जहाँ सर्दियाँ मृदु (mild) होती हैं, पाया जाता है। महाद्वीपों के पश्चिमी तटीय भागों के पवनाभिमुखी क्षेत्रों में, उच्च अक्षांशों में भी C जलवायु मिलता है।

Cs जलवायु (शुष्क ग्रीष्म-युक्त मध्य अक्षांशीय) तप्त ग्रीष्म, मृदु शीत काल तथा सर्दियों में अच्छी वर्षा के गुणों से विभूषित, भू-मध्य सागर के आस-पास, मध्य और दक्षिण कैलीफोर्निया, दक्षिणी अफ्रीका तट तथा दक्षिणी आस्ट्रेलिया के कुछ भागों में पाया जाता है। यह प्राय महाद्वीपों के पश्चिमी तटों की ओर सीमित पाया जाता है। सर्दी के महीनों का तापमान 5°C से 10°C तथा ग्रीष्म महीनों का तापमान 21°C से 26°C के मध्य पाया जाता है। इस जलवायु क्षेत्र में वर्षा साधारणत कम (38 से 13 सेमी वार्षिक) होती है। सर्दियों में अधिक वर्षा होने के कारण, वाष्पीकरण द्वारा आर्द्रता ह्रास बहुत कम हो पाता है। अत Cs जलवायु को अर्द्ध-शुष्क की अपेक्षा अ-आर्द्र (sub-humid) कहना अधिक उचित होगा।

Ca (*f* या *w*) आर्द्र उपोष्ण कटिबंधी जलवायु है, जो मुख्यत मध्य अक्षांशीय महाद्वीपों के पूर्वी भागों में पाया जाता है। केवल यूरेशिया का एक छोटा भाग, जो *Ca* जलवायु-युक्त है, शुष्क केन्द्रीय महाद्वीपीय भाग के पश्चिम में स्थित है। इनमें *Cs* की अपेक्षा अधिक वर्षा पाई जाती है, जो या तो वर्ष भर समान रूप से आवंटित होती है या ग्रीष्म महीनों में सीमित हो जाती है। जलवायु अपेक्षाकृत निम्न अक्षांशों (25 से 35 अंश) में मिलते हैं। कुछ क्षेत्र, जैसे—उत्तरी भारत और चीन के कुछ भाग मानसून हवाओं से वर्षा प्राप्त करते हैं। यहाँ ग्रीष्म में उष्ण और नम *mT* हवाएँ तथा शीत काल में शुष्क और ठंडी महाद्वीपीय वायु राशियाँ प्रभावशील रहती हैं। यहाँ ग्रीष्म ऋतु में औसत मासिक तापमान 25–26°C के आस पास मिलता है, किन्तु उत्तरी अमरिका तथा एशिया के विशाल थल भाग अधिक तप्त पाए जाते हैं। आर्द्रता अधिक होने से इन क्षेत्रों में गर्मियों की रातें भी उमस भरी तथा मेघ-युक्त होती हैं। फलत तापमान का दैनिक चलन कम पाया जाता है। सर्दियाँ उपोष्ण कटिबंधी अन्य जलवायु क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक उष्ण होती हैं। तापमान औसत रूप से 5 से 13°C के बीच रहता है।

वार्षिक वर्षा साधारणत पर्याप्त होती है, किन्तु इसका परिमाण स्थान के साथ साथ बदलता जाता है जो प्राय 75 से 170 सेमी तक पाया जाता है। इस जलवायु क्षेत्र की आंतरिक सीमा पर, जहाँ से स्टेपी जलवायु की सीमाएँ आरम्भ होती हैं, वर्षा निम्नतम पाई

जाती है। अधिकांश क्षेत्रों मे, मुख्यत उत्तरी भारत, दक्षिणी चीन तथा पूर्वी आस्ट्रेलिया मे, जो ग्रीष्म मानसून द्वारा प्रभावित रहते हैं, गर्मियों मे बहुत अधिक वर्षा हो जाती है। अमरीकी तथा एशियाई आर्द्र जलवायु के भागों मे चक्रवातों से भी अच्छी वर्षा हो जाती है।

कुछ क्षेत्र सर्दियो मे भी यथेष्ट वर्षा प्राप्त कर लेते हैं। यह वर्षा प्राय चक्रवातों, वाताग्र विक्षोभो तथा पर्वतीय कारणो से जनित होती है। सर्दियो की वर्षा बहुत धीमी गति से पाई जाती है, उदाहरणार्थ—शघाई मे जनवरी मे 5 समी की वर्षा 12 वर्षा-युक्त दिनो मे हो पाती है जबकि अगस्त की 15 समी की वर्षा केवल 11 दिनो में सम्पन्न हो जाती है। 'C' जलवायु युक्त स्थानो के आंकड़े सारणी (12 8) मे अंकित हैं।

(घ) अल्प-तापीय आर्द्र जलवायु (D)

यह 'C' जलवायु से तापमान की न्यूनता के कारण अलग किया गया है, जिसमे प्रखर ठड और तुषार-युक्त लम्बी सर्दियाँ, संक्षिप्त ग्रीष्म तथा बसन्त और पतझड़ का संक्रमण काल मुख्य ऋतुएँ हैं। वार्षिक तापमान परिसर की अधिकता भी 'D' जलवायु का एक मुख्य लक्षण है। प्रखर सर्दियों का कारण, इन जलवायु क्षेत्रो की स्थिति उच्च अक्षाशो तथा आन्तरिक भू भागो मे अनुवर्ती सरक है। यह जलवायु मुख्यत महाद्वीपीय विशेषताओ से युक्त पाया जाता है। इसी कारण यह क्षेत्र अधिकतर उत्तरी गोलार्द्ध के यूरेशिया और उत्तरी अमेरिका के 35 से 40 अंश उत्तरी अक्षाशो के मध्य सीमित है। अधिक उत्तर मे तथा ऊँचाइयो पर स्थित क्षेत्र पर्याप्त समय तक तुषार से ढके रहते हैं। तुषार का अलविदो बहुत अधिक होने के कारण, अधिकांश सौर ऊष्मा बिना शोषित हुए वापस परिवर्तित हो जाती है। अत इन स्थानों पर सर्दियो का तापमान और अधिक घट जाता है।

ग्रीष्म ऋतु वर्षा का मुख्य काल है, जबकि कुछ क्षेत्र सर्दियों में भी अवक्षेपण प्राप्त कर लेते हैं। विभिन्न D जलवायु क्षेत्रो मे वर्षा का आवटन निम्नांकित बातो पर निर्भर करता है —

(1) कम तापमान पर वायुमण्डल द्वारा अवक्षेपीय वाष्प ग्रहण करने की क्षमता कम हो जाती है।

(2) सर्दियो मे महाद्वीपो पर प्रतिचक्रवात उत्पन्न हो जाते हैं, जिनसे सम्बद्ध, अवतलन प्रवाह वर्षा के लिए प्रतिकूल परिस्थिति है। ये प्रतिचक्रवात वाताग्र विक्षोभो को भी विकर्पित करने की प्रवृत्ति रखते हैं।

(3) गर्मियो मे इन क्षेत्रा पर स्थित आर्द्र वायु राशियो मे अस्थायित्व उत्पन्न होता है, जिससे संवाहनिक मेघ तथा वर्षा उत्पन्न हो सकती है।

(4) गर्मियो मे पर्याप्त ऊष्मन के फलस्वरूप महाद्वीपीय भागो पर निम्नदाब बन जाते हैं, जिनके प्रवाह में महासागरीय मानसून धाराएँ चलने लगती हैं।

सारणी (128)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	मे	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	Cs जलवायु															
1	रोम 42°N, 12°E	तापमान (°C)	7 2	8 3	10 6	13 9	17 8	21 7	24 4	24 4	21 1	16 7	11 7	7 8	15 6	17 2
		वर्षा (सेमी)	8 1	6 9	7 4	6 6	5 6	4 1	1 8	2 5	6 3	12 7	11 2	9 9	83 1	—
2	केपटाउन 34°S, 18°E	तापमान (°C)	21 1	21 1	20 0	17 2	15 0	13 3	12 8	13 3	14 4	16 1	17 8	20 0	16 7	8 3
		वर्षा (सेमी)	1 8	1 5	2 3	4 8	9 7	11 4	9 4	8 6	5 8	4 1	2 8	2 0	64 3	—
	महासागरीय Cb और Cc जलवायु															
1	मास्कलैंड, न्यूजीलैंड 37°S, 145°E	तापमान (°C)	19 4	19 4	18 9	16 1	13 9	12 2	11 1	11 1	12 8	13 9	15 6	17 8	15 0	8 3
		वर्षा (सेमी)	6 6	7 6	7 9	8 4	11 2	12 2	12 7	12 7	9 1	9 1	8 4	7 4	111 3	—
2	डच हारबर 54°N, 167°W	तापमान (°C)	0 0	0 0	0 6	1 7	5 0	7 8	10 6	10 6	8 3	5 6	1 7	0 0	4 4	10 6
		वर्षा (सेमी)	13 7	18 0	14 2	8 6	12 7	6 9	5 8	7 9	14 7	21 3	17 3	18 3	159 4	—

सारणी (12 8) Contd

Ca जलवायु																
1	नागासाकी 32°N, 130°E	तापमान (°C)	5 6	6 1	8 9	14 4	17 8	21 7	25 6	26 7	23 3	17 8	12 8	7 8	15 6	21 1
		वर्षा (सेमी)	7 9	8 9	13 2	20 6	18 8	33 5	23 7	18 5	21 8	11 7	8 4	8 4	195 3	—
2	वाशिंगटन 39°N, 77°W	तापमान (°C)	1 1	1 7	6 1	12 2	17 8	22 2	25 0	23 3	20 0	13 9	7 8	2 2	12 8	23 9
		वर्षा (सेमी)	8 1	7 6	8 9	8 4	9 1	9 9	11 2	10 2	7 9	7 9	6 3	7 9	103 4	—
3	हांगकांग 22°N, 114°E	तापमान (°C)	15 6	15 0	17 2	21 1	25 0	27 2	27 8	27 8	27 2	24 4	20 6	17 2	22 2	12 8
		वर्षा (सेमी)	3 3	4 6	6 9	13 5	30 5	40 1	35 6	37 1	24 6	12 9	4 3	2 8	216 1	—
4	इलाहाबाद 25°N, 82°E	तापमान (°C)	16 1	18 9	25 0	30 6	33 9	33 9	30 0	28 9	28 9	26 1	20 6	16 7	25 8	17 8
		वर्षा (सेमी)	1 8	1 3	1 0	0.3	0 8	11 9	30 5	27 9	16 0	5 8	0 8	0 5	98 5	—
5	वाराणसी 25°N, 83°E	तापमान (°C)	15 7	18 4	25 1	30 7	32 9	31 8	29 0	28 4	8 4	25 7	20 1	15 7	25 1	17 4
		वर्षा (सेमी)	1 8	1 5	1 0	0 5	1 5	12 2	30 7	29 5	18 0	5 3	0 5	0 5	103 1	—

Da, *Db* और *Dc* इस समूह के तीन मुख्य प्रकार हैं, जो क्रमश उष्ण ग्रीष्म ऋतु, शीतल ग्रीष्म ऋतु तथा उप आर्कटिक जलवायुओ को व्यक्त करती हैं। इनकी स्थितियाँ तथा प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं —

Da तथा Db—ये दोनो महाद्वीपीय जलवायु हैं, जो उत्तरी अमेरिका, पूर्वी एशिया तथा यूरोप के 35 से 40 अंश उत्तरी अक्षांशो के बीच पाये जाते हैं। इनसे ठीक नीचे यूरोप मे *Cs* तथा अन्य स्थानों पर *Ca* जलवायु मिलता है। अमेरिकन और एशियाई *Da* जलवायु का ग्रीष्म काल उपोष्ण कटिबंधी या कभी-कभी उष्ण कटिबंधी तापमान के समान प्रवृत्ति रखता है। जैसे, जुलाई मे सेंट लुइस तथा मंचूरिया के तापमान क्रमश 26 तथा 25°C हैं। यूरोपीय क्षेत्रो के *Da* का ग्रीष्म काल अपेक्षाकृत ठण्डा होता है (जुलाई—मिलान 24°C तथा बुखारेस्ट (रूमानिया) 23°C) अधिक गर्म ग्रीष्म, ठण्डा शीत काल। अत उच्च वार्षिक तापमान परिसर, ग्रीष्म मे पर्याप्त वर्षा, जो आंतरिक प्रदेशो तथा उच्च अक्षाशो की ओर घटती जाती है, ग्रीष्म काल के आरम्भ मे अधिकतम वर्षा तथा कहीं-कहीं वाताग्र विक्षोभो द्वारा जनित शीतकालीन वर्षा या तुषारपात इन जलवायु प्रकारो की मुख्य विशेषताएँ हैं।

Dc तथा Dd—50 अंश से उच्च अक्षाशो में चरम महाद्वीपीय क्षेत्रो मे ये जलवायु मिलते हैं। इन क्षेत्रो का ऊपरी सिरा टुण्ड्रा जलवायु क्षेत्र से मिलता है। यूरेशिया और साइबेरिया क्षेत्र मे कोनीफेरस (Coniferous) जगलों से युक्त इस जलवायु को टैगा के नाम से भी जाना जाता है। तीव्र ठण्ड वाली लम्बी सर्दियाँ, बहुत सक्षिप्त ग्रीष्म, बसन्त और पतझड और गर्मियो मे लम्बी अवधि का दिन (55 अंश अक्षाश पर लगभग 17 3 घण्टे) इस जलवायु की सामान्य विशेषताएँ हैं। इन्ही उप आर्कटिक क्षेत्रो मे मैदानो का तापमान ससार भर मे निम्नतम पाया जाता है। वर्खोयान्स्क (साइबेरिया) *Ddw* जलवायु-युक्त वह क्षेत्र है। जहाँ जनवरी का औसत तापमान—50 7°C तथा जुलाई का 14 5°C है। ग्रीष्म और शीत काल के तापमानो मे इतना अधिक विपर्यास और किसी जलवायु मे नही पाया जाता है। उप आर्कटिक जलवायु मे वर्षा साधारणत बहुत कम होती है। टैगा क्षेत्रो मे वार्षिक अवक्षपण 40 सेमी तथा उप आर्कटिक कनाडा मे 50 सेमी से कम पाया जाता है। *इस कम अवक्षेपण का कारण है, वायुमण्डल की कम वाष्प ग्राहिता तथा* प्रतिचक्रवाती प्रवाह। सर्दियों मे वाताग्र द्वारा तुषारपात तथा गर्मियो मे महासागरीय हवाओ द्वारा वर्षा जनित होती है।

D जलवायु प्रकारो के कुछ उदाहरण सारणी (12 9) मे दिए गए हैं।

(च) ध्रुवीय जलवायु (E)

ग्रीष्मकाल की अनुपस्थिति तथा लम्बी अवधि के दिन और रात इन जलवायु क्षेत्रो की मुख्य विशेषताएँ हैं। ध्रुवो पर लगभग 6 महीने गर्मियो में सूर्य चमकता रहता है, जबकि सर्दियो का लगभग इतना ही समय अन्धेरे मे डूबा रहता है। E जलवायु की निम्न अक्षाशीय सीमा आर्कटिक तथा एन्टार्कटिक वृत्तो (66½ अंश समानान्तर) मिलती है। E जलवायु क्षेत्रो मे, जहाँ लगातार रात्रि होती है, जलवायु तत्त्वो का दैनिक चलन गौण हो जाता है। वार्षिक तापमान निम्नतम उत्तरी ध्रुव पर बसन्त विषुव के थोड़ा पहले पाया जाता है, क्योंकि उससे पहले 6 मास तक कोई और ऊष्मा प्राप्त नही होती जबकि भू विकिरण द्वारा ह्रास लगातार होता रहता है।

सारणी (129)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	(१३) जलवायु															
1	न्यूयार्क 40°N, 74°W	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	0 6 8 4	0 6 8 4	3 9 8 4	9 4 8 4	15 6 8 6	20 6 8 6	23 4 10 4	22 2 10 9	19 4 8 6	13 3 8 6	9 4 8 6	1 1 8 4		23 9 —
2	पेकिंग 40°N, 115°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	4 9 0 3	2 4 0 5	3 8 0 5	13 0 1 5	19 8 3 5	24 2 7 6	25 3 23 9	24 5 16 0	19 3 6 6	12 5 1 5	3 5 0 8	2 8 0 3		30 2 —
3	ओडेसा, रूस 46°N, 30°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	−3 9 2 3	−2 2 1 8	1 7 2 8	8 9 2 8	15 0 3 3	20 0 5 8	22 8 5 3	21 7 3 0	16 7 3 6	11 1 2 8	5 0 4 1	−0 6 3 3	9 4 40 6	26 7 —
4	मिलान, इटली 45°N, 9°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	0 0 6 1	3 3 5 8	7 8 6 9	12 8 8 6	17 2 10 4	21 1 8 4	23 9 7 1	22 8 8 1	18 9 8 9	.3 3 11 9	6 7 10 9	2 2 7 6	12 8 101 1	23 9 —

सारणी (12 9) Contd

	(Da) जलवायु															
1	बर्लिन 52°N, 13°E	तापमान (°C)	-1 1	0 6	3	8 9	13 9	17 2	18 9	18 3	14 4	9 4	3 9	0 6	8 9	20 0
		वर्षा (सेमी)	4 3	3 6	4 1	3 8	4 8	5 8	7 6	5 8	4 3	4 3	4 3	4 8	57 7	—
2	वारसा पोलैंड 52°N, 21°E	तापमान (°C)	-3 3	-1 7	1 7	7 8	13 9	17 2	18 9	17 8	13 3	7 8	2 2	-1 1	7 8	22 2
		वर्षा (सेमी)	3 0	2 8	3 3	3 8	4 8	6 6	7 6	7 4	4 8	4 1	3 8	3 8	56 1	—
	Dc और Dd जलवायु															
1	ट्राण्डहाइम 63°N, 10°E	तापमान (°C)	-3 3	-3 3	-0 6	-3 9	7 8	11 2	13 9	13 3	9 4	5 0	1 1	-2 2	5 0	17 2
		वर्षा (सेमी)	10 9	10 9	8 6	6 3	5 6	4 8	7 1	8 6	11 2	12 7	9 9	8 6	101 9	—
2	आर्केन्जिल 65°N, 41°E	तापमान (°C)	13 3	12 8	-7 8	-1 1	5 0	11 7	15 6	13 3	7 8	1 1	-5 6	-11 1	0 6	28 9
		र्षा (सेमी)	2 3	1 8	2 0	1 8	3 0	4 6	6 1	6 1	5 6	4 1	3 0	2 3	42 7	—

बहुत उच्च अक्षांशों के अतिरिक्त, निम्नतर अक्षांशों की पर्याप्त ऊँचाइयों पर स्थित कुछेक स्थानों पर भी E जलवायु पाया जाता है। E जलवायु क्षेत्र ध्रुवों से लेकर उष्णतम महीने के 10°C समताप रेखा के मध्य विस्तृत है। जुलाई में 10°C की समताप रेखा आर्कटिक वृत्त के समान्तर एशिया, अलास्का और यूरोप से गुजरती है किन्तु पूर्वी उत्तरी अमेरिका तथा ग्रीन लैण्ड में इसकी स्थिति और दक्षिण में पाई जाती है। यह संभवतः ठण्डे लेब्रोडोर महासागरीय धारा और ग्रीन लैण्ड आइसकैप के प्रभाव के कारण होता है।

ध्रुवीय जलवायु में पृथ्वी का सबसे कम निम्नतम तापमान और ग्रीष्मावधि पाई जाती है। गर्मियों में सूर्य प्रकाश की अवधि अधिक होने पर भी किरणों का बहुत कम उष्मताप होने के कारण तापमान बढ़ने नहीं पाता। इसके अतिरिक्त हिमाच्छादन के कारण सौर विकिरण का अधिकांश भाग परावर्तित हो जाता है। अतः ग्रीष्म ऋतु में भी ठण्ड बहुत अधिक होती है, किन्तु सर्दियाँ इतनी प्रखर पाई जाती हैं कि वार्षिक तापमान परिसर पर्याप्त हो जाता है।

वर्षा बहुत कम (25 सेमी से कम) पाई जाती है किन्तु वाष्पीकरण की कमी के कारण यही वर्षा जलवाह उत्पन्न कर देती है। इस वर्षा का अधिकांश भाग गर्मियों में ही होता है जब वायुमण्डल की वाष्प ग्राह्यता कुछ बड़ी होती है। उष्णतम मास के 0°C समताप की सीमा रेखा द्वारा ध्रुवीय जलवायु के दो भाग किए गये हैं-टुंड्रा (ET) तथा स्थायी हिम या आइसकैप (EF)। EF जलवायु में जहां तापमान सदा हिमांक से कम होता है, किसी भी प्रकार की वनस्पतियों की सम्भावना नहीं। यहाँ स्थायी तौर पर गहरा हिमाच्छादन पाया जाता है। टुंड्रा जलवायु में कुछ छोटी वनस्पतियां पाई जाती हैं। इन क्षेत्रों की भूमि वर्ष के कुछ महीनों में हिमाच्छादन से मुक्त रहती हैं।

EF जलवायु, ध्रुवों के पास स्थित ग्रीन लैंड, तथा एंटार्कटिक के कुछ भागों में पाया जाता है जहाँ सदा ध्रुवीय प्रतिचक्रवातीय प्रवाह से सम्बद्ध अवतलन धाराएँ प्रमुख रहती हैं। सारणी (12.10) में ध्रुवीय जलवायु के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं।

(छ) पर्वतीय जलवायु

वायुदाब और तापमान का तीव्र ह्रास, तीव्रतर ऊर्ध्व तापमान प्रवणता, मुख्यतः निम्न अक्षांशों में अधिक अवक्षेपण, जलवायु पर ऊँचाई का सामान्य प्रभाव है। उष्ण कटिबन्धों में तापमान की कमी के कारण, उच्च स्थान आरामदायक जलवायु प्रस्तुत करते हैं किन्तु इन्हीं कारणों से मध्य अक्षांशों में पर्वतों का जलवायु मैदानों की अपेक्षा कष्टकर पाया जाता है।

पहाड़ियाँ वायु राशियों के मार्ग में प्रायः रुकावट बन जाती हैं। अतः अनुवर्ती भागों के लिए रोध (barrier) का कार्य करती हैं। सर्दियों में हिमालय और तिब्बत के पठार मध्य तथा उत्तरी एशिया से आती अतिशीत हवाओं को भारत पर आने से रोकते हैं। यह बात इस उदाहरण से स्पष्ट है कि जनवरी में कलकत्ता और शंघाई, जो लगभग समान अक्षांश पर स्थित हैं, के औसत तापमान क्रमशः 18 और 3°C हैं। ग्रीष्म मानसून काल में भी ये पर्वत भारतीय मानसून धाराओं को रोक कर उन्हें उत्तर पश्चिम या पश्चिम की ओर परावर्तित कर देते हैं अन्यथा ये धाराएं चीन की ओर सीधी चली जातीं और लगभग पूरा उत्तरी तथा मध्य भारत शुष्क क्षेत्र बन जाता।

सारणी (12 10)

क्रमांक	स्टेशन का नाम और स्थिति		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
	टुन्ड्रा (ET) जलवायु															
1	बरोप्वाइन्ट 71°N, 150°W	तापमान (C) वर्षा (सेमी)	21 3 0 8	-25 0 0 5	-25 6 0 5	-18 9 0 8	6 1 0 8	1 7 0 8	4 4 2 8	3 9 2 0	0 6 1 3	8 9 0	- 5 0 1 0	26 1 1 0	-12 2 14 2	43 3 —
2	स्पिट्सबर्गेन 78°N, 14°E	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	-15 6 3 6	-24 9 3 3	-18 9 2 8	-5 0 2 3	-5 0 2 3	-1 7 1 0	-5 6 1 5	4 4 2 3	0 0 2 4	-5 6 3 0	-11 6 2 5	-14 4 3 8	-7 8 30 0	24 5 —
3	लेकहावर 63°N, 70°W	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	-25 7 2 8	-24 9 2 3	18 9 2 0	-11 1 3 8	-1 9 3 8	3 7 2 8	7 6 6 6	6 8 5 1	2 4 3 0	-3 2 3 8	-10 9 5 6	-19 9 -3 6		33 3 —
	(EF) जलवायु															
1	लिटिल अमेरिका, एन्टार्कटिका (79°S, 164°W)	तापमान (°C) वर्षा (सेमी)	-5 6 —	-12 8 —	-21 7 —	31 1 —	-32 4 —	33 9 —	-36 7 —	-36 7 —	-33 9 —	25 6 —	13 0 —	-4 4 —	-25 2 —	32 3 —

पर्वतीय जलवायु का तापमान चलन प्राय निम्नांकित विशेषताओं से युक्त पाया जाता है —(1) औसत तापमान का ऊँचाई के साथ उत्तरोत्तर ह्रास, (2) ढाल तथा शिखर पर कम और घाटियों में अपेक्षाकृत अधिक वार्षिक तापमान का परिसर, (3) उच्चतम तथा निम्नतम मासिक तापमान का अपेक्षाकृत देर से स्थापित होना, (4) पतझड़ ऋतु का वसन्त ऋतु से अधिक उष्ण होना।

चूँकि वायुमण्डल की अधिकांश नमी, निम्नतम तहों में सीमित रहती है, अतः पर्वतों की चोटियाँ प्राय शुष्क होती हैं। यहाँ वाष्पीकरण भी तीव्र होता है, जिससे त्वचा सूख जाती है और प्यास अधिक लगती है। आरोही तथा अवरोही प्रवाह के साथ नमी का स्थानान्तरण क्रमश निम्न तहों से शिखर तथा शिखर से निम्न तहों की ओर होता रहता है। फलतः दिन में मेघाच्छन्नता तथा रात्रि में पाला-कुहरा की सम्भावनाएँ होती हैं। अनुकूल परिस्थितियों में दोपहर के बाद गर्जन मेघ भी जनित हो सकते हैं।

पवनाभिमुखी भाग के अधिक वर्षा प्राप्त करने के उदाहरण में एन्डीज का पश्चिमी भाग, भारतीय प्रायद्वीप में पश्चिमी घाट का पश्चिमी तट तथा हिमालय श्रृंखलाओं का दक्षिणी ढाल मुख्य है जो पवनाभिमुखी भाग में होने के कारण, अनुवर्ती भाग की अपेक्षा बहुत अधिक वर्षा प्राप्त करते हैं। जहाँ प्रचलित हवाएँ पूर्वी होती हैं वहाँ पर्वत श्रृंखलाओं के पूर्वी भाग पर अधिक वर्षा होती है। उदाहरण के लिए दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध में मेडागास्कर का पूर्वी तट उद्धृत किया जा सकता है। अनुवर्ती भागों में कम वर्षा के कारण कहीं कहीं रेगिस्तानी उत्पन्न हो जाते हैं। दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी तट पर स्थित पेटोगोनिया का रेगिस्तान इसका एक उदाहरण है।

भारत में कुछ उच्च स्थानों पर स्थित स्टेशनों की ऊँचाई तथा वार्षिक वर्षा निम्नांकित सारणी में दी गई है -

स्थान	ऊँचाई (मीटर)	वार्षिक वर्षा (सेमी)
मालदा	31	141
गौहाटी	54	182
तेजपुर	79	189
शिवसागर	97	250
डिब्रूगढ	106	276
कलिंगपोंग	1 09	226
चेरापूंजी	1313	1142
शिलाग	1500	242
श्रीनगर	1586	564
दार्जिलिंग	2127	276
उटकमंड	2249	130
कोडाईकनाल	2343	310
कारगिल	2682	31

ऊँचाइयों पर स्थित कुछ स्टेशनों के जलवायुविक आँकड़े सारणी (12 11) में दिए गए हैं।

सारणी (12.11)

क्रमांक	स्टेशन तथा उनकी स्थिति	ऊँचाई (मीटर)		ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक	तापमान परिसर
1	दार्जिलिंग 27°N, 88°E	2248	तापमान (°C)	4.6	5.7	10.1	13.4	14.6	15.7	16.8	16.2	15.1	12.9	9.0	5.7	11.8	12.4
			वर्षा (सेमी)	1.5	2.8	4.6	9.7	22.1	63.3	82.0	66.3	46.7	11.4	2.0	0.5	317	—
2	कोदईकनाल 10°N, 77°E	2343	तापमान (°C)	12.9	13.4	15.1	16.2	16.8	15.1	14.6	14.6	14.6	14.0	12.9	12.9	14.6	4.0
			वर्षा (सेमी)	7.4	3.6	5.1	10.9	15	10.4	12.7	17.8	15.5	24.6	20.8	11.2	158.2	—
3	अदिस अबाबा 9°N, 39°E	2438	तापमान (°C)	15.6	16.7	18.3	17.6	18.9	17.8	16.7	16.1	16.1	16.7	15.0	15.0	16.7	3.9
			वर्षा (सेमी)	1.5	4.8	7.1	8.6	7.6	14.5	27.9	30.7	19.3	2.0	1.3	0.5	1[illegible]6.0	—
4	मेक्सिको सिटी (19°N, 39°E)	2258	तापमान (°C)	12.2	13.9	16.1	17.6	18.3	17.8	16.7	16.7	[illegible]	15.0	13.3	12.2	15.6	6.1
			वर्षा (सेमी)	0.5	0.5	1.5	4.0	4.8	9.9	11.4	11.7	9.9	4.1	1.3	0.5	57.9	—
5	प्यूबेलो, मेक्सिको	2147	तापमान (°C)	12.2	13.9	16.1	[illegible]	18.3	17.8	17.2	17.2	16.7	16.1	14.4	12.2	16.1	6.1
			वर्षा (सेमी)	1.0	0.8	1.0	2.8	8.9	17.3	14.7	15.2	14.0	6.3	2.3	1.0	8[illegible]	—
6	सैंटिस, स्विटजरलैंड 47°N, 9°E	2509	तापमान (°C)	−8.9	−8.9	−8.3	−4.4	−0.6	2.8	5.0	5.0	2.8	−1.1	−5.0	−8.3	−2.8	13.9
			वर्षा (सेमी)	14.5	17.0	[illegible]	[illegible]	19.8	28.4	31.2	27.4	[illegible]	[illegible]	12.2	15.5	243.1	—
7	लेह, काश्मीर 34°N, 47°E	3509	तापमान (°C)	−8.3	−7.2	−0.6	6.1	10.0	14.4	17.2	[illegible]	12.2	6.1	0.0	−5.6	5.0	25.0
			वर्षा (सेमी)	1.0	0.8	0.8	1.5	0.5	0.5	1.3	1.3	0.8	0.5	—	0.5	8.1	—

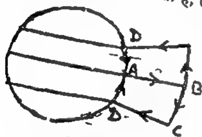
जलवायुविक तत्त्वो का भौगोलिक आवटन 13

(Geographical Distribution of Climatic Elements)

13 10 वायुदाब का भौगोलिक आवटन

गम वायु उमी आयतन की ठडी वायु की अपेक्षा हल्की होगी, अत स्थान-स्थान पर तापमान परिवतन के कारण वायुदाब भी बदलता रहता है। मौसम परिस्थितियो के विश्लेषण म वायुदाबों का थोडा अतर भी महत्वपूण है। दाबान्तर उत्पन्न करने वाले कारक लगभग वही हैं, जो तापमान मे विभिन्नता पैदा करते हैं। इनम अक्षाश तथा जल-थल का प्रभाव मुख्य है।

इस विचार के आधार पर सामान्यत विषुवत् रेखीय उष्ण क्षेत्र मे निम्न दाब व ध्रुवीय क्षेत्रो मे उच्च दाब होना चाहिए तथा तापमान की भाति अक्षाशो के प्रतिदाब को भी नियमित चलन रखना चाहिए किन्तु ऐसा नही है। भू-तलीय दाब का प्रतिरूप (pattern) अत्यधिक क्लिष्ट है। पृथ्वी के घूणन के अतिरिक्त वायु राशियो की ऊर्ध्वाधर गतियाँ भी दाब को प्रभावित करती हैं। किसी स्थान से ऊपर उठती हवा, वहाँ अपसरण पैदा करके निम्नदाब बना देती है, तो अन्य स्थान पर वही वायु अवतलित होकर, अभिसरण के कारण वायुदाब बढा देती है। उदाहरण के लिए विषुवत् रेखा (A) पर गम होकर जो वायु राशि उठती है वह A पर अपसरण तथा किसी ऊँचाई B पर अभिसरण उत्पन्न करती है। B से उसका क्षतिज प्रवाह उच्च अक्षाशो की ओर होता है जहाँ C से पुन अवतलित होने के कारण वह मध्य अक्षाशो (30° उ व द के आस पास) D पर उच्चदाब बना देगी।



चित्र (13·1)

13 11 मोटे तौर पर पृथ्वी के औसत दाब प्रतिरूप म निम्नाकित दाब पेटिकाए स्थायीवत रूप म पाई जाती हैं —

(1) विषुवत रेखीय निम्नदाब क्षेत्र या डोलड्रम।

(2) उप उष्ण कटिब धी उच्चदाब पेटिकाएँ जो 25 से 35° अक्षाशो के बीच दानो गोलार्द्धों म स्थित है।

(3) उप ध्रुवीय निम्नदाब क्षेत्र, जो 60 से 70° अक्षांशो के बीच दोनों गोलार्द्धों मे स्थित हैं।

(4) ध्रुवीय उच्चदाब क्षेत्र, जो उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्धों के ध्रुवीय अक्षांशों मे स्थित है। ये क्रमश आर्कटिक और एन्टार्कटिक उच्चदाब भी कहलाते हैं।

हान और कोनराद (1930) के अनुसार, उत्तरी गोलार्द्ध मे मुख्य अक्षांशों पर समुद्रतलीय वायुदाब का वार्षिक औसत इस प्रकार है —

अक्षांश (उत्तरी)	—	0	30	60	75
दाब (मिलीबार)	—	1010	1016	1010	1014

13 12 इस सामान्य प्रतिरूप मे जल और थल के अनियमित वितरण के कारण अनेक परिवर्तन (modification) होते है। ये परिवर्तन मौसम विभिन्नता के कारण और भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। सूर्य की ऊष्मा थल को जल की अपेक्षा गर्मियो मे अधिक गर्म और सर्दियो मे अधिक ठण्डा कर देती है। अत सर्दियो मे थल के भाग उच्चदाब क्षेत्र बन जाते हैं जबकि जल के भाग अपेक्षाकृत गर्म होने के कारण तुलना मे निम्नदाब के क्षेत्र होते हैं। गर्मियो म अधिक गर्म होने से, थल के भागो मे निम्नदाब स्थापित हो जाता है और जल मे अपेक्षाकृत उच्चदाब।

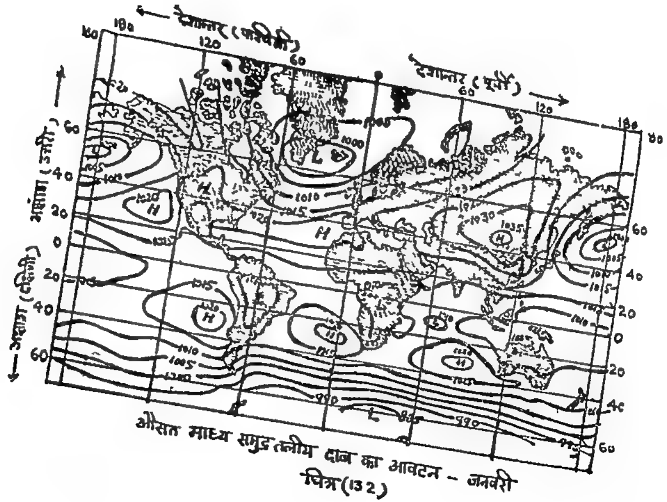
13 13 मानचित्र 13 2 तथा 13 3 मे जनवरी और जुलाई के माध्य समुद्र तलो पर औसत समदाब रेखाओ का भू-मण्डलीय प्रावटन प्रदर्शित किया गया है। ये महीने शीत तथा ग्रीष्मकाल के प्रतिनिधि के रूप मे लिए गए हैं। इन मानचित्रों के विश्लेषण से, वायुदाब के भौगोलिक बटन की रूपरेखा विस्तारपूर्वक समझी जा सकती है। कुछ मुख्य बातें नीचे दी गई हैं

13 14 जनवरी की समदाब रेखाएँ

(1) सूर्य के दक्षिणी गोलार्द्ध म स्थानान्तरण के साथ, विषुवत् रेखीय निम्नदाब क्षेत्र भी दक्षिण की ओर खिसक जाता है। इसकी औसत स्थिति महासागरो मे 5 – 10° द तथा महाद्वीपो मे 10 – 20° द के बीच होती है। उत्तरी पश्चिमी आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका तथा मध्य दक्षिणी अमेरिका पर क्रमश 1005, 1006 और 1008 मिलीबार के निम्नदाब क्षेत्र उपस्थित रहते हैं।

(2) दक्षिणी गोलार्द्ध मे उप-उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब क्षेत्र स्पष्ट रूप स 30 से 35° अक्षांश वृत्तो के बीच स्थित हैं। महासागरो पर 1020 मिलीबार की कोशिकाएँ स्थापित हैं। यह उच्चदाब क्षेत्र महाद्वीपो के निम्न दाबो द्वारा एक दो स्थान पर खण्डित पाया जाता है।

(3) दक्षिणी गोलार्द्ध का उप ध्रुवीय निम्नदाब 60 अंश से नीचे आ जाता है तथा बिना खण्डित हुए सर्वत्र व्याप्त रहता है। इसका कारण यह है कि इस क्षेत्र के पूरे वृत्त पर केवल महासागर वर्तमान हैं।



औसत माध्य समुद्र तलीय दाब का आवटन – जनवरी

चित्र (132)

औसत माध्य समुद्र तलीय दाब का आवंटन – जुलाई
चित्र (13.3)

(4) उत्तरी गोलार्द्ध का उप-उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब मुख्यत मध्य पूर्वी एशिया पर सर्वाधिक तीव्रता के साथ विस्तृत रहता है जहाँ 45 अंश अक्षांश पर 1035 मिलीबार की उच्चदाब कोशिका वर्तमान पायी जाती है। अपेक्षाकृत कम तीव्रता (1020 मिलीबार) की कोशिकाएँ 30 और 40 अक्षांशो के बीच अटलांटिक एवं पूर्वी प्रशान्त महासागर तथा दक्षिणी पश्चिमी अमरिका पर भी स्थित होती हैं।

(5) उप ध्रुवीय निम्नदाब क्षेत्र मुख्यत दो केन्द्रों में बट जाता है। एक उत्तरी अटलांटिक (50° उ से ऊपर) पर 1002 मिलीबार की कोशिका के रूप में स्थित होता है। इसे आइसलैंड निम्नदाब कहते हैं। दूसरा, उत्तरी प्रशान्त महासागर पर 996 मिलीबार की कोशिका बनाता है। इसे अल्यूशियन (Aleution) निम्नदाब कहते हैं।

13 15 जुलाई की समदाब रेखाएँ

(1) गर्मियो में सूर्य के साथ विषुवत् रेखीय निम्नदाब का स्थानान्तरण भी उत्तरी गोलार्द्ध में हो जाता है। यह स्थानान्तरण दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा कुछ अधिक होता है। महासागरो में तो डोलड्रम क्षेत्र 5 – 10° उ अक्षांश के बीच स्थित रहता है, किन्तु महाद्वीपीय भागो में 15 से 25 अंश अक्षांश वृत्तो में चला जाता है। सर्वाधिक स्थानान्तरण भारतीय उपमहाद्वीप में 25° उ तक होता है।

(2) 70 अंश उत्तरी अक्षांश तक का सारा एशियाई थल भाग, निम्नदाब क्षेत्र बन जाता है। इसकी तीव्रता सबसे अधिक पाकिस्तान और उत्तरी-पश्चिमी भारत पर होती है जहाँ 995 मिलीबार की निम्नदाब कोशिका औसत रूप से दिखाई देती है।

(3) उत्तरी गोलार्द्ध का उप उष्ण कटिबन्धी उच्च दाब बहुत क्षीण हो जाता है और दो विकसित प्रतिचक्रवात कोशिकाओं के रूप में अटलांटिक और प्रशान्त महासागरों में विद्यमान होता है। दोनों प्रतिचक्रवात 1020 मिलीबार की समदाब रेखाओं से बनते हैं।

(4) दक्षिणी गोलार्द्ध में उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब, 20 से 30° द के बीच स्थित रहता है। महासागरों में 1020 या 1025 मिलीबार की कई कोशिकाएँ देखी जा सकती हैं। 1020 मिलीबार की एक उच्च दाब कोशिका आस्ट्रेलिया के थल भाग पर विकसित रहती है।

(5) उप-ध्रुवीय निम्न दाब उत्तरी गोलार्द्ध में बहुत क्षीण हो जाता है, और कहीं-कहीं एक समदाब रेखा से घिरी कमजोर कोशिका के रूप में दिखाई देता है। किन्तु दक्षिणी गोलार्द्ध में यह अपेक्षाकृत गंभीर होता है और 60° द० अक्षांश के समानान्तर दौड़ता है।

13 20 उच्च वायुमण्डलीय वायु दाब का आवटन (Distribution of upper atmospheric pressure)

जैसा कि अध्याय 10 में बताया जा चुका है ऊपरी वायुमण्डल में दाब प्रणालियों के अध्ययन के लिए समदाब रेखीय मानचित्रों की अपेक्षा कन्टूर मानचित्र (स्थिर दाब

मानचित्र) अधिक उपयुक्त होते हैं। उच्च वायुमण्डल म उच्च दाब के बटन की सबसे मुख्य बात यह है कि जैसे जैसे ऊपर की ओर जाते हैं, जल थल का प्रभाव कम होने से दाब का प्रतिरूप सरल होता जाता है। इसके अलावा, सामान्य वायु प्रवाह की प्रकृति भ्रमिल प्रवाह जैसी हो जाती है। यह भ्रमिल सममित नहीं होता। मध्य क्षोभ मण्डल म इसका एक केन्द्र साधारणत पूर्वी कनाडा के आर्कटिक क्षेत्रों म पाया जाता है तथा दूसरा पूर्वी साइबेरिया के ऊपर। प्रवाह सर्दियों म अधिक तीव्र हो जाता है।

13 21 जनवरी और जुलाई के 850, 500 तथा 200 मिलीबार के औसत स्थिर दाब मानचित्रों के अनुसार, उत्तरी गोलार्द्ध म निम्नांकित मुख्य तथ्य प्रकट होते हैं

(क) जनवरी

(1) 850 मिलीबार

उप ध्रुवीय तथा ध्रुवीय अक्षांशों पर निम्न दाब पाया जाता है, जिसकी कन्टूर सम रेखा का मान 1200 जी पी एम (geo potential meter) है। 15 से 25° अक्षांशों के बीच 1520 जी पी एम का उच्च दाब क्षेत्र प्रभावशाली रहता है, जो कभी-कभी कई कोशिकाओं मे बँटा होता है।

(2) 500 मिलीबार

ध्रुवीय अक्षांशों मे 5000 जी पी एम का निम्न दाब तथा 10 से 20° अक्षांशों के बीच 5860 जी पी एम का उच्च दाब क्षेत्र पाया जाता है, जो दो या तीन कोशिकाओं मे साधारणत बँटा होता है। मध्य अक्षांशों मे अधिक दाब प्रवणता होती है जिससे 30–50° उ अक्षांशों के बीच तीव्र वायु प्रवाह पाया जाता है।

(3) 200 मिलीबार

निम्न दाब (10880 जी पी एम) ध्रुवों पर सिमट जाता है। 0–20 अक्ष उत्तरी भाग, 12400 जी पी एम की उच्च दाब कोशिकाओं से घिरा होता है। मध्य अक्षांशों म दाब प्रवणता अधिक होने के कारण, उप-उष्ण कटिबन्धीय जेट धारा अधिक तीव्र होती है।

(ख) जुलाई

(1) 850 मिलीबार

ध्रुवों पर 1360 जी पी एम का निम्न दाब पाया जाता है। एटलांटिक तथा प्रशान्त महासागर क्रमश 1600 और 1560 जी पी एम के उच्चदाबों से घिरे होते हैं।

(2) 500 मिलीबार

ध्रुवों पर यथावत् निम्न दाब (5440 जी पी एम) तथा 20 से 30° अक्षांशों के सागरीय भागों पर 5880 जी पी एम की उच्चदाब कोशिकाएँ मिलती हैं। इन्हीं अक्षांश वृत्तों के बीच अफ्रीका तथा भारत के भू-खण्ड पर और शक्तिशाली उच्चदाब कोशिकाएँ (5920 जी पी एम) स्थित रहती हैं।

(3) 200 मिलीबार

ध्रुवों पर 11680 जी पी एम का निम्नदाब तथा 25 से 35° उ० अक्षांशों के बीच, अरब से भारत तक तथा चीन पर 12560 जी पी एम कन्टूर का उच्चदाब पाया जाता है। अमेरिका पर भी उच्चदाब कोशिकाएँ बनती हैं, जो अपेक्षाकृत कम तीव्र (12440 जी पी एम) होती हैं।

13.30 धरातलीय तापमान का भौगोलिक आवटन (Geographical distribution of Surface Temperature)

तापमान मुख्यत सौर विकिरण द्वारा निर्धारित होता है। पृथ्वी की सतह पर इसका आवटन अक्षांश, सतह की प्रकृति, ऊँचाई और प्रचलित हवाओं पर निर्भर करता है।

सारणी (13 1)

अक्षांश वृत्तों पर औसत धरातलीय तापमान (°C) का आवटन

	जनवरी		जुलाई		वार्षिक		परिसर (range)	
अक्षांश गोलार्द्ध	उ	द	उ	द	उ	द	उ	द
0	26 4	26 4	25 6	25 6	26 2	26 2	0 8 (1 0)	0 8 (1 0)
10	25 8	26 3	26 9	23 9	26 7	25 3	1 1 (1 4)	2 4
20	21 8	25 4	28 0	20 0	25 3	22 9	6 2	5 4
30	14 5	21 9	27 3	14 7	20 4	16 6	12 8	7 2
40	5 0	15 6	24 0	9 0	14 1	11 9	19 0	6 6
50	−7 1	8 1	18 1	3 4	5 8	5 8	25 2	4 7
60	−16 1	2 1	14 1	−9 1	−1 1	−3 4	30 2	11 2
70	−26 1	−3 5	7 3	−23 0	−10 7	−13 6	33 4	19 5
80	−32 2	−10 8	2 0	−39 5	−18 3	−27 0	34 2	28 7
90	−41 1	13 5	−1 1	−47 9	−22 7	−33 1	40 0	34 4

सारणी (31 1) मे दिए गए आँकडो से स्पष्ट है कि सभी नियन्त्रको मे अक्षाशो का प्रभाव सर्वोपरि है। सारणी मे विभिन्न अक्षाशो पर सर्दियो, गर्मियो और पूरे वर्ष के लिए, औसत तापमान तथा तापमान का वार्षिक परिसर दिए गए हैं। सारणी से निम्नाकित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं —

(1) तापमान अक्षाशो के साथ लगातार घटता जाता है किन्तु सबसे गर्म अक्षाश विषुवत् रेखा न होकर 10° उ है। सर्दियो मे विषुवत् रेखा पर और गर्मियो मे 20° उ से कुछ ऊपर सर्वाधिक तापमान पाया जाता है।

(2) दोनो ही गोलार्द्धों मे, सर्दियो मे, गर्मियो की अपेक्षा तापमान अक्षाशो के साथ ज्यादा तेजी से घटता है। यह विकिरण के मौसमी चलन के कारण होता है। सौर और भू-विकिरणो का अन्तर (जिस पर तापमान निर्भर करता है) शीत गोलार्द्ध मे ग्रीष्म गोलार्द्ध की अपेक्षा अक्षाशो के साथ बहुत कम परिवर्तित होता है। इस प्रकार ताप-प्रवणता शीत काल मे अधिक पाई जाती है। इसी कारण शीत काल मे सामान्य वायु-प्रवाह, ग्रीष्म काल की अपेक्षा अधिक तीव्र होता है।

नोट करने की बात यह है कि केवल विकिरण सन्तुलन ही किसी स्थान का तापमान निर्धारित नही करता। अन्य कारण भी तापमान को प्रभावित करते हैं। इसी कारण, अक्षाशो के प्रति विकिरण और तापमान का प्रावटन समानान्तर नही है। उदाहरणार्थ, जनवरी मे विकिरण का आधिक्य 30° द अक्षाश पर सर्वाधिक होता है, जबकि इस महीने मे अधिकतम तापमान विषुवत् रेखा पर पाया जाता है।

(3) कुल मिलाकर उत्तरी गोलार्द्ध का औसत वार्षिक तापमान, दक्षिणी गोलार्द्ध से ज्यादा है। वार्षिक औसत के आधार पर उत्तरी गोलार्द्ध का हर अक्षाश, दक्षिणी गोलार्द्ध के सगत अक्षाश की अपेक्षा अधिक गर्म है। इसका कारण उत्तरी गोलार्द्ध का अधिक थल भाग है।

(4) अक्षाशो के साथ तापमान ह्रास की दर, उष्ण कटिबन्ध मे सबसे कम और ध्रुवीय क्षेत्रो मे सर्वाधिक होती है। उदाहरण के लिए —

T (विषुवत्)—T (30 अश उ) = 5 8°C,

T (30 अश उ)—T (60 अश उ) = 21 5°C

T (60 अश उ)—T (90 अश उ) = 21 6 C

दक्षिणी अक्षाशो मे यह अन्तर कुछ अधिक होता है, पर प्राय इसी नियम का पालन करता है —

T (विषुवत्)—T (30 अश द) = 9 6°C

T (30 अश द)—T (60 अश द) = 20 0°C

और T (60 अश द)—T (90 अश द) = 29 7°C

(5) उत्तरी गोलार्द्ध मे तापमान साधारणत जुलाई मे उच्चतम और जनवरी मे निम्नतम होता है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध मे ठीक इसके विपरीत। अत उत्तरी गोलार्द्ध के किसी अक्षाश वत्त पर,

वार्षिक तापमान परिसर = जुलाई का औसत तापमान – जनवरी का औसत तापमान

दक्षिणी गोलार्द्ध में,

वार्षिक तापमान परिसर = जनवरी का औसत तापमान – जुलाई का औसत तापमान

सारणी (13 1) के अन्तिम कॉलम में यही तापमान परिसर दिया गया है।

परन्तु यह देखा गया है कि विपुवत् रेखा से 10° उ तक उच्चतम तापमान जुलाई में न होकर मई या जून में पाया जाता है। इसी प्रकार इस भाग में अनेक स्थानों पर, जनवरी निम्नतम तापमान का महीना नहीं है। अतः विपुवत् रेखा और 10° उ के लिए अन्तिम कालम में दिए गए आंकड़े वास्तविक परिसर नहीं प्रदर्शित करते। सबसे गर्म और सबसे ठण्डे महीनों के तापमान अन्तर के अनुसार—

विपुवत् रेखा पर वार्षिक तापमान परिसर = 0 9°C तथा 10° उ पर वार्षिक तापमान परिसर = 1 4°C। तापमान परिसर, उष्ण कटिबन्धी अक्षांशों में कम है और दोनों ध्रुवों की ओर साधारणतः बढ़ता जाता है। इसका कारण यह है कि उच्च अक्षांशों में सौर विकिरणों का वार्षिक चलन बहुत ज्यादा है, जबकि विपुवत् रेखा के आस-पास वर्ष भर सूर्य लगभग समान तीव्रता से चमकता है।

लेकिन 30° द के दक्षिण में तापमान परिसर पुनः घटता है और 50° द पर दूसरा निम्नतम प्रस्तुत करता है। इसका कारण यह है कि 30° द के बाद महाद्वीपीय भाग बहुत तेजी से कम होता जाता है। 30° द परिधि का 20% भाग थल से ढका है, जबकि 40° द की परिधि पर थल भाग केवल 4% हो जाता है। यहाँ महासागरीय प्रभाव, अक्षांशीय प्रभाव से अधिक शक्तिशाली पड़ता है, जिसके फलस्वरूप तापमान परिसर बढ़ने के बजाय घटने लगता है।

(6) वार्षिक तापमान विस्तार उत्तरी गोलार्द्ध के हर अक्षांश पर, दक्षिणी गोलार्द्ध के संगत अक्षांश से अधिक है केवल 10° उ को छोड़कर। उत्तरी गोलार्द्ध में अधिक महाद्वीपीय प्रभाव ही इसका कारण है। 10° उ और 10° द अक्षांशों पर थल का प्रतिशत भाग बराबर है, किन्तु तापमान परिसर 10° द पर अधिक है।

(7) दोनों गोलार्द्धों और सम्पूर्ण पृथ्वी के लिए औसत तापमानों के आंकड़े अग्रांकित सारणी में दिए गए हैं—

सारणी (13 2)
तापमान (°C)

	जनवरी	जुलाई	परिसर
उत्तरी गोलार्द्ध	8 1	22 4	14 3
दक्षिणी गोलार्द्ध	17 1	9 7	7 4
सम्पूर्ण पृथ्वी	12 6,	16 0	3 4

उत्तरी गोलार्द्ध में वार्षिक तापमान दक्षिणी गोलार्द्ध से थोड़ा अधिक है, परन्तु वार्षिक तापमान परिसर उत्तरी गोलार्द्ध म अपेक्षाकृत बहुत अधिक है । इसका कारण भी उत्तरी गोलार्द्ध का अधिक महाद्वीपीय भाग है, जो ग्रीष्म महीना मे अत्यधिक गम और शीत के महीनों मे अत्यधिक ठण्डा हो जाता है ।

अत अधिक गम ग्रीष्म काल, अधिक ठण्डा शीत काल तथा अधिक वार्षिक तापमान परिसर आन्तरिक महाद्वीपीय जलवायु की विशेषताएँ हैं । महासागरीय जलवायु मे ग्रीष्म-काल अपेक्षाकृत शीतल और शीत काल मृदु होता है ।

इन तथ्यो से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि थल भाग मे, जहाँ तापमान परिसर अधिक है, वहाँ वार्षिक औसत तापमान भी तदनुसार अधिक होगा । उत्तरी गोलार्द्ध मे 35 या 50 अक्ष उ तक यह बात सही पाई जाती है । पर इससे ऊँचे अक्षाशो मे तापमान परिसर बढ़ने पर, औसत वार्षिक तापमान कम होने लगता है । उदाहरण के लिए, 47° उ पर दो स्थान नान्टेस (2° प) और बुडापेस्ट (19° पू) पर विचार कीजिए । नान्टेस मे तापमान परिसर 13 8°C और वार्षिक तापमान 11 1°C है, जबकि बुडापेस्ट मे तापमान परिसर 23 4°C होते हुए भी वार्षिक तापमान नान्टेस से कम, 9 9°C है ।

इस विपरीत चलन का कारण यह है कि उच्च अक्षाशो मे तट से अन्दर की ओर गर्मियो का तापमान उतनी तेजी से नही बढ़ता, जितनी तेजी से सर्दियों का तापमान घटता है ।

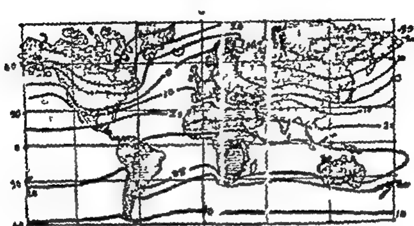
लेकिन यह कहना ठीक नही है कि उत्तरी गोलार्द्ध का वार्षिक तापमान अधिक होने का कारण, केवल अधिक थल का भाग ही है । इस गोलार्द्ध के महासागर भी दक्षिणी-गोलार्द्ध के महासागरो से अधिक गम हैं । इसके दो कारण हैं —

(1) दक्षिणी पूर्वी व्यापारिक हवाओ द्वारा दक्षिणी उष्ण कटिबन्ध की गम जल-राशि का उत्तरी गोलार्द्ध मे आयात ।

(2) थल बन्धो द्वारा शीतल ध्रुवीय जल तथा अतिरिक्त ग्लेशियर से महासागरो का बचाव । एन्टार्कटिक तथा अन्य दक्षिणी महासागरो के लिए इस प्रकार का कोई प्राकृतिक बन्ध या रुकावट उपलब्ध नही है ।

13.31 तापमान आवटन पर जल और थल भागों का प्रभाव

उपर्युक्त तथ्यों के अतिरिक्त जल और थल का, तापमान आवटन का प्रभाव चित्र (13 4 और 13 5) में दिए गए जनवरी और जुलाई के समुद्र स्तर पर समताप मानचित्रों



औसत धरातलीय तापमान का आवटन – जनवरी
चित्र (13-4)



औसत तापमान का भौगोलिक आवटन – जुलाई
चित्र (13-5)

द्वारा और स्पष्ट हो जाता है। इनमें उच्च भू भाग के तापमानों को 0 65°C/100 मीटर ह्रास पर समुद्र तल पर अवतरित करा लिया गया है। ये समताप रेखाएँ निम्नांकित तथ्य स्पष्ट करती हैं —

(1) अधिकांश भागों में जनवरी की समताप रेखाएँ अक्षांश के वृत्त के समानान्तर नहीं चलती। उत्तरी गोलार्द्ध में महाद्वीपों में प्रविष्ट होते समय ये रेखाएँ नीचे की ओर मुड़ जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि महाद्वीप, महासागरों की अपेक्षा ठण्डे हैं।

उत्तरी गोलार्द्ध का सबसे ठण्डा स्थान साइबेरिया में वर्खोयान्स्क (68° उ 133° पू) है जहाँ जनवरी का औसत तापमान – 50°C पाया जाता है। परन्तु गर्मियों में इसका तापमान काफी बढ़ जाता है। जुलाई का औसत तापमान 15°C हो जाता है।

अत: वार्षिक तापमान अधिक नहीं गिर पाता। संसार का सर्वाधिक ठंडा स्थान सम्भवत एन्टार्कटिक प्रदेशो मे, वोस्तोक (vostok) ने, जहाँ 24 अगस्त, 1960 को लिया गया −88 3°C का तापमान अब तक का रिकार्ड धरातलीय निम्नतम तापमान है।

(2) मध्य अक्षाशो मे जनवरी मे महाद्वीपो का पश्चिमी तट, पूर्वी की अपेक्षा गम है। इसका कारण इस भाग की पश्चिमी हवाएँ हैं, जो सागरो की अपेक्षाकृत गम हवाएँ, पश्चिमी तटो पर लाती रहती हैं। उदाहरण के लिए, 40°C की रेखा लीजिए, जो उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट के 45° उ और पूर्वी तट को 36° उ पर काटती है।

जल और थल सीमा पार करते समय, समताप रेखाओं का उत्तर या दक्षिण मे विचलन, उष्ण कटिबन्धों और मध्य अक्षाशो मे बहुत कम है। यह इन भागो के कम तापमान परिसर के कारण होता है।

(3) जुलाई की रेखाओं से स्पष्ट है कि इस ऋतु मे महाद्वीपीय भाग आस-पास के सागरो से अधिक गम है। इस महीने मे जल और थल भाग पार करते समय रेखाएँ विपरीत दिशा मे विचलित होती हैं।

(4) दक्षिणी गोलार्द्ध के लिए जनवरी, गर्मियो का महीना है जब वहाँ महाद्वीपा का तापमान महासागरो से अधिक होता है। दक्षिणी अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया पर बन्द समताप रेखाओं द्वारा यह तथ्य प्रकट है।

जनवरी और जुलाई दोनो महीनो मे दक्षिणी गोलार्द्ध की रेखाएँ ज्यादा नियमित और अक्षाशो के समानान्तर हैं। यह, जल भाग की प्रमुखता के कारण उत्पन्न समता का परिणाम है।

(5) जनवरी की रेखाएँ एक दूसरे से अधिक निकट हैं, जिससे स्पष्ट है कि प्रवणता सर्दियो से अधिक होती हैं। तापमान

13 32 तापमान का दैनिक चलन

दैनिक तापमान साधारणत सूर्योदय होने के ठीक बाद निम्नतम तथा दोपहर 1 से 3 घण्टे के बाद उच्चतम होता है। उच्चतम और निम्नतम तापमानो का अन्तर दैनिक तापमान परिसर कहलाता है। यह स्पष्ट है कि तापमान निम्नतम से उच्चतम तक उठने मे, उच्चतम से निम्नतम तक गिरने की अपेक्षा कम समय लेता है। दैनिक तापमान परिसर निम्नलिखित बातो पर निर्भर करता है —

(1) आकाश की अवस्था

मेघाच्छन्न दिनो मे तापमान परिसर कम होता है, क्योंकि बादल, सौर विकिरणो को नीचे आने से और पृथ्वी की बहिर्गामी विकिरणो को बाहर जाने से रोकते है। फलस्वरूप उच्चतम तापमान कम और निम्नतम तापमान अधिक हो जाता है। मेघ रहित दिनो मे तापमान परिसर अपेक्षाकृत अधिक होता है।

(2) वायु का स्थायित्व

स्थायी वायुमण्डल मे, विशेषकर जब भूमि तल के पास व्युत्क्रमण स्थित हो, तो भूमि के सम्पर्क से हुई गम हवा व्युत्क्रमण तह से ऊपर नही जा पाती। फलस्वरूप सीमित

क्षेत्र हो जाने से, वायु राशि अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक गर्म रहती है। इससे उच्चतम तापमान बढ़ता है। अतः स्थायी वायुमण्डल और निम्न अधुत्क्रमण के दिनों में, दैनिक तापमान परिसर अधिक पाया जाता है।

(3) भू सतह की प्रकृति

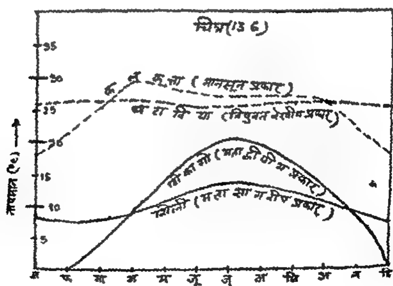
वार्षिक तापमान परिसर की भाँति, उन्हीं कारणों से दैनिक तापमान परिसर भी सागरों पर थल की अपेक्षा कम होता है। सागरों पर तापमान उच्चतम भी अपेक्षाकृत पहले (दोपहर के लगभग आधा घण्टा बाद) पहुँच जाता है। कारण यह है कि सागरों के गर्म होने से आपतित और बहिर्गामी विकिरणों में सन्तुलन कुछ पहले ही स्थापित हो जाता है।

तटीय क्षेत्रों में सागर-समीर का नियमित प्रवाह, दिन के सबसे गर्म भागों का तापमान कुछ कम कर देता है और इस प्रकार तापमान परिसर इन क्षेत्रों में कम ही रहता है।

(4) इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दैनिक तापमान परिसर पर अक्षांश का विशेष नियन्त्रण नहीं है। यह स्थानीय तत्त्वों, जैसे—मेघाच्छन्नता, वाष्प और धूल के कण, जल थल का आवंटन और वायु-प्रवाह आदि द्वारा अधिक प्रभावित रहता है।

11 33 तापमान की वार्षिक प्रगति (Annual March of Temperature)

हम देख चुके हैं कि वार्षिक तापमान नियमित रूप से अक्षांश के साथ घटता जाता है तथा तापमान परिसर अक्षांश के साथ बढ़ता जाता है। तापमान परिसर महासागरों की अपेक्षा महाद्वीपों में अधिक होता है। इन दो बातों के अतिरिक्त, किसी स्थान के वार्षिक तापमान चलन के अन्तर्गत यह अध्ययन करना भी आवश्यक है कि तापमान उच्चतम और निम्नतम किन महीनों में होता है और कितने समय तक वार्षिक तापमान औसत से ऊपर या नीचे रहता है। इन दृष्टिकोणों से संसार भर में तापमान चलन प्रायः निम्नांकित 4 रूपों में मिलता है, जिन्हें चित्र (13 6) में दर्शाया गया है।



(1) विषुवत रेखीय प्रकार (Equatorial Type)

बेटाविया की तापमान प्रगति देखिए। बहुत ही कम वार्षिक तापमान परिसर इस प्रकार की मुख्य विशेषता है। सूर्य वर्ष में दो बार विषुवत् रेखीय आकाश से गुजरता है अतः उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों में वर्ष में बहुधा दो उच्चतम और दो निम्नतम पायी जाती हैं। किन्तु यह दुहरा उच्चतम हर स्थान पर नहीं पाया जाता। उष्ण कटिबन्धों की सीमा के पास, जहाँ अधिकतम और विकिरण के दोनों समयों में विशेष अन्तर नहीं होता, दुहरे उच्चतम की प्रक्रिया नहीं देखी जाती।

(2) महाद्वीपीय प्रकार (Continental Type)

शिकागो का तापमान चलन इस प्रकार का एक उदाहरण है। यह प्रकार जनवरी में निम्नतम और जुलाई में उच्चतम तापमान प्राप्त करता है। दोनों ही महीने क्रमशः शीत और ग्रीष्म अयनान्तों के बाद पड़ते हैं। चलन का ग्राफ उच्चतम और निम्नतम स्थितियों के सममित (symmetrical) रहता है। उप उष्ण कटिबन्धों, मध्य अक्षांशों तथा ध्रुवीय अक्षांशों के महाद्वीपीय भाग लगभग इसी के समान तापमान चलन प्रदर्शित करते हैं।

(3) मध्य महासागरीय प्रकार (Temperate Meritime Type)

सिल्ली (Scilly, 50° उ 6° प) दक्षिणी पश्चिमी इंग्लैण्ड के तटीय सागर में स्थित, ऐसा स्थान है जो पश्चिमी प्रवाह के कारण सदा महासागरीय हवाओं के प्रभाव में रहता है। इसका तापमान मध्य महासागरीय प्रकार का एक उदाहरण है। यहाँ महाद्वीपीय भागों से तापमान परिसर कम है। इस प्रकार के स्थानों में अधिकतम तापमान जुलाई की अपेक्षा अगस्त में पाया जाता है और इसी प्रकार, निम्नतम तापमान भी कुछ देर से अर्थात् फरवरी या कभी-कभी मार्च के महीने में मिलता है। इस देरी का कारण जल मिश्रण तथा संवाहन है। ऊष्मा प्राप्त करते ही जल भाग संवाहन तथा मिश्रण द्वारा ऊष्मा को अधिक आयतन में फैला देता है। उच्चतम तथा निम्नतम तापमान स्थापित करने के लिए, जल राशि का इतनी गहराई तक समान रूप से तब तक गर्म या ठण्डा होना आवश्यक है, जब तक कि मिश्रण या संवाहन क्रिया सतह के जल को स्थानान्तरित करने में समर्थ न हो सके। उच्चतम तापमान देर से प्राप्त करने की विशेषता उन तटीय स्टेशनों पर और अधिक पाई जाती है जो ठण्डे महासागरीय धाराओं के सम्पर्क में आते हैं, जैसे—सेन फ्रांसिस्को (कैलीफोर्निया), मागोडो (मोरक्को) और कालो (पेरु) के तट।

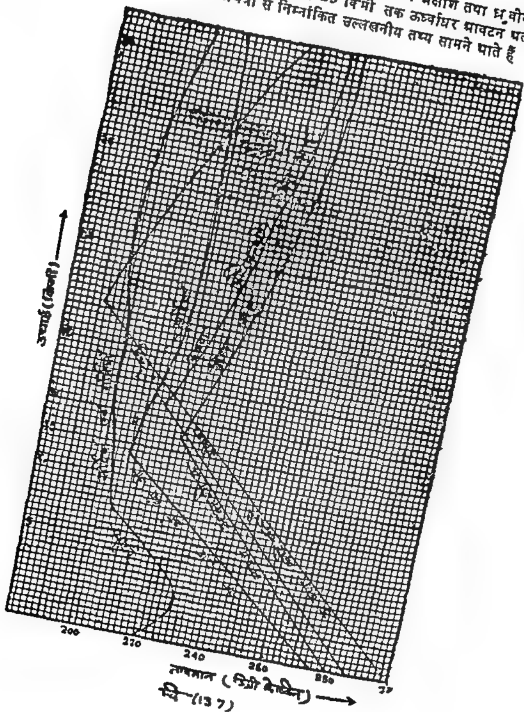
(4) मानसून प्रकार (Monsoon Type)

इस प्रकार के सामान्य उदाहरण के लिए कलकत्ता की वार्षिक तापमान प्रगति पर विचार करें। दक्षिणी पश्चिमी मानसून धाराओं के आगमन से इन क्षेत्रों में एकाएक बादल तथा वर्षा की वृद्धि होने से तापमान की वृद्धि रुक जाती है और तापमान उच्चतम जुलाई के बजाय मई में ही स्थापित हो जाता है। मानसून खत्म होने के बाद तापमान स्वाभाविक रूप से फिर बढ़ता है और मासिक चलन के अन्तर्गत सितम्बर में द्वितीय उच्चतम प्रस्तुत करता है।

हर मानसून प्रभावित क्षेत्र ऐसा ही तापमान चलन प्रदर्शित करता है। परन्तु उच्चतम और निम्नतम तापमान की स्थापना मानसून की प्रकृति और काल पर निर्भर करता है।

13 40 औसत ऊर्ध्व वायु तापमान का भू मण्डलीय आवटन (Global distribution of average upper air temperature)

चित्र (13 7) म दी गई रेखाएँ उष्ण कटिबन्ध, मध्य अक्षांश तथा ध्रुवीय क्षेत्रो म ग्रीष्म और शीत काल के लिए तापमान का 25 किमी तक ऊर्ध्वाधर आवटन अलग अलग प्रदर्शित करती हैं। इन रेखाचित्रो से निम्नांकित उल्लेखनीय तथ्य सामने आते हैं —



चि—(13 7)

(1) उच्च अक्षांशों में शीतकाल को छोड़कर, संसार में हर भाग और हर ऋतुओं में ह्रास दर 8–10 किमी की ऊँचाई तक लगभग समान है। इस ह्रास दर का औसत मान 5–6°C/किमी है। ह्रास दर उच्च स्तरों पर निम्न स्तरों की अपेक्षा थोड़ी अधिक प्रतीत होती है।

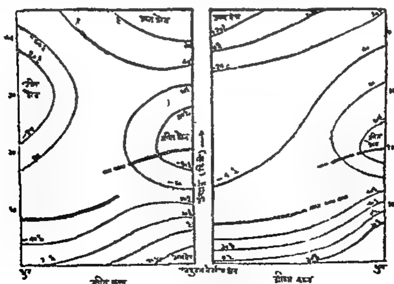
उच्च अक्षांशों के शीतकाल को छोड़कर अन्य तापमान ह्रास रेखाएँ क्षोभ सीमा (7 किमी ध्रुवों पर से 17 किमी उष्ण कटिबंधों पर) पर एकाएक रुक जाती हैं, तत्पश्चात् स्थिर मण्डल में तापमान की बहुत ही धीमी किन्तु लगातार वृद्धि प्रदर्शित करती हैं। ह्रास दर का यह परिवर्तन लगभग 100 मीटर मोटी तह में अचानक ही उत्पन्न होता है। इससे स्पष्ट है कि क्षोभ और स्थिर मण्डलों का तापमान विभिन्न प्रणालियों द्वारा नियंत्रित होता है।

क्षोभ सीमा के बाद उष्ण कटिबंधीय तापमान यद्यपि अपेक्षाकृत अधिक तेजी से बढ़ता है तथापि यह मध्य और उच्च अक्षांशों के ग्रीष्म तापमानों से कम ही रहता है।

उच्च अक्षांशों में क्षोभ सीमा की ऊँचाई उष्ण कटिबंधी क्षोभ सीमा की ऊँचाई (17 किमी) से कम होती है। 60 अक्ष के बाद यह ऊँचाई गर्मियों में 10 किमी और सर्दियों में 9 किमी के लगभग रह जाती है। कम ऊँचाई के कारण उच्च अक्षांशों की क्षोभ सीमाएँ अपेक्षाकृत अधिक गर्म होती हैं।

(2) वायुमण्डल का सबसे कम तापमान उष्ण कटिबंधों क्षोभ सीमा पर पाया जाता है। यहाँ तापमान –80°C से भी नीचे पहुँच जाता है। ध्रुवीय क्षेत्रों के शीतकालीन रेखा से यह प्रतीत होता है कि 25 किमी से ऊपर (लगभग 40 किमी तक) का तापमान भी लगभग विषुवत् रेखीय क्षोभ सीमा जितना ही कम है।

(3) ध्रुवीय सर्दियों में तापमान निम्न क्षोभ मण्डल में ऊँचाई के साथ इतनी अधिकता से बढ़ता है कि औसत तापमान में भी स्पष्ट व्युत्क्रमण दिखाई देता है।

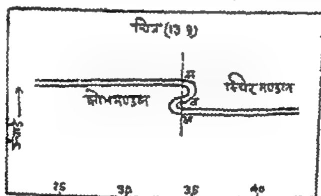


उर्ध्वाधर वायुतापमान का आवटन
चित्र (33)

(4) ध्रुवीय क्षेत्रों में ग्रीष्म और शीतकाल के तापमान आवटन, बहुत अन्तर प्रदर्शित करते हैं। स्थिर मण्डल में तापमान ध्रुवीय गर्मियों में सबसे अधिक होता है, जबकि सर्दियों में ध्रुवीय स्थिर मण्डल समान रूप से सर्वाधिक शीतल क्षेत्र बन जाता है। यह बात चित्र (13 8) से और अधिक स्पष्ट हो जाती है।

13 41 चित्र (13 8) भू मध्य से ध्रुव तक एक देशान्तर रेखा के ऊपर लिया गया एक अनुप्रस्थ काट (cross section) है। पहला भाग ग्रीष्म गोलार्द्ध और दूसरा भाग शीत गोलार्द्ध को चित्रित करता है। 30 स 35° अक्षांशों के बीच क्षोभ सीमा का टूटना इन चित्रों में स्पष्ट है।

अक्षांश के साथ क्षोभ सीमा की ऊँचाई घटती जाती है और सामान्यतः (30–35) अंश अक्षांश पर उष्ण कटिबन्धीय क्षोभ सीमा टूट जाती है, जहाँ इसकी ऊँचाई में एकाएक काफी गिरावट आ जाती है। यह टूटी हुई क्षोभ सीमा, मध्य क्षोभ सीमा के रूप में आगे बढ़ती है, जो मध्य और उच्च अक्षांशों के संगम पर एक बार फिर इसी प्रकार टूटती है।



अनेक अवसरों पर क्षोभ सीमा टूटने के बजाय दोहरा मोड़ लेती है। चित्र (13 9) की तरह इन अक्षांशों में लगभग 12 किमी (अ) पर पहली क्षोभ सीमा पार कर स्थिर मंडल आ जाता है। किन्तु लगभग 14 किमी (ब) पार करने के बाद हमें पुन क्षोभ मण्डल प्राप्त होता है, जो 16 किमी (स) पर दूसरी क्षोभ सीमा बनाता है।

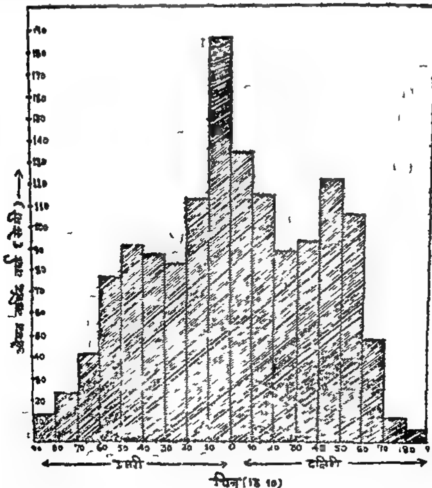
13 42 चित्र (13 8) में यह भी स्पष्ट है कि क्षोभ मण्डल में हर स्तर पर तापमान साधारणतः भू मध्य से ध्रुवों की ओर घटता जाता है। केवल उच्च अक्षांशों की गर्मियों का तापमान इसका अपवाद है। स्थिर मंडल में गर्मियों में तापमान भू मध्य से ध्रुवों तक लगातार बढ़ता है, किन्तु सर्दियों में मध्य अक्षांशीय क्षेत्र, तापमान उच्चतम प्रदर्शित करते हैं।

13 43 निम्न क्षोभ मण्डल में तापमान, अक्षांश के अलावा जल और थल आवटन से भी प्रभावित होते हैं। एक ही अक्षांश वृत्त पर 3–4 किमी ऊँचाई का तापमान थल भाग पर, जल भाग या तटीय क्षेत्रों की अपेक्षा थोड़ा अधिक पाया जाता है। यह अन्तर महाद्वीपीय ऊष्मा तथा तापमान अभिवहन का मिला जुला प्रभाव प्रतीत होता है। इसके सम्बन्ध में अभी तक कोई निश्चित सिद्धान्त स्पष्ट नहीं हो पाया है।

13.50 अवक्षेपण का सामान्य आवटन (General distribution of precipitation)

तुषार या वर्षा के लिए आर्द्रता के अलावा वायुमण्डलीय अस्थिरता, जिससे वाष्प को उठने और सघनित होकर बादल बनने के लिए सुविधा मिलती है भी एक आवश्यक तत्व है। इसी कारण विषुवत् रेखा के उत्तरी क्षेत्र (डोनड्रम) में संसार की सबसे ज्यादा वार्षिक वर्षा (198 सेमी) रिकार्ड की जाती है। सूर्य की सर्वाधिक ऊष्मा के कारण यहाँ अधिक वाष्पीकरण होता है, साथ ही उत्तरी-पूर्वी और दक्षिण पूर्वी व्यापारिक हवाओं के अभिसरण से वायुमण्डल अधिकतर अस्थाई होता है। इसमें भंवर या चक्रवाती तूफान भी निम्न अक्षांशों में कुछ क्षेत्रों में भारी वर्षा के लिए उत्तरदायी हैं। सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा उत्तरी में अधिक दूर तक स्थानान्तरित होता है, जिससे ताप भू मध्य (Thermal equator) और I T C Z औसत रूप से भौगोलिक भू मध्य से थोड़ा उत्तर की ओर स्थित पाये जाते हैं। इसी कारण अधिकतम वर्षा का क्षेत्र भी भू मध्य की अपेक्षा उत्तर की ओर विचलित हो जाता है।

इस उच्चतम से दोनों गोलार्द्धों में अवक्षेपण की मात्रा, अक्षांशों के साथ थोड़ी-बहुत घटती जाती है। किन्तु वर्षा पर अक्षांशों का उतना अधिक नियन्त्रण नहीं है, जितना तापमान पर होता है। अक्षांशों के साथ वर्षा का घटाव नियमित नहीं है। दोनों ही गोलार्द्ध मध्य अक्षांशों (40–50°) में अवक्षेपण का द्वितीय उच्चतम प्रदर्शित करते हैं।



चित्र (13.10)

चित्र (13 10) म दिया गया हिस्टोग्राफ अक्षांशों के प्रति वार्षिक अवक्षेपण का आवटन प्रस्तुत करता है। डोलड्रम के उच्चतम के बाद (20–30) अक्षांश दोनों ही गोलार्द्धों मे कम वर्षा रिकार्ड करते हैं, क्योंकि यह उप-उष्ण कटिबंधीय उच्चदाब पेटिका का क्षेत्र है, जो सामान्य रूप से स्थायी वायुमण्डल और अवतलन गति के प्रभाव मे रहता यह स्थिति स्पष्ट ही बादलो के विकास के लिए असुविधाजनक है।

इसके आगे पश्चिमी प्रवाह का क्षेत्र (40–50°), जिसे 'ध्रुवीय वाताग्र क्षेत्र' कहा जाता है, तीव्र वाताग्र प्रक्रियाओ के कारण अधिक वर्षा प्राप्त कर, द्वितीय उच्चतम स्थापित करता है। यह द्वितीय उच्चतम दक्षिणी गोलार्द्ध म उत्तरी की अपेक्षा अधिक विकसित है। कारण यह है कि 40-60 अक्ष अक्षांश क्षेत्र म, उत्तरी गोलार्द्ध का केवल 45% भाग जल है, जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध का 98% जल है। इमस अपेक्षाकृत अधिक वाष्प की सुविधा है, जिसस ज्यादा वर्षा होना स्वाभाविक ही है। 40–60° द म

इसके आगे के क्षेत्र म ध्रुवीय उच्चदाब के प्रभाव के कारण निचले क्षोभ-मण्डल म अवतलन गति प्रचलित रहती है। अत ध्रुवीय क्षेत्रो मे सबसे कम अवक्षेपण होता है। इस कम अवक्षेपण के लिए वहाँ का निम्न तापमान भी उत्तरदायी है।

13 51 वर्षा के आवटन की इन सरल रूपरेखा को निम्नांकित कारण खण्डित करते रहते हैं—

(1) डोलड्रम, उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब पेटिका, और पश्चिमी प्रवाह के क्षेत्रो मे मौसमी विचलन।

(2) जल और थल का भौगोलिक वितरण।

(3) पर्वत शृंखलाओ की उपस्थिति।

13 52 क्षेत्रीय स्तरो पर काफी अन्तर के बावजूद दोनो गोलार्द्धों मे कुल औसत वार्षिक वर्षा मे आश्चर्यजनक समता है। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध क्रमश 1009 तथा 1000 सेमी की औसत वार्षिक वर्षा मे प्राप्त करते हैं। इन गोलार्द्धों के वार्षिक वाष्पीकरण का औसत क्रमश 944 तथा 1064 किमी है। कम वाष्पीकरण के बावजूद उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिक वार्षिक वर्षा का कारण, I T C Z का उत्तरी गोलार्द्ध म अधिक स्थानान्तरण तथा उत्तरी मध्य अक्षाशों की वाताग्र प्रक्रियाएं हैं। ससार को कुल वार्षिक वर्षा का लगभग 50% भाग 20° उ —20° द क्षेत्र मे सीमित है। इस क्षेत्र म महाद्वीपीय भाग, दोनो गोलार्द्धों म लगभग बराबर हैं किन्तु उत्तरी गोलार्द्ध के क्षत्र म I T C Z के ज्यादा सक्रिय होने से, वहाँ वर्षा अधिक होती है। किन्तु दक्षिणी मध्य अक्षाशो की अधिक वर्षा इस अन्तर को उदासीन कर देती है।

सारणी (13 3) मे दोनो गोलार्द्धों मे वर्षा के क्षेत्रीय अन्तर को स्पष्ट करने के लिए अक्षाश पेटियों पर सागरीय तथा महाद्वीपीय वर्षा के आँकड़े अलग-अलग दिए गए हैं। तुलनात्मक दृष्टिकोण से वाष्पीकरण, अक्षेपीय जल तथा अवक्षेपण क्षमता के आँकड़े भी साथ ही प्रस्तुत किए गए हैं।

सारणी (13.3)

औसत वार्षिक वर्षा मिलीमीटर

	महाद्वीपीय		महासागरीय		भारीय औसत (weighted mean)		वाष्पीकरण (मिलीमीटर)		अवक्षेपीय जल (w) (मिलीमीटर)		अवक्षेपण क्षमता (P) (%)	
गोलार्द्ध अक्षांश	उ	द	उ	द	उ	द	उ	द	उ	द	उ	द
0–10	1405	1539	1991	1415	1934	1445	1235	1304	41 07	40 90	12 9	9 7
10–20	823	1090	1248	1185	1151	1132	1389	1541	36 73	36 66	8 6	8 5
20–30	675	660	895	925	790	841	1246	1416	26 37	29 86	8 2	7 9
30–40	590	565	1175	982	872	932	1002	1256	18 95	23 81	12 6	10 7
40–50	515	798	1352	1222	907	1226	641	895	18 21	18 10	16 3	18 6
50–60	490	972	1125	1067	780	1046	469	520	15 21	12 61	18 6	22 7
60–70	305	170	685	490	415	418	333	174	11 64	6 84	13 3	16 7
70–80	145	79	215	102	185	82	145	45	8 52	2 87	7 8	7 8
80–90	112	18	112	46	112	30	42	0	6 48	1 56	6 7	5 3
0–90	—	—	—	—	1009	1000	944	1064	23 85	22 49	12 1	12 1
सम्पूर्ण भू मण्डल	671		1140		1004		1004		24 67		12 1	

चित्र (13 10) मे दिया गया हिस्टोग्राफ अक्षाशो के प्रति वार्षिक अवक्षेपण का आवटन प्रस्तुत करता है। डोलड्रम के उच्चतम के बाद (20–30) अक्षाश दोनों ही गोलार्द्धों मे कम वर्षा रिकार्ड करते हैं, क्योंकि यह उप-उष्ण कटिबन्धीय उच्चदाब पेटिका का क्षेत्र है, जो सामान्य रूप से स्थायी वायुमण्डल और अवतलन गति के प्रभाव मे रहता यह स्थिति स्पष्ट ही बादलो के विकास के लिए असुविधाजनक है।

इसके आगे पश्चिमी प्रवाह का क्षेत्र (40–50°), जिसे 'ध्रुवीय वाताग्र क्षेत्र' कहा जाता है, तीव्र वाताग्र प्रक्रियाओ के कारण अधिक वर्षा प्राप्त कर, द्वितीय उच्चतम स्थापित करता है। यह द्वितीय उच्चतम दक्षिणी गोलार्द्ध मे उत्तरी की अपेक्षा अधिक विकसित है। कारण यह है कि 40–60 अश अक्षाश क्षेत्र मे, उत्तरी गोलार्द्ध का केवल 45% भाग जल है, जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध का 98% जल है। इससे 40–60° द म अपेक्षाकृत अधिक वाष्प की सुविधा है, जिससे ज्यादा वर्षा होना स्वाभाविक ही है।

इसके आगे के क्षेत्र मे ध्रुवीय उच्चदाब के प्रभाव के कारण निचले क्षोभ-मण्डल मे अवतलन गति प्रचलित रहती है। अत ध्रुवीय क्षेत्रो मे सबसे कम अवक्षेपण होता है। इस कम अवक्षेपण के लिए वहाँ का निम्न तापमान भी उत्तरदायी है।

13 51 वर्षा के आवटन की इन सरल रूपरेखा को निम्नाकित कारण खण्डित करते रहते हैं—

(1) डालड्रम, उप उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब पेटिका, और पश्चिमी प्रवाह के क्षेत्रो मे मौसमी विचलन।

(2) जल और थल का भौगोलिक वितरण।

(3) पर्वत श्रृंखलाओ की उपस्थिति।

13 52 क्षेत्रीय स्तरो पर काफी अन्तर के बावजूद दोनो गोलार्द्धों म कुल औसत वार्षिक वर्षा मे आश्चर्यजनक समता है। उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध क्रमश 1009 तथा 1000 सेमी की औसत, वार्षिक वर्षा मे प्राप्त करते हैं। इन गोलार्द्धों के वार्षिक वाष्पीकरण का औसत क्रमश 944 तथा 1064 किमी है। कम वाष्पीकरण के बावजूद उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिक वार्षिक वर्षा का कारण, I T C Z का उत्तरी गोलार्द्ध मे अधिक स्थानान्तरण तथा उत्तरी मध्य अक्षाशों की वाताग्र प्रक्रियाएँ हैं। ससार की कुल वार्षिक वर्षा का लगभग 50% भाग 20° उ —20° द क्षेत्र मे सीमित है। इस क्षेत्र म महाद्वीपीय भाग, दोनो गोलार्द्धों मे लगभग बराबर हैं किन्तु उत्तरी गोलार्द्ध के क्षेत्र मे I T C Z के ज्यादा सक्रिय होने से वहाँ वर्षा अधिक होती है। किन्तु दक्षिणी मध्य अक्षाशो की अधिक वर्षा इस अन्तर को उदासीन कर देती है।

सारणी (13 3) मे दोनो गोलार्द्धों मे वर्षा के क्षेत्रीय अन्तर को स्पष्ट करने के लिए अक्षाश पेटियो पर सागरीय तथा महाद्वीपीय वर्षा के आँकडे अलग-अलग दिए गए हैं। तुलनात्मक दृष्टिकोण से वाष्पीकरण अदेयीय जल तथा अवक्षेपण क्षमता के आँकडे भी साथ ही प्रस्तुत किए गए हैं।

13 60 वर्षा आवटन पर जल और थल का प्रभाव

(1) एक ही अक्षाश वृत्त पर साधारणत महासागरीय क्षेत्र थल भाग से अधिक वर्षा प्राप्त करता है। केवल 0–10° द अक्षांश पटिका इस नियम का अपवाद है।

सारे ससार के थल और जल भाग पर अलग-अलग औसत वार्षिक वर्षा क्रमश 67 0 और 114 सेमी है। इस आवटन मे द्वीपो की वर्षा, जल भाग मे ही सम्मिलित कर ली गई है। यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि द्वीप पर खुले समुद्र की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है, क्योकि वहाँ नमी तो पर्याप्त मात्रा म रहती ही है, पर्वतीय अनुकूलता और ऊँची जमीन के कारण उत्पन्न सवहन धाराएँ भी इस नमी को उठाने म सहायता करती है।

(2) टोलड्रम क्षेत्र मे वर्षा सवत्र समान नही होती। अफ्रीका के शुष्क पूर्वी तट को छोडकर सर्वाधिक वर्षा विषुवत् रेखा के आस-पास होती है, जो अक्षाश के साथ घटती जाती है। दोनों गोलार्द्धों के उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब क्षेत्र, अवतलन प्रवाह के कारण कम वर्षा प्राप्त करते हैं। इसी क्षेत्र के महाद्वीपीय भागा मे वास्तविक मरुस्थल वतमान हैं। उत्तर मे शुष्क पेटिका इरान, अफगानिस्तान, अरब और सहारा रेगिस्तान हाते हुए उत्तरी अटलांटिक मे दूर तक फैली है। उत्तरी मेक्सिको और दक्षिणी पश्चिमी अमरिका के शुष्क क्षेत्र भी इसी पेटिका के भाग वनते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध की शुष्क पेटिका पश्चिमी आस्ट्रेलिया दक्षिणी अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका पर फैली हुई है। दोनो उप उष्ण कटिब धी शुष्क पेटिकाएँ कहलाती है। ये पेटिकाएँ किसी सतत क्षेत्र का निर्माण नही करती हैं। इन पेटिकाओ के अ तगत पडने वाले सभी महाद्वीपो के पूर्वी भाग अच्छी वर्षा प्राप्त करते हैं तथा बीच-बीच मे शुष्क पेटिका को खण्डित कर दत हैं। इस वर्षा का कारण व्यापारिक हवाओ का पूर्वी अवयव है, जो पूर्वी तटो पर नम वायु धारा प्रवाहित करता रहता है।

(3) शुष्क पेटिकाओ के बाद ध्रुवो की ओर वर्षा पुन बढती है, क्योकि यह क्षेत्र वाताग्र विक्षोभो के प्रभाव म आ जाता है। प्रचलित पश्चिमी हवाओं के कारण, इस क्षेत्र मे महाद्वीपो के पश्चिमी तट सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते हैं, जहाँ से भीतरी भागो की ओर वर्षा शनै -शनै घटती जाती है। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका मे क्रमश राकी और एण्डीज पवतो के कारण, अनुवर्ती भागो मे, अर्थात भीतरी थल भागो की ओर वर्षा का घटाव एकाएक और बहुत अधिक हो जाता है।

(4) इससे ऊँचे अक्षाशो मे अवतलन प्रवाह और कम तापमान के कारण वर्षा पुन घटती चली जाती है।

13 61 अधिक ऊँचाई पर जहाँ तापमान 0°C से कम हो, अवक्षेपण अधिकतर तुषार के रूप में होता है, उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रो मे भी। पवनाभिमुखी भाग की अधिक वर्षा तथा अनुवर्ती भागो मे वर्षा की अचानक कमी, ऊँच भू भागो का विशेष गुण है। कभी-कभी अनुवर्ती भाग बिल्कुल शुष्क रह जाते हैं। उदाहरणार्थ, आस्ट्रेलिया म ग्रीष्म मानसून पूर्वी और उत्तरी भागो को तो वर्षा देता है, परन्तु दक्षिण पश्चिम भाग को सूखा छोड जाता है। मेक्सिको क रेगिस्तान भी इसी प्रकार के उदाहरण हैं। वैसे इन स्थानो पर कम वर्षा का एक कारण यह भी है कि इनके पश्चिम मे स्थित महासागरो का तापमान भूमि की अपेक्षा कम है।

13.53 दोनों ही गोलार्द्धों में u का वितरण, [illegible] उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में अधिकतम होता है और विषुवत् रेखा तथा ध्रुवों की ओर घटता जाता है। [illegible] मण्डल पर 10–20° द. क्षेत्र में वार्षिक वाष्पीकरण का मान सर्वाधिक (1541 मिमी) है। 10–20° उ. क्षेत्र अपने गोलार्द्ध क्षेत्र में सबसे अधिक (1389 मिमी) वार्षिक वाष्पीकरण करता है पर दक्षिणी गोलार्द्ध में [illegible] के कारण, इस क्षेत्र में अधिकतम [illegible] स्थल भाग में [illegible] क्षेत्र है [illegible] के कारण वायुमण्डल [illegible] दन में समय नहीं है।

[illegible] दक्षिणी गोलार्द्ध में वाष्पीकरण [illegible] गोलार्द्ध में औसतन अधिक होता है। [illegible] पर उप-उष्णकटिबंधीय क्षेत्र की अधिकता [illegible] बहुत कम है। इसका कारण दक्षिणी गोलार्द्ध का कम तापमान और अधिक [illegible] है। इसके अलावा उत्तरी गोलार्द्ध में ग्रीनलैंड की अपेक्षा अंटार्कटिक का बहुत अधिक क्षेत्र [illegible] में कम तापमान में वाष्पीकरण में सहायक है।

13.54 अवक्षेपणीय जल इकाई क्षेत्र (1 वर्ग सेमी) पर खड़े वायु स्तम्भ में कुल वाष्प की मात्रा (ग्राम, सेमी या मिमी) को कहते हैं। साधारणतः कम अवक्षेपणीय जल, कम वर्षा दर की ओर इंगित करती है, परन्तु [illegible] और रेगिस्तानी क्षेत्र अधिक अवक्षेपणीय जल (u) होते हुए भी वायुमण्डल की स्थिरता के कारण बहुत कम वर्षा प्राप्त कर पाते हैं। इसके विपरीत (40–50°) उ. क्षेत्र अपेक्षाकृत कम (u) के होते हुए भी अधिक वर्षा प्राप्त करते हैं, क्योंकि यहाँ [illegible] वायुमण्डल को [illegible] देने के लिए विवश कर देती हैं।

जैसा कि आँकड़ों से स्पष्ट है, u का मान दोनों गोलार्द्धों में अक्षांश के साथ ताप मान की तरह लगातार घटता जाता है और ध्रुवों पर निम्नतम होता है। इसका कारण यह है कि कम तापमान पर, वायु की नमी धारण करने की क्षमता भी कम हो जाती है।

13.55 अवक्षेपण क्षमता (P)

$$(P) = \frac{\text{औसत दैनिक वर्षा}}{\text{औसत अवक्षेपीय जल}} \times 100 = \frac{R}{365 \times u} \times 100,$$

जहाँ, R, स्थान की वार्षिक वर्षा है।

अवक्षेपण क्षमता दोनों गोलार्द्धों के मध्य अक्षांशों में साइक्लोनिक क्रियाओं के कारण अधिकतम होती है। अन्तर्गोलार्द्धीय उष्ण कटिबन्धी अभिसरण क्षेत्र की तीव्रता के कारण P का द्वितीय उच्चतम (0–10° उ.) में पाया जाता है। दोनों गोलार्द्धों में उप उष्ण कटिबन्धी क्षेत्र (20–30) अक्षांश में उच्चदाब के कारण उत्पन्न अवतलन अवक्षेपण क्षमता को बहुत घटा देता है। वैसे, जैसा कि स्पष्ट है, निम्न तापमान के कारण P का निम्नतम मान ध्रुवों पर ही होता है।

13 60 वर्षा आवटन पर जल और थल का प्रभाव

(1) एक ही अक्षाश वृत्त पर साधारणत महासागरीय क्षेत्र थल भाग से अधिक वर्षा प्राप्त करता है। केवल 0–10° द अक्षाश पेटिका इस नियम का अपवाद है।

सारे ससार के थल और जल भाग पर अलग-अलग औसत वार्षिक वर्षा क्रमश 67 0 और 114 सेमी है। इस आकलन मे द्वीपो की वर्षा, जल भाग मे ही सम्मिलित कर ली गई है। यहा यह समझ लेना चाहिए कि द्वीप पर खुले समुद्र की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है, क्योकि वहाँ नमी तो पर्याप्त मात्रा मे रहती ही है, पर्वतीय अनुकूलता और ऊँची जमीन के कारण उत्पन्न सवहन धाराएँ भी इस नमी को उठाने मे सहायता करती हैं।

(2) डोलड्रम क्षेत्र म वर्षा सवत्र समान नही होती। अफ्रीका के शुष्क पूर्वी तट को छोडकर सर्वाधिक वर्षा विपुवत् रखा के आस पास होती है, जा अक्षाश के साथ घटती जाती है। दोनो गोलार्द्धों के उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब क्षेत्र, अवतलन प्रवाह के कारण कम वर्षा प्राप्त करते हैं। इसी क्षेत्र के महाद्वीपीय भागो मे वास्तविक मरुस्थल वतमान हैं। उत्तर मे शुष्क पेटिका ईरान, अफगानिस्तान, अरब और सहारा रेगिस्तान होते हुए उत्तरी अटलाटिक मे दूर तक फैली है। उत्तरी मक्सिको और दक्षिणी पश्चिमी अमेरिका के शुष्क क्षेत्र भी इसी पेटिका के भाग बनते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध की शुष्क पेटिका पश्चिमी आस्ट्रेलिया दक्षिणी अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिका पर फैली हुई है। दोना उप उष्ण कटिब धी शुष्क पेटिकाएँ कहलाती है। ये पेटिकाएँ किसी सतत क्षेत्र का निर्माण नही करती हैं। इन पेटिकाओ के अ तगत पडने वाले सभी महाद्वीपो के पूर्वी भाग अच्छी वर्षा प्राप्त करते हैं तथा बीच बीच मे शुष्क पेटिका को खण्डित कर देते हैं। इस वर्षा का कारण व्यापारिक हवाओ का पूर्वी अवयव है, जो पूर्वी तटा पर गम वायु धारा प्रवाहित करता रहता है।

(3) शुष्क पेटिकाओ के बाद ध्रुवा की ओर वर्षा पुन बढती है, क्योकि यह क्षेत्र वाताग्र विक्षोभो के प्रभाव मे आ जाता है। प्रचलित पश्चिमी हवाओ के कारण, इस क्षेत्र मे महाद्वीपो के पश्चिमी तट सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते हैं, जहाँ से भीतरी भागो की ओर वर्षा शनै शनै घटती जाती है। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका म क्रमश राकी और एन्डीज पवतो के कारण, अनुवर्ती भागा मे, अर्थात भीतरी थल भागो की ओर वर्षा का घटाव एकाएक और बहुत अधिक हो जाता है।

(4) इससे ऊँचे अक्षाशो मे अवतलन प्रवाह आर कम तापमान के कारण वर्षा पुन घटती चली जाती है।

13 61 अधिक ऊँचाई पर जहाँ तापमान 0°C से कम हो, अवक्षेपण अधिकतर तुषार के रूप मे होता है, उष्ण कटिब धी क्षेत्रो मे भी। पवनाभिमुखी भाग की अधिक वर्षा तथा अनुवर्ती भागो मे वर्षा की अचानक कमी, ऊँचे भू भागो का विशेष गुण है। कभी-कभी अनुवर्ती भाग बिल्कुल शुष्क रह जात हैं। उदाहरणाथ, आस्ट्रेलिया म ग्रीष्म मानसून पूर्वी और उत्तरी भागा को ता वर्षा देता है, परन्तु दक्षिण पश्चिम भाग का सूखा छोड जाता ह। मक्सिका क रगिस्तान भी इसी प्रकार के उदाहरण हैं। वैसे इन स्थाना पर कम वर्षा का एक कारण यह भी है कि इनके पश्चिम मे स्थित महासागरो का तापमान भूमि की अपेक्षा कम है।

(10° उ से 10° द) तथा 40° अक्षांश के बाद दोनों गोलार्द्धों में अवक्षेपण, वाष्पीकरण से अधिक होता है। अतः उपउष्ण कटिबन्धी (10–40) अंश क्षेत्र, जहाँ वार्षिक अवक्षेपण से वाष्पीकरण अधिक होता है, अपनी अतिरिक्त वाष्प इन भागों को स्थानान्तरित करता है। इससे यह भी संकेत मिलता है कि दक्षिणी गोलार्द्ध से जहाँ वाष्पीकरण, वार्षिक वर्षा से ज्यादा है, नमी का स्थानान्तरण उत्तरी-गोलार्द्ध में, जहाँ वाष्पीकरण वार्षिक वर्षा से कम है, सम्भव है।

13.70 मेघाच्छन्नता (Cloudiness) का भौगोलिक आवंटन

आकाश का वह भाग जो बादलों से घिरा है, मेघाच्छन्नता कहलाता है। इस प्रकार यदि पूरे आकाश के 25% भाग पर बादल छाए हुए है, तो मेघाच्छन्नता 25% होगी। मेघाच्छन्नता की परिभाषा में मेघ-आवरण की मोटाई सम्मिलित नहीं है। यह सम्भव है कि मेघाच्छन्नता 8 आक्टा होने पर भी सूर्य की चमक स्पष्ट दिखाई पड़े, जैसा कि पक्षाभ मेघों से आच्छादित आकाश में होता है। सी. ई. पी. ब्रुक्स ने स्थल तथा समुद्र पर मेघाच्छन्नता की माध्य प्रतिशतता का कलन किया। उनके अनुसार मेघाच्छन्नता की वार्षिक माध्य प्रतिशतता का आवंटन निम्न सारणी में दिया गया है —

सारणी (13.4)

उत्तरी गोलार्द्ध

अक्षांश (अंश)	90–80	80–70	70–60	60–50	50–40	40–30	30–20	20–10	10–0
समुद्र	63	70	72	67	66	52	49	53	53
स्थल	—	63	62	60	50	40	34	40	52
माध्य	—	6[illegible]	63	62	56	45	41	47	53

दक्षिणी गोलार्द्ध

समुद्र	64	76	72	67	57	53	49	50	—
स्थल	—	—	70	58	48	38	46	56	—
माध्य	—	—	72	66	54	48	48	52	—

मेघाच्छन्नता के भू-मण्डलीय आवटन मे निम्नांकित विशेषताएँ पाई जाती हैं —

(1) साधारणत सागरीय क्षेत्र पर स्थल की अपेक्षा अधिक मेघाच्छन्नता होती है। केवल दक्षिणी गोलार्द्ध मे 0–10 अंश अक्षांशो के बीच स्थिति, इसके विपरीत है।

(2) अक्षांशो के साथ मेघाच्छन्नता का आवटन, वर्षा के आवटन के लगभग समान है। डोलड्रम क्षेत्र मे मेघाच्छन्नता काफी अधिक है तथा उपोष्ण कटिबन्धो मे यह निम्नतम है। अधिकतम मेघाच्छन्नता साधारणत मध्य अक्षांशो के उन भागो मे पाई जाती है जो प्राय वाताग्र विक्षोभो से प्रभावित रहते हैं। उष्ण कटिबन्ध मे अधिकतर सवाहनिक मेघ पाए जाते हैं। इन मेघो का क्षैतिज विस्तार अपेक्षाकृत कम तथा ऊर्ध्वाधर विस्तार अधिक होता है, अत इनसे जनित मेघाच्छन्नता कम होती है।

(3) उष्ण कटिबन्धों में ग्रीष्म काल प्राय अधिक वर्षा का समय होता है, फलत मेघाच्छन्नता इन्हीं दिनो मे उच्चतम पाई जाती है। निम्नतम मेघाच्छन्नता शुष्क सर्दियो मे रहती है। किन्तु जहाँ सर्दियो मे अधिक वर्षा होती है, जैसे भू-मध्य सागरीय तथा कैली-फोर्निया के तट, वहाँ सर्दियो की मेघाच्छन्नता ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा अधिक पाई जाती है, किन्तु इसका एक अपवाद है। महाद्वीपो के बहुत आन्तरिक भागो मे यद्यपि वर्षा गर्मियो मे ही अधिक होती है किन्तु मेघाच्छन्नता अधिकतम सर्दियो मे पाई जाती है। इसका कारण यही है कि गर्मियो मे, कपासी प्रकार के मेघो से, जो बौछार-युक्त भारी वर्षा उत्पन्न करते हैं, कम क्षैतिज विस्तार के कारण कम मेघाच्छन्नता मिलती है जबकि सर्दियो मे वाताग्र जनित स्तरी प्रकार के मेघ प्राय आकाश पूर्णत ढक देते हैं। ये मेघ कपासी मेघो की अपेक्षा अधिक समय तक वर्तमान रहते हैं, तथा अपेक्षाकृत कम तीव्रता की वर्षा देते हैं। इस प्रकार मेघाच्छन्नता और वर्षा की अवधि दोनों ही अधिक हो जाती है। किन्तु सभी महाद्वीपो के आन्तरिक भागों मे यह स्थिति नही होती। पूर्वी साइबेरिया, जहाँ सर्दियो में प्रतिचक्रवाती प्रवाह प्रमुख होता है, वर्षा और मेघाच्छन्नता दोनो गर्मियो में ही अधिकतम पाई जाती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है मेघाच्छन्नता की मात्रा मेघ के प्रकार पर भी निर्भर करती है।

(4) यही तथ्य दैनिक मेघाच्छन्नता विचलन की भी व्याख्या करता है। दोपहर और शाम के बीच प्राय कपासी प्रकार मेघ बनते हैं। इस प्रकार के मेघो का अधिकतम, दोपहर के दो घण्टे बाद माना जा सकता है। स्तरी प्रकार के मेघो के लिए अपेक्षाकृत स्थायी वायुमण्डल आवश्यक है, अत इनका अधिकतम प्रात वेला मे तथा निम्नतम दोपहर बाद को माना जा सकता है। इस प्रकार स्तरी बादलो वाले स्थानो पर जैसे मध्य अक्षांशो की सर्दियो मे मेघाच्छन्नता का उच्चतम प्रात काल तथा सवाहनिक मेघो के क्षेत्रो मे दोपहर बाद होता है। कभी-कभी ये दोनो उच्चतम एक साथ ही पाये जा सकते हैं।

13 80 तडित झझा (Thunder Storm) का भौगोलिक आवटन

तडित झझा के भौगोलिक आवटन का अध्ययन यथार्थ रूप मे नहीं किया जा सकता, क्योकि एक बडे भू भाग, विशेषत सागर क्षेत्र पर तत्सम्बन्धी आँकडे या तो बिल्कुल उपलब्ध नही हैं अथवा अपर्याप्त हैं। उपलब्ध आकडो के अनुसार अक्षांश के साथ तडित झझा की बारम्बारता बटन मे निम्नांकित विशेषताएँ पायी जाती हैं।

(1) साधारणतः तड़ित झंझा की संख्या सागर क्षेत्रों की अपेक्षा स्थल पर अधिक है। इसका अपवाद केवल 20° उ. अक्षांश पर अक्टूबर से मार्च के बीच पाया जाता है। इसका कारण यह है कि 20° उ. अक्षांश, सहारा मरुस्थल से होकर गुजरता है जहाँ तड़ित झंझा की घटना बहुत ही कम होती है। अप्रैल से सितम्बर के बीच तड़ित झंझा की संख्या इसी अक्षांश के आसपास स्थित थाइलैण्ड, वियतनाम आदि भू भागों पर बहुत अधिक है इसके फलस्वरूप पूरे वर्ष के लिए इस अक्षांश पर स्थल पर तड़ित की बारम्बारता सागर-क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक हो जाती है।

(2) उत्तरी गोलार्द्ध के ग्रीष्म ऋतु (अप्रैल से सितम्बर) में तड़ित झंझा की अधिकतम बारम्बारता 10° उ. अक्षांश पर पायी जाती है। किन्तु वर्ष के शेष महीनों में अधिकतम बारम्बारता क्षेत्र का स्थानान्तरण अपेक्षाकृत दक्षिणी अक्षांशों में हो जाता है।

(3) तड़ित झंझा की औसत संख्या उष्ण कटिबन्ध से उच्चतर अक्षांशों की ओर घटती जाती है। किन्तु यह घटाव पूर्ण रूप से नियमित नहीं है। उप उष्ण कटिबन्धी उच्चदाब क्षेत्र में औसत संख्या के घटाव में अनियमितता स्पष्ट रूप से पायी जाती है। केवल अक्टूबर से मार्च के बीच दक्षिणी गोलार्द्ध में यह घटाव काफी नियमित होता है।

(4) ग्रीष्म ऋतु में तड़ित झंझा की अधिकतम बारम्बारता का क्षेत्र मध्य अमेरिका, वेस्ट इण्डीज, दक्षिणी पूर्वी गल्फ के स्टेट्स, न्यू मैक्सिको, अफ्रीका के विषुवत् रेखा के समीपवर्ती भाग, उत्तर पूर्वी थाईलैण्ड, वियतनाम तथा ईस्ट इण्डीज है।

(5) तड़ित झंझा की घटनाएँ सहारा तथा अरब के रेगिस्तानी क्षेत्रों में बहुत कम होती हैं। इनके अलावा निम्न अक्षांशों के वे क्षेत्र, जहाँ तड़ित झंझा घटनाएँ कम होती हैं, वे हैं—दक्षिणी अटलांटिक तथा हिन्द महासागर क्षेत्र तथा आस्ट्रेलिया। 50° द. अक्षांश के परे तथा उत्तरी गोलार्द्ध के आर्कटिक क्षेत्र में भी तड़ित झंझा की घटनाएं अत्यल्प हैं।

(6) शीतकाल में अत्यल्प झंझा का क्षेत्र और विस्तृत हो जाता है। उत्तरी गोलार्द्ध में यह ध्रुव से 50° उ. अक्षांश तक पाया जाता है। उत्तरी अमेरिका के एक बड़े भाग पर ग्रीष्म में तड़ित झंझा की प्रतिशत बारम्बारता 10% से अधिक होती है, किन्तु शीतकाल में बारम्बारता एक सीमित भाग में सिमटकर केवल 5% रह जाती है। इसी प्रकार गल्फ स्टेटस मध्य तथा पूर्वी यूरोप तथा बाल्कन्स, जहाँ ग्रीष्म में प्रतिशत बारम्बारता 10% से अधिक होती है, शीतकाल में घटकर 1 से 3% तक हो जाती है। ग्रीष्मकाल में तड़ित झंझा की अधिकतम बारम्बारता, जो थाईलैण्ड तथा वियतनाम में पाई जाती है शीत काल में दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होकर ईस्ट इण्डीज से लेकर उत्तरी आस्ट्रेलिया तक विस्तृत हो जाती है। अफ्रीका के विषुवत् रेखीय क्षेत्र मुख्यतः 10° उ. अक्षांश पेटिका में पायी जाने वाली अधिकतम बारम्बारता शीत काल में स्थानान्तरित होकर 20° द. अक्षांश के आस-पास सीमित हो जाती है। दक्षिणी अमेरिका में तड़ित झंझा की बारम्बारता इक्वेडार पेरु तथा अमेजन बेसिन के एक बड़े भाग में अधिक होती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि किसी भी क्षेत्र पर तड़ित झंझा के लिए शीतकाल की अपेक्षा ग्रीष्मकाल अधिक उपयुक्त समय है। ऐसा स्वाभाविक है क्योंकि झंझा की

घटना आद्र वायु राशि में तीव्र संवाहनिक धाराएँ उत्पन्न होने के कारण ही घटित होती हैं। ग्रीष्मकाल में धरातल के अधिक ऊष्मन के कारण तीव्र सवाहनिक धाराएँ सरलता से जनित होती हैं। यही कारण है कि तडित झंझा की बारम्बारता गोलार्द्धों के ग्रीष्म कालों म अधिक पायी जाती है।

किन्तु यह नियम प्राय विषुवत् रेखा अथवा इसके समीपवर्ती क्षेत्रों पर लागू नहीं होता है, क्योंकि इन क्षेत्रों मे ग्रीष्म तथा शीतकाल का अन्तर लगभग नगण्य रहता है।

(7) दक्षिणी एशिया, उत्तरी अफ्रीका तथा ईस्ट इण्डीज मे अधिकतम बारम्बारता दो बार होती है—एक तो वर्षा ऋतु के प्रारम्भ तथा दूसरा वर्षा ऋतु के अन्त मे। मध्य अमेरिका, उत्तरी अटलांटिक तथा वेस्ट इण्डीज मे अधिकतम बारम्बारता अगस्त माह मे पायी जाती है। हिन्द महासागर मे विषुवत् रेखा के उत्तरी भाग मे अधिकतम बारम्बारता मई मे होती है, जबकि विषुवत् रेखा के दक्षिणी भाग मे सभी सागर-क्षेत्रों मे जनवरी से मई के बीच अधिकतम बारम्बारता स्थापित हो जाती है।

(8) दैनिक चलन स्थलीय क्षेत्रों मे तडित झंझा की अधिकतम घटनाएँ दोपहर के बाद घटित होती हैं, जबकि सवाहनिक क्रिया सर्वाधिक तीव्र होती है। प्रातःकाल के समय इनकी सम्भावना सबसे कम पायी गयी है, क्योंकि इस समय सवाहनिक धाराएँ नगण्य होती हैं। इस सामान्य नियम का एक अपवाद तब होता है, जब वायुमण्डल के निम्न स्तरों मे अस्थायित्व की प्रवृत्ति आद्रता के अभिवहन अथवा अवदाबों की उपस्थिति के कारण उत्पन्न हो जाए। इस अवस्था मे झंझा के लिए सर्वोच्च सम्भावना का समय अनिश्चित हो जाता है।

(9) यदि पूरे वर्ष मे विभिन्न अक्षांशों मे तडित झंझा युक्त दिनों की संख्या का विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे दिनों की संख्या विषुवत् रेखीय क्षेत्र मे अधिकतम है तथा विषुवत् रेखा से ध्रुवों की ओर निरन्तर घटती जाती है। केवल उपोष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों मे यह घटाव सामान्य से अधिक पाया जाता है। विषुवत् रेखीय अक्षांशों मे आम तौर पर वर्ष मे 75 से 150 दिन तडित झंझा की घटनाएँ होती हैं। कुछ स्थानों पर तो वर्ष मे 200 दिन भी य घटनाएँ रिकार्ड की गई हैं। इसका कारण यह है कि इन क्षेत्रों मे पूरे वर्ष मे उच्च तापमान तथा आद्रता की अधिकता स्थायिवत् रूप से वर्तमान पायी जाती है, तथा वायु प्रणाली भी अभिसरण की प्रवृत्ति रखती है, जो तडित झंझा उत्पन्न होने के लिए अनुकूल परिस्थितियां हैं। 60 अंश से उच्च अक्षांशों मे तडित झंझा की घटनाएँ अत्यल्प पायी जाती हैं। ऐसा इन अक्षांशों म कम तापमान तथा अवतलन प्रवाह के कारण होता है। निम्न अक्षांशों के रेगिस्तानों मे तडित झंझा की घटनाएँ वर्ष मे 5 या इससे भी कम दिन होती ह।

□□□

14

भारत की जलवायु

(The Climate of India)

---

14 10 भारत की भौगोलिक परिस्थितियाँ

किसी स्थान-विशेष की जलवायु मुख्यत उसकी भौगोलिक परिस्थितियों द्वारा निर्धारित की जाती है। लगभग 3293800 वर्ग किमी क्षेत्रफल मे विस्तृत भारत का विशाल भू-भाग मध्य एशिया के दक्षिण मे स्थित ससार का सबसे बडा प्रायद्वीप है। यह शेष एशिया के लगभग 2500 किमी लम्बी तथा पश्चिम मे सिंध दर्रों से पूर्व मे ब्रह्मपुत्र-घाटी तक फैले हिमालय की शृखलाओं द्वारा विच्छिन्न कर दिया गया है। चौडाई मे ये शृखलाएँ प्राय 250 से 500 किलोमीटर का स्थान घेरती हैं। इन शृखलाओं तथा लगभग 5636 किलोमीटर लम्बे समुद्री तट से घिरा पूरा देश 3 विशिष्ट क्षेत्रो मे बाँटा जा सकता है—

पहला क्षेत्र प्रायद्वीपीय (peninsular) भाग है, जो प्राय विन्ध्य और सतपुडा शृखलाओं के दक्षिण मे स्थित है। दूसरा क्षेत्र सिंध तथा गगा के मैदान हैं, जो भारत के उत्तरी भाग मे स्थित हैं। यह क्षेत्र पूर्व मे आसाम व बगाल एव बिहार तथा उत्तर प्रदेश होते हुए पश्चिम मे पजाब तक विस्तृत है। तीसरा क्षेत्र हिमालय शृखलाओं द्वारा निर्मित पर्वतीय भू भाग है, जो पश्चिम मे बलूचिस्तान तथा पूर्व मे बर्मा के मध्य स्थित है

14 11 प्रायद्वीप की प्रमुख पहाडी शृखलाएँ पश्चिमी व पूर्वी घाट, विन्ध्याचल, सतपुडा एव अरावली हैं। पश्चिमी घाट प्रायद्वीप के पश्चिमी तट ताप्ती की घाटी से केपकेमारिन तक लगभग 1400 किमी लम्बाई मे विस्तृत हैं। शिखरो की ऊँचाई प्राय 1200 से 1800 मीटर के मध्य पायी जाती है। दक्षिण की ओर बढते हुए पश्चिमी घाट की पहाडियाँ सागर तट को दूर छोडती जाती हैं। यह दूरी अधिक दक्षिणी क्षेत्रो में 50 किमी तक हो जाती है। ये पहाडियाँ नीलगिरी शृखलाओं मे समाप्त हो जाती हैं, जहाँ पूर्वी घाट की शाखाएँ भी सम्मिलित होकर "पर्वत गाँठ" (mountain knot) का निर्माण करती हैं। पूर्वी घाट, विषम सरचना वाली पहाडियो की विच्छिन्न कडियो से बनता है, जो उडीसा के उत्तरी सीमा से चलकर कारोमण्डल तट होते हुए नीलगिरी मे मिलता है। पूर्वी घाट की औसत ऊँचाई 800 मीटर पाई गयी है। कहीं कहीं शिखर-बिन्दु 1600 मीटर तक भी उठे हुए हैं।

विन्ध्य शृखलाएँ, जो उत्तरी और दक्षिणी भारत के बीच सीमा रेखा बनाती हैं, पर्याप्त रूप से सतत पहाडियो के समूह से निर्मित हैं। अधिकाश पहाडियाँ रेत के चट्टानो तथा क्वाट्जाइट से बनी हुई हैं। सतपुडा पहाडियाँ नर्मदा और ताप्ती नदियो के मध्य स्थित हैं, जिनका पश्चिमी सिरा गुजरात मे राजपिपला शृखलाओ से मिलता है तथा पूर्वी भाग राची और हजारीबाग क्षेत्रो तक दौडता है। पश्चिम मे इन शृखलाओ का झुकाव थोडा दक्षिण की ओर तथा पूर्व मे थोडा उत्तर की ओर पाया जाता है। गगा के डेल्टा के शीर्ष पर स्थित राजमहल की पहाडियाँ विन्ध्य या सतपुडा की शृखलाएँ नही हैं। ये वास्तव मे लावा से बनी हैं तथा 87½ अश पूर्वी देशान्तर पर 24½ अश से 25½ अश उत्तरी अक्षाश तक का स्थान घेरती हैं।

अरावली शृखलाएँ किसी समय के टेक्टानिक मूल के विशाल पर्वतो के अवशेष हैं। ये शृखलाएँ राजस्थान के दक्षिणी-पश्चिमी कोण से उत्तर पूर्व की ओर बढते हुए राज्य को लगभग दो भागो मे विभक्त करती हैं। ये साधारणत मेटामार्फिक चट्टानों (क्वाट्जाइट फिल्लाइट, सीस्ट, नाइसेस तथा ग्रेनाइट युक्त) से बनी हैं। अरावली का सर्वोच्च शिखर 'माउण्ट आबू' में 'गुरुशिखर' (1883 मीटर) के नाम से प्रसिद्ध है।

14 12 उत्तरी भारत के पर्वतो की उत्पत्ति अपेक्षाकृत अर्वाचीन है, जो टर्शियरी नामक आधुनिक भू वैज्ञानिक युग में मानी गई है। इनकी आकृति अधिकतर गोलाकार है, जो दक्षिण की ओर उभरी हुई पायी जाती है। इस भाग मे पडने वाली हिमालय की शृखलाएँ 4 पर्वतीय क्षेत्रो मे बाँटी जा सकती हैं, जो एक-दूसरे के समान्तर हैं।

1 शिवालिक—जो मैदानी भागो के ठीक उत्तर मे 8 से 50 किमी की मोटाई मे स्थित है। इनकी तुगता प्राय 1 किलोमीटर से कम ही पाई जाती है।

2 निम्न हिमालय क्षेत्र—जो 60 से 80 किलोमीटर की मोटाई म स्थित 3 किलोमीटर औसत ऊँचाई की उच्च भूमि है। नेपाल तथा पजाब में पर्वत शृखलाएँ समान्तर रूप से व्यवस्थित हैं, किन्तु कुमायूँ क्षेत्र मे अस्त-व्यस्त रूप से पायी जाती हैं।

3 वृहद हिमालय क्षेत्र या मध्य हिमालय—जो ऊँचे तथा बर्फ से ढकी पहाडियो का क्षेत्र है। ससार की बहुत ऊँची चोटियो मे से सर्वाधिक चोटिया मध्य हिमालय मे ही पायी जाती हैं, जिनमे कम से कम आधे दजन शिखिर 8000 मीटर से अधिक ऊँचाई पर स्थित हैं और एक दजन 6-7 हजार मीटर से अधिक ऊँचाई रखते हैं।

4 ट्रान्स हिमालय क्षेत्र—वृहद् हिमालय के पीछे लगभग 40 किलोमीटर चौडाई मे स्थित नदियो की घाटियो वाला क्षेत्र ट्रान्स हिमालय क्षेत्र कहलाता है।

14 13 आसाम मे पहाडियो का उठान अपेक्षाकृत तीव्र गति से, किन्तु कम ऊँचाई तक पाया जाता है। उत्तरी-पूर्वी सीमा पहाडियाँ तीक्ष्णता के साथ दक्षिण की ओर मुडती हैं और चाप की आकृति मे भारत और बर्मा की सीमा निर्मित करती है। इन शृखलाओ मे पटकाइ, नागा, मिजो तथा मनिपुर प्रमुख है।

आसाम का पठार यद्यपि बिहार की स्थलाकृति में सान्तत्य म उसी का विस्तार है, किन्तु गगा-ब्रह्मपुत्र की घाटी दोनो के मध्य सीमा रेखा बन जाती है। आसाम के पठार मे गारो, खासी, जयन्तियाँ नामक पहाड़िया के अतिरिक्त उत्तरी-पूर्वी भाग मे मिकिर पहाड़ियो का विच्छिन्न सिलसिला स्थित है।

14 14 भारत की प्रमुख नदियाँ

भारतीय उप-महाद्वीप मे बहने वाली छोटी बडी नदियो की सख्या बहुत बडी ह। इन्हे चार प्रमुख समूहो मे बाँटा जा सकता है—

(1) महाद्वीपीय नदियाँ

(2) सिंधु प्रणाली

(3) गगा प्रणाली

(4) ब्रह्मपुत्र प्रणाली

प्रायद्वीपीय नदियाँ प्राय पश्चिम से पूर्व की ओर ढलान पर बहती हैं। भू पम वेत्ताओ का मत है कि टर्शियरी युग मे प्रायद्वीपीय का पश्चिमी भाग कुछ ऊपर की ओर उठता रहता है। पश्चिमी घाट से बगाल की खाडी तक बहने वाली मुख्य नदियाँ ये है— गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, पेनर, ताम्रपर्णी (जो मन्नार की खाडी मे गिरती है)। सतपुडा की पहाडियो से अनेक नदियाँ निकलती हैं, जिनमे नमदा और ताप्ती मुख्य हैं। ये दोनों अरब सागर मे गिरती हैं। अन्य नदियो मे दामोदर, जो हुगली से मिल जाती है, सुवर्ण रेखा, ब्रह्मनी तथा महानदी का नाम लिया जा सकता है। ये सभी नदियाँ अनेक सहायिकाएँ (tributaries) रखती हैं जिनमे अधिकाश वष भर जल-युक्त पायी जाती हैं।

कुछ नदियाँ अरावली शृखलाओ से भी जनित होती है, जो प्राय अरब सागर की ओर बहती हैं। इनमे लूनी (लवणवारि) विशेष उल्लेखनीय है। इसमे केवल वर्षा ऋतु मे ही जल रहता है। यह जल बालोता तक तो मीठा रहता है, किन्तु उसके बाद खारा हो जाता है। बनास नदी माउण्ट आबू के पूर्वी भाग से उदित होकर चम्बल मे जा गिरती है। साबरमती तथा माही मेवाड की पहाडियो से उदित होकर कैम्बे की खाडी म गिरती हैं।

14 15 वृहद् हिमालय, काराकोरम लद्दाख, जसकार, कैलाश तथा ट्रास हिमालय शृखलाओ से लगभग 20 महत्त्वपूर्ण नदियाँ जनित होती हैं, जो पवतीय अचल से आगे चलकर एक-दूसरे मे सम्मिलित होते हुए तीन वृहद् नदी प्रणालियो का निर्माण करती हैं 1—सिंधु, 2—गगा और 3—ब्रह्मपुत्र। इनके स्रोत स्थल की धाराएँ प्राय ग्लेशियरो के पिघलने से उत्पन्न होती हैं।

सिंधु प्रणाली—हिमालय के पश्चिमी सिरे पर स्थित शृखलाओ से निकलकर नागा पवत को वृत्ताकार मे घेरते हुए सिंधु नदी दक्षिण-पश्चिम की ओर हजारा से होकर पाकिस्तान के समतल पर बहती है और कराची के निकट लगभग 3000 वर्गमील का डेल्टा बनाते हुए अरब सागर से मिल जाती है। इस प्रणाली की 5 अन्य नदियाँ ये है —

1 झेलम (वितस्ता) 2 चेनाब (चन्द्रभागा) 3 रावी (इरावती) 4 ब्यास (विपासा) तथा 5 सतलज (सताद्रू)।

गंगा प्रणाली—भागीरथी तथा अलकनंदा नामक दो सहायिकाओं के सम्मिलन से गंगा का निर्माण हुआ। ये दोनों ग्लेशियर की धाराएँ है, जो देवप्रयाग के पास मिलकर आगे बढती हैं और गंगा, हरिद्वार के पास समतल मैदान में अवतरित होती है, वहाँ से उत्तर प्रदेश, बिहार, तथा पश्चिमी बंगाल में लगभग 1557 मील की यात्रा करने के बाद गंगा वृहद् डेल्टा का निर्माण करते हुए बंगाल की खाडी में मिल जाती है। गंगा प्रणाली की सबसे पश्चिमी और बडी सहायिका यमुना, जमनोत्री नामक ग्लेशियर युक्त पहाडी से उदित होकर तथा मसूरी की पहाडियो से निकलकर मैदानो में आती है। यहाँ वक्राकार मार्ग पर दिल्ली, मथुरा तथा आगरा होते हुए लगभग 860 मील की यात्रा के बाद इलाहाबाद में गंगा से मिल जाती है। यमुना की मुख्य सहायिका चम्बल है जो अरावली के म्हाओ नामक स्थान से निकलकर बूँदी, कोटा तथा धोलपुर होकर बहती है तथा इटावा से लगभग 25 मील पूर्व में 600 मील की दूरी तय करने के बाद यमुना से आ मिलती है।

गंगा की सभी उत्तरी सहायिकाएँ हिमालय की बर्फीली शृंखलाओं से उदित होकर आती हैं। इनमें रामगंगा, काली (शारदा), गोगरा, गंडक, कोशी (कशिका), तथा महानंदा उल्लेखनीय हैं। दक्षिण से आने वाली सहायिकाओं में बेटवा, केन (कर्णावती), तोस (तामस) तथा सोन (सुवर्ण नदी) का नाम प्रमुख है।

ब्रह्मपुत्र प्रणाली—तिब्बत में ब्रह्मपुत्र को सांग-पो (Tsang po) और उत्तरी आसाम के पहाड़ों में 'दिवंग' के नाम से जाना जाता है। सादिया के पास जब दिवंग लोहित नामक शाखा से मिलकर आसाम के मैदानों के आगे बढ़ती है तो ब्रह्मपुत्र का नाम ग्रहण करती है। स्रोत से बंगाल की खाडी तक यह लगभग 1800 मील की दूरी तय करती है। इसकी अनेक सहायिकाओं में रायदक, संकोश, मानस, सुबसरी, धनश्री, टोरसा, तिस्ता (त्रिष्णा) उल्लेखनीय हैं। सुर्मा से सम्मिलन के बाद ब्रह्मपुत्र, मेघना के नाम से अधिकतर जानी जाती है। यह सागर में मिलने से पूर्व चार भागों में विभक्त हो जाती है। गंगा ब्रह्मपुत्र का संयुक्त डेल्टा संसार के सबसे वृहद् डेल्टाओं में एक माना जाता है।

14.20 भारत की मुख्य ऋतुएँ (Principal Seasons of India)

भारतीय उप महाद्वीप मानसून प्रकार के जलवायु प्रदेश का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। समुद्रतलीय दाब इस प्रदेश में जनवरी से जुलाई तक पूर्णत उत्क्रमण (reversal) को प्राप्त हो जाता है। इसके प्रभाव में धरातलीय वायु प्रवाह का भी पूर्ण उत्क्रमण होता है। इस प्रकार उप महाद्वीप में वर्ष भर में दो प्रकार की मानसून धाराएँ बहती हैं। सर्दियो में धरातल पर उच्चदाब तथा सागरीय क्षेत्रों में निम्नदाब विकसित रहता है। इनके प्रभाव में हवाएँ उत्तरी अक्षांशों से अवतरित होती हैं, जो सागर क्षेत्रों पर उत्तर-पूर्व से आती हुई पायी जाती हैं। उच्च अक्षांश तथा धरातलीय स्रोत के कारण ये वायु राशियाँ ठण्डी तथा

शुष्क होती हैं, जो भारत पर सर्दी का मौसम स्थापित करती हैं। इस शीत मानसून (Winter monsoon) या उत्तरी पूर्वी (North-east) मानसून के नाम से जाना जाता है। गर्मियो मे अन्त तक शनै-शनै उत्तरी भारत पर निम्नदाब स्थापित हो जाता है तथा उच्चदाब सागरीय क्षेत्रो मे आ जाता है। निम्नदाब के प्रवाह म सागरीय हवाएँ भूमि की ओर अग्रसर होती हैं तथा शीत मानसून के पथ पर ही, किन्तु विपरीत दिशा म बहती हैं। नम और उष्ण होने के कारण वर्षा उत्पन्न करने की क्षमता रखती हैं। यह प्रवाह ग्रीष्म मानसून (Summer monsoon) या दक्षिणी पश्चिमी (South west) मानसून कहलाता है।

14 21 इस प्रकार भारत की जलवायु मोटे तौर पर निम्नांकित चार ऋतुओं म बाटी जा सकती है —

(1) शीतकाल या उत्तरी-पूर्वी मानसून—दिसम्बर स फरवरी।
(2) ग्रीष्म ऋतु या पूर्व मानसून काल—मार्च स मई।
(3) ग्रीष्म काल या दक्षिणी पश्चिमी मानसून काल— जून स सितम्बर।
(4) संक्रमण मानसून (transition period) या उत्तरी मानसून ह्रास—अक्टूबर और नवम्बर।

यद्यपि पश्चिमी मानसून का काल पूरे देश के लिए साधारणत जून से सितम्बर तक का माना जाता है, कि तु इसका वास्तविक काल स्थान विशेष पर वहाँ ग्रीष्म मानसून धाराओ के अभ्युदय (on set) तथा अपनयन (withdrawal) दिनाको के मध्य की अवधि ही होती है। अभ्युदय तथा अपनयन के दिनाक स्थान के अनुसार परिवर्तनशील रहते हैं। उत्तरी पश्चिमी भारत ग्रीष्म मानसून काल प्राय जुलाई से सितम्बर तक ही पाया जाता है पश्चिमी राजस्थान मे मानसून धाराओ का अभ्युदय लगभग 15 सितम्बर तक सम्पन्न हो जाता है। अत इस क्षेत्र के लिए दक्षिणी पश्चिमी मानसून काल केवल दो महीन म ही सीमित रहता है।

14 30 उत्तरी-पूर्वी मानसून काल

सामान्य दाब आवटन—इस ऋतु म एशिया के सम्पूर्ण भू भाग पर निम्न तापमान प्रचलित रहता है तथा उच्चदाब पेटिका अरब तथा फारस स मध्य एशिया और फिर उत्तरी पूर्वी चीन तक विस्तृत हो जाती है। यह साइबेरिया उच्चदाब क्षेत्र कहलाता है। उपोष्ण कटिब धी उच्चदाब मे जो एशियाई भू भाग पर प्रमुख रहता है, ठंडी महाद्वीपीय हवाओ के सचयन से साइबेरियन उच्चदाब इस काल म अत्यन्त तीव्र (intense) रहता है और लगभग 45° उ अक्षाश तथा 105° पू देशान्तर पर केन्द्रित पाया जाता है। भारत इस उच्चदाब के परिधि पर पड़ता है। हिमालय श्रृंखलाओ के उत्तर में दाब प्रवणता अत्यधिक तीव्र होती है तथा भारतीय क्षेत्र पर क्षीण। इन महीनो में विषुवत् रेखीय निम्नदाब हिन्द महासागर म शून्य से 10° द अक्षाश के मध्य स्थित पाया जाता है।

भारत पर जनवरी में दाब आवटन चित्र (14 2) मे दिया गया है। पश्चिमी राजस्थान से मध्य बिहार तक एक क्षीण कटक दौड़ती है। केरल से गुजरात तथा तेनासरीम तट के निकट से उत्तरी बर्मा तक द्रोणिका स्पष्ट रूप से विकसित रहती है।



भारत तथा आसपास का उच्चावचन (Relief) मानचित्र
चित्र (14.1)

14 31 धरातलीय हवायें

25 अंश उत्तरी अक्षांश के नीचे सागर तथा भू क्षेत्रों पर मुख्यत उत्तरी-पूर्वी प्रवाह प्रचलित रहता है। इसके उत्तर मे राजस्थान तथा आसाम को छोड़कर शेष भागो मे हल्की पश्चिमी या उत्तरी-पश्चिमी हवायें बहती हैं। उच्चदाब कोशिका के प्रभाव म प्राय उत्तरी-पूर्वी तथा आसाम मे पूर्वी हवायें पाई जाती है। भू भागो म धरातलीय हवायें हल्की होती हैं किन्तु सागरीय क्षेत्रो म इसकी तीव्रता लगभग 10 'नॉट' पाई जाती है। यह तीव्रता दक्षिणी-पश्चिमी अरब सागर म और बढ़ जाती है।

14 32 धरातलीय तापमान

किसी स्थान म औसत वायु तापमान म नियन्त्रक तत्व अक्षांश, ऊंचाई, धूप का उन्नतांश, समुद्र तट से दूरी तथा प्रचलित वायुराशियां है। शीतकाल म भारत अधिकांश भू भाग ठण्डी और महाद्वीपीय वायु राशियो से प्रभावित रहते हैं, जिनका स्रोत उच्च अक्षांशो म पाया जाता है। औसत तापमान उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ता जाता है। समताप रेखाएँ सामान्यत अक्षांशो के अनुसार चलती हैं। 20°C और 30°C उत्तरी अक्षांशो के मध्य लगभग 1°C प्रति अक्षांश की प्रवणता पाई जाती है। तापमान दक्षिण म लगभग 17°C उत्तरी अक्षांश तक बढ़ता जाता है। जनवरी म औसत तापमान का चलन 14°C से 27°C परिकलित किया गया है। जनवरी के औसत धरातलीय तापमान का आवटन चित्र (14 3) म प्रदर्शित किया गया है।

दैनिक उच्चतम तापमान का आवटन भी मुख्यत औसत तापमान की भांति पाया जाता है। पश्चिमी तट और 78° पूर्वी देशान्तर तथा 11° और 30° उत्तरी अक्षांशों के बीच का भाग सर्वाधिक उच्चतम तापमान (लगभग 33°C) प्रदर्शित करता है। यहाँ से हर दिशा मे तापमान घटता जाता है। सबसे कम उच्चतम तापमान लगभग 22°C, 30° उत्तरी अक्षांश के आस पास पाया जाता है।

औसत दैनिक निम्नतम तापमान मे अपेक्षाकृत अधिक प्रवणता पाई जाती है। 20° से 25° उत्तरी अक्षांश के बीच प्रवणता सर्वाधिक होती है। तापमान चलन प्रायद्वीप के चरम दक्षिणी भाग (22°C) से उत्तरी भारत के मैदानो तक (10°C) तथा पजाब तक (6°C) परिवर्तित होता है। महासागरीय प्रभाव के कारण तटीय क्षेत्र आन्तरिक भू-भागो की अपेक्षा अधिक निम्नतम तापमान रखते हैं।

पश्चिमी विक्षोभो के पीछे उच्च अक्षांशो की ठंडी हवा शीत तरंग के रूप म उत्तरी भारत को प्रभावित करती है। इस अवसर पर तापमान 6 से 12°C तक सामान्य से नीचे आ जाता है और उत्तर-पश्चिमी भारत के मैदानी भागो मे पाले की घटनाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। तापमान का दैनिक चलन मुख्यत मेघाच्छन्नता तथा वायुमण्डलीय आर्द्रता पर निर्भर करता है यह तटीय क्षेत्रो की अपेक्षा आन्तरिक भागो म स्वाभाविक रूप से अधिक होता है। सर्वाधिक दैनिक तापमान परिसर का वार्षिक औसत (14–15°C) उत्तरी पश्चिमी भारत मे पाया जाता है, जो दक्षिण और पूर्व की ओर घटता जाता है।

14.33 शीत तरग

20° उ अक्षाश से उत्तर के क्षेत्र विशेषत जम्मू काश्मीर, पश्चिम उत्तर प्रदेश, राजथान, गुजरात तथा पश्चिमी मध्य प्रदेश जनवरी फरवरी मे शीत तरगो के लिए सर्वाधिक संवेदनशील पाए गए हैं।

सामान्यत ये तरगें सक्रिय पश्चिमी विक्षोभ के पीछे ही आती हैं, जिसमे तापमान का सहसा परिवतन होता है। यदि रात्रि तापमान पहले ही सामान्य स कम हो तो, कमजोर विक्षोभ के पीछे भी शीत तरगें जनित हो जाती हैं।

उत्तर-पश्चिम मे उत्पन्न होकर तरगें पूव तथा दक्षिण की ओर फैलती रहती हैं तथा अनुकूल परिस्थितियो म पश्चिमी बगाल तथा दक्षिण म तेलगाना तक पहुँचती हैं।

13.34 आर्द्रता, कुहरा और मेघाच्छन्नता

भारत पर आर्द्रता का आवटन प्रचलित वायु राशियो तथा समुद्र से दूरी पर निभर करता है। यह सामान्यत उत्तरी-पश्चिमी भारत मे निम्नतम पाई जाती है, जो हर दिशा में समुद्र तट की ओर बढती जाती है। शीतकाल मे जब वायु राशि भूमि पर जनित होती है, वाष्पदाब पूरे भारत पर सबसे कम होता है। इस काल मे सापेक्ष आर्द्रता पश्चिमी प्रायद्वीप गुजरात तथा राजस्थान मे सबसे कम (40–50%) पाई जाती है। सर्वाधिक सापेक्ष आर्द्रता (80% से अधिक) आसाम मे पाई जाती है।

शीतकाल मे समुद्र तल पर वायु घनत्व दक्षिणी भारत की अपेक्षा उत्तर भारत मे अधिक पाया जाता है। इस काल मे घनत्व की प्रवणता भी अपेक्षाकृत अधिक रहती है।

घाटी, डेल्टा तथा नम भू प्रदेशो व तटीय क्षेत्रा में कुहरे तथा कुहासे की घटनाएँ शीतकाल मे बहुत सामान्य हैं। कुहरे प्रात काल उत्पन्न होते हैं, जो सूर्योदय के दो-तीन घटो के अन्दर क्षीण हो जाया करते हैं। मध्य और उत्तरी भारत मे पश्चिमी विक्षोभा के पृष्ठ भाग में तथा कभी कभी अग्र भाग मे कुहरे उत्पन्न होते हैं। जब शाम या रात मे वर्षा हो तथा तुरन्त बाद आकाश स्वच्छ हो जाए तो, कुहरा उत्पन्न होने की सम्भावना बहुत होती है, इसके लिए वायु गति धीमी होना आवश्यक है। ये सभी दशायें साधारणत विक्षोभ के पृष्ठ भाग मे लागू रहती हैं। उडीसा, बगाल तथा बगलादेश के तटीय क्षेत्रा मे विक्षोभ के अग्र भाग मे भी कुहरे उत्पन्न होते हैं।

अभिवहन कुहरा भारत में बहुत कम होता है। असम की पहाडियो से नम हवा की घाटियो म आरोहण से कभी कभी इस प्रकार के कुहरे बन जाते हैं। शीतकाल के विभिन्न महीनों में कुहरो की औसत सख्याएँ चित्र (14 4–14 6) मे दी गई है। आसाम की घाटी तथा गगा के मैदान मे सबसे अधिक कुहरे बनते हैं। दिसम्बर और जनवरी के महीना म इनकी सख्या 20 दिन प्रति माह से अधिक है।

विभिन्न ऊँचाइयो पर हर महीन का औसत वायु घनत्व निम्नाकित सारणी म प्रदर्शित किया गया है —

सारणी (14 1)

औसत मासिक वायु घनत्व (ग्राम/घन मीटर)

ऊँचाई–माह (किमी)	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक
उत्तरी भारत													
1	1092	1081	1057	1049	1020	1011	1036	1032	1037	1048	1085	1087	1058
2	988	973	967	957	935	929	937	942	947	962	983	979	958
3	890	896	879	873	860	853	849	853	863	875	887	884	872
4	802	800	795	795	785	775	763	770	778	787	880	795	787
दक्षिणी भारत													
1	1056	1044	1043	1027	1027	1028	1045	1044	1044	1051	1047	1050	1042
2	972	960	957	944	942	947	952	953	957	963	968	971	957
3	882	877	881	869	864	861	863	867	867	873	876	881	872
4	795	796	799	795	789	780	780	784	784	787	789	791	789

शीत-काल में विक्षोभों के कारण सबसे अधिक मेघाच्छन्नता हिमाचल-प्रदेश तथा पश्चिमी उत्तर-प्रदेश की पहाड़ियों में पाई जाती है। मद्रास तट पर भी उत्तरी पूर्वी मानसून के प्रभाव में पर्याप्त मेघाच्छन्नता रहती है। शेष भाग प्राय स्वच्छ आकाश या आंशिक रूप से आच्छादित रहता है।

14 40 पूर्व मानसून काल

सूर्य के उत्तरी गोलार्द्ध में आगमन से मार्च में भारतीय भू भाग का उष्मन आरम्भ हो जाता है। दाब प्रवणता तेजी से घटती जाती है और पश्चिमोत्तर भारत के अतिरिक्त सारे देश से शीतकालीन दशायें प्राय लुप्त हो जाती हैं। प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग से उत्तरी-पूर्वी क्षेत्रों तक मार्च में एक क्षीण निम्नदाब विस्तृत पाया जाता है तथा उत्तरी खाड़ी में आपेक्षिक उच्चदाब स्थापित हो जाता है।

एक असातत्य रेखा (line of discontinuity) स्पष्ट रूप से प्रायद्वीप के दक्षिणी भागों मे उभरती है, जो 20° उ 77° पू तक ठीक उत्तर की ओर, और वहाँ से उत्तर पूर्व की ओर 25° उ, 92° पू तक औसत रूप से खिंची रहती है। रेखा के पूर्व में स्थित दक्षिणी प्रायद्वीप पर 1 किमी ऊँचाई तक दक्षिणी या दक्षिणी पश्चिमी प्रवाह पाया जाता है जिससे खाड़ी से पर्याप्त आर्द्रता इन क्षेत्रों पर अभिवहित होती है। फलत प्रायद्वीपीय असातत्य रेखा के आस पास इस महीने मे तड़ित झंझा तथा बौछार की घटनाएँ सामान्य हैं। इस प्रकार की घटनाएँ उत्तरी-पूर्वी भारत पर भी 'नारवेस्टर' के रूप में विकसित होती हैं।

अप्रैल में ताप जनित निम्नदाब प्रायद्वीपीय पर विकसित हो जाता है, जो गर्मी के साथ धीरे-धीरे उत्तर की ओर स्थानान्तरित होता जाता है। साथ ही मध्य एशिया पर उष्मन के कारण उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब तीव्रता से टूट कर निम्नदाब बनने लगता है। यह उष्मन नीचे की ओर स्थानान्तरित होकर पश्चिमोत्तर भारत से शीतकालीन दशायें समाप्त कर देता है। मई तक एशिया के विशाल भू-भाग पर निम्नदाब व्याप्त हो जाता है, जिसका केन्द्र 30° उ, 75° पू के आस-पास स्थित रहता है। प्रायद्वीपीय निम्न-दाब क्षेत्र इसी मे विलीन हो जाता है तथा उड़ीसा तक सुस्पष्ट द्रोणिका विकसित हो जाती है। इस समय तक प्रायद्वीप पर स्थित द्रोणिका पूर्व की ओर थोड़ा हटकर मद्रास तट के समानान्तर स्थापित हो जाती है।

14 41 धरातलीय हवायें

अप्रैल में मध्य भारत पर स्थित निम्नदाब तथा प्रायद्वीप पर विस्तृत द्रोणिका के प्रभाव में द्रोणिका अक्ष के पश्चिमी या उत्तरी-पश्चिमी धरातलीय हवायें बहती हैं तथा पूर्व में दक्षिणी या दक्षिणी-पश्चिमी। द्रोणिका अक्ष के पूर्व की ओर खिसकने के साथ मई में उपरोक्त प्रवाह क्षेत्र भी पूर्व की ओर स्थानान्तरित हो जाता है।

राजस्थान तथा पंजाब पर धरातलीय हवायें अप्रैल में पश्चिम तथा मई में निम्न दाब के प्रभाव में दक्षिण पश्चिम से बहती हैं। उत्तर पूर्व में पूर्वी प्रवाह अप्रैल तक पाया जाता है, जो ग्रीष्मकालीन द्रोणिका के विकास के साथ मई तक उत्तरी उत्तर-प्रदेश तक फैल जाता है। शेष भागों में मुख्यत उत्तरी-पश्चिमी हवायें बहती हैं।

सागरीय क्षेत्रो मे उत्तरी पूर्वी मानसून प्रवाह धीरे-धीरे वामावर्तित (back) होने लगती है तथा जून तक पूर्णत उत्क्रमित होकर दक्षिणी पश्चिमी प्रवाह बन जाती है। सक्रमण काल मे वायु गति सवत्र 10 'नॉट' से कम ही पायी जाती है।

14 42 तापमान

अप्रेल तक दक्षिणी प्रायद्वीप के आन्तरिक क्षेत्रो का औसत तापमान 33–35°C तक पहुँचा जाता है, जबकि तटीय क्षेत्र अपेक्षाकृत ठडे (28–30°C) रहते हैं। 20° उ अक्षाश पर ताप उच्चतम पाया जाता है, जहाँ से दोनो ओर तापमान घटता जाता है। औसत उच्चतम तापमान 14 से 25° उत्तरी अक्षाश के मध्यवर्ती भाग मे 40–42°C के बीच सम आवटित रहता है, किन्तु सागरीय क्षेत्रो मे उच्चतम तापमान अपेक्षाकृत कम होता है। फलत थल और सागर समीर का प्रवाह तटीय क्षेत्रो पर प्रमुख होता है।

गुजरात तथा उत्तरी महाराष्ट्र, उत्तरी राजस्थान तथा उत्तरी मध्य प्रदेश पर अप्रेल के महीने मे दैनिक तापमान परिसर का मान अधिकतम (18°C) पाया जाता है। सबसे कम परिसर 6°C के लगभग पश्चिमी घाट पर रहता है।

मई मे 15°C ऊपर प्राय सारा देश वर्ष का सर्वाधिक दैनिक तापमान प्राप्त करता है। मानसून धाराओ के अभ्युदय से इस वृद्धि पर रोक लग जाती है। महासागरीय प्रवाह के कारण दक्षिणी प्रायद्वीप के पश्चिमी भाग मे तापमान मध्य अप्रेल के बाद ही गिरने लगता है। इस क्षेत्र मे सबसे अधिक तडित झझा की घटनाएँ मई मे ही पाई जाती हैं। चरम दक्षिणी तट मार्च मे ही सर्वाधिक तापमान प्रदर्शित करते हैं।

उत्तर-पूर्व मे भी अप्रेल के बाद तापमान घटने लगता है, क्योकि यहाँ निम्न तहो मे महासागरीय प्रवाह आरम्भ हो जाता है। मई मे तडित झझा की घटनाएँ इन क्षेत्रो मे बहुत सामान्य हैं। वर्षा के बावजूद आसाम मे सर्वाधिक दैनिक तापमान जुलाई या अगस्त में पाया जाता है।

अण्डमान द्वीप समूह अप्रेल मे, पश्चिमी राजस्थान तथा गुजरात तट जून मे और कश्मीर जुलाई मे अधिक उच्चतम तापमान के महीने हैं। यह विविधता अनेक कारणो से पायी जाती है।

अप्रेल, मई तथा जून मे उत्तर भारत के कई स्थान यदा-कदा सामान्य से बहुत अधिक दैनिक तापमान का अनुभव करते हैं। इन दिनो उच्चतम तापमान के सामान्य से 6°C या इससे अधिक ऊपर हो जाने की अवस्था ताप तरग (heat wave) कहलाती है। जून मे ताप तरगें सबसे अधिक तथा प्रखर पायी जाती हैं। पजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश बिहार तथा उडीसा मुख्यत ताप तरगो के प्रभाव क्षेत्र हैं। राजस्थान, ग्रीष्म काल अत्यधिक प्रखर होते हुए भी, प्राय ताप तरगों से प्रभावित नही हो पाता। इसका कारण यही है कि यहाँ का सामान्य उच्चतम तापमान स्वय इतना अधिक होता है कि वास्तविक उच्चतम तापमान बहुत ही कम मौको पर +6°C का विचलन प्रदर्शित करता है।

14 43 काल-बैशाखी या नारवेस्टर

ओले, बौछार तथा तडित झझा की घटनाएँ पश्चिम से पूर्व की ओर गति करते हुए पूर्व मानसून-काल मे बिहार से आसाम तक सक्रिय रहती हैं। सक्रियता मार्च से मई तक

लगातार बढती जाती है । किसी स्टेशन पर तडित झंझाएँ प्राय पश्चिमोत्तर दिशा से पहुँचते हैं, अत नारवेस्टर कहलाते हैं । वैशाख (15 अप्रैल-15 मई) मे इन झंझाओं की तीव्रता अपेक्षाकृत अधिक प्रखर रहती है, जिससे सम्पत्ति और जीवन का पर्याप्त विनाश प्रतिवर्ष होता है ।,सभवत इसीलिए ये झंझाएँ काल बैसाखी भी कहलाती हैं । धूल उडाती आँधियां तथा स्क्वाल भी इनसे सामान्यत सम्बन्धित रहते हैं ।

पश्चिमोत्तर दिशा से आने वाली झंझाएँ अधिकतम प्रखर होती है और प्राय दोपहर बाद से शाम तक आती हैं तथा 100 किमी/घण्टा के लगभग गति से स्क्वाल उत्पन्न करती हैं । ये झंझाएँ 50–60 किमी प्रति घण्टा की गति से चलती हुई बागलादेश की ओर बढती हैं, जहाँ उनकी प्रचण्डता और बढ जाती है ।

कुछ झंझाएँ रात्रि के पिछले प्रहर या सुबह आती हैं । ये उत्तरी बगाल से उदित होकर दक्षिण की ओर गति करती है तथा अपेक्षाकृत कम प्रचण्ड होती हैं । इनकी गति प्राय कम (15–30 किमी/घण्टा) होती है ।

खासी पहाडियो से भी कुछ झंझाएँ उदित होती हैं । ये भी कम प्रचण्ड होती हैं तथा उत्तर से दक्षिण की ओर गति करती हैं ।

यदा-कदा आसाम तथा सीमावर्ती पहाडियो मे भी झंझाएँ बनती है, जो पश्चिम की ओर गतिमान होती हैं ।

ये झंझाएँ भारी बौछार-युक्त वर्षा से दिन का तापमान बहुत घटा देती हैं ।

नारवेस्टर से सम्बन्धित समकालीन स्थितियो का विवरण अध्याय 10 मे दिया जा चुका है ।

14 44 पूर्व मानसून काल मे प्रमुख रूप से पश्चिमोत्तर भारत तथा गगा के मैदानी भाग दो विशेष मौसम घटनाओ का अनुभव करते हैं

(1) आधी या मरुझंझा (Dust storm of Sand storm)

(2) धूलभड (Dust or sand raising winds)

(1) आंधी या मरुझंझा

ये तडित झंझा की भाँति ही सवाहनिक घटनाएँ हैं तथा कपासी वर्षी मेघो से उत्पन्न होती हैं । पर्याप्त आर्द्रता होने पर कपासी वर्षी से तडित झंझा जनित होती है तथा नमी के अभाव मे आंधी । आधी प्राय वर्षा-रहित झंझा है । वर्षा यदि उत्पन्न भी होती है तो प्राय भूमि तक नही पहुँच पाती । इन झंझाओ से सम्बन्धित स्क्वाल काफी ऊँचाई तक धूल या रेत उठा देती हैं । वायुमण्डल मे धूल या रेत की मात्रा इतनी भर जाती है कि क्षैतिज दृश्यता 1 किलोमीटर से कम हो जाती है ।

आंधी पूर्व मानसून-काल मे उत्तरी पश्चिमी भारत की सामान्य घटना है । मानसून अभ्युदय से पूर्व जून मास मे भी आँधियाँ उत्पन्न होती हैं, जो प्राय अधिक प्रचण्ड पायी जाती

हैं। आंधी एक सीमित क्षेत्र में घटित होती है, जिसकी अवधि कुछ मिनटों की होती है। यह घटना निम्नांकित दो परिस्थितियों में सामान्यतः उत्पन्न होती है—

(i) पूर्व मानसून काल में पश्चिमी विक्षोभों के प्रभाव में। पश्चिमी विक्षोभ जब उत्तर पश्चिम भारत को प्रभावित करता है, तो इसके शीत-वाताग्र के गुजरने के समय कम आर्द्रता वाले क्षेत्रों में आंधी की घटनाएँ घटित होती हैं। इस प्रकार की आंधी राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और बिहार में होती है। बंगाल तथा असम क्षेत्रों में जहाँ वातावरण में पर्याप्त आर्द्रता उपस्थित होती है, तडित झंझा की घटनाएँ उत्पन्न होती हैं।

(ii) मार्च, अप्रैल तथा मई में धरातल के अत्यधिक उष्मन से वायुमण्डल के निम्न तहों में तापमान का अतिप्रवण (steep) ह्रास दर उत्पन्न हो जाता है, जिसके फलस्वरूप वायुमण्डल में अस्थायित्व आ जाता है तथा तीव्र संवाहनिक धाराएँ कपासी वर्षी मेघ को जन्म देती हैं। इन परिस्थितियों में आंधी की घटना घटित होती है। अप्रैल, मई तथा जून में आंधी की बारम्बारता चित्र (14, 10, 11, 12) में प्रदर्शित की गई है।

(2) धूलभरी आंधी

इसे तेज धूल भरी हवाएँ भी कहा जाता है। आंधी के विपरीत यह घटना व्यापक क्षेत्र को प्रभावित करती है। इसकी अवधि भी कुछ घण्टों से लेकर 6-7 दिन तक हो सकती है। यह घटना पूरे उत्तर भारत में उत्पन्न होती है किन्तु दक्षिणी राजस्थान तथा गुजरात में इसका विशेष जोर देखा गया है। इन क्षेत्रों में धरातल पर धूल या बालू की अधिकता के कारण तेज हवाओं के लंबे समय तक चलने से धूल या बालू के टीले स्थान-स्थान पर बन जाते हैं तथा यातायात में अवरोध उपस्थित कर देते हैं। इस घटना में भी दृश्यता काफी कम हो जाती है, कभी-कभी एक लम्बी अवधि तक दृश्यता 500 मीटर से भी कम होती है। यह घटना किसी क्षेत्र में तीव्र दाब प्रवणता स्थापित होने के कारण घटित होती है। यह दाब प्रवणता धरातलीय सतहों की उष्मन क्षमता में विभिन्नता के कारण ग्रीष्म-काल में स्थापित हो जाती है।

14.45 आर्द्रता मेघाच्छन्नता

इस काल में सापेक्ष आर्द्रता का तटों से आन्तरिक भागों की ओर कम होने की दर अपेक्षाकृत अधिक होती है। आन्तरिक भू भागों की वायु प्रायः अत्यधिक शुष्क रहती है, विशेषकर दक्षिणी पठार तथा मध्य भारत पर औसत सापेक्ष आर्द्रता 30% से भी कम पायी जाती है।

दोपहर बाद सापेक्ष आर्द्रता पंजाब से बिहार तक के मैदानी भागों में 5% से भी कम हो जाती है। इसका एक कारण यह भी है कि अत्यन्त अधिक उष्मन के कारण उत्पन्न आरोही धाराएँ धरातलीय नमी को उच्चतर वायु तहों में उठा देती हैं।

पूर्व मानसून काल में सबसे अधिक मेघाच्छन्नता प्रायद्वीप के दक्षिणी भागों तथा बंगाल व आसाम में पायी जाती है। इन स्थानों पर सागरीय हवायें तीव्र गति से पहुँचती हैं तथा इन्हें स्थानीय पहाड़ियों द्वारा उत्थापन की यथेष्ट सुविधा प्राप्त हो जाती है।

14.50 दक्षिणी-पश्चिमी मानसून काल

मई मे वर्मा, आसाम, बागलादेश तथा बगाल मे खाडी की नमी हवायें दक्षिणी-पश्चिमी प्रवाह के रूप मे पहुँचना आरम्भ कर देती हैं। इसी मास के अन्त तक पश्चिमोत्तर भारत पर मौसमी निम्नदाब क्षेत्र पूर्णत स्थापित हो जाता है और इसके प्रभाव मे दक्षिणी गोलार्द्ध की व्यापारी हवायें भी विषुवत् रेखा पार कर दक्षिण-पश्चिम से अरब सागर तथा खाडी मे सम्मिलित होने लगती हैं, फलस्वरूप मानसून प्रवाह तीव्रतर होता जाता है। स्पष्टत मानसून का उदय बगाल की खाडी मे अपेक्षाकृत पहले होता है। अण्डमान द्वीप तथा तेनासरीम तट पर मानसून अभ्युदय की सामान्य तिथि 20 मई, मध्य वर्मा पर 25 मई तथा बांगलादेश पर 1 जून है। मानसून की यह शाखा जब आसाम तथा वर्मा की पहाडियो से परावर्तित होकर पूर्व की ओर मुड़ती है तो स्वाभाविक रूप से उत्तरी भारत के मैदानी भाग पर द्रोणिका विकसित हो जाती है। पश्चिमोत्तर भारत के निम्नदाब के प्रभाव मे अरब सागर की उत्तरी-पूर्वी व्यापारी हवायें इसी समय पश्चिमी या दक्षिणी पश्चिमी दिशा से बहने लगती हैं जिससे केरल तट पर अरब सागरीय शाखा का अभ्युदय जून के प्रथम दो-तीन दिनो तक हो जाता है। यह शाखा शनैं शनैं उत्तर की ओर बढती रहती है, जिससे मानसून द्रोणिका और सुदृढ होती जाती है

मानसून अभ्युदय से सम्बंधित भारतीय उप महाद्वीपीय के कुछ समकालीन लक्षण (Synoptic Features) निम्नांकित है

(1) सूर्य के उत्तरी गोलार्द्ध मे स्थानान्तरण के कारण उच्च ताप का क्षेत्र विषुवद् रेखा से हट कर जून मे प्रथम सप्ताह तक तिब्बत का पठार पर केन्द्रित हो जाता है। मुख्यत 15 से 30° उत्तरी अक्षांशो के बीच दाब और तापमान की वृद्धि दक्षिण से उत्तर की ओर पायी जाती है। फलत ताप हवा की दिशा पूर्वी हो जाती है और इससे 30° उत्तरी अक्षांश से नीचे 450 से 100 मिलीबार स्तरो के बीच पूर्वी प्रवाह स्थापित हो जाता है।

(2) उच्चतर वायुमण्डल म तिब्बत पठार के ऊपर एक-उष्ण प्रतिचक्रवात उदित हो जाता है, जिससे प्रचलित पश्चिमी प्रवाह की द्रोणिका जो इस क्षेत्र के ऊपर शीतकाल में विद्यमान रहती है, भग हो जाती है तथा दो द्रोणिकाओ मे विभक्त होकर मध्य स्थिति से पूर्व और पश्चिम मे विस्थापित हो जाती है। पश्चिमी जेट प्रवाह जो शीतकाल मे हिमालय के दक्षिण मे केन्द्रित होता है, मानसून अभ्युदय के साथ ही उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर लगभग 40° उ अक्षांश तक सिमट जाता है।

(3) मानसून के अच्छी तरह स्थापित हो जाने के बाद अरब सागर और खाडी की धारायें निम्नदाब द्रोणिका के अक्ष पर, जो पश्चिमोत्तर भारत से शीर्ष खाडी तक विकसित रहती है, सगम करती हैं। द्रोणिका अक्ष, अपनी मध्य स्थिति से ऊपर-नीचे उच्चावचित होती रहती है। इसकी गति से वर्षा का क्षेत्रीय आवटन भी प्रभावित होता है। जब अक्ष उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर हिमालय श्रृंखलाओ के समीप पहुँच जाती है, तो उत्तर भारत के मैदानो में वर्षा रुक जाती है। हिमालय के पर्वतीय अचल इस अवस्था म पर्याप्त वर्षा प्राप्त करते हैं। यह स्थिति भग मानसून (Monsoon Break) कहलाती है। जब अक्ष उत्तरी

बगाल की खाडी मे डूबी होती है तो मानसून उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों मे प्राय सक्रिय पाया जाता है । यही परिस्थिति मानसून अवदाव उत्पन्न होने के लिए भी अनुकूल रहती है । सक्रियता तथा आंशिक या सामान्य भग की दशायें दक्षिणी-पश्चिमी मानसून मे क्रमश एक दूसरे का अनुसरण करते रहते हैं ।

14 51 धरातलीय तापमान

जुलाई के धरातलीय तापमान का आवटन चित्र 14 14 मे प्रस्तुत किया गया है । जुलाई तक पूरे देश मे मानसून छा जाने के बाद उच्चतम तापमान म तेजी से गिरावट आती है । पजाब तथा राजस्थान, जहाँ वर्षा कम होती है, अधिक तापमान प्रदर्शित करते हैं । पश्चिमी राजस्थान, पाकिस्तान तथा दक्षिणी ईरान के क्षेत्र 40°C के औसत वायु ताप-रेखाओं के अन्तगत पडते है । प्रायद्वीप का पश्चिमी तट तथा बर्मा तट औसत वायु तापमान का शीत क्षेत्र बन जाते हैं ।

14 52 वायु राशियाँ

उपलब्ध आँकडो के अनुसार अरब सागर के वायुमण्डल मे मानसून काल म दो प्रकार की वायु राशियाँ पायी जाती हैं—

(1) निम्न तहो मे नम वायु राशि, ये वास्तव मे उत्तरी-पूर्वी व्यापारी हवायें है, जो भारतीय निम्नदाब के प्रवाह मे वामावर्तित (back) होकर पश्चिम या दक्षिण-पश्चिम से बहने लगती हैं ।

(2) उच्चतर वायु तहो मे शुष्क महाद्वीपीय हवायें ।

दोनों वायु राशियाँ व्युत्क्रमण तह द्वारा एक दूसरे से अलग रहती हैं । (10° उ, 68° पू) के पश्चिम मे नम वायु राशि की गहराई लगभग 1 5 किमी पायी जाती है किंतु पूव की ओर व्युत्क्रमण तह बहुत क्षीण और ऊपर उठता चला जाता है—फलस्वरूप नम वायु राशि की गहराई बढती चली जाती है । यह गहराई पश्चिम घाट पर लगभग 6 किमी तक हो जाती है । इस स्थान पर उच्चतर वायुमण्डलीय व्युत्क्रमण नही पाया जाता है । घाट द्वारा वायु राशि की आरोहण प्रक्रिया ही इसके लिए मुख्यत उत्तरदायी है । उत्तरी पूर्वी अरब सागर के तटा पर जहाँ पवत श्रृखलाएँ नही हैं नम वायु राशियो की गहराई मे इतनी वृद्धि नही पायी जाती है ।

बगाल की खाडी मे व्युत्क्रमण तह प्राय अनुपस्थित रहता है और नम मानसून धारायें प्राय 6 किमी गहराई तक बहती रहती है ।

14 53 मानसून अवदाबो की उत्पत्ति

मानसून धाराओ के तीव्र होने पर तथा उनके पवतीय उत्थापन के कारण धरातलीय दाब गिरता है जिससे स्वयमेव कभी कभी अवदाव उत्पन्न हो जाते हैं । इस प्रकार के अवदाव पवतीय अनुकूलता के कारण बगाल की खाडी मे अरब सागर की अपेक्षा अधिक सख्या मे बनते हैं । कि तु अधिकाश अवदाब बर्मा से पूव की ओर चलने वाली निम्नदाब

तरगों की प्रेरणा के कारण शीष खाडी मे उत्पन्न होते हैं। प्राय निम्न क्षोभ-मण्डल मे पहले एक उच्चतर वायु चक्रवाती प्रवाह जनित होता है, जो मानसून धाराओं के तीव्र होने पर सागर सतह पर अवदाब के रूप मे स्थापित हो जाता है। -

अरब सागर के अवदाब प्राय उत्तर-पश्चिम या उत्तर की ओर गति करते हुए पश्चिमी या गुजरात तट को पार करते हैं। कुछ अवदाब उच्च अक्षाशो मे आ जाने पर उत्तर पूर्व की ओर मुडकर कराची तट या कभी कभी अरब तट तक पहुँचते हैं। बगाल की खाडी के मानसून अवदाब साधारणत उत्तर पश्चिम की ओर गति करते हैं। पूर्वी राजस्थान तथा पजाब पर पहुँच कर इनकी गति बहुत धीमी हो जाती है। प्राय एक या दो दिन स्थिर भी रहते हैं। तत्पश्चात् या तो कमजोर होकर मौसमी निम्नदाब में विलीन हो जाते हैं या उत्तर की ओर मुड कर हिमालय शृखलाओं की ओर अग्रसर हो जाते हैं, जहाँ भारी वर्षा देने के बाद या तो क्षीण हो जाते हैं या ऊँचाई के कारण अधिधारित (occluded) होकर उच्चतर वायु प्रवाह मे पछुवाँ द्रोणिका के रूप मे पूर्व की ओर गति करने लगते हैं।

मानसून काल म अरब सागर म उत्पन्न होने वाले अवदाबो की सख्या नगण्य ही रहती है। किन्तु शीष खाडी मे प्रतिमास 3 या 4 अवदाब औसत रूप से जनित होते हैं। सन् 1924–1952 तक अवदाबो और तूफानो के आकडो के सांख्यिकीय अध्ययन द्वारा अनन्त-कृष्णन तथा भाटिया (1958) ने निम्नाकित निष्कर्ष दिये

मानसून अवदाबो की सख्या (1924–52)

	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर
अरब सागर	12	2	0	4
बगाल की खाडी	33	77	66	65

मानसून अवदाबो की अनुपस्थिति मे उत्तरी भारत पर मानसून की सक्रियता मानसून द्रोणिका के अक्ष की स्थिति पर निर्भर करती है। वर्षा का क्षेत्र इस अक्ष के दक्षिण मे लगभग 200–300 किमी दूरी तक विस्तृत पाया जाता है। बर्मा से पूर्व की ओर चलन वाली निम्न क्षोभ मण्डलीय निम्नदाब तरगें यदि अवदाब उत्पन्न करने में न भी सफल हो तो वे मानसून द्रोणिका की तीव्रता बढा देती हैं, जिससे मानसून प्रवाह सक्रिय हो उठता है।

14 54 मानसून का अभ्युदय

मानसून का अभ्युदय सबसे पहले केरल-तट पर प्राय जून के ठीक प्रारम्भ मे होता है। किन्तु मानसून का अभ्युदय इससे पूर्व या इसके बाद भी हो सकता है। केरल तट पर मानसून के अभ्युदय के दिन का पूर्वानुमान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। कई वर्षों मे मानसून के अभ्युदय के विषय मे धरातलीय मौसम चार्ट, उच्चतर वायु चार्ट तथा मौसम उपग्रहो से प्राप्त सूचनाओं के अध्ययन से यह पाया गया है कि केरल पर मानसून अभ्युदय के समय निम्नाकित लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं

(1) बगाल की खाडी या अरब सागर म किसी विक्षोभ के उत्पन्न होने की स्थिति मानसून के केरल तट पर अभ्युदय के लिए अनुकूल होती है। साधारणत यह विक्षोभ निम्न

वायु-दाब की द्रोणिका के रूप मे दक्षिण-पूर्वी अरब सागर में पाया जाता है। विक्षोभ के प्रभाव मे स्क्वाल युक्त मौसम, विक्षुब्ध सागर तथा दक्षिण-पश्चिम से आती हुई सागरीय लहरें एव सवाहनिक धारायें मानसून के अभ्युदय के स्पष्ट सकेत है।

(2) श्रीलका तथा धुर (extreme) दक्षिणी प्रायद्वीप पर निम्न क्षोभ मण्डल म वतमान दक्षिणी पश्चिमी वायु का सशक्त होना तथा इसकी गहराइ मे वृद्धि केरल तट पर मानसून के अभ्युदय के पूव पाये जाते हैं। इसके साथ साथ उच्च क्षोभ मण्डल मे वतमान पूर्वी वायु सशक्त होने लगती है। 14 से 16 किलोमीटर की ऊँचाई पर इसकी गति 40 नाट तक पहुँच जाती है। मानसून के अभ्युदय के बाद यह गति बढकर 60 नाट तक हो जाती है।

(3) मानसून अभ्युदय के समय उत्तर भारत के उच्च वायुमण्डल मे बहती जेट धारायें उत्तर की ओर स्थानान्तरित होने लगती है और भारतीय अक्षाशो के बाहर चली जाती हैं।

(4) तिब्बत के पठार पर उच्चतर वायु मण्डल म प्रतिचक्रवात विकसित होने लगता है।

(5) दक्षिणी अरब सागर मे मेघाच्छन्नता एकाएक बढ जाती है तथा मेघ राशियाँ उत्तर की ओर तेजी से प्रवाहित होती रहती ह।

विभिन्न स्थानो पर मानसून के आगमन तथा अपनयन की औसत तिथियाँ चित्रा (14 18 तथा 14 19) मे दी गई हैं।

14 55 सक्रिय मानसून (Active monsoon) तथा मानसून-भग (Monsoon break) की स्थितियाँ

दक्षिण पश्चिमी मानसून धारायें जून के प्रारम्भ से सितम्बर के अन्त तक लगभग पूरे देश मे व्यापक वर्षा देती हैं, किन्तु मानसून वर्षा का आवटन समय तथा स्थान के प्रति सममित (Symmetrical) नही है इसका कारण यह है कि मानसून धारायें अपने पूरे प्रभाव काल मे समान रूप से सशक्त नही रहती। इनकी तीव्रता घटती-बढती रहती है। मानसून धाराओ के इस अस्थिर प्रकृति के कारण ही किसी निश्चित समय पर देश का एक भाग बाढ तथा दूसरा भाग सूखे की स्थिति से प्रभावित रहता है। मानसून धारायें जब वेगवती होती हैं तो प्रायद्वीप के दक्षिण पूर्वी भाग तथा हिमालय के तराई क्षेत्रो को छोड कर पूरे देश मे प्रचुर वर्षा होती ह। इस स्थिति को सक्रिय मानसून की स्थिति कहते हैं। मानसून धारायें जब क्षीण होती हैं तो दक्षिणी प्रायद्वीप के दक्षिणपूर्वी भाग तथा तराई क्षेत्रो मे वर्षा की मात्रा बढ जाती है तथा देश के मैदानी क्षेत्रो मे वर्षा रुक जाती है। इस स्थिति को मानसून भग की स्थिति कहते हैं। मानसून भंग की अवधि अनिश्चित है, यह 3 से लेकर 21 दिन तक भी हो सकती है। यह देखा गया है कि अगस्त सितम्बर मे मानसून भग की अवधि जुलाई की अपेक्षा लम्बी होती है तथा कभी कभी तो इसके साथ ही मानसून की समाप्ति भी हो जाती है। जुलाई मे साधारणत मानसून भग की अवधि 2 से 5 दिन की होती है। सक्रिय मानसून तथा मानसून तथा मानसून भग, ये दोनो स्थितियाँ धरातल तथा उच्चतर वायु मानचित्रो पर कुछ विशेष समकालीन स्थितिया द्वारा सम्बन्धित पायी जाती हैं, जो निम्नाकित हैं

(1) धरातल मौसम चार्ट के लक्षण

(अ) मानसून-द्रोणिका जो मानसून काल में गंगा के मैदानी क्षेत्रों समेत पंजाब से लेकर बंगाल की उत्तरी खाड़ी तक स्थापित होती है, की स्थिति में चलनशीलता धरातल चार्ट पर देखी जा सकती है । इस द्रोणिका का अक्ष अपनी सामान्य स्थिति से उत्तर या दक्षिण की तरफ स्थानान्तरित होती है । मानसून भंग की स्थिति में यह अक्ष उत्तर की ओर सिमट कर हिमालय शृंखलाओं के दक्षिणी सिरे के साथ लग जाती है । सक्रिय मानसून की स्थिति में यह अक्ष दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता है । जब बंगाल की उत्तरी खाड़ी में मानसून अवदाब पैदा होते हैं तो इस अक्ष का दक्षिण-पूर्वी सिरा शीघ्र खाड़ी में अवस्थित रहता है । मानसून अवदाब मानसून की सक्रियता बढ़ा देते हैं । मानसून-भंग की अवधि में तराई क्षेत्रों में अधिक वर्षा होने से उत्तरी भारत की नदियों में जिनका उद्गम हिमालय की शृंखलाओं में है, बाढ़ आ सकती है ।

(ब) मानसून भंग की स्थिति में दाब प्रवणता गुजरात, राजस्थान तथा निकटवर्ती क्षेत्रों को छोड़कर शेष भारत में बहुत कम हो जाती है । इसके विपरीत सक्रिय मानसून की स्थिति में दाब प्रवणता अधिक होती है । उदाहरण के लिए मानसून भंग की स्थिति में दहानू तथा त्रिवेन्द्रम के बीच माध्य दाबान्तर 3 मिलीबार पाया गया है, जबकि सामान्य स्थिति में इन स्थानों के बीच दाबान्तर लगभग 7 मिलीबार होता है ।

(स) मानसून भंग की स्थिति में स्थल क्षेत्रों पर दाब विचलन सामान्यतः धनात्मक तथा सागरीय क्षेत्रों पर ऋणात्मक पाया जाता है । सक्रिय मानसून की स्थिति ठीक इसके विपरीत होती है ।

(द) मानसून भंग की स्थिति में पश्चिमी तट के दोनों ओर समदाब रेखाएँ दक्षिण की ओर झुकती हैं तथा उच्च दाब का कटक बनाती हैं । सक्रिय मानसून की स्थिति में समदाब रेखाएँ पश्चिमी तट पर प्रायः लम्बवत् होती हैं ।

(2) उच्चतर वायु चार्ट के लक्षण

(अ) निम्न क्षोभ मण्डल के स्तरों पर (700 मिलीबार तक) भारतीय प्रायद्वीप में पश्चिमी वायु (20 – 30 नॉट) काफी ऊँचाई तक पायी जाती है । मानसून-भंग की स्थिति में प्रायद्वीप में अपेक्षाकृत कमजोर पश्चिमी वायु बहती है तथा कम ऊँचाई तक ही सीमित रहती है । इस स्थिति में गंगा के मैदानी क्षेत्रों पर मानसून द्रोणिका का अक्ष भी निम्न क्षोभमण्डल की तहों में प्रायः नहीं पाया जाता है या क्षीण रहता है ।

(ब) सक्रिय मानसून की स्थिति में धरातल तथा निचले स्तरों पर उत्तर-प्रदेश, बिहार तथा असम क्षेत्र में पूर्वी वायु पायी जाती है, किन्तु मानसून भंग की स्थिति में इन क्षेत्रों से पूर्वी वायु लुप्त हो जाती है तथा हिमालय के दक्षिण सिरे तक पश्चिमी वायु बहने लगती है ।

(स) सक्रिय मानसून की स्थिति में उच्चतर क्षोभ मण्डल में पाकिस्तान तथा समीपवर्ती उत्तर पश्चिमी भारत पर उपोष्ण कटिबन्धी कटक पाया जाता है । इस कटक का अक्ष

30° उ अक्षांश के लगभग गुजरता है। मानसून-भंग की स्थिति में इस कटक का दक्षिण की ओर स्थानान्तरण हो जाता है तथा इसका अक्ष लगभग 26–27° उ अक्षांश से होकर गुजरता है। तिब्बत पठार का प्रतिचक्रवात क्षेत्र भंग तथा क्षीण मानसून स्थिति में प्रायः दक्षिणी अक्षांशों में स्थानान्तरित हो जाता है।

14.56 भारतीय मानसून और जेट धाराएँ

दक्षिणी-पश्चिमी मानसून काल के अतिरिक्त वर्ष भर उपोष्ण कटिबन्धी पश्चिमी जेट धारा 20° उ अक्षांश से उत्तरी भारत पर 9 से 12 किमी की ऊँचाई पर रहती है। जैसे जैसे उत्तर की ओर बढ़ते हैं, तीव्रतम धाराओं की ऊँचाई घटती जाती है तथा जेट की गहराई बढ़ती जाती है। 60 नाट की वायु गति, 20° उ अक्षांश पर 12 किमी के आस-पास पाई जाती है, जबकि 23° उ अक्षांश से जेट धारा 9 से 14 किमी के बीच प्रवाहित होती है। फरवरी में तीव्रता अधिकतम पाई जाती है, तत्पश्चात् घटने लगती है। अप्रैल में अधिकतम वायुगति 60 नाट तक गिर जाती है तथा मई में जेट धारा 30° उ अक्षांश से उत्तर की ओर स्थानान्तरित हो जाती है, साथ ही इसकी गति और घटकर 50 नाट रह जाती है।

केरल तट पर मानसून के अभ्युदय के साथ ही पश्चिमी जेट धाराओं का भारतीय क्षेत्र से लोप हो जाता है। इस घटना को भारत पर मानसून के आगमन का एक महत्त्वपूर्ण संकेत माना जाता है। मानसून काल के बाद अक्टूबर में 30° उ अक्षांश के आस-पास 12 किमी पर 50 से 60 नाट की गति के साथ जेट धाराएँ पुनः स्थापित होती है, जो शनैः-शनैः तीव्रतर होती जाती हैं। जब कभी मानसून में लम्बा अवरोध या क्षीण अवस्था उत्पन्न हो जाती है, तो पश्चिमी जेट धारायें पुनः भारतीय अक्षांशों में वापस आ जाया करती हैं।

मानसून काल में 25° उ अक्षांश के दक्षिण में 14 से 16 किमी के बीच पूर्वी जेट धारायें बहती हैं। ये धारायें अफ्रीका के पूर्वी तट तक ही पाई जाती हैं। औसत रूप से पूर्वी जेट धाराओं का अक्ष 16 किमी पर 13° उ केसमानान्तर माना जा सकता है, जहाँ वायुगति 80 नाट की आकलित की गई है। सक्रिय तथा क्षीण मानसून की अवस्थाओं में यह अक्ष औसत स्थिति से उत्तर या दक्षिण की ओर स्थानान्तरित हो जाती है।

ग्रीष्म मानसून में उच्चतम वायुमण्डल के प्रत्येक तह में ताप उच्चतम प्रायः 30° उ अक्षांश के आस-पास स्थित होता है। और तापमान दक्षिण की ओर क्रमशः घटता जाता है। यह ताप प्रवणता उत्तरी भारत में 100 मिलीबार तक स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। फलतः ताप हवाओं की दिशा पूर्वी होती है, जिससे पश्चिमी प्रवाह ऊँचाई के साथ क्षीण होता जाता है और पूर्वी प्रवाह तीव्रतर। इसी ताप प्रवणता के कारण निम्न क्षोभ मण्डल में प्रायद्वीप पर बहती पश्चिमी प्रवाह उत्क्रमित होकर पूर्वी जेट धारा के रूप में विकसित हो जाती है।

उच्चतर वायुमण्डल में 27° उ अक्षांश तक 10 से 20 नाट का पूर्वी प्रवाह तथा 32° उ अक्षांश के उत्तर में इसी क्रम का पश्चिमी प्रवाह प्रमुख होता है। इन सीमाओं के बीच संक्रमण क्षेत्र होता है।

जून मे पूर्वी जेट प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग मे ही सीमित रहता है। तत्पश्चात् तीव्रतम प्रवाह रेखा उत्तर की ओर स्थानान्तरित होने लगती है तथा इसकी ऊँचाई भी कुछ बढने लगती है।

14 57 आर्द्रता—इस काल मे आर्द्रता का चलन बहुत कम होता है और उत्तरी-पश्चिमी भारत के अतिरिक्त हर स्थान पर सापेक्ष आर्द्रता 80–9(% के बीच पाई जाती है। भारी वर्षा होने पर 95% से भी अधिक आर्द्रता सामान्य है।

तडित झझा–भारत मे तडित झझा की अधिकतम घटनाएँ पूर्व मानसून और उत्तर मानसून काल मे उत्पन्न होती हैं। सर्वाधिक झझाएँ थोलका, मानाबार तथा तनासरीम पर होती है। तटीय बगाल बगलादेश, मद्रास तथा कर्नाटक मे भी इनकी सख्या काफी होती है। सर्वाधिक प्रखर तडित झझाएँ बगाल तथा आसाम मे काल बैसाखी मे सम्बन्धित होती हैं। चित्रो (14 22, 14 23) मे जून तथा सितम्बर मे तडित झझाओ का आवटन प्रदर्शित किया गया है।

मेघाच्छन्नता—मानसून काल मे तटीय तथा पवत क्षेत्रो मे मेघ सबसे अधिक गहन पाये जाते हैं। मानसून अक्ष के आस-पास भी गहनता पर्याप्त रहती है। सबसे कम मेघाच्छन्नता सिन्ध, बलूचिस्तान तथा फारस पर पाई जाती है।

14 60 उत्तर मानसून काल

सितम्बर के उत्तरार्ध मे मानसून उत्तर से हटना आरम्भ कर देता है और यहाँ शीतल तथा शुष्क वायुराशि स्थापित होती है। बगाल की खाडी की शाखा उत्तरी भारत के मैदानो से तथा अरब सागर की शाखा राजस्थान, गुजरात तथा दक्षिणी प्रायद्वीप से होती हुई उसी मार्ग पर वापस हट जाती है, जिसमे उसका अभ्युदय होता है। अक्टूबर के आरम्भ मे ही पश्चिमोत्तर भारत का निम्नदाब क्षेत्र समाप्त हो जाता है। इस क्षेत्र का दाब तेजी से बढता है, उत्तरी-पूर्वी भारत तथा दक्षिणी प्रायद्वीप का दाब भी बढता है, किन्तु वृद्धि दर अपेक्षाकृत कम होती है। बगाल की खाडी के मध्य एव दक्षिणी भागो मे दाब कुछ कम हो जाता है। अत पूरे देश पर लगभग समदाब की स्थिति छा जाती है, जिससे दाब प्रवणता अत्यन्त क्षीण हो जाती है। इसी समय मध्य बगाल मे एक क्षीण निम्नदाब विकसित हो जाता है। कुल मिलाकर इस ऋतु मे भारतीय उपमहाद्वीप के ऊपर दाब प्रणाली बहुत प्रसारित (diffused) अवस्था म रहती है तथा हवाएँ अव्यवस्थित रूप से बहती हैं। अक्टूबर-नवम्बर काल दक्षिणी पश्चिमी मानसून से उत्तरी पूर्वी मानसून स्थापित होने के बीच का सक्रमण काल है, जिसमे दाब और वायु प्रवाह की परिस्थितियाँ शनै शनै परिवर्तित होती जाती हैं। क्षीण वायु प्रवाह उत्तरी भारत मे प्राय उत्तरी-पश्चिमी, चरम दक्षिणी प्रायद्वीप म पश्चिमी तथा प्रायद्वीप के उत्तरी भागो मे पूर्वी या उत्तरी पूर्वी पाई जाती है। नवम्बर मे मध्य एशिया पर उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब विकसित होना आरम्भ कर देता है जो उत्तरी पश्चिमी भारत को अपने प्रभाव क्षेत्र मे ले लेता है। फलस्वरूप दाब प्रवणता तथा वायु प्रवाह उत्क्रमित होने लगती है। यह उत्क्रमण दिसम्बर के आरम्भ तक पूरा हो जाता है।

14 61 धरातलीय तापमान

मानसून के उत्तरी भारत से हटने के साथ साथ, यहाँ मौसम शुष्क तथा साफ होने लगता है तथा तापमान तेजी से गिरने लगते हैं। निम्नतम तापमान में यह गिरावट अधिक-तम तापमान की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट होती है। उत्तर-पश्चिमी भारत में अक्टूबर में औसत अधिकतम तापमान 38°C से भी नीचे आ जाता है तथा नवम्बर में और गिरावट आ जाती है। नवम्बर में पश्चिमोत्तर भारत का औसत तापमान 28°C से कम होता है। देश के धुर (extreme) उत्तरी प्रदेशों में तो कई दिन तापमान हिमांक से भी नीचे आ जाता है।

अक्टूबर माह के प्रारम्भ से तापमान के दैनिक परिसर में भी वृद्धि होने लगती है। तापमान का दैनिक परिसर पश्चिमी भारत में अधिकतम होता है, जहाँ इसका मान 16 से 17° सेन्टीग्रेड तक होता है। दक्षिण की ओर दैनिक परिसर कम होता जाता है तथा धुर दक्षिणी भागों में इसका मान 6 से 7°C सेन्टीग्रेड तक रह जाता है।

14 62 धरातलीय हवायें

धरातलीय दाब के प्रसारित (diffused) होते ही मानसून हवायें भारत पर बहुत क्षीण हो जाती हैं। उत्तरी भारत पर प्राय उत्तरी पश्चिमी हवायें बहती हैं तथा दक्षिण में इनकी प्रकृति परिवर्तनशील पायी जाती है। मध्य बंगाल की खाड़ी में उत्तरी पूर्वी से पूर्वी तथा धुर दक्षिण में पश्चिमी हवायें साधारणत विद्यमान रहती हैं।

14 63 आर्द्रता तथा मेघाच्छन्नता

उत्तरी भारत की सापेक्ष आर्द्रता निरन्तर घटती जाती है और नवम्बर के अन्त तक लगभग 50% हो जाती है। सबसे अधिक औसत सापेक्ष आर्द्रता दक्षिणी प्रायद्वीप में 60-70% पायी जाती है। मेघाच्छन्नता में भी तीव्र ह्रास देखा जाता है तथा अक्टूबर के प्रथमार्द्ध के बाद उत्तरी पश्चिमी तथा मध्य भारत पर आसमान प्राय साफ रहता है। उत्तरी पूर्वी भारत में आंशिक रूप मेघाच्छन्नता पायी जाती है। नवम्बर में आसाम को छोड़कर शेष उत्तर-पूर्व में आसमान स्वच्छ रहता है। आसाम में कुछ दिन मेघ युक्त आकाश दृष्टिगोचर होता है।

स्वच्छाकाश की घटना दक्षिण की ओर बढ़ती जाती है तथा नवम्बर के अन्त तक प्रायद्वीप के पूर्वी तटों को छोड़कर शेष भाग मेघ रहित रहता है।

* अक्टूबर में कपासी वर्षी की घटनाएँ सबसे अधिक केरल में होती हैं, जहाँ औसत रूप से 12 तड़ित झंझाएँ उत्पन्न होती हैं। उत्तर में ये घटनाएँ घटती जाती हैं तथा बम्बई तक इनकी संख्या 2 रह जाती है, नवम्बर में भी तड़ित झंझा इसी प्रकार केरल (औसत संख्या 12) से उत्तर की ओर घटती जाती है, जो 15° उ अक्षांश से ऊपर 2 से कम रह जाती हैं।

14 64 चक्रवात—अक्टूबर और नवम्बर भारतीय सागरों में चक्रवात का मौसम कहलाते हैं, क्योंकि खाड़ी और अरब सागर दोनों में ही प्रखर तीव्रता के चक्रवात प्राय

10–14° उ अक्षांशो के बीच इसी काल मे उत्पन्न होते हैं। इनकी संख्या इस काल मे औसत रूप से 1 से 3 तक पायी जाती है। विस्तृत विवरण अध्याय 8 मे दिया जा चुका है।

14 70 उच्चतर वायु प्रवाह तथा तापमान

(क) शीतकाल में उपोष्ण कटिबन्धी उच्चदाब की एक कटक निम्न वायु मण्डलीय तहो मे अरब सागर से दक्षिणी पूर्वी एशिया तक दौडती है। यह कटक ऊँचाई के साथ दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होती जाती है। कुछ सौ मीटर ऊँचाई तक इस कटक के उत्तर म पश्चिमी या उत्तरी पश्चिमी हवाएँ चलती हैं तथा दक्षिण मे उत्तरी-पूर्वी से दक्षिणी पूर्वी के बीच। लगभग 1500 मीटर के बाद प्रवाह उत्तरी भारत पर पूर्णत पश्चिमी पाया जाता है, जहाँ वायुगति ऊँचाई के साथ निरन्तर बढता जाती है। 25 से 30° उ अक्षांशो के बीच 6 किमी पर 40 नाट, 9 किमी पर 75 नाट तथा 12 किमी पर 85 नाट का पश्चिमी प्रवाह देखा जाता है। इसके बाद हवायें प्राय मन्द होती जाती हैं।

1 5 से 9 किमी ऊँचाई के मध्य हर स्तर पर तापमान 15° उ अक्षांश से उत्तर की ओर घटता चला जाता है। 12–13 किमी पर सारे भारत पर तापमान—50°C (± 3°C) के लगभग पाया जाता है, इसके बाद तापमान प्राय स्थिर रहता है या ऊँचाई के साथ बढने लगता है। 15° उ अक्षांश के दक्षिण म प्रायद्वीप पर लगभग 9 किमी पर उच्च तापमान का क्षेत्र स्थिर रहता है।

23° उ अक्षांश के उत्तर म उष्ण कटिबन्धी तथा शीतोष्ण कटिबन्धी दोनो क्षोभ सीमाएँ जनवरी मे वर्तमान पायी जाती हैं। इनकी मध्य स्थितियाँ क्रमश 100 तथा 210 मिलीबार स्तर पर आकलित की गई हैं। 30° उ अक्षांश पर उष्ण कटिब धी क्षोभ सीमा का तापमान – 68°C पाया जाता है, जो 15° उ अक्षांशो के नीचे घट कर – 75° तक चला जाता है।

शीतकाल मे मध्य और उत्तरी भारत के निम्न क्षोभ मण्डल मे तापमान का आवटन एक और महत्वपूर्ण विशेषता रखता है–रात्रि मे धरातलीय व्युत्क्रमण। 1 5 से 3 किमी के मध्य ह्रास दर मध्य भारत मे निम्नतम (4°C/किमी) होता है, पश्चिमी बगाल की खाडी मे भी ह्रास दर लगभग इसी क्रम का पाया जाता है, जो उत्तरी पूर्वी व्यापारी हवाओ मे व्यापारी वायु व्युत्क्रमण (trade wind inversion) उत्पन्न करता है।

3 से 9 किमी तक पूरे भारत पर 6°C/किमी का सम ह्रास दर पाया जाता है। दक्षिणी प्रायद्वीप मे 9 किमी से ऊपर ह्रास दर 7°C/किमी होता है, जो 12 किमी के बाद ऊँचाई के साथ घटने लगता है। इससे उत्तरी अक्षांशो म 9 किमी से ही ह्रास दर घटना आरम्भ हो जाता है।

(ख) अप्रेल मे उपोष्ण कटिबन्धी कटक 3 किमी तक 18° उ अक्षांश के पास वर्तमान रहता है जो ऊँचाई के साथ दक्षिण की ओर खिसकते हुए 12 किमी पर 8° उ अक्षांश पर आ जाता है। इसके प्रभाव मे बहती पश्चिमी हवायें उत्तर भारत मे ऊँचाई के साथ बढती है, जो 9 किमी पर अधिकतम 40 नाट तक पहुँचती हैं।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

मानसून अक्ष ऊँचाई के साथ दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता हुआ पाया जाता है, जो 3 किमी पर 23° उ अक्षांश पर स्थित रहता है। इसके ऊपर द्रोणिका बहुत क्षीण हो जाती है।

पाकिस्तान के ऊपर स्थित ताप निम्नदाब 3 किमी के ऊपर उच्चदाब मे रूपान्तरित होने लगता है। इसके प्रभाव मे हल्की पूर्वी हवायें बहती हैं। 9 किमी ऊँचाई पर सर्वत्र पूर्वी प्रवाह व्याप्त रहता है। 12 से 16 किमी के बीच उत्तरी-पूर्वी भारत पर एक और कटक विकसित हो जाता है, जिससे पूर्वी हवायें तीव्रतर होती जाती हैं। यही हवायें 14–16 किमी पर प्रायद्वीपीय भारत पर पूर्वी जेट धाराओं का निर्माण करती हैं।

जून मे 1 5 किमी का ताप उच्चतम पाकिस्तान तथा संलग्न पश्चिमोत्तर भारत पर स्थित पाया जाता है, जहाँ से पूर्व और दक्षिण की ओर तापमान घटता जाता है। 6 किमी के आस पास 25 से 30° उत्तरी अक्षांशों के बीच एक कमजोर उच्चताप कटक विकसित हो जाता है जो 16 किमी की ऊँचाई तक विद्यमान रहता है। इस मास मे केवल उष्ण कटिबन्धी क्षोभ सीमा उपस्थित होती है, जिसकी ऊँचाई 15° उ अक्षांश पर 110 मिलीबार तथा 25° उ अक्षांश पर 100 मिलीबार पायी जाती है।

जुलाई मे उच्चताप क्षेत्र (28°C) ईरान तथा अरब के केन्द्रीय भागो पर स्थापित हो जाता है। 1 5 किमी पर उत्तरी पश्चिमी भारत इसके कटक के प्रभाव में रहता है। 20° उ के दक्षिण में तापमान प्रवणता बहुत कम पायी जाती है। 25–30° उत्तरी अक्षांश के मध्य क्षोभ सीमा की ऊँचाई सर्वाधिक (95 मिलीबार) होती है। यहाँ तापमान – 75°C रहता है। इस क्षेत्र के दोनों ओर क्षोभ सीमा की ऊँचाई घटती जाती है।

भाप भरी मानसून धाराओं के प्रवाह के कारण अधिकांश भाग में 5°C/किमी के लगभग ह्रास दर निचली तहों में पाया जाता है। ऊँचाई के साथ ह्रास दर बढ़ता जाता है, जो 9–12 किमी की तह में अधिकतम (7–8°C/किमी) हो जाता है।

(घ) अक्टूबर तक मानसून प्राय समाप्त हो जाता है। इस मास में 10° उ अक्षांश के नीचे भी निम्न तहों में पश्चिमी प्रवाह प्रचलित रहता है। लगभग 6 किमी ऊँचाई पर 17° उ अक्षांश के समान्तर एक कटक स्थित रहता है, जिसके उत्तर में पश्चिमी प्रवाह होता है। यहाँ वायुगति ऊँचाई के साथ लगातार बढती जाती है, और पश्चिमोत्तर भारत में 12–14 किमी पर 50 से 60 नाट तक का उच्चतम प्रदर्शित करती है। पूर्वोत्तर भारत में गति कम पायी जाती है। कटक के दक्षिण में पूर्वी प्रवाह होता है। यह प्रवाह भी 9 किमी के ऊपर तीव्रतर होता जाता है और 14 किमी पर अधिकतम वायु-गति प्राप्त कर लेता है।

इस मास में 1 5 किमी पर 22°C का उच्चताप क्षेत्र गुजरात तथा पाकिस्तान तट पर स्थित होता है, जो 6 किमी तक की ऊँचाई के साथ दक्षिण की ओर खिसकता जाता है। 9 किमी पर – 30°C का उष्ण क्षेत्र पूरे प्रायद्वीप तथा संलग्न मध्य भारत को

मई मे पूरे देश मे ऊर्ध्व प्रवाह निम्न तहो मे पश्चिमी ही पाया जाता है । उत्तरी भारत मे 14 किमी तक निरतर बढता हुआ पश्चिमी प्रवाह मिलता है, जिसकी अधिकतम गति 50 'नाट' की 14 किमी पर पायी जाती है, तत्पश्चात् प्रवाह घटने लगता है । प्रायद्वीप पर उच्चतर वायुमण्डल मे हल्की पूर्वी हवायें स्थापित होने लगती है ।

अप्रेल म 1 5 किमी पर उच्च ताप क्षत्र (26°C) 22° उ, 68° पू के आस-पास केन्द्रित रहता है, जहाँ से चारो ओर तापमान घटता जाता है । यह घटाव 30° उ तक 4°C तथा 8° उ तक 7°C का औसत रखता है । 30° उ के उत्तर म प्रवणता और तीव्र हो जाती है । ऊँचाई के साथ उच्च ताप क्षेत्र दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता रहता है । 6 किमी पर तापमान 12° उ के उत्तर म घटता जाता है जबकि दक्षिण मे लगभग सम होता है । 12 किमी पर पूरे देश म – 50°C का तापमान 2°C के परिसर मे सम पाया जाता है ।

25° उ के उत्तर मे दुहरी क्षोभ सीमा वतमान रहती है, 15 किमी पर उष्ण कटिबन्धी तथा 12 किमी पर शीतोष्ण कटिबन्धी । इन स्तरो पर तापमान क्रमश 76 तथा – 68°C पाया जाता है ।

ह्रास दर निम्न क्षोभ मण्डल म सबसे अधिक पश्चिमी भारत म पाया जाता है, लगभग 9°C/किमी । दक्षिण और पूव दोनो ओर घटते हुए पोट ब्लयर तथा त्रिवेन्द्रम में निम्नतम (5 5°C/किमी) हो जाता है । 12 किमी ऊँचाई पर ह्रास दर पूरे भारत मे घटकर 2–4°C/किमी रह जाता है ।

मई मे 1 5 किमी का उच्चताप क्षेत्र थोडा उत्तर मे स्थानान्तरित होकर 23° उ, 78° पू पर केन्द्रित हो जाता है—जहाँ से पूव और दक्षिण मे तापमान मे तेजी से गिरावट आती है । जैसे-जैसे ऊपर जाते हैं, ताप प्रवणता घटती जाती है । 12 स 16 किमी के मध्य तापमान प्रायद्वीप पर प्राय स्थिर रहता है, जबकि उत्तर की ओर थोडा बढता हुआ पाया जाता है ।

(ग) जून के अन्त तक जब मानसून द्रोणिका निम्न तहो में उत्तर भारत पर पूणत स्थापित हो जाती है, तो इसकी अक्ष एक सीमा रेखा बनाती है, जिसके दक्षिण मे पश्चिमी तथा उत्तर मे पूर्वी प्रवाह विद्यमान रहता है । भारत की उत्तरी सीमाओ पर उच्चतर वायुमण्डल मे प्रतिचक्रवाती प्रवाह प्रमुख रहता है जिससे 22° उ अक्षाश से दक्षिण मे पूर्वी प्रवाह पाया जाता है और अधिक ऊँचाइयो पर कटक रसा 28° उ अक्षाश पर विद्यमान होती है—इसके दक्षिण म निरन्तर तीव्र होती हुई पूर्वी हवायें बहती हैं । प्रायद्वीप मे 16 किमी पर इनकी गति 50 नाट के लगभग हो जाती है ।

जुलाई मे मानसून द्रोणिका की अक्ष सामान्यत दिल्ली और कलकत्ता को मिलाती हुई स्थित रहती है । इसके दक्षिण मे पश्चिमी तथा उत्तर म दक्षिणी पूर्वी या पूर्वी प्रवाह पाया जाता है । पश्चिमी प्रवाह प्रायद्वीप पर लगभग 2 किमी की ऊचाई तक तीव्रतर होता जाता है तथा 20–25 नाट की अधिकतम गति प्राप्त कर लेता है ।

मानसून अक्ष ऊँचाई के साथ दक्षिण की ओर स्थानान्तरित होता हुआ पाया जाता है, जो 3 किमी पर 23° उ. अक्षांश पर स्थित रहता है। इसके ऊपर द्रोणिका बहुत क्षीण हो जाती है।

पाकिस्तान के ऊपर स्थित ताप निम्नदाब 3 किमी के ऊपर उच्चदाब मे रूपान्तरित होने लगता है। इसके प्रभाव मे हल्की पूर्वी हवायें बहती हैं। 9 किमी ऊँचाई पर सबत्र पूर्वी प्रवाह व्याप्त रहता है। 12 से 16 किमी के बीच उत्तरी-पूर्वी भारत पर एक और कटक विकसित हो जाता है, जिससे पूर्वी हवायें तीव्रतर होती जाती हैं। यही हवायें 14–16 किमी पर प्रायद्वीपीय भारत पर पूर्वी जेट धाराओं का निर्माण करती हैं।

जून मे 1.5 किमी का ताप उच्चतम पाकिस्तान तथा संलग्न पश्चिमोत्तर भारत पर स्थित पाया जाता है, जहाँ से पूर्व और दक्षिण की ओर तापमान घटता जाता है। [illegible] किमी के आस पास 25 से 30° उत्तरी अक्षांशों के बीच एक कमजोर उच्चताप कटक विकसित हो जाता है जो 16 किमी की ऊँचाई तक विद्यमान रहता है। इस मास में केवल उष्ण कटिबंधी क्षोभ सीमा उपस्थित होती है, जिसकी ऊँचाई 15° उ. अक्षांश पर 110 मिलीबार तथा 25° उ. अक्षांश पर 100 मिलीबार पायी जाती है।

जुलाई मे उच्चताप क्षेत्र (28°C) ईरान तथा अरब के केन्द्रीय भागों पर स्थापित हो जाता है। 1.5 किमी पर उत्तरी पश्चिमी भारत इसके कटक के प्रभाव में रहता है। 20° उ. के दक्षिण में तापमान प्रवणता बहुत कम पायी जाती है। 25–30° उत्तरी अक्षांश के मध्य क्षोभ सीमा की ऊँचाई सर्वाधिक (95 मिलीबार) होती है। यहाँ तापमान -75°C रहता है। इस क्षेत्र के दोनों ओर क्षोभ सीमा की ऊँचाई घटती जाती है।

भाप भरी मानसून धाराओं के प्रवाह के कारण अधिकांश भागों में 5°C/किमी के लगभग ह्रास दर निचली तहों में पाया जाता है। ऊँचाई के साथ ह्रास दर बढ़ता जाता है, जो 9–12 किमी की तह में अधिकतम (7–8°C/किमी) हो जाता है।

(घ) अक्टूबर तक मानसून प्रायः समाप्त हो जाता है। इस मास में 10° उ. अक्षांश के नीचे भी निम्न तहों में पश्चिमी प्रवाह प्रचलित रहता है। लगभग 6 किमी ऊँचाई पर 17° उ. अक्षांश के समान्तर एक कटक स्थित रहता है, जिसके उत्तर में पश्चिमी प्रवाह होता है। यहाँ वायुगति ऊँचाई के साथ लगातार बढ़ती जाती है, और पश्चिमोत्तर भारत में 12–14 किमी पर 50 से 60 नाट तक का उच्चतम प्रदर्शित करती है। पूर्वोत्तर भारत में गति कम पायी जाती है। कटक के दक्षिण में पूर्वी प्रवाह होता है। यह प्रवाह भी 9 किमी के ऊपर तीव्रतर होता जाता है और 14 किमी पर अधिकतम वायुगति प्राप्त कर लेता है।

इस मास में 1.5 किमी पर 22°C का उच्चताप क्षेत्र गुजरात तथा पाकिस्तान तट पर स्थित होता है, जो 6 किमी तक की ऊँचाई के साथ दक्षिण की ओर खिसकता जाता है। [illegible] किमी पर -30°C का उष्ण क्षेत्र पूरे प्रायद्वीप तथा संलग्न मध्य भारत को

घेर लेता है। 12 किमी पर पूरे एशिया पर तापमान लगभग समान हो जाता है। तापमान प्रवणता हर स्तर पर बहुत क्षीण पायी जाती है। ध्रुवीय क्षोभ सीमा 30° उ अक्षांश पर अवतरित हो जाती है। उष्ण कटिब धी क्षोभ सीमा लगभग 110 मिलीबार स्तर पर तापमान – 75°C) पायी जाती है। 3 किमी ऊँचाई तक ह्रास दर पश्चियात्तर भारत में अधिकतम (7°C/किमी) रहता है जो पूव और दक्षिण की ओर घटता जाता है। आसाम में यह 6°C/किमी तथा त्रिवेन्द्रम में 5°C/किमी के लगभग पाया जाता है।

(च) तापमान का वार्षिक परिसर पूरे भारत मे हर स्तर पर उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग बढता जाता है। किन्तु 12 किमी के ऊपर तापमान परिसर लगभग सम हो जाता है।

(छ) विभिन्न ऊँचाइयो पर औसत मासिक ह्रास दर का मान सारणी (14 2) में दिया गया है।

1480 वर्षा का आवटन

चित्र (14 20) औसत वार्षिक वर्षा का आवटन प्रस्तुत करता है। भारत मानसून प्रधान देश है। जम्मू और काश्मीर, चरम दक्षिणी तट तथा पूर्वी घाट के क्षेत्रो को छोड़ कर पूरे देश में कुल वर्षा का 80–90% भाग केवल दक्षिणी पश्चिमी मानसून के चार महीनो में प्राप्त हो जाता है।

वर्षा के आवटन को भारत मे सर्वाधिक प्रभावित करने वाला तत्व प्रवत श्रृखलाएँ है क्योंकि मानसन धारायें पश्चिमी घाट तथा उत्तरी पूर्वी भारत के पहाड़ियो को प्राय लम्बवत् रूप से काटती हैं। खासी जयन्तिया के दक्षिणी ढाल पर 1000 सेमी से अधिक वार्षिक वर्षा प्राप्त होती है, जबकि ब्रह्मपुत्र के उत्तरी भागा पर मानसून धाराओ के अनुवर्ती भागा में पडने के कारण बहुत कम (लगभग 200 सेमी) वार्षिक वर्षा मिल पाती ह। ससार का सर्वाधिक वर्षा का स्थान चेरा पूँजी इन्ही पहाडी मोडा मे समुद्रतल से 1313 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। मानसून धाराओ का पर्वतीय आरोहरण ही इस स्थान के लगभग 1142 सेमी औसत वार्षिक वर्षा का कारण है। पश्चिमी घाट के पवनाभिमुखी भाग लगभग 600 सेमी वार्षिक वर्षा प्राप्त करते हैं जबकि लगभग 70–75 किमी अनुवर्ती भाग में वार्षिक घट कर 50–60 सेमी रह जाती है।

मानसून भारत की भूमि पर दो धाराओ में पहुँचता है, अरब सागर की शाखा तथा बगाल खाडी की शाखा। अरब सागर की शाखा जून के प्रथम सप्ताह में पश्चिमी तट पर प्राय दक्षिण पश्चिम दिशा से पहुँचती है और पश्चिमी घाट पर आरोहरण के कारण आसपास के क्षेत्रो में भारी वर्षा उत्पन्न करती ह। घाट से उतरने के बाद मानसून पश्चिमी प्रवाह के रूप में प्रायद्वीप पर आग बढता है। क्रमश इन धाराओ की उत्तरी सीमा भी आर उत्तर की ओर अग्रसर होती जाती है। पश्चिमी प्रवाह जैसे-जैसे प्रायद्वीप पर आगे बढ़ता है मानसून धाराओ की शुष्कता तथा फलस्वरूप वर्षा की मात्रा भी निरन्तर घटती जाती ह।

सारणी (142)

माध्य मासिक ह्रास दर (डिग्री सेन्टीग्रेड/किमी)

उत्तरी भारत

मास ऊँचाई (किमी)	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक माध्य
धरातल–2	57	63	79	69	88	83	55	62	68	79	56	49	67
2–4	55	58	68	82	89	81	42	49	59	61	58	53	63
4–6	64	164	68	67	71	59	53	53	49	57	58	71	61
6–8	59	67	67	68	62	53	57	52	57	65	63	76	62
8–10	41	45	60	71	67	72	63	73	75	69	63	81	67

दक्षिणी भारत

मास ऊँचाई (किमी)	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक माध्य
धरातल–2	90	87	87	83	83	80	70	80	70	73	87	77	81
2–4	54	73	83	87	79	69	53	53	55	52	47	48	62
4–6	65	59	50	63	54	61	59	53	55	59	59	99	58
6–8	66	61	70	61	69	58	57	51	63	64	61	69	63
8–10	74	69	77	75	77	76	73	79	73	75	77	75	75

घेर लेता है। 12 किमी पर पूरे एशिया पर तापमान लगभग समान हो जाता है। तापमान प्रवणता हर स्तर पर बहुत क्षीण पायी जाती है। ध्रुवीय क्षोभ सीमा 30° उ अक्षांश पर अवतरित हो जाती है। उष्ण कटिबंधी क्षोभ सीमा लगभग 110 मिलीबार स्तर पर तापमान – 75°C) पायी जाती है। 3 किमी ऊँचाई तक ह्रास दर पश्चियोत्तर भारत में अधिकतम (7°C/किमी) रहता है जो पूर्व और दक्षिण की ओर घटता जाता है। आसाम में यह 6°C/किमी तथा त्रिवेन्द्रम में 5°C/किमी के लगभग पाया जाता है।

(च) तापमान का वार्षिक परिसर पूरे भारत में हर स्तर पर उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग बढ़ता जाता है। किन्तु 12 किमी के ऊपर तापमान परिसर लगभग सम हो जाता है।

(छ) विभिन्न ऊँचाइयों पर औसत मासिक ह्रास दर का मान सारणी (14 2) में दिया गया है।

1480 वर्षा का आवटन

चित्र (14 20) औसत वार्षिक वर्षा का आवटन प्रस्तुत करता है। भारत मानसून प्रधान देश है। जम्मू और काश्मीर, चरम दक्षिणी तट तथा पूर्वी घाट के क्षेत्रों को छोड़ कर पूरे देश में कुल वर्षा का 80–90% भाग केवल दक्षिणी पश्चिमी मानसून के चार महीनों में प्राप्त हो जाता है।

वर्षा के आवटन को भारत में सर्वाधिक प्रभावित करने वाला तत्त्व पर्वत शृंखलाएँ हैं क्योंकि मानसून धारायें पश्चिमी घाट तथा उत्तरी पूर्वी भारत के पहाड़ियों को प्राय लम्बवत् रूप से काटती हैं। खासी जयन्तिया के दक्षिणी ढाल पर 1000 सेमी से अधिक वार्षिक वर्षा प्राप्त होती है, जबकि ब्रह्मपुत्र के उत्तरी भागों पर मानसून धाराओं के अनुवर्ती भागों में पड़ने के कारण बहुत कम (लगभग 200 सेमी) वार्षिक वर्षा मिल पाती है। संसार का सर्वाधिक वर्षा का स्थान चेरापूँजी इन्हीं पहाड़ी मोड़ों में समुद्रतल से 1313 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। मानसून धाराओं का पर्वतीय आरोहरण ही इस स्थान के लगभग 1142 सेमी औसत वार्षिक वर्षा का कारण है। पश्चिमी घाट के पवनाभिमुखी भाग लगभग 600 सेमी वार्षिक वर्षा प्राप्त करते हैं जबकि लगभग 70–75 किमी अनुवर्ती भाग में वार्षिक घट कर 50–60 सेमी रह जाती है।

मानसून भारत की भूमि पर दो धाराओं में पहुँचता है, अरब सागर की शाखा तथा बंगाल खाड़ी की शाखा। अरब सागर की शाखा जून के प्रथम सप्ताह में पश्चिमी तट पर प्राय दक्षिण पश्चिम दिशा से पहुँचती है और पश्चिमी घाट पर आरोहरण के कारण आसपास के क्षेत्रों में भारी वर्षा उत्पन्न करती है। घाट से उतरने के बाद मानसून पश्चिमी प्रवाह के रूप में प्रायद्वीप पर आगे बढ़ता है। क्रमश इन धाराओं की उत्तरी सीमा भी और उत्तर की ओर अग्रसर होती जाती है। पश्चिमी प्रवाह जैसे जैसे प्रायद्वीप पर आगे बढ़ता है, मानसून धाराओं की शुष्कता तथा फलस्वरूप वर्षा की मात्रा भी निरन्तर घटती जाती है।

सारणी (142)

माध्य मासिक ह्रास-दर (डिग्री से०टीग्रेड/किमी)

उत्तरी भारत

मास ऊँचाई (किमी)	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक माध्य
धरातल–2	57	63	79	69	88	83	55	62	68	79	56	49	67
2–4	55	58	68	82	89	81	42	49	59	61	58	53	63
4–6	64	164	68	67	71	59	53	53	49	57	58	71	61
6–8	59	67	67	68	62	53	57	52	57	65	63	76	62
8–10	41	45	60	71	67	72	63	73	75	69	63	81	67

दक्षिणी भारत

मास ऊँचाई (किमी)	ज	फ	मा	अ	म	जू	जु	अ	सि	अ	न	दि	वार्षिक माध्य
धरातल–2	93	87	87	83	83	80	70	80	70	73	87	77	81
2–4	54	73	83	87	79	69	53	53	55	52	47	48	62
4–6	65	59	50	63	54	61	59	53	55	59	59	99	58
6–8	66	61	70	61	69	58	57	51	63	64	61	69	63
8–10	74	69	77	75	77	76	73	79	73	75	77	75	75

यहाँ तक कि पूर्वी घाट पर आरोहरण करते समय यह इतनी शुष्क हो जाती है कि वहाँ इस ऋतु मे वर्षा लगभग नही के बराबर पायी जाती है । इस प्रकार पूर्वी घाट से उतर कर लगभग शुष्क हुई धारायें बगाल की खाडी म प्रविष्ट करती हैं ।

बगाल खाडी की दक्षिणी-पश्चिमी मानसून धारायें मई के अन्त मे ही अराकान तथा तेनासरीम तटो पर भारी वर्षा आरम्भ कर देती हैं, किन्तु मध्य वर्मा की ओर वर्षा की तीव्रता तेजी से घटती जाती है । जो धारायें अपेक्षाकृत दक्षिणी पथ पर चलती हुई बगाल तथा बागलादेश तट पार करती हैं, वे आसाम तथा बर्मा की पहाडियो से परावर्तित होकर पश्चिम की ओर मुड जाती हैं तथा पूर्वी प्रवाह के रूप मे क्रमश आसाम, बगाल, उडीसा, बिहार, मध्य-प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पजाब तथा राजस्थान पर वर्षा उत्पन्न करती हैं । यात्रा के दौरान धाराओ की तीव्रता घटती जाती है जिसके परिणामस्वरूप वर्षा की मात्रा निरन्तर घटती जाती है ।

विभिन्न ऋतुओ मे वर्षा आवटन के कुछ प्रमुख तथ्य निम्नाकित हैं

(क) (i) शीतकाल की वर्षा दो भागो मे बाँटी जा सकती है—1 पश्चिमी विक्षोभो द्वारा उत्पन्न उत्तरी भारत की वर्षा 2 उत्तरी पूर्वी मानसून द्वारा उत्पन्न दक्षिणी-पूर्वी प्रायद्वीप की वर्षा, जो दिसम्बर म सर्वाधिक होती है ।

इस काल मे लगभग 5 विक्षोभ प्रतिमास सक्रिय रहते हैं, किन्तु वर्षा उत्पन्न करने की क्षमता सभी म भिन्न भिन्न पायी जाती है । हिमालय की पहाडिया प्राय भारी वर्षा तथा तुषार प्राप्त करती हैं । मैदानी भागो मे वर्षा सबसे अधिक, उत्तरी-पश्चिमी भारत तथा आसाम मे होती है । कभी कभी मध्य प्रदेश तथा प्रायद्वीप क उत्तरी भाग भी हल्की वर्षा प्राप्त करते हैं ।

उत्तरी पूर्वी प्रवाह कारोमण्डल तट से दक्षिण के तटीय क्षेत्रो म अच्छी वर्षा उत्पन्न करता है । कभी कभी दिसम्बर मे बगाल की खाडी मे चक्रवात भी उत्पन्न हो जाते हैं, जो प्राय मद्रास से नीचे तटो से टकराकर भारी वर्षा देते हैं । वर्षा की तीव्रता आतरिक भागो मे घटती जाती है ।

(ii) दिसम्बर म 1 सेमी या अधिक वर्षा का क्षेत्र जम्मू-काश्मीर, पजाब, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तरी पूर्वी आसाम पर सीमित रहता है । जनवरी मे इन स्थानो की वर्षा बढ जाती है और साथ ही 1 सेमी से अधिक वर्षा का क्षेत्र पूर्वी राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य-प्रदेश तथा पूरे पूर्वोत्तर भारत पर फैल जाता है । फरवरी मे वर्षा की मात्रा बगाल उडीसा, दक्षिणी पूर्वी मध्यप्रदेश और आसाम मे बढ जाती है, कि तु जम्मू-काश्मीर, पजाब तथा पूर्वी राजस्थान मे थोडा घट जाती है । सबसे अधिक वद्धि 1–3 सेमी आसाम म पाई जाती है ।

(iii) शीतकाल मे हिमालय के दक्षिण मे अक्षाशा के साथ वर्षा लगातार घटती जाती है । इन दिना सबसे अधिक वर्षा हिमाचल प्रदेश में तथा काश्मीर मे होती है । दिसम्बर मे ये क्षेत्र लगभग 6 सेमी तथा जनवरी फरवरी मे 15 सेमी वर्षा प्राप्त करते हैं ।

(iv) मैदानी भागों की वर्षा प्राय तड़ित झंझा युक्त होती है। पंजाब, हिमाचल-प्रदेश, पश्चिमी उत्तर और मध्य प्रदेश तथा उत्तरी आसाम पर दिसम्बर में 0 5 दिन तड़ित-झंझा का औसत आता है, जो जनवरी तथा फरवरी में बढ़कर 1 दिन हो जाता है। साथ ही क्षेत्र पूरे उत्तरी भारत पर विस्तृत हो जाता है। जनवरी में सर्वाधिक तड़ित दो दिन पश्चिमी उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों में तथा फरवरी में 3 दिन उत्तरी पूर्वी आसाम पर पाया जाता है।

(ख) (i) पूर्व मानसून काल के पूर्वार्द्ध में पश्चिमी विक्षोभ उत्तर भारत को प्रभावित करते हैं तथा वर्षा का मुख्य कारण बनते हैं। इनसे तड़ित झंझा तथा ओलों की घटनाएँ भी सम्पादित रहती हैं जो मध्य तथा पूर्वी भागों में प्राय अधिक तीव्र होती हैं। आसाम, बांगलादेश तथा बंगाल में काल बैसाखी मार्च, अप्रेल और मई में क्रमश 4, 8, और 12 की औसत संख्या में उत्पन्न होते हैं, जो भारी वर्षा इन्हीं के कारण आसाम मई में भी जून के दो-तिहाई के बराबर वर्षा प्राप्त कर लेता है।

(ii) जैसाकि पहले बतलाया जा चुका है प्रायद्वीप के दक्षिणी पूर्वी भागों में ट्रोणिका के प्रभाव से खाड़ी से पर्याप्त नमी का आगमन होता है, जिससे अप्रेल तथा मई में तड़ित बौछार उत्पन्न होते रहते हैं। इससे इन क्षेत्रों को 8 से 10 सेमी तक वर्षा प्राप्त हो जाती है। दक्षिणी-पश्चिमी प्रायद्वीप पर भी पूर्व मानसून के तड़ित बौछार होते हैं, जिनकी प्रकृति तथा कारण प्राय अनियमित हैं। उत्तरी पश्चिमी प्रायद्वीप इस ऋतु में मुख्यत सूखा रहता है। कभी-कभी मई के अन्त में अनुकूल सागरीय प्रवाह के अन्तर्गत तड़ित झंझा की घटनाएँ हो जाया करती है। नमी का आयात बहुत तीव्र होने पर तड़ित झंझा मध्य भारत तक भी फैल जाते हैं।

(iii) इस ऋतु में सबसे कम वर्षा राजस्थान, गुजरात तथा मध्य भारत में होती है। बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, शेष पश्चिमोत्तर भारत तथा दक्षिणी प्रायद्वीप 5 से 15 सेमी तक की वर्षा प्राप्त करते हैं। 50 से०मी० से अधिक की अधिकतम वर्षा काल-बैसाखी (Norwester) के कारण बंगाल, असम तथा आस-पास के क्षेत्र में होती है।

(ग) (i) जून ऋतु में सर्वाधिक वर्षा अराकान, तेनासरीम तथा प्रायद्वीप के पश्चिमी तट पर 75–80 सेमी के लगभग होती है। उत्तरी बंगाल और असम के कुछ भाग 50 से 75 सेमी की वर्षा प्राप्त करते हैं जो पश्चिम की ओर निरंतर घटती हुई बिहार और उड़ीसा तक 25 समी तथा उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं गुजरात में 15 से 25 सेमी के मध्य रह जाती है।

(ii) जुलाई और अगस्त भर मानसून धाराएँ लगभग पूरे देश पर छायी रहती हैं। केवल पश्चिमी राजस्थान का थार मरुस्थल इन दिनों भी पाकिस्तान पर स्थित ताप निम्न-दाब के प्रभाव में बहने वाली शुष्क महाद्वीपीय हवाओं से घिरा होता है। किन्तु जब कभी मानसून सक्रिय होता है या दोनों शाखायें संयुक्त होकर बढ़ती हैं या ताप निम्नदाब अपेक्षाकृत दक्षिण में स्थित होकर अरब सागर से नमी अभिवहित करता है या मानसून

अवदाब राजस्थान को प्रभावित कर रहा होता है तो नम धारायें थार मरुस्थल पर भी आच्छादित हो जाती हैं। इसके विपरीत क्षीण मानसून भग की अवस्था में थार तथा सिन्ध की शुष्क वायु राशि राजस्थान एवं संलग्न पंजाब पर भी बहने लगती है।

(iii) जुलाई और अगस्त में वर्षा के आवटन में ऋतुनिष्ठ द्रोणिका का अक्ष एवं मानसून अवदाब महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अक्ष की स्थिति यदि अपेक्षाकृत दक्षिण में है तो सामान्यतः मानसून सक्रिय होता है तथा पूरा देश दूर-दूर तक वर्षा प्राप्त करता है। उत्तर की ओर अक्ष का स्थानान्तरण वर्षा में कमी तथा मानसून की क्षीणता की ओर संकेत करता है। इस दशा में अरब सागर की धारायें बहुत क्षीण हो जाती हैं तथा बंगाल की खाड़ी की धारायें और पूर्व की ओर सिमट जाती हैं। यदि अक्ष अधिक उत्तर की ओर स्थानान्तरित होकर पर्याप्त समय तक हिमालय की तलहटी के समानान्तर स्थिर रहे तो मानसून भंग की स्थिति आ जाती है। इस दशा में वर्षा केवल पूर्वी हिमालय की जड़ों में होती है।

(iv) शीर्ष खाड़ी में अवदाब के विकास के साथ नई धाराएँ प्रभावित होने लगती हैं जिससे तटीय भागों में वर्षा एकाएक बढ़ जाती है। अवदाब के उत्तर-पश्चिम की ओर अग्रसर होते ही भारी वर्षा का क्षेत्र पहले बंगाल तथा दक्षिणी आसाम पर फैल जाता है तथा फिर अवदाब की गति के साथ उड़ीसा और बिहार की ओर बढ़ता जाता है कुछ अवदाब जो थोड़ा दक्षिणी तट, जैसे उड़ीसा से गुजरते हैं तो मध्य प्रदेश दक्षिणी-पूर्वी यू पी एवं उत्तरी प्रायद्वीप पर दूर दूर तक वर्षा जनित करते हैं। तत्पश्चात् गुजरात और राजस्थान को प्रभावित करने के बाद ये अवदाब क्षीण होकर या तो मौसमी निम्नदाब में विलीन हो जाते हैं या अरब सागर की धारा सक्रिय होने पर उत्तर-पूर्व की ओर मुड़कर पश्चिमोत्तर भारत पर वर्षा उत्पन्न करते हैं।

(v) जुलाई में पुनः तेनासरीम, अराकान तथा पश्चिमी घाट के तटीय क्षेत्र 100–125 सेमी की सर्वाधिक वर्षा प्राप्त करते हैं। अगस्त में यह मात्रा थोड़ी घटकर अराकान तथा उत्तरी तेनासरीम तट पर 80–100 सेमी तथा पश्चिमी घाट पर 50–75 सेमी रह जाती है। पूर्वी घाट की ओर वर्षा तेजी से घटती जाती है। जुलाई में पूर्वी तट 16° उ अक्षांश के दक्षिण में 15 सेमी से कम तथा उत्तर में थोड़ा अधिक वर्षा प्राप्त करता है। मध्य प्रदेश पर जुलाई और अगस्त दोनों में 40–50 सेमी की वर्षा होती है। दोनों ही महीनों में बंगाल तथा आसाम 40–50 सेमी वर्षा प्राप्त करते हैं, जो पश्चिम की ओर निरन्तर घटते हुए पश्चिमी राजस्थान में 10–15 समी के लगभग रह जाती है।

(vi) सितम्बर में मानसून उत्तरी पश्चिमी भारत से हटने लगता है। साथ ही इसकी सक्रियता भी क्षीण होती जाती है। प्रारम्भिक दिनों में वर्षा का आवटन अगस्त की भांति ही पाया जाता है किन्तु मास के अन्तिम भाग में पूर्वी प्रायद्वीप पर वर्षा की मात्रा बढ़ जाती है तथा शेष भारत पर घटने लगती है। इसका एक कारण यह है कि अवदाब इन दिनों अपेक्षाकृत दक्षिणी अक्षांशों में उत्पन्न होते हैं। दक्षिणी पठार की वर्षा इन दिनों प्रायः तड़ित झंझा से युक्त होती है। तेनासरीम तट सर्वाधिक वर्षा (75 सेमी) प्राप्त करते हैं। पश्चिमी घाट और अराकान तट की औसत 50 सेमी के लगभग होती है। आसाम

और उत्तरी-पूर्वी बगाल 25 से 40 तथा शेष बगाल 25 सेमी से कुछ कम वर्षा प्राप्त करते हैं। उत्तरी-पश्चिमी भारत पर प्राय 15 सेमी से कम, पश्चिमी राजस्थान पर 5 सेमी से कम तथा शेष भारत पर 15 से 25 सेमी की वर्षा रिकार्ड की जाती है।

(घ) (i) बगाल की खाडी की मानसून शाखा 10 अक्टूबर तक उत्तर-पूर्वी भारत से हट जाने के अतिरिक्त ओले तथा तूफानी मौसम पैदा करते हैं तथा अरब सागर की शाखा भी इस समय तक देश के मध्य भाग तथा उत्तर पश्चिमी प्रायद्वीप से हट जाती है। फलत इन भागो मे वर्षा हो जाती है।

(ii) 15 अक्टूबर तक मध्य बगाल की खाडी मे कम वायु-दाब का क्षेत्र स्थापित हो जाता है, जो धीरे धीरे दक्षिण दिशा मे स्थानान्तरित हो जाता है। बगाल की खाडी की शाखा, जिसके कारण इस समय भी बर्मा के तटीय क्षेत्रों म वर्षा होती है, इस निम्न वायु-दाब के प्रभाव मे विचलित हो जाती है तथा कारोमण्डल तट पर वर्षा देती है। वर्षा की मात्रा तट से आन्तरिक भागो की ओर घटती जाती है। कुछ लोग इस विचलित शाखा को 'उत्तरी-पूर्वी मानसून' का नाम देते हैं।

(iii) अक्टूबर-नवम्बर मास मे वर्षा देने वाली दूसरी प्रणाली चक्रवात हैं, जो बगाल की खाडी व अरब सागर म जनित होते हैं। खाडी के चक्रवात उत्तर-पश्चिम दिशा में चलते हुए मद्रास तट तथा बगाल के डेल्टा प्रदेश के मध्य तटीय क्षेत्रो मे वर्षा देते हैं। कुछ साइक्लोन पश्चिम दिशा मे चलते हुए कारोमण्डल तट पर भारी वर्षा उत्पन्न करते है। अरब सागर मे वर्तमान विक्षोभ तथा पूर्व की ओर चलते हुए अवदाब मलाबार तट पर भारी वर्षा देते हैं। नवम्बर मास म ये अवदाब अपेक्षाकृत अधिक दक्षिण की ओर टकराते है, जिसके फलस्वरूप वर्षा पेटिका भी दक्षिण की ओर स्थानान्तरित हो जाती है।

(iv) अक्टूबर मे कारोमण्डल तट तथा दक्षिणी मलाबार मे कुल वर्षा साधारणत 25 सेमी होती है। मगलार का डिब्रूगढ से एक सीधी रेखा द्वारा मिलाया जाए तो इसके निकट पश्चिम मे स्थित क्षेत्र लगभग 12 5 सेमी वर्षा पाते हैं जबकि उत्तर-पश्चिमी भारत मे इस माह म 2 5 सेमी से भी कम वर्षा होती है।

(v) नवम्बर मे दक्षिणी कारोमण्डल तट पर वर्षा साधारणत 25 से 38 सेमी के बीच होती है तथा वर्षा की मात्रा आन्तरिक भागो की ओर घटती जाती है। मगलोर से डिब्रूगढ को जोडने वाली रेखा के पश्चिम मे अवस्थित क्षेत्र नवम्बर म आमतौर पर 2 5 सेमी वर्षा पाते हैं तथा उत्तर-पश्चिमी भारत मे इस माह मे वर्षा बिल्कुल नही होती।

(vi) दिसम्बर तक मानसून देश के सभी भागो से पूर्ण रूप से हट जाती है तथा पश्चिमी प्रायद्वीप मे वर्षा लगभग बन्द हो जाती है। देश के सुदूर उत्तरी भागो मे पश्चिमी विक्षोभ के प्रभाव के कारण दिसम्बर मे थोडी वर्षा होती है।

(च) वार्षिक वर्षा

(i) दक्षिणी प्रायद्वीप मे पूर्वी तट से वार्षिक वर्षा की मात्रा पश्चिम की ओर पश्चिमी घाट के अनुवर्ती भाग तक घटती जाती है। तट के समीप पूर्वी घाट की पहाड़ियो पर वर्षा

[illegible] है। चरम दक्षिणी भा[illegible] [illegible] जाती है। 13° उ अक्षा[illegible] [illegible] वर्षा प्राप्त करता है।

[illegible] के उच्च भू भागों म अनेक स्थाना पर [illegible] होती है [illegible] क्षेत्र घेरते हैं। पश्चिमी ढाल प[illegible] [illegible] जाती है।

(ii) बगाल तथा उड़ीसा तट से आन्तरिक भू भागो की ओ[illegible] बीच मे [illegible], छोटा नागपुर तथा महादेव पहाड़ियो[illegible] [illegible] है। इसके पश्चात् विन्ध्य तथा सतपुड़ा पहा[illegible] [illegible] है। [illegible] की गीर तथा दक्षिणी राजस्थान की आबू [illegible] अपेक्षा [illegible] अधिक वर्षा प्राप्त करती हैं।

(iii) [illegible] का दक्षिणी भाग अवदाबो के प्रभा[illegible] के कारण उत्तरी भागो की अपेक्षा अधिक वर्षा प्राप्त करता है। [illegible] उत्तरी [illegible] हैं, हिमालय की पहाड़ियो म वर्षा की मात्रा बढ़[illegible] से वर्षा की मात्रा पश्चिम की ओर लगातार घटती रहती है। वा[illegible] बंगाल मे 150 सेमी से थार मरुस्थल मे 15 सेमी से कम तक पाया [illegible]

(v) लगभग एक ही अक्षाशो पर स्थित खाडी का अण्डमान [illegible] सागर [illegible] द्वीप समूहो पर क्रमश 300 तथा 150 समी [illegible] औसत पाया गया है।

(vi) वर्षा युक्त दिनो की सख्या का आवटन चित्र 14 21 मे [illegible] है। इसका [illegible] भी वार्षिक वर्षा के लगभग समान ही है। प्रायद्वीप[illegible] दिनों की सख्या दक्षिणी मद्रास तथा मध्य महाराष्ट्र से दक्षिणी आ[illegible] (30-50) रहती है। पश्चिमी घाट पर 9–13° उ अक्षाशो के बीच य[illegible] है जिसका औसत अलेप्पी पर अधिकतम (137 दिन) रिकार्ड किया गया [illegible]

100 से अधिक दिनो वाले क्षेत्र आसाम ब्रह्मपुत्र घाटी उत्तरी ब[illegible] [illegible] अण्डमान तथा पश्चिमी घाट हैं। चेरापूंजी मे अधिकतम दिनो ([illegible] [illegible] वर्षा युक्त सबसे कम दिनो की सख्या (20 से कम) कच्छ और पश्चिम[illegible] [illegible] है। थार मरुस्थल म 5 से भी कम दिन वर्षा के होते हैं।

[illegible] की खाड़ी की जलवायुविक अवस्था

[illegible] बगाल की खाडी मे निम्नदाब का क्षेत्र पाया जाता है, [illegible] [illegible] इसी दिशा मे तापमान की नियमित [illegible] है। [illegible]

इसक[illegible] भाँति [illegible] बढ जाते [illegible] इन दिनो [illegible] प्राय तड़ित [illegible] है। [illegible]

पश्चिमी विक्षोभ बगाल तथा सलग्न क्षेत्रो को प्रभावित करते हैं। फरवरी के पश्चात् आद्र ता तेजी से बढने लगती है, जिससे हवा मे उमस बढती जाती है। जल सतह का तापमान उत्तरी खाडी मे 25°C से दक्षिणी भागो मे 28°C तक पाया जाता है जबकि इन्ही क्षेत्रो मे जनवरी मे वायु तापमान का चलन औसत रूप से 16°C से 27°C तक होता है।

मार्च मे वाष्पीकरण तीव्र हो जाता है, जिसके फलस्वरूप सम्पूर्ण खाडी की आद्र ता तेजी से बढने लगती है। वायुदाब फरवरी की अपेक्षा इस महीने मे कुछ अधिक पाया जाता है तथा हवायें अनिश्चित और तीव्रतर हो उठती हैं। यदा कदा नारवेस्टर के आने पर शीप खाडी मे स्क्वाल तथा तडित झझाएं उत्पन्न हो जाती हैं। तापमान सम्पूर्ण खाडी मे बढना आरम्भ हो जाता है, किन्तु दक्षिण की अपेक्षा उत्तर मे वृद्धि दर थोडी अधिक रहती है। मई तक खाडी का वायु तापमान लगभग सम हो जाता है, जिसका औसत 29°C आकलित किया गया है। जल सतह का तापमान भी लगभग इतना ही रहता है।

अप्रेल मे उत्तरी खाडी का दाब कुछ घटता है, जबकि दक्षिणी खाडी मे थोडा बढ जाता है, किन्तु प्रवणता काफी क्षीण रहती है। इस महीने मे 16° उ अक्षाश से ऊपर दक्षिणी-पश्चिमी प्रवाह पाया जाता है, जो बगाल और उडीसा तट के पास तीव्रतम रहता है। मध्य तथा दक्षिणी खाडी म अनियत तथा हल्की हवायें बहती है।

अप्रेल के अन्त मे दक्षिणी या दक्षिणी-पूर्वी खाडी का मौसम यदा-कदा विक्षोभित हो जाता है, जिसके फलस्वरूप स्क्वाल युक्त हवायें तथा बौछार की घटनाए उत्पन्न हो जाती हैं।

मई मे सम्पूर्ण खाडी अपेक्षाकृत अधिक विक्षोभित रहती है, जहां 29°C का वायु तापमान एव 29–30°C का सागर सतह का तापमान समान रूप से पाया जाता है। अण्डमान सागर के दक्षिणी भागो मे विक्षोभ अधिक जनित होते हैं। सामान्य मौसम उष्ण तथा आद्र रहता है। यह स्थिति साइक्लोन उत्पन्न होने के लिए उपयुक्त हैं। इस अवस्था मे प्रभावित क्षेत्र अत्यधिक तूफानी मौसम प्रणालियो से भर उठते हैं।

मई मे खाडी के उत्तरी तथा दक्षिणी दानो भागो मे वायुदाब सामान्यत घटता जाता है, उत्तर मे थोडा अधिक। अप्रेल मे जो पश्चिमी प्रवाह दक्षिणी खाडी मे उदित होता है वह मई मे उत्तरी अक्षाशो की ओर लगातार बढता जाता है। प्रवाह की तीव्रता भी कुछ बढकर (15 नाट) तक पहुँच जाती है। शीप खाडी मे प्रचलित दक्षिणी-पश्चिमी प्रवाह भी निम्न अक्षाशो की ओर स्थानान्तरित होने लगता है। फलत पूरे खाडी म पश्चिमी से दक्षिणी-पश्चिमी प्रवाह व्याप्त हो जाता है।

जून के दूसरे सप्ताह तक जब पश्चिमी घाट पर लगभग पूर्णत अरब सागर की मानसून धाराएं छा जाती हैं, बगाल की खाडी म भी मानसून सक्रिय हो उठता है। दक्षिण तथा दक्षिणी पूर्वी भाग मे मौसम अधिक विक्षोभित रहता है। मध्य भाग मे हवायें अपेक्षाकृत हल्की तथा उत्तरी भाग म तीव्रतर रहती है किन्तु 'नारवस्टर काल' को छोडकर शेष समय मौसम साफ ही रहता है। शीप खाडी मे मानसून अवदाबो का बनना आरम्भ हो जाता है, जिससे वहाँ मौसम विक्षोभित होता रहता है।

जुलाई और अगस्त मे अपरिवर्ती उत्तरी-पश्चिमी वायु धाराएं बहती हैं, जिनकी गति मानसून की सक्रियता और भग की स्थिति मे क्रमश तेज और धीमी होती रहती है।

ये स्थितियाँ एक-दूसरे के बाद आती रहती हैं। शीर्ष खाड़ी के पास अवदाब जनित होना जिनकी संख्या प्रतिमास 3–4 के बराबर है, इस मास के जलवायु की दूसरी विशेषता है।

सितम्बर में दक्षिणी खाड़ी की जलवायु में कोई परिवर्तन नहीं होता, किन्तु उत्तर में दाब थोड़ा बढ़ने लगता है, जिससे हवाएँ कुछ धीमी हो जाती हैं। जुलाई और अगस्त की अपेक्षा वायुगति में परिवर्तिता (variability) बढ़ जाती है। तापमान पूरे खाड़ी में लगभग 28°C के आस-पास रहता है, जो अण्डमान सागर में निम्नतम तथा कारोमण्डल तट पर अधिकतम पाया जाता है। 2 या 3 अवदाब 16° उ अक्षांश से ऊपर किन्तु अगस्त की स्थिति से कुछ नीचे बनते हैं।

अक्टूबर में पूरे देश के दाब प्रतिरूप में परिवर्तन होते हैं। दक्षिणी खाड़ी में दाब कुछ कम होता है, जिसके फलस्वरूप मध्य खाड़ी में एक क्षीण निम्नदाब या द्रोणिका आ जाती है। उत्तर पश्चिमी खाड़ी में उत्तरी पूर्वी हवायें स्थापित होने लगती हैं तथा मध्य खाड़ी में परिवर्ती हल्की हवायें पायी जाती हैं। दक्षिणी खाड़ी में दक्षिणी-पश्चिमी नम प्रवाह इस मास में भी विद्यमान रहता है, जिससे चक्रवात उत्पन्न होने की सुविधा दक्षिण खाड़ी में स्थानान्तरित हो जाती है। इस मास में खाड़ी में मौसम की प्रकृति भी अत्यन्त परिवर्ती पायी जाती है। साधारणतः स्वच्छ आकाश बीच-बीच में चक्रवातों के जनित होने के प्रचण्ड तूफानी मौसम तथा भारी वर्षा में बदल जाता है। दक्षिणी खाड़ी मेघाच्छन्नता प्राय अधिक रहती है।

दक्षिणी खाड़ी में बहती दक्षिणी-पश्चिमी धारायें नवम्बर में मन्द हो जाती हैं। उत्तरी खाड़ी में उत्तरी-पूर्वी हवायें अपरिवर्ती (steady) होने लगती हैं। चक्रवातों के उत्पत्ति क्षेत्र अक्टूबर की अपेक्षा दक्षिणी अक्षांशों में पाया जाता है, जिसके फलस्वरूप दक्षिणी खाड़ी में तूफान तथा वर्षा का मौसम होता है, जबकि उत्तरी खाड़ी में आसमान प्राय साफ पाया जाता है। उत्तरी खाड़ी में इस मास में तापमान 3-4°C गिर जाता है।

दिसम्बर तक निम्नदाब क्षेत्र दक्षिणी खाड़ी पर स्थापित हो जाता है तथा मध्य और उत्तरी खाड़ी में उत्तरी-पूर्वी प्रवाह तीव्रतर हो जाता है। धुर दक्षिणी खाड़ी में परिवर्ती हवाएँ पायी जाती हैं। दक्षिणी खाड़ी में इस मास भी चक्रवात जनित होते हैं, किन्तु उनकी संख्या बहुत कम पायी जाती है। तापमान और गिरता है—औसत तापमान शीर्ष खाड़ी में 20–21°C, मध्य खाड़ी में 24°C तथा दक्षिणी में 24–26°C के लगभग पाया जाता है।

14.90 राजस्थान का मरुस्थल

पश्चिमोत्तर भारत का शुष्क क्षेत्र, जहाँ वार्षिक वर्षा 50 सेमी से भी कम होती है पश्चिमी गुजरात पश्चिमी राजस्थान और दक्षिणी-पश्चिमी पंजाब के लगभग 2,14,000 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। राजकोट, अलवर और फिरोजपुर रेखा के पश्चिम में स्थित यह भारतीय क्षेत्र वास्तव में पृथ्वी के उस उत्तरी उष्ण कटिबन्धीय (north tropical 20–25 N) शुष्क पेटिका की पूर्वी सीमा है जो एटलांटिक के अफ्रीकी तट से आरम्भ होकर सहारा अरब, दक्षिणी फारस और बलूचिस्तान के अधिकांश क्षेत्रों को घेरती हुई पाकिस्तान और फिर भारत की भूमि में प्रवेश करती है। इन्हीं अक्षांश वृत्ता

में पडने वाले भूखण्ड मेक्सिको तथा उत्तरी-पश्चिमी सयुक्त राष्ट्र अमेरिका भी शुष्क क्षेत्र हैं। दरअसल इन सभी क्षेत्रों में, उप-उष्ण कटिबन्धीय स्थायिवत् उच्चदाब के प्रभाव के कारण हवाओं का अवतलन प्रवाह (subsidence) प्रचलित रहता है, जो इन क्षेत्रों के अधिक तापमान, कम वर्षा और निम्न आर्द्रता का स्पष्ट कारण है। दक्षिणी गोलार्द्ध के उप-उष्ण कटिबन्धीय उच्च दाब क्षेत्र में आने वाली, दक्षिणी अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका तथा मध्य आस्ट्रेलिया की भूमि भी इन्ही कारणों से प्राय शुष्क है।

भारतीय शुष्क क्षेत्र में राजस्थान का हिस्सा सर्वाधिक है, जो 1,81,062 वर्ग किमी में अरावली शृंखलाओं के पश्चिम के समूचे राज्य में विस्तृत है। धूलभरी प्रचण्ड हवाओं से युक्त तप्त गर्मियाँ, बहुत ठण्डी सर्दियाँ, निम्न आर्द्रता, अधिक दैनिक तापमान परिसर (range) तथा 100 से 350 मिमी की पश्चिम की ओर घटती हुई अनियत (erratic) वार्षिक वर्षा यहाँ के जलवायु की मुख्य विशेषतायें हैं।

यूँ तो शुष्क जलवायु तथा अनउवरक जमीन के कारण पश्चिमी राजस्थान के लोग विभिन्न रजवाडों के अधीन सदियों से विपन्नता और गरीबी में जीते रहे, परन्तु स्वाधीन भारत में इन अभाव ग्रस्त रियासतों के विलय के बाद इस समूचे क्षेत्र को सारे देश के साथ विकसित तथा प्रगतिशील बनाने की समस्या अब और अधिक व्यापक हो गयी है।

14 91 राजस्थान का शुष्क क्षेत्र मुख्यत दो भागों में बाँटा जा सकता है

(i) अर्द्ध रेगिस्तान—अरावली से पश्चिमी में यह क्षेत्र सागर तल से 460 मीटर की ऊँचाई से निरन्तर ढालुआँ होता गया है। पश्चिमी किनारे की औसत ऊँचाई 155 मीटर पाई गयी है। इस भाग में पाली, पूर्वी और उत्तरी-पश्चिमी जालौर, सिवाना तथा लूनी बेसिन का सम्पूर्ण क्षेत्र आता है, जहाँ वार्षिक वर्षा 300 से 500 मिमी तक रिकार्ड की जाती है। इस भाग में लूनी नदी के अतिरिक्त खारे पानी की कई छोटी-बडी झीलें हैं, जिनमे प्रमुख ये हैं

(क) साभर—इसके जल मे साधारण नमक तथा सोडियम सल्फेट की बाहुल्यता पायी जाती है।

(ख) डिडवाना—इसमें सोडियम सल्फेट की मात्रा अधिक है।

(ग) पचभद्रा—इसका जल मैगनेशियम सल्फेट से भरपूर है।

इन झीलों का खारापन समुद्र के जल से अधिक पाया गया है।

(ii) उष्ण रेगिस्तान-अर्द्ध रेगिस्तान के पश्चिम का सारा भू भाग, जो थार-मरुस्थल के नाम से विख्यात है उष्ण रेगिस्तान है जहाँ वार्षिक वर्षा 300 मिमी से भी कम है। इसमे जैसलमेर, बीकानेर, नागौर, गगानगर बाडमेर, पश्चिमी जोधपुर, दक्षिणी पश्चिमी जालौर तथा पश्चिमी चूरू की भूमि सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र की मिट्टी अत्यधिक लवण-युक्त है। रेतीली पहाडियो के कारण भूमि बहुत असमतल है। तेज हवाओं के कारण जगह-जगह रेत की पहाडियाँ तैयार हो जाती हैं, जो थोडी ही देर मे स्वत लुप्त हो जाया करती हैं।

उष्ण रेगिस्तान में राजस्थान के उपर्युक्त क्षेत्रों के अतिरिक्त बहावलपुर तथा सिंध का भी एक बड़ा हिस्सा सम्मिलित है। इस रेगिस्तान की पश्चिमी सीमा सिंध नदी है, जिसके पश्चिम में पुन सिंध और बलूचिस्तान की खारी झीलों वाली अर्द्ध रेगिस्तानी भूमि का सिलसिला शुरू हो जाता है।

सारे पश्चिमी राजस्थान पर अरावली शृंखलाओं तथा छिट पुट पहाड़ियों का प्रकीर्ण (Scatered) फैलाव पाया जाता है। कहीं कहीं इन पहाड़ियों की समुद्र तल से ऊँचाई 1000 मीटर से अधिक मिलती है।

14 92 राजस्थान की नदियाँ

वैसे तो राजस्थान में नदियों का जाल सा बिछा दीखता है, पर ऐसी एक भी नदी नहीं है जो वर्ष भर जीवित रहती हो। अधिकांश नदियाँ सिर्फ बरसात के मौसम में कुछ दिनों या अधिक से अधिक एक-दो महीनों के लिए प्रवाहित होती हैं और फिर सूख जाती हैं।

पूर्वी राजस्थान में, जमुना की सहायिकायें, चम्बल, गम्भीरी, बाणगंगा और मधा नदियाँ बहती हैं। राज्य के दक्षिण पश्चिम में माही, साबरमती, सरस्वती तथा बनास के अलावा राजस्थान की सबसे बड़ी नदी लूनी भी बहती है। ये सभी नदियाँ कच्छ के रन में होकर चलती हैं। लूनी अजमेर के पास की अरावली शृंखलाओं से निकल कर पहले पश्चिम में बाड़मेर की ओर और फिर दक्षिण-पश्चिम दिशा में रन से होती हुई अरब सागर में गिरती है। पश्चिमी राजस्थान की अन्य नदियों में नारा तथा सिन्धु का नाम भी लिया जा सकता है। उत्तर में घग्घर, नेवाल और रैना (सिंध में) नदियों का अब केवल नाम ही बाकी रह गया है, जिसमें पानी की जगह अब वर्ष भर रेत बहती है।

लूनी को छोड़कर अन्य कोई भी नदी सागर तक नहीं पहुंच पाती। रेगिस्तान में ही कहीं खो जाती हैं। इन सभी नदियों का प्रवाह उत्तर से दक्षिण या उत्तर पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर पाया जाता है।

जल अपवाह (run off) के लिये किसी निश्चित मार्ग तथा पर्याप्त वर्षा, दोनों का अभाव है। मानसून की वर्षा तालाबों, झीलों तथा बाँधों में जमा करके उन्हें स्थानीय उपयोग में लाया जाता है।

14 93 मिट्टी, वनस्पतियाँ और लोग (Soil, Vegetation and the people)

मिट्टी का निर्माण और प्रकार, जलवायु, धरातलीय और वानस्पतिक अवस्थाओं पर निर्भर करता है। राजस्थान के शुष्क भागों की मिट्टी तीव्र जीरोमार्फिक (xeromorphic) विशेषताओं से युक्त है, जिसमें ह्यूमस (humus) तत्त्व बहुत ही कम मात्रा में विद्यमान है। प्राकृतिक लवणों की पर्याप्त मात्रा यहां की मिट्टी में पाई जाती है, जो सम्भवत केशनली उठान (Capillary rise) प्रक्रिया द्वारा भू-गर्भीय खारे जल की देन है। अपरदन के कारण निरन्तर भूमि के ह्रास से काफी बड़े भाग में बंजरता का गुण स्वाभाविक रूप से आ गया है। फिर भी इस क्षेत्र के एक तिहाई से अधिक भूमि पर खेती की जाती है लगभग 23 5% भाग पर घास और झाड़ियाँ उगती हैं तथा 3 2% भूमि स्थायी चरागाह है। खेती तथा पशुपालन यहाँ के निवासियों की मुख्य जीविका है।

जलवायु की प्रतिकूलता के बावजूद थार रेगिस्तान मे कुछ प्रकार की वनस्पतियाँ पाई जाती हैं । फ्लोरा वनस्पतियो के समूह झुण्ड के झुण्ड थोडे थोडे अन्तर पर दिखाई देते हैं । इनमे एफीमेरल्स, घास, कटीली झाडियाँ, ड्वार्फ (dwarf) वृक्ष तथा स्क्रब के जंगल विशेष रूप से मिलते हैं ।

बाजरा, ज्वार, मोठ और मूंग यहाँ की मुख्य फसल है । कहीं-कहीं जहाँ भू गर्भीय जल-स्तर अपेक्षाकृत ऊँचा है, गेहूँ और सब्जियो की खेती भी कर ली जाती है । कृषि के अलावा लोग भेड, बकरी, गाय और ऊँट पालना पसन्द करते हैं तथा उन्हें झुण्ड के झुण्ड लेकर चरागाह और जल की तलाश मे फिरना ही उनकी जीविका है ।

निवासियो मे लगभग 98% हिन्दू हैं जिनमे अधिकांश शाकाहारी हैं । यह यहाँ के पशुधन की रक्षा के लिए बहुत अनुकूल है । कुछ जन-जातियाँ जैसे बन बावरिया, मीना, सासी आदि जिनके पास कृषि के लिए जमीन नहीं है, अधिकतर शिकार का पेशा अपनाती हैं, जिससे इस क्षेत्र की सीमित पशुधन की सुरक्षा के लिए बडा आघात पहुचता है । परिस्थितियो के फलस्वरूप यहाँ के निवासियो मे स्वाभाविक सहनशीलता विकसित रूप मे पायी जाती है ।

14.94 पश्चिमी राजस्थान रेगिस्तान कैसे और कब बना ?

राजस्थान के भू-गर्भ विज्ञान का इतिहास इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करता है कि अरावली के जन्म (हिमालय से बहुत पहले) से अब तक नम और शुष्क जलवायु के दौर इस क्षेत्र पर एक के बाद एक आते रहे हैं ।

भारत पर अब तक दो हिम-युग (ice ages) गुजरे हैं । एक का नाम पर्मोकार्बो-निफेरस है, जो लगभग 24 करोड वर्ष पहले आरम्भ हुआ । दूसरा, क्वाटरनरी कहलाता है, जो लगभग 10 लाख वर्ष से आरम्भ होकर अभी तक चल रहा है इन दोनो के संधिकाल मे लाखो वर्षो तक भारत उष्ण जलवायु के प्रभाव मे रहा । क्वाटरनरी युग मे अभी उत्तरी ग्लेशियर के सिकुडन और फलने की चार महत्वपूर्ण घटनाएँ हो चुकी हैं, जिनके कारण इतनी ही बार भारत को क्रमश शुष्क और नम जलवायु का अनुभव करना पडा है ।

क्वाटरनरी हिम युग से पूर्व सिन्ध, बिलोचिस्तान और पश्चिमी राजस्थान का कुछ भाग लाखो वर्ष सागर मे डूबा रहा । क्वाटरनरी युग के आते ही शुष्क जलवायु का दौर आरम्भ हुआ, उसके फलस्वरूप समुद्र पीछे हटा और ये भू-भाग प्रकाश मे आये ।

ऐसा अनुमान है कि वर्तमान हिमयुग मे राजस्थान के ऊपर अभी तक 4 नम जलवायु के दौर गुजर चुके हैं जिसमे दूसरा दौर जो सर्वाधिक तीव्रता का माना जाता है, लगभग 5 लाख वर्ष पहले समाप्त हुआ । यहाँ यह संकेत स्पष्ट है कि इस क्षेत्र के शुष्कावस्था का आरम्भ इसी समय मे मान लिया जाए । वैसे नम जलवायु का अन्तिम दौर कोई 20 000 वर्ष पूर्व बीत चुका है । इस समय के बाद निश्चित रूप से पश्चिमी राज-स्थान की मिट्टी का शनै शनै ह्रास होता गया, पृथ्वी का जल-स्तर गिरता गया और शुष्कता की मात्रा उत्तरोत्तर बढती गई । महाभारत मे इस प्रदेश मे मरुभूमि का उल्लेख मिलता है ।

यह भी कहा जा सकता है कि 3000–4000 वर्ष पूर्व सिंधु घाटी मे जो सभ्यता पनपी थी–उसने बरतन, ईंटें नालियाँ, धातुएँ आदि आदि तयार करने मे ईंधन के रूप मे

वनों और वनस्पतियों को जिस प्रकार नष्ट किया होगा, उससे राजस्थान की शुष्कता बढ़ने में और मदद मिली।

एक कारण और भी सम्भव है।

नदियाँ, जमीन के नीचे जल स्तर को बनाये रखने के लिए निरंतर गुराव दती रहती हैं। भू-गर्भीय जल भण्डार भी स्रोतों के रूप में नदियों का इनमा प्रतिशत दता रहता है। यदि किसी कारणवश किसी क्षेत्र की नदियाँ सूख जायें या दिशा बदल कर दूर हो जाएँ तो यहाँ के भू गर्भीय जल भण्डार का स्रोत समाप्त हो जायेगा और जल स्तर नीचे गिरने लगेगा। कुछ समय पश्चात् जल वनस्पतियों की पहुँच-सीमा के नीचे चला जायेगा, जिससे वनस्पति विहीन भूमि सूर्य किरणों तथा वायु वेग के सीधे आघात के कारण निरंतर अपरक्षित और क्षीण होती जायगी।

राजस्थान की नदियों का इतिहास कुछ इसी तरह का है। कहते हैं कि सिन्धु और सतलज नदियाँ कभी उस भाग से बहती थी, जहाँ आज चम्बल और उसकी सहायिकाएँ स्थित हैं। ये दोनों नदियाँ पश्चिम की ओर लगातार अपना प्रवाह बदलती गयी। जब सतलज और सिन्धु वतमान घग्घर और नारा से होकर बहती थी (जिसका लगभग 4 किमी चौड़ा पाट अभी भी स्पष्ट है) तो बीकानेर, जैसलमेर, बहावलपुर आदि क्षेत्र काफी उपजाऊ और समृद्ध थे। फिर इन नदियों के और पश्चिम की ओर हटने के बाद ये क्षेत्र तेजी से रेगिस्तानी अवस्था को प्राप्त होते गये।

जैसलमेर और बाड़मेर म इस समय लगभग 50% कुएँ एसे मिलेंगे, जिनम जल स्तर की गहराई 40 मीटर से अधिक है। लगभग 10% कुएँ 80 मीटर स ज्यादा गहरे हैं तथा कुछ कुओं मे तो पानी 120 से 130 मीटर की गहराई म मिलता है।

अनेक प्रमाण इस बात के लिये प्रस्तुत किये गये हैं कि उत्तरी पश्चिमी भारत, राजस्थान, पाकिस्तान और बलूचिस्तान के प्रदेश ईसा से कोई 4,000 वष पहल हरे भरे क्षेत्र थे। 2700 वष ईसा पूव मोहन जोदड़ो की सभ्यता विकसित हुई थी। श्री बी सी उम्बार (1933) ने ईसा से 2750–2500 वष पूर्व सिन्धु नदी म आयी बाढ़ का जिक्र किया है।

ईसा से कोई 1000 वष पूव जब हिमालय अच्छी तरह विकसित हुआ और जल की असीम मात्रा ग्लेशियर के रूप मे हिमशिखरों पर सिमट आई तो अनेक नदियों के सूखने या प्रवाह बदल देने से मध्य एशिया के अनेक क्षेत्र व्यापक रूप से शुष्क हो गये। हिमालय का विकास, वैसे जलवायु के दृष्टिकोण से उत्तर भारत के लिये बहुत अनुकूल तथा महत्त्वपूर्ण है ,जो गर्मियो मे मानसून धाराओं को अन्यत्र जाने से रोककर उत्तर-पश्चिम की ओर देशान्तरित कर देता है। तथा सर्दियो म बहुत ठण्डी ध्रुवीय हवाओं को आने से रोक देता है। हिमालय की वृद्धि के साथ अरावली का ह्रास होता गया, जिससे नम हवाओं का मार्ग कुछ इस तरह परिवर्तित हो गया कि पश्चिमी राजस्थान अनुवर्ती दिशा मे पडकर वर्षा से वंचित रह गया और उच्च वाष्पीकरण वाष्पोत्सर्जन के कारण मिट्टी अपनी नमी तथा ह्यूमिक तत्त्व खोती गयी।

□□□

सारणी (14 3)

तापमान के जलवायुविक आँकड़े

स्थान		अक्षांश	देशान्तर	माध्य समुद्र तल से ऊँचाई (मीटर)	तापमान (°C)								
					औसत उच्चतम					औसत निम्नतम			
					जनवरी	अप्रैल	मई	जुलाई	अक्टूबर	जनवरी	अप्रैल	जुलाई	अक्टूबर
अरुणाचल	1 डिगबोई*	27° 23′	95° 37′	152	22 0	29 0	29 3	31 3	29 1	11 0	18 8	24 1	20 3
	2 उत्तरी लखीमपुर	37 14	94 07	102	23 0	29 0	29 0	31 0	29 1	9 1	21 1	25 1	20 0
नागालैंड	1 कोहिमा	23 38	94 10	1406	15 0	24 8	25 0	24 0	21 8	9 0	16 6	19 0	16 1
मेघालय	1 शिलांग	25 34	91 53	1598	15 5	23 8	23 7	24 1	21 8	3 6	14 1	18 1	12 9
	2 तुरा	25 31	90 14	370	23 5	32 5	31 0	28 9	28 9	12 3	22 1	23 2	20 3
मणीपुर	1 इम्फाल	24 46	93 54	781	21 0	29 0	29 0	28 3	27 3	4 0	15 8	22 0	16 5
मिजोरम	1 आइजल	23 44	92 43	1097	20 1	26 5	26 1	25 1	24 5	11 3	17 4	19 0	18 0
त्रिपुरा	1 अगरतल्ला	23 53	91 15	16	26 0	35 0	33 3	31 0	30 6	10 3	22 8	25 0	21 5

*डिग्बोई और उत्तरी लखीमपुर आसाम के मैदानी जिले हैं, जो अरुणाचल प्रदेश की सीमा के समीप स्थित हैं।

सारणी (14 3) *Contd*

असम	1 गौहाटी	26° 05′	91° 43′	54	23 4	31 9	31 1	31 7	30 1	9 8	20 1	25 7	22 1
	2 डिब्रूगढ़	27 28	94 55	106	22 5	28 2	29 2	30 7	29 5	10 2	19 2	24 5	21 0
प बंगाल	1 कलकत्ता	22 32	88 20	6	26 8	36 3	35 8	32 0	31 8	13 6	25 0	26 3	23 9
	2 जलपाईगुड़ी	26 32	88 43	83	23 4	31 6	30 9	30 6	30 0	10 8	20 4	25 0	21 7
बिहार	1 पटना	20 28	85 06	60	23 6	37 6	38 9	32 9	31 9	11 0	23 3	26 7	23 0
	2 गया	19 48	84 57	116	24 2	39 0	41 3	33 5	31 8	10 1	23 0	26 3	21 7
उड़ीसा	1 कटक	20 28	85 56	27	28 9	38 3	38 8	31 6	32 0	15 7	25 3	25 6	23 7
	2 पुरी	19 48	85 49	6	26 9	30 7	31 6	30 6	31 2	17 9	26 6	26 7	25 0
उत्तर प्रदेश	1 गोरखपुर	26 45	83 25	74	23 0	37 4	39 0	32 8	32 2	9 9	22 4	26 4	21 5
	2 इलाहाबाद	25 27	81 44	98	23 7	38 8	42 1	33 6	32 6	9 1	22 5	26 6	20 4
	3 लखनऊ	26 52	80 56	111	23 3	38 3	41 2	33 6	32 8	8 9	21 8	26 6	19 8
	4 बरेली	28 22	79 24	172	22 0	37 0	40 5	33 8	32 3	8 6	21 1	26 2	19 5
हिमाचल प्रदेश	1 शिमला	31 06	77 10	2202	8 5	19 2	23 4	21 0	17 9	1 9	11 2	-15 6	10 8
जम्मू कश्मीर	1 श्रीनगर	34 05	74 50	1587	4 4	19 3	24 6	30 8	22 6	−2 3	7 4	18 4	-5 7
	2 लेह	34 09	77 34	3514	−2 8	12 4	17 1	24 7	14 2	−14 0	−1 2	10 2	−0 9

सारणी (14 3) Contd

पंजाब	1	अमृतसर	31° 38′	75° 52′	234	18 6	34 2	38 9	35 6	31 9	4 5	16 2	25 9	16 6
हरियाणा	1	अम्बाला	30 23	76 46	278	20 8	36 2	40 8	35 2	33 2	6 8	19 7	26 0	16 4
दिल्ली	1	नई दिल्ली	28 35	77 12	216	21 3	36 2	40 5	35 3	33 1	7 3	21 0	27 2	18 7
राजस्थान	1	जोधपुर	26 18	73 01	217	24 6	38 3	41 6	35 7	35 7	9 5	22 4	26 8	19 6
	2	जयपुर	26 49	78 48	390	22 0	36 5	40 6	34 1	33 2	8	21 0	25 6	18 3
गुजरात	1	अहमदाबाद	23 04	72 38	55	28 7	39 7	40 7	33 2	35 6	11 9	23 0	25 7	21 2
मध्य प्रदेश	1	भोपाल	23 17	77 21	523	25 7	37 8	40 7	29 9	31 3	10 4	21 2	23 2	18 0
	2	जबलपुर	23 10	79 57	393	26 1	38 5	41 9	30 3	31 4	9 8	20 5	23 9	18 4
	3	रायपुर	22 14	81 39	298	27 7	39 2	42 3	30 3	1 2	13 5	25 1	24 1	21 5
आन्ध्र प्रदेश	1	हैदराबाद	17 27	78 28	545	28 6	36 9	38 7	29 8	30 3	14 6	23 7	22 3	19 8
	2	विशाखापट्टनम	17 43	83 14	3	27 7	32 8	34 0	31 7	30 9	17 5	25 9	26 0	24 5
महाराष्ट्र	1	बम्बई	18 54	72 49	11	29 1	32 3	33 3	29 8	29 8	19 4	25 1	25 1	24 6
	2	नागपुर	21 06	79 03	310	28 6	39 7	42 8	31 2	31 9	12 7	23 9	24 0	20 0

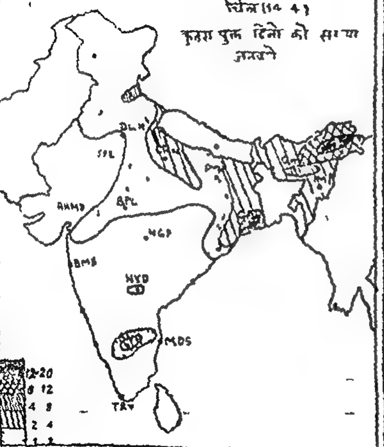
सारणी (14 3) Contd

कर्नाटक	1 बंगलोर	12° 57′	77° 38′	897	26 9	33 4	32 7	27 2	27 5	15 0	21 2	19 2	18 9
केरल	1 त्रिवेन्द्रम	08 29	76 57	64	31 3	32 4	31 6	29 1	29 9	22 3	25 1	23 2	23 4
तमिलनाडु	1 मद्रास	13 04	80 15	6	28 8	94 9	37 6	35 2	31 8	20 3	26 0	26 3	24 4
	2 सलेम	11 39	78 10	278	31 1	36 9	36 8	33 4	31 9	19 2	25 1	23 6	22 8
द्वीप	1. अमीनी देवी	11 07	72 44	6	31 4	33 0	32,6	29 3	30 4	23 9	27 1	25 4	25 2
	2 पोर्ट ब्लेयर	11 40	92 43	79	29 2	31 9	30 9	28 9	29 0	22 7	24 2	24 1	23 6

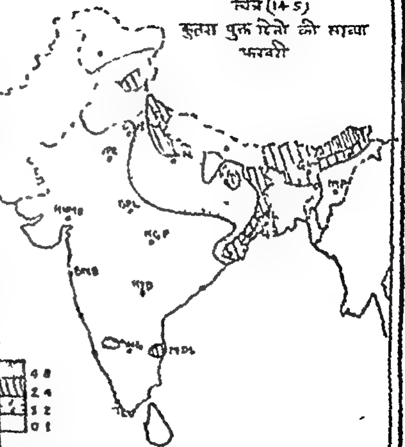
सारणी (144)

आद्रता एव वर्षा के जलवायुविक आंकड़े

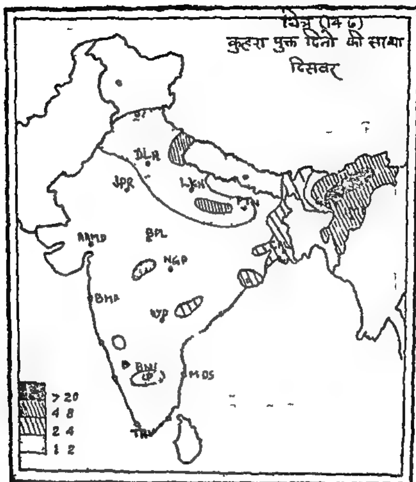
स्टेशन			आपेक्षिक आद्रता								वर्षा (मिलीमीटर)/वर्षा युक्त दिनो की सख्या			
			0830 घडी भारत मानक समय				1790 घडी भारतीय मानक समय							
			ज	[illegible]	जु	अ	ज	अ	जु	अ	ज –फ	मा –अ –मई	जू –जु –अ –सि	अ –न –दि
अरुणाचल	1	डिगबोई	88	81	87	86	73	67	77	79	106 6/–	672 5/–	1576 4/–	202 1/–
	2	उत्तरी लखीमपुर	83	77	90	81	82	76	82	87	93 3/(9 3)	786 4/(36 6)	2219 2/(74 1)	288 9/(13 3)
नागालैंड	1	कोहिमा	66	63	89	80	82	62	92	89	47 2/(4 8)	336 3/(28 9)	1375 7/(76 9)	162 8/(12 4)
मेघालय	1	शिलाग	65	51	81	71	83	62	83	89	43 2/(7 9)	497 9/(46 1)	1479 6/(74 7)	232 6/(12 6)
	2	तुरा	75	70	90	85	66	60	87	82	23 7/(5 2)	597 7/(20 4)	2406 8/(80 0)	266 0/(10 3)
मणिपुर	1	इम्फाल	75	64	81	80	60	63	78	77	48 4/(4 9)	373 2/(25 9)	855 1/(59 2)	147 7/(3 6)
मिजोरम	1	ऐजल	67	68	91	86	62	65	94	91	46 5/(3 6)	604 9/(27 4)	1448 6/(80 4)	196 8/(12 9)
त्रिपुरा	1	अगरतला	78	72	86	81	59	60	60	81	45 8/(2 6)	508 8/(22 3)	1456 7/(63 5)	226 8/(8 5)



चित्र (14.4)
कुहरा युक्त दिनों की संख्या
जनवरी

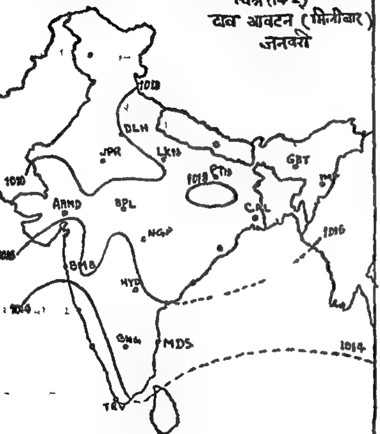


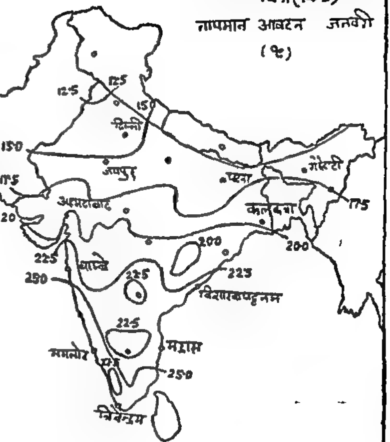
चित्र (14.5)
कुहरा युक्त दिनों की संख्या
फरवरी


चित्र (14 ब)
कुहरा युक्त दिनों की संख्या
दिसवर
DLH
JPR
LKN
PTN
AHMD
BPL
NGP
BMB
MDS
TRV
> 20
4 8
2 4
1 2

सारणी (14 4) Contd

कर्नाटक	1 बगलोर	77	70	86	83	40	34	68	64	16 0/(1 2)	162 6/(10 2)	482 5/(32 4)	227 8/(13 9)
केरल	1 त्रिवेंद्रम	77	81	89	87	63	73	81	80	43 7/(3 3)	352 1/(14 6)	862 8/(53 6)	553 5/(26 7)
तमिलनाडु	1 मद्रास	83	72	65	81	67	68	61	76	58 0/(2 9)	68 6/(2 9)	363 7/(25 6)	795 3/(26 8)
	2 सलेम	73	70	78	80	43	41	56	62	18 6/(1 5)	170 2/(11 0)	479 0/(30 6)	287 4/(18 0)
द्वीप	1 अमीनीदेवी	74	73	85	80	—	—	—	—	22 6/(1 6)	154 9/(1 9)	1059 4/(56 3)	267 6/(15 6)
	2 पोट ब्लेयर	70	70	84	81	77	77	88	89	85 6/(3 9)	446 8/(21 6)	1830 1/(80 1)	767 1/(34 8)


चित्र (14.2)
दाब आवटन (मिलीबार)
जनवरी
1018
1020
1016
1014
DLH
JPR
LKN
GBT
AHMD
BPL
NGP
CAL
BMB
HYD
MDS
TRV

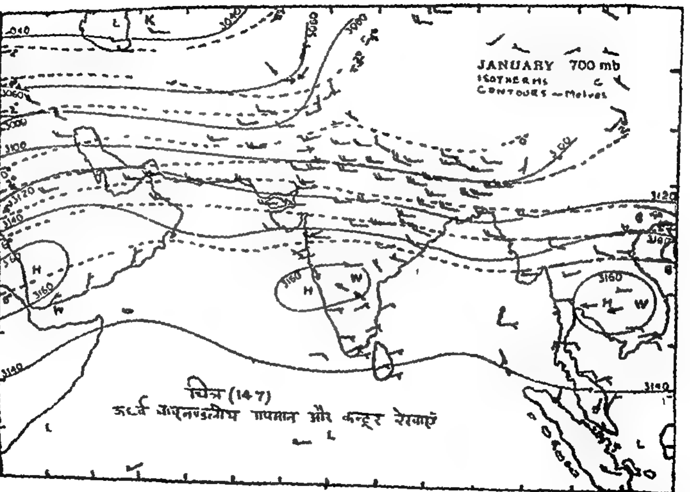

चित्र (14.3)
तापमान आवटन जनवरी
(°F)
12.5
15.0
17.5
20
20.0
22.5
25.0
दिल्ली
जयपुर
पटना
गोहाटी
अहमदाबाद
कलकत्ता
विशाखपट्नम
मद्रास
मंगलोर
त्रिवेन्द्रम

सारणी (14 4) Contd

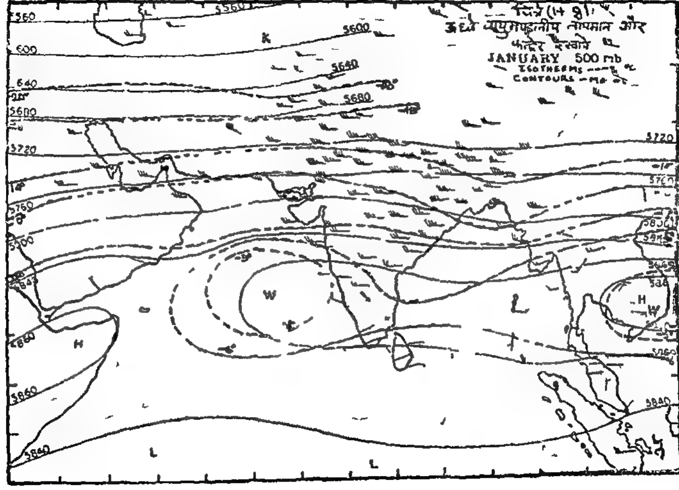
असम	1 गौहाटी	88	72	85	84	67	57	79	77	35 6/(3 3)	455 4/(28 1)	1050 4/(52 5)	92 8/(6 0)
	2 डिब्रूगढ़	87	75	88	81	78	73	82	83	106 8/(9 7)	748 0/(37 8)	1729 8/(74 9)	257 4/(12 5)
पश्चिमी बंगाल	1 कलकत्ता	78	71	84	70	56	56	82	77	39 8/(2 7)	218 4/(12 2)	1208 0/(60 8)	158 6/(8 0)
	2 जलपाइगुड़ी	87	68	88	82	59	50	81	71	29 9/(2 1)	449 4/(21 9)	2677 2/(89 4)	168 6/(7 1)
बिहार	1 पटना	71	41	8	70	53	24	75	62	37 6/(3 3)	39 5/(3 7)	967 2/(48 7)	68 5/(3 9)
	2 गया	69	31	79	72	17	17	72	61	43 7/(3 5)	32 8/(3 6)	949 7/(48 7)	60 7/(4 2)
उड़ीसा	1 कटक	80	71	83	79	48	50	81	72	38 9/(1 6)	132 3/(8 4)	1174 1/(56 2)	194 0/(8 2)
	2 पुरी	73	80	83	77	68	85	85	75	34 8/(2 0)	90 4/(5 1)	964 4/(45 1)	28 3/(10 6)
उत्तर प्रदेश	1 गोरखपुर	80	43	83	74	57	26	76	61	132 3/(3 4)	60 9/(3 3)	1496 8/(46 7)	69 3/(3 0)
	2 इलाहाबाद	79	30	80	69	53	15	71	52	140 2/(2 6)	33 8/(2 3)	687 9/(41 4)	50 5/(3 4)
	3 लखनऊ	82	39	82	72	55	23	76	60	38 1/(3 4)	32 7/(2 8)	896 6/(40 1)	47 0/(2 5)
	4 बरेली	81	37	81	71	54	21	71	52	52 1/(3 8)	36 0/(3 4)	917 4/(36 7)	48 0/(2 3)
हिमाचल प्रदेश	1 त्रिपुरा	48	32	86	47	62	37	88	49	134 9/(10 5)	169 4/(14 7)	1166 7/(59 3)	71 2/(5 5)
जम्मू व काश्मीर	1 श्रीनगर	88	77	73	82	70	53	49	51	144 1/(12 5)	244 1/(20 9)	193 0/(16 9)	77 7/(6 7)
	2 लेह	61	50	49	45	51	32	34	28	18 5/(2 1)	20 3/(2 5)	43 1/(5 2)	10 7/(1 2)

सारणी (14 4) Contd

पंजाब	1 अमृतसर	92	48	75	74	61	23	57	45	53 0/(4 7)	43 7/(5 2)	489 4/(20 7)	63 2/(2 3)
हरियाणा	1 अम्बाला	79	41	78	68	52	22	63	41	87 8/(5 8)	59 7/(5 1)	679 0/(29 7)	43 7/(2 8)
नई दिल्ली		72	32	73	54	41	16	60	35	44 4/(3 5)	32 3/(3 5)	558 6/(22 8)	24 8/(1 8)
राजस्थान	1 जोधपुर	50	31	75	49	27	15	54	24	11 2/(1 0)	15 8/(1 7)	327 6/(16 4)	11 4/(0 9)
	2 जयपुर	60	29	75	51	35	18	62	32	20 8/(1 9)	25 4/(2 8)	527 6/(27 9)	24 1/(1 7)
गुजरात	1 अहमदाबाद	55	49	86	64	28	18	68	35	3 5/(0 3)	13 0/(1 1)	751 8/(34 1)	14 5/(1 2)
मध्य प्रदेश	1 भोपाल	60	25	86	62	35	14	72	41	22 3/(2 4)	22 7/(2 2)	1156 6/(48 5)	58 6/(3 4)
	2 जबलपुर	74	30	85	73	43	18	79	52	48 8/(4 1)	39 9/(3 8)	1268 3/(53 4)	73 7/(4 1)
	3 रायपुर	52	36	85	73	39	21	78	60	40 6/(3 1)	54 8/(5 2)	1192 6/(45 2)	70 9/(4 5)
आंध्र प्रदेश	1 हैदराबाद	79	51	83	73	36	31	69	58	17 3/(1 4)	68 8/(5 1)	572 8/(36 8)	101 9/(15 6)
	2 विशाखापट्टनम	77	73	84	78	78	80	82	79	32 0/(1 7)	78 0/(4 3)	502 1/(31 1)	342 2/(12 9)
महाराष्ट्र	1 बम्बई	71	73	85	80	63	66	85	74	6 1/(0 4)	21 3/(1 0)	1693 1/(67 2)	84 3/(4 1)
	2 नागपुर	65	37	83	71	38	23	72	54	34 8/(2 7)	53 9/(5 2)	1059 2/(49 9)	84 3/(5 0)



चित्र (14.7)
ऊर्ध्व अयनमण्डलीय तापमान और कन्टूर रेखाएं



चित्र 14.9, ऊर्ध्व वायुमण्डलीय तापमान और पवन रेखायें

चित्र (14.9)

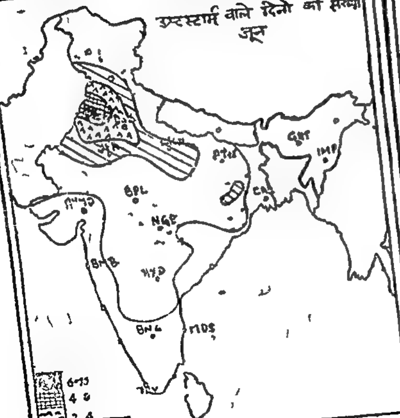
JANUARY 200 mb

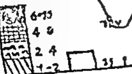
ISOTHERMS °C

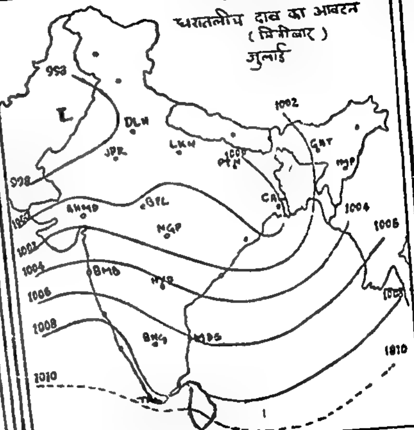
CONTOURS – Metres

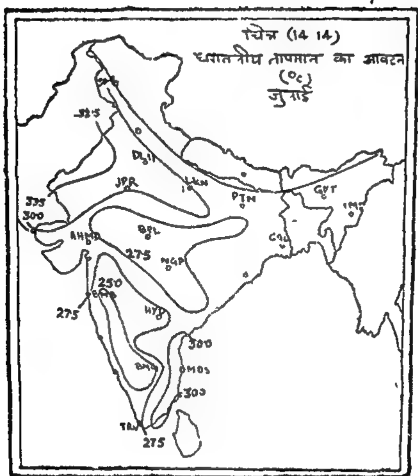
चित्र (14.10)
डस्टस्टार्म वाले दिनों की संख्या
अप्रैल

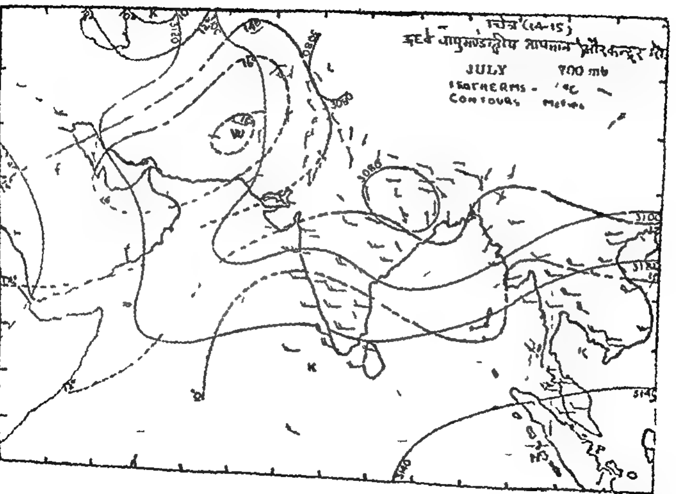
चित्र (14.11)
डस्टस्टार्म वाले दिनों की संख्या
मई


चित्र (14.12)
उपरस्टार्म वाले दिनों की संख्या
जून
GAT
IMP
CAL
BPL
NGP
BMB
HYD
BNG
MDS
TRV


6-13
4 6
2 4
1-2


चित्र (14.13)
धरातलीय दाब का अवटन
(मिलीबार)
जुलाई
998
998
1002
1002
1004
1006
1008
1010
1004
1006
1010
1010
DLH
JPR
LKN
GAT
IMP
CAL
AHMD
BPL
NGP
BMB
HYD
BNG
MDS
L


चित्र (14 14)
धरातलीय तापमान का आवरन
(°c)
जुलाई
DLH
JPR
LKN
PTN
CAL
BPL
NGP
AHMD
HYD
MDS
30.0
275
250
275
30.0
275


चित्र (14-15)
JULY
700 mb
ISOTHERMS
CONTOURS

चित्र (14.16)

JULY

500 mb

ISOTHERMS °C

CONTOURS

5860

5880

H

5880

W

K

5860

W

5820

L

5840

5900

W

H

5860

K

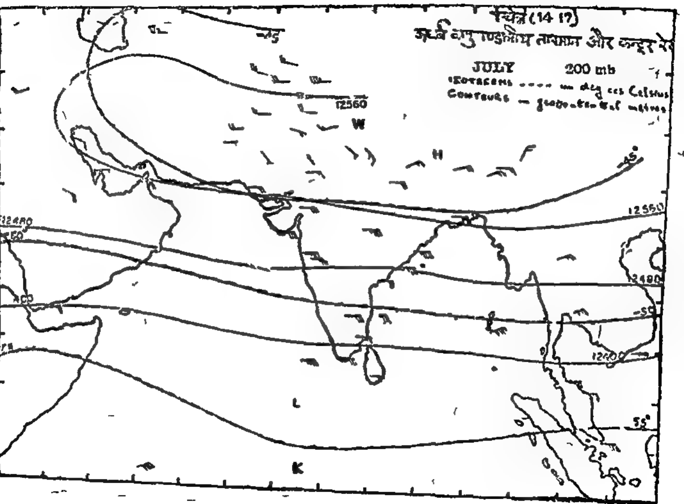
K

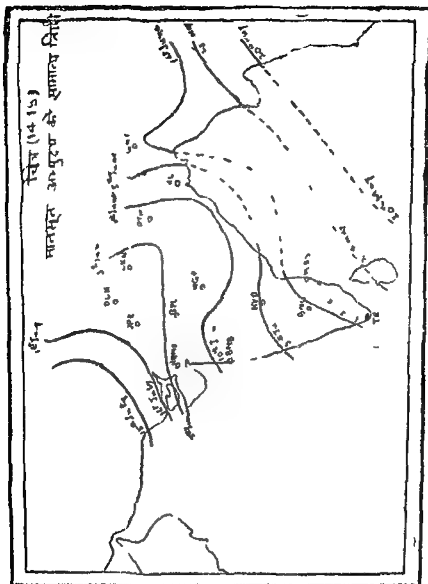
5840

L

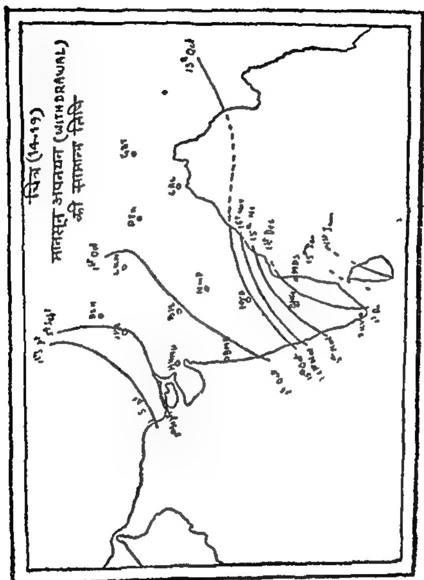
5840

5860


चित्र (14.17)
JULY
200 mb
12560
W
H
12550
12490
12400
K
L
55°



चित्र (14.15)
मानसून अनुगमन के सामान्य तिथि



चित्र (14.19) मानसून अपनयन (WITHDRAWAL) की सामान्य तिथि

चित्र (14.20) वार्षिक वर्षा (सेण्टीमीटर)

वर्षा के दिनों की संख्या चित्र (14.21)

चित्र (14.22)
पन्दरस्टार्म के दिनो की संख्या
जून

> 12
8 12
4 8
2 4

HYD
MDS
TRV

चित्र (14.23)
पन्दरस्टार्म के दिनो की संख्या
सितंबर

> 12
8 12
4 8
2 4

MDS

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

Popular

1	Battan, Louis J	Cloud Physics and Cloud seeding (Anchor Book N Y)
2	Battan, Louis J	The nature of violent storms (Anchor Books N Y)
3	Bolton J	The Wind and the Weather past present and future (Thomas Y Crowell N Y)
4	Das P K	Monsoons (Book Trust of India)
5	Humphreys W J	Weather Proverbs and Paradoxes (Williams and Wilkins Baltimore)
6	Inwards R	Weather Lore (London Rider 1050)
7	Lehr Paul E R Will Burnett and Herbert S Zim	Weather, Air Masses, Clouds, Storms Weather Maps Climate (Simon & Schuster N Y)
8	Time Life Series	Weather

Elementary Texts

1	Best A C	Physics in Meteorology (Pitman N Y)
2	Hess S L	Introduction to Theoretical Meteorologp (Holt 1959 N Y)
3	H M S O	Handbook of Aviation Meteorology
4	Humphereys W J	Physics of the Air (Mc Graw Hill
5	Neuberger H	Introducion to Physical Meteorology
6	Panofsky Hans	Introduction to Dynamic Meteorology (University Park Pa U S A)

7	Petterssen S	Introduction to Meteorology (Mc Graw Hill N Y)
8	Taylor G F	Elementary Meteorology (Prentice—Hall N Y)
9	Willet H C	Descriptive Meteorology (Academic Press)

Advance Text

1	American Meteorological Society (Boston) 1951	Compendium of Meteorology Ed T F Malone
2	Books C E P and N Carruthers	Handbook of Statistical Methods in Meteorology (B I S)
3	Brunt D	Physical and Dynamical Meteorology (Cambridge Univ Press)
4	Berry (Jr) F A Bollay F and Beers N R	Handbook of Meteorology
5	Byers H R	General Meteorology (Mc Graw Hill)
6	Godske C L Bergeron T, Bjerknes J and Bundgard R C	Dynamic Meteorology and Physical Meterology (Mc Graw Hill N Y)
7	Haurwitz B	Dynamic Meteorology (Mc Graw Hill)
8	Mitra S K	The Upper Atmosphere Royal Society of Asia Calcutta
9	Panofsky, Hans and Glenn W Bier	Some applications of Statistics to Meteorology (University Park Pa (U S A)
10	Petterssen S	Weather Analysis and Forecasting Vol I and II (Mc Graw Hill)
11	Richardson L F	Weather Prediction by Numerical Process (Cambridge Univ Press (1922)
12	Riehl H	Tropical Meteorology (Mc Graw Hill, 1954)
13	Garbell M A	Tropical and Equatorial Meteorology (Pitman N Y)

14	Saucier N J,	Principles of Meteorological Analysis (Chicago University Press)
15	Sutton O G	Micrometeorology A Study of Physical Processes in the Lowest Layers of Earth's Atmosphere (Mc Graw Hill)
16	Thompson P D	Numerical weather Analysis and Prediction (Macmillan & Co N Y)
17	U S Weather Bureau Washington D C	The Thunderstorm

Special Subjects

1	Battan Louis J	Radar Meteorology (Chicago Univ Press)
2	Fletcher N H	The Physics of Rain Clouds (Cambridge Univ Press)
3	George J J	Weather Forecasting for Aeronautics (Academic Press N Y)

Climatology

1	Books C E P	Climate through the Ages (London Ben)
2	Chatterji S B	Climatology of India (University of Calcutta, Calcutta)
3	Conrad V	Methods in Climatology (Cambridge Mass U S A)
4	Critchfield H S	General Climatology (Prentice Hall)
5	Geiger R	The Climate near the Ground (Cambridge Mass N Y)
6	Haurwitz and Austen	Climatology (Mc Graw Hill N Y)
7	Kendrew W G	The Climate of Continents (Oxford University Press)
8	Landsberge H	Physical Climatology (Gray Printing Co Dubois Pa U S A)

9 Spate O H K — Geograyphy of India and Pakistan (Methuen & Co Lon)

10 Trewartha Glenn T — Introduction to Weather and Climate (Mc Graw Hill N Y)

Hand Book and Work Books

1 American Met Society — Glossary of Meteorology

2 H M S O — Meteorological Glossary

3 India Meteorological Department — Hand book for Meteorological Observers

4 Met off ce London — Observer's Hand book

5 World Meteorological Organisation Geneva Switzerland — International cloud Atlas vol I and II Bbridged Atlas, 1956

6 I Met D — Tracks of storms and Depression 1877–1960 (Addendum to above) 1961–1970

7 I Met D — Climatological Atlas of India (Abridged 1971)

8 I MET D — Analysis of Monthly Mean Resultant Winds for standard Pressure levels

Periodicals (Only those published in English)

Great Britain

1 Meteorological Magazine (Monthly) British Met Office B I S

2 Quarterly Journal of the Royal Meteorological Society R M S 49 Cromwell Rd Lon S W 7

3 Weatler Monthly R M S 49 Cromwell Rd London S W 7

India

1 Indian Journal of Meteorology and Geophysics Quarterly Editor Lodi Rd New Delhi 3

2 Vayu Mandal Quarterly India Meteorological Society Editor Lodi Road, New Delhi- 3

Sweden

1 Tellus Quarterly Swedish Geophysical Society
Lindhagensgaten 124, Stockholm

U S A

1 Bulletin of the American Meteorological Society Monthly A M S
45 Beacon st Boston 8 Mass

2 Journal Applied Meteorology (Bimonthly) A M S 45 Beacon St
Boston 8 Mass

3 Journal of Atmospheric Sciences
A M S 45 Beacon St Boston 8 mass

4 Weatherwise Bimonthly American Met Society 45 Beacon St
8 Boston Mass

W M O Publications

W M O Technical Notes publications, pamphlets published from time to time

Latest Publications

Anthes Richard A and Others — The Atmosphere 2nd edition Published by Charles E Merral

Hodges I — Environmental Pollution
Holt Rinehart and Winston N Y

Lowry W D — Weather & Life Introduction to Biometeorology Coravatis Oregan



पारिभाषिक शब्दावली

A

Absolute Humidity	निरपेक्ष आर्द्रता	50
Absolute Instability	निरपेक्ष अस्थायित्व	67
Absolute Scale	निरपेक्ष, ताप का परम मापक्रम	42
Absolute Stability	निरपेक्ष स्थायित्व	66
Adiabatic Lapse Rate (Dry)	शुष्क रुद्धोष्म ह्रास दर	62
Adiabatic Lapse Rate (Sat.)	संतृप्त रुद्धोष्म ह्रास दर	62
Adiabatic Process	रुद्धोष्म प्रक्रिया (प्रक्रम)	62
Adiabatic Process (Pseudo)	छद्म रुद्धोष्म प्रक्रिया	63
Aerosol	वायुविलय	78
Ageostrophic Wind	अभूव्यावर्ती हवा	114
Air Mass	वायु राशि	186
Air Mass (Classification)	वायु राशि वर्गीकरण	186
Air Mass (Continental)	वायु राशि उष्ण कटिबन्धी	186
Air Mass (Life)	वायु राशि (जीवन)	186
Air (Oceanic)	महासागरीय कटिबन्धीय वायु राशि	186
Air Pollution	वायु प्रदूषण	11
Airy's Rule	एयरी नियम	21
Aitken nuclei	एटकन केन्द्रक	78
Albedo	धवलता	32
Alidade	एलिडेड, दर्शरेखक	149
Altimeter	तुंगता मापी	22
Altocumulus	मध्य कपासी	85, 190
Altostratus	मध्य स्तरी	85, 190
Anabatic	आरोही हवा	128
Analogue Method	विधि	270
Anemograph	लेखी	165
Anemometer		159
Anticyclone		[illegible]
Aphelion		

Arctic Region (Air Mass)	उत्तर-ध्रुव क्षेत्र (वायु राशि)	183, 184
Arid	शुष्क	333
Artificial Rainfall	कृत्रिम वर्षा	103
Atmosphere	वायु मण्डल	3
Atmosphere-height Constituents	वायु मण्डल के अवयव	5
Atmosphere-Pressure	वायु मण्डल की ऊँचाई	13
Atmosphere-Pressure measurement	वायु दाब (वायु मण्डल)	14
Atmosphere Structure	वायु दाब का माप	14, 158
Unit	इकाई	14
Auto-Convective Currents	स्वय सवाहनिक धाराएँ	154
Aurora	सुमेर ज्योति, ध्रुवीय ज्योति	10

B

Bar	बार	15
Baroclinicity	बैरोक्लिनिसिटि	263
Barogram	बैरोग्राम, वायुदाब-आलेख	15
Barograph	बैरोग्राफ, वायुदाब लेखी	165
Barometer Aneroid	निर्द्रव दाबमापी	14
Barometer-Fortin	वायुदाब मापी फोटन	15
Barometer Kew	क्यू वायु दाब मापी	15
Beaufort Scale	बोफोर्ट पैमाना	160
Bergeron's Theory	बर्जेरान का सिद्धान्त	88
Black Body Radiation	कृष्णिका विकिरण	35
Blizzard	ब्लिजड	131
Bora	बोरा हवा	131
Bowen's Ratio	बॉवेन अनुपात	55
Brownian Movement	ब्राउनियन गति	78
Buys Ballot s Law	बायज बैलट का नियम	119

C

Cap Cloud	छत्रक मेघ	133
Carburrettor Ice	कारबुरेटर हिम	101
Castellanus	कैस्टलेनस/(दुर्गिय मेघ)	149

Convergence	अभिसरण	137
Corioli's Force	कोरियालिस बल	110, 117
Corona	करोना, किरीट	155
Cosmic Ray	अन्तरिक्ष/कॉस्मिक किरण	11, 31
Critical Radius	क्रान्तिक अर्ध व्यास/(त्रिज्या)	82
Critical Relative Humidity	क्रान्तिक सापेक्ष आर्द्रता	82
Cumulus	कपासी	84
Cumulus-Fair Weather	स्वच्छ मौसम कपासी	93
Cumulo Nimbus	कपासी वर्षी मेघ	95
Curvature Effect	वक्रता प्रभाव	81
Cyclone	साइक्लोन/चक्रवात	224
Cyclonic Gradient Wind	चक्रवाती प्रवणता हवा	117
Cyclonic Storm	चक्रवाती तूफान	220, 306
Cyclostrophic Flow	साइक्लोस्ट्राफिक प्रवाह	119

D

Daily Max Temp	दैनिक उच्चतम तापमान	42
Daily Min Temp	दैनिक निम्नतम तापमान	42
Declination	दिकपात	5
Deep Depression	गम्भीर अवदाब	220
Density of Moist Air	नम हवा का घनत्व	60
Density Variation	घनत्व का चलन	61
Depressions	अवदाब	220
Dew	ओस	153
Dew Point	ओसांक	52
Diffuse	विसरित	34
Divergence	अपसरण	137
Doldrums	डॉलड्रम	132
Drifts and Currents (Ocean)	ड्रिफ्ट और धाराएँ (महासागरीय)	307
Drizzle	फुहार	92
Dust Haze	धूल धुंध	154
Dust or Sandstorm	धूल भरी या रेतीली आँधी	154

E

F

Frost	तुषार या पाला	153
Funnel Cloud	फनेल मेघ	239
	G	
Geostrophic Scale	भूव्यावर्ती पमाना	116
Geostrophic Wind	भूविक्षेपी/भूव्यावर्ती हवा	112
General Circulation (Idealised)	सामान्य (आदर्श) वायु प्रवाह	134
Giant nucleus	विशाल केन्द्रक	78
Glaze	ग्लेज	153
Glazed Frost	ग्लेज हिम	101
Gradient Wind	अनुप्रवण/प्रवणता हवा	116
Graticule	रेखाजाल	172
Green Flash	हरित क्षण दीप्ति	154
Green House	ग्रीन हाऊस	39
Gulf Stream	गल्फ स्ट्रीम	308
Gust	निर्वात/झोका	125
Gustiness Factor	निर्वातीय गुणक	125
	H	
Hair Hygrograph	केश आर्द्रता लेखी	165
Hail	ओला	93
Halo	आभामण्डल/प्रभामण्डल	154
Harmattan	हमतन	132
Haze	धुंध	98
Heat Budget	ऊष्मा बजट	35
Heat Equilibrium	ऊष्मा संतुलन	35
Heterosphere	विषम मण्डल	6
Hibernation	सुप्तावस्था/शीत निष्क्रियता	322
High (Anticyclone)	उच्चदाब	27
Homosphere	सममण्डल	6
Horse Latitude	अश्व अक्षांश	132
Humid	आर्द्र	323
Humid Climate	नम जलवायु	323
Humidity Measurement	आर्द्रता माप	158
Humidity Mixing Ratio	आर्द्रता मिश्रण अनुपात	51
Humidity Province	आर्द्रता प्रदेश	339
Humidity Quantities	आर्द्रता राशियाँ	50

L

Labrador Currents	लैब्राडोर धारायें	308
Lambert's Conical Projection	लेम्बर्ट अनुकोणिक शांकव प्रक्षेप	251
Land Breeze	थल समीर	128, 129
Laplace Principle	लाप्लास् सूत्र	17
Lapse Rate	ह्रास दर	6
Large Nuclei	वृहत् केन्द्रक	6, 78
Latent Heat	गुप्त ऊष्मा	82
Latent Instability	गुप्त अस्थायित्व	71
Lenticularis Cloud	मसुराकार/लैन्टिकुलारिस मेघ	134
Lifting Condensation Level	उत्थापन संघनन स्तर	72
Lightning	विद्युत/तड़ित/बिजली	93
Lithometeor	लिथोमीटियोर	153
Long Range Forecast	दीर्घ अवधि पूर्वानुमान	270
Loo	लू	130
Low Pressure	निम्नदाब	26
Lull	लल् (नीचे उच्चावयन)	125

M

Magnetosphere	चुम्बक मण्डल	11
Mammatus Cloud	मेम्मेटस मेघ	149
Map Projection	मानचित्र प्रक्षेप	248
Mean Free Path	औसत दूरी/औसत मुक्त पथ	3
Mercator's Projection	मरकेटर प्रक्षेप	249
Medium Range Forecast	मध्यम अवधि पूर्वानुमान	268
Meridional	रेखांशिक	120
Mesopause	मध्य सीमा	10
Mesosphere	मध्य मण्डल	10
Meteor	उल्का	153
Micro Climatology	सूक्ष्म जलवायु विज्ञान	316
Millibar	मिलिबार	14
Mist	कुहासा	98
Mixing Ratio (Humidity)	आर्द्रता मिश्रण अनुपात	51
Monsoon Depression	मानसून अवदाब	232, 295
Monsoon Type	मानसून प्रकार	379
Monsoon Region (Air Mass)	मानसून क्षेत्र (वायु राशि)	186
Mountain/Valley Winds	पर्वतीय और घाटी हवाएँ	133, 137

L

Labrador Currents	लेब्राडोर धारायें	308
Lambert's Conical Projection	लेम्बर्ट अनुकोणिक शांक्व प्रक्षेप	251
Land Breeze	थल समीर	128, 129
Laplace Principle	लाप्लास् सूत्र	17
Lapse Rate	ह्रास दर	6
Large Nuclei	बृहत् केन्द्रक	6, 78
Latent Heat	गुप्त ऊष्मा	82
Latent Instability	गुप्त अस्थायित्व	71
Lenticularis Cloud	मसुराकार/लेन्टिकुलारिस मेघ	134
Lifting Condensation Level	उत्थापन संघनन स्तर	72
Lightning	विद्युत/तड़ित/बिजली	93
Lithometeor	लिथोमीटियोर	153
Long Range Forecast	दीर्घ अवधि पूर्वानुमान	270
Loo	लू	130
Low Pressure	निम्नदाब	26
Lull	लल (नीचे उच्चावचन)	125

M

Magnetosphere	चुम्बक मण्डल	11
Mammatus Cloud	मेम्मेटस मेघ	149
Map Projection	मानचित्र प्रक्षेप	248
Mean Free Path	औसत दूरी/औसत मुक्त पथ	3
Mercator's Projection	मरकेटर प्रक्षेप	249
Medium Range Forecast	मध्यम अवधि पूर्वानुमान	268
Meridional	रेखांशिक	120
Mesopause	मध्य सीमा	10
Mesosphere	मध्य मण्डल	10
Meteor	उल्का	153
Micro Climatology	सूक्ष्म जलवायु विज्ञान	316
Millibar	मिलिबार	14
Mist	कुहासा	98
Mixing Ratio (Humidity)	आर्द्रता मिश्रण अनुपात	51
Monsoon Depression	मानसून अवदाब	232, 295
Monsoon Type	मानसून प्रकार	379
Monsoon Region (Air Mass)	मानसून क्षेत्र (वायु राशि)	186
Mountain/Valley Winds	पर्वतीय और घाटी हवाएँ	1[illegible]7

V

Visibility	दृश्यता	147, 246
Visibility measurement	दृश्यता मापी	148
Vorticity	भ्रमिलता	139
Vorticity advection	भ्रमिलता अभिवहन	140
Vorticity Equation	भ्रमिलता समीकरण	275

W

Warm Front	उष्ण वाताग्र	209
Water Spout	जलपूर्ण मेघ स्तम्भ/घूर्णमेघ स्तम्भ	239
Wave Length	तरग दैर्घ्य	28
Wein's Law	वीन नियम	29
Weather Map	मौसम मानचित्र	161, 244
(Past-and Present)	(भूत और वर्तमान)	262
Weather Satellites	मौसम उपग्रह	246
Western Disturbance	पश्चिमी विक्षोभ	205, 217
Wet Bulb Temp	नम बल्ब तापमान	41
Whirlwind	वातावर्त	222
Willy Willy	वील्ली वील्ली	222
Wind	हवा (वायु)	107
Wind Daily Variation	हवा का दैनिक चलन	126
Wind Seasonal Variation	हवा ऋतु विभिन्नता	147
Wind Vane		
W M O	विश्व मौसम संघ	26, 146